खर्गवासी साधुचरित श्रीमान् डालचन्दजी सिंघी

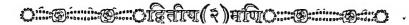


जन्म वि. सं. १९२१, मार्ग वदि ६

स्वर्गवास वि. सं. १९८४, पोप मुदि ६

पद्माकर . २६	पुरुकेशी ं ३६	बहुअ ७८
पद्मानन्द [काव्य, श्रंथ] ७६	पुष्करिणी २६	बृङ्या [चाचरीयाक] ७८
पर्यधावली १३६	पुष्कळावतीविजय ६९	बनास नदी ४९
परकायप्रवेशविद्या ८२	पुष्पाभरण २४	ब(ध १) म्धुराज ५१
परसहंस १०६	पुष्पचूला ४३	चप्पभद्रस्रि ९८, ९९
परमर्दी ९०	पूनड [साधु] ७०	वर्षर [वेताल] १, १३४
परमार [वंश] १२, २३, २५, ४३,	पूर्णचन्द्र २६	वर्षरक २३
४४, १२८	पूर्वा ७२	विछ [राजा] ८२, ९७, १०२
परिमल २०	पृथिबीस्थान [पत्तन] ९१	बहडाइच १३५
पत्यपुर ९५	पृथ्वीराज ८६, ८९, १३५	यहुरूपिणी [विद्या] ११५
पहींग्राम ८३	पेरलाउद ६७	ब्रह्मस्त्रिय १५
पहुविराय, पहुचीस (पृथ्वीराज) ८६	पेथू २५	वसा ७४, ८७
	पेथूहर २५	चाकरी [चेश्या] १०३
पाटलिपुत्र } [पत्तन] ९२ पाटलिपुर ८१, ८२	पेरोज १३५	चाण [कवि] १५, ७४
पाणिनि १३१	पोतनपुर १०८	
पाण्डव १०८	त्रतापमछ ३८, ३९, ४३, १२३	वापड [राजपुत्र] ५१
पातसाहि ८३, ८७, १३५	प्रतापसिंह ८६, ८७	वालचन्द्र ४९
पाताक ८२	प्रतिष्टानपत्तन ११	याळधवळा ४१
पादांळिस(°सकपुर) ६३,९१	प्रतिष्टानपुर ९४, ११६	चालभारत ७८
पादलिस सूरि ९१-९४	प्रतिमाणा ९२	यालहंसस्रि ७६
पाद्रदेवता २१	प्रथिमराज ८७	वावन २४
पापक्षय [हार] ४०, ४१	प्रद्योतनसूरि १०७	चाहडदेच ३२, ३९, ४०, ४६,
पारस [श्राद्ध] ३१	मफुछ [थ्रेशी] ९२	१२३, १२४, १२६
पाराचि [भूमि] १३३	प्रभास [तीर्थ] ६१, ६५, ११२, १२३	याहुक [शल्यइस्त] २८
-	प्रश्नप्रकाश [प्रन्थ] ९४	बाहुडदेव २८
पारूथक } [द्रम्म] ५१	प्रवहादनपुर ४३,६७	बाहुळोडपुर १३३
पार्वती २१	प्राकृत [भाषा] ६, ९२, ११२	वीजाठिआ ३५
पार्श्व [नाथ, जिन] ६८, ८३, ९१, ९६,	प्राग्वाट [वंश] २६, ४३, ५२, ५३,	बुद्धि [योगिनी] ३६
9০৩	६२, ६८, १० १	द्विसागरस्रि ९५
पार्शचन्द्र २६	प्राचीमाधव ४४	गृहद्गच्छ २६, १०३
पार्श्वतीर्थे ३१	वियंगुमक्षरी ११६	वृहस्पति २९९२
पार्श्वनाथचेत्य ६०, ९५	वियमछेक [तीर्थ]	चोटिक ४१
पार्श्वनाथप्रतिमा ९१	प्रेमलदेवी ३८	बोसरिक] ३९
पार्श्वनाथविम्य १०	•	बोसरी ∫ ३२
पार्श्वमृतिं ७०	फ	घोहित्थ [वंश] ३२
पाछित्तय [सूरि] - ९५	फणिपति ५८	बौद्ध ६८,८३,९८,१०५,
पालीवाणकं ६५	फत् २४	१०६, १३०
पासिऌ [श्रावक] ३०	फलवर्द्धिका ग्राम ३१	बहादेवकुछ २४
पाहिणी ३७	फल्ट. २४	भ
पिपलाचार्य ७५	फूलड १२	भक्तामरस्तव १६
पुंउरीक ६६, ७०	व	भट्टमाञ १, ५, ७, ११६
पुण्डरीकिणी [नगरी] ६९	यडली ७९	भद्गवाहु ९१
पुण्यसार ९७	वकुलादेवी १२३	मद्रेश्वर ७०
पुरन्दर २९	वङ्गालदेश ८८	भयहरस्तव १६

सिंघी जैन अन्यमाली





प्रबन्धचिन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्धसंग्रह

```
५७, ३०, ७३ - कीर्तिसब
                                                                        गुणचन्द्र [दिहान्]
इणेतेल [प्रासाद]
                                                                   90
इर्षेक्षापर [तहाप]
                              2.3
                                    इङ्गा दिशी
                                                                        गृह महाकाल-प्रासाद
                                                                   60
                                                                                                 ए (हिं०)
इर्णाट दिशा ] ३१, ५४, ६६, ७४, ९५ हाइकेम्बर-प्रासाद
                                                                        गुईर
                                                                   32
                                                                                     १३, ३१, ४८, ६२, ६५
इंग्रीहेश
                                                                        ः गोपाङ
                               2 3
                                    कुन्वल सम्हल
                                                            998. 994
                                                                                                       ¥$
इर्गोइसी
                                                                            देश
                  ५५, ५६, ६६, ८३
                                    इन्देर
                                                                   35
                                                                                     १२, १४, १६, २१, २८,
                          35. 36
                                    इनरनरिन्द ("नरेन्द्र) [इनारनाङ] ८,७८
इणोइज [तिहराज]
                                                                                     ३६, ३२, ४५, ४६, ५३,
<u>هن جو</u>
                              2,2
                                    <del>इनारदेवी</del>
                                                                   36
                                                                                          76, 55, 58, 56
कर्त [किव]
                              20
                                    ङ्गारदेवीसर
                                                                  905
                                                                            घरेत्री
                                                                                               99, 34, 48
क्तेरहाते [प्रन्यादेशेव]
                              है उ
                                    कुनारपाछ
                                                 45-35, 67, 65-50,
                                                                            नाध
                                                                                                       V5
क्छविणि [नरी]
                              0 5
                                                     57, 58, 54, 50, 10
                                                                            चुपति
                                                                                                       30
                                                      १०१, १२६, १२८ ,,
इछह्दशानन [हत्हो]
                              15
                                                                            न्यडल
                                                                                                       इ२
                                    हुनारविहार [प्रासाद] ८९, ९३, ९२, ९६ । गूर्वराषीखर
क्लिकालसबैद्य [बिरद]
                             ३२६
                                                                                                       50
                                    इनारसम्भव [हाल्य]
                                                                       गूर्वरेखर
                                                                                                   95, 48
क्टिङ [देश]
                              E 9
                                    ङ्खरचन्द्र [पण्डित, बारी]
                                                                       गोदावरी [नदी]
                                                             ६६-६६
                                                                                                    9, 33
                              33
क्ल्यागक्टक
                                                                        गोलानई (गोदावरी नदी)
                                    कुरकुहा देवी
क्ल्यागद्रवचैत्र
                                                                  ξs
                                                                                                       38
                             303
                                                                        गोवर्द्दन [राजा]
                                    कुल्बन्द्र [पण्डित]
                                                                  33
                                                                                                      999
कदिदानदव [-विरद]
                              50
                                                                        गोविन्द
                                                                 993
                                                                                                    5, 24
                                    ङ्डनपुर
चंत्रहोरू
                              92
                                                                        गोबिन्दाचार्य
                                                                 398
                                    हरम
                                                                                                       २८
क्त
                             353
                                                                        गोड [देश]
                                    देशव
                                                                  69
                                                                                             २२, ७३, ११२
काकर [प्रानः]
                          98.98
                                    केहास
                                                                        गौडदेशीय
                                                                  63
                              33
                                                                                                       40
काक्छ [पण्डित]
                              २७ | कोछरदा [देदी]
                                                                        गौरी
                                                                  2,2
<u>ज्ञाङ्ख्यदीर्घ</u>
                                                                                                १०३, १२३
                                    चोचकालावल [विसद्]
                                                                 395
                                                                                        च
                        303,305
            [इागेक्]
                                    होहादुर
                                                                  $3
                                                                        चडिंग [हस्तो]
                                                                                                      20
                                    कोरुया [गूजराइदार]
कातम् [न्याकरण]
                                                                  23
                                                                        चिष्ठका
                              5 3
                                                                                                      3,6
                                    क्रोशस [देश]
                                                                  3 3
                                                                        चरिडका-आसाद
कालाचिती
                              ₹₹
                                                                                            ४४, ६० (हि०)
                                   कोइ(हू)णक [देस]
                                                         ₹7, €0, €€,
                              ¥=,
कानीन [हाने ]
                                                                        चन्द्रनाचार्य
                                                                                                      25
                                                             ९५, १९८ | चन्द्रनाधदेव
कान्दी [हरी]
                                                                                                       २०
                   वर्, वर्व, वर्व
                                    कैतिकी [सीत्य]
                                                                  ९६ ' चन्द्रमभ [दिन]
                                                                                                     707
कान्यडि [तापस]
                              30
                                   कारदेखर
                                                                  १३ । चन्छ्यमदिस्य
                                                                                                 906 305
कान्हडदेव
                              32
                                    स्रण्ड
                                                                 ११० ' चन्द्रमस्तरि
कान्ह् [व्यवहारी]
                                                                                                        9
                              55
                                    ह्मसञ
                                                              १४, १५ , चन्द्रलेखा [राहो ]
कारिछ [दर्शन]
                                                                                                     920
                              5.3
                                                                      , चन्द्रावनी [नगरी]
                                                   ख
कानन्दकीय [नोदिकाल]
                                                                                                     909
                              22
                              ६८ खंगार [अभीरराणक]
                                                              ५४. ७६ : चम्या [नगरी]
कानस्ता
                                                                                                      33
कानितरीये
                                   खण्डमगिक्त [कास्य]
                             775
                                                                  5.3
                                                                        चर्दराज्य
                                                                                                       38
कालनेरवीय
                       इ० (हि०)
                                    खेडा निहास्थान ।
                                                                 305
                                                                        चाङ्गदेव
                                                                                                      દરે
ङ्गरुनेइ
                                                                        चाचिग
                             चुच्<u>च</u>
                                                   1
                                                                                                      ८३
कारिका [देवी]
                                                                 ११६ | चाचिनेश्वर-प्राप्ताइ
                               ४ । गयनगानिनी [दिदा]
                                                                                                      ₹0
काल्डिशस [कि.वे]
                    $. Y. b. 904
                                                       अर, २०४, १३३<sup>ो</sup> चागस्य
                                                                                                      ₹13
                                    गङ्ग [नरो]
काहिन्दो [नरी]
                                                                  ३३ | चान्द्र [ब्याकरण]
                              33
                                   गाङ्च
                                                                                                      5 7
                                                                  ९७ चारोल्ड वंत
कासहद [नगर]
                              P, P
                                    गाहर [सर्घः]
                                                                                              १२, १५, १६
कारे [सगरी]
                 ३३, ५०. ७४, ८६, बाधाकोश [बाधाहतराटोईप]
                                                                  २० , बालुण्डराज [बानोत्बरवंशीय]
                                                                                                      2,7
                                                                 १२२ ; [चाडक्पवंदीप]
                                    शिरिकार
                             553
                                                                                                  95, 20
कदतीर [देश]
                       ६० (डि०) , लिरेनार
                                                                  ६५ . , राष्ट्रक्टान्दवी]
                                                                                                      36
कीर [देश]
                              ९५ . गुडबार्ताय [हुनट]
                                                                 २०२ | चाहुण्डा [गोत्रजा देवो]
                                                                                                      63
```

सिंघी जैन ग्रन्थमाल

जैन आगिमक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, कथारमक – इत्यादि विविधविषयगुन्फित प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राचीनगूर्जर, राजस्थानी आदि भाषानिवद्ध यहु उपयुक्त पुरातनवास्त्रय तथा नवीन संशोधनात्मक साहित्यप्रकाशिनी जैन प्रन्थाविष्ठ ।

करुकचानिवासी सर्गस्य श्रीमद् डालचन्दजी सिंघी की पुण्यस्यतिनिमिच तत्सुपुत्र श्रीमान् वहादुरसिंहजी सिंघी कर्नृक

संस्थापित तथा प्रकाशित

सम्पादक तथा सञ्चालक

जिनविजय मुनि

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ, ज्ञान्तिनिकेतन

सम्मान्य समासद-भाण्डारकर प्राच्यविद्या संशोधन मन्दिर पूना, तथा गृजरात साहित्यसमा अहमदावाद; मृतपूर्वाचार्य-गृजरात पुरातत्त्वमन्दिर अहमदावाद; जैन वाड्मयाध्यापक विश्वमारती, शान्तिनिकेतन; संस्टत, प्राकृत, पाकी, प्राचीनगूर्जर आदि अनेकानेक ग्रंथ संशोधक-सम्पादक।

यन्थांक २

प्राप्तिस्थान

संचालक-सिंघी जैन ग्रन्थमाला

भारतीनिवास, नं०.१८, । सिघीसदन, ४८, गरियाहाट रोड, अहमदाबाद (गृजरात). वालीगंज, कलकत्ता.

चारमा जिल्ली १००००	जिनधर्म ३७.६३	
चारण [जाति] ५८,९२,९३	, , , , ,	त्रिपुरुप [प्रासाद, धर्मस्थान] १७, १८,
चाहड [उदयनपुत्र, राजघरह] ९४	जिनप्रासाद १२३	५३, ६१, ८१
चाहड [सचिव] ९८	जिनपूजा १२४	त्रिभुवनपाळ ७७
चाहरकुमार् ७९	जिनविम्य ९७, १२०	त्रिभुवनपालविहार ८७
चाहुमान [वंश] १०२	जिनशासन १२, ३७, ३९, ६८, ७८,	त्रिपष्टिशलाकापुरुपचरित्र ८६, १२८
चित्र ९९	८३, १२४	त्रैलोक्यपाद १२३
चित्रकसिद्धि [विद्या] १०८	जिनेन्द्रव्याकरण ६०	थ
चित्रकृटपट्टिका ८०	जीमूतवाहन १०३	थाहड (१) [बाहड, टिप्पणी] ६९
चिन्तामणि (गणेश) १२१	जेसल [जयसिंह, सिद्धराज] ५८, ६५,	द
चृहामणि प्रन्थ (अर्हन्तश्री) ३९	७५	दक्षिण [देश] ९५
चेदि [देश] ३१	जैत्रमृगारि [जयसिंह ,,] ७५	दक्षिणापथ २२
चोड[देश] ३१,१९१	जैत्रसिंह [तेजःपालपुत्र] १०५	
चौलुस्य [वंश] ६१, ६८, ७३, ७९-	जैन [दर्शन, धर्म, मत] ८, १३, ३६,	
८१, १२६, १२७	४४, ६३, ९४, ९७, १०७	दण्डाहि [देश ?] ५३
	जैनप्रासाद २८, ६१, ६२, ६३	दघीचि [ऋषि] १०३, १९५
चोलुस्यचक्रवर्ती २५, ७९०, ८०	जेनमुनि १०, ९९, १०७, ११९	दरिद्रपुत्रक ५
छ	जैनविचारग्रन्थ ३७	दशरथ २४
छत्र शिला ^{९३}	जैनागम ८२	दशवैकालिक [स्त्र] ३६
छाला [प्राम] ६९		दससिरु (दशशिरस्, रावण) २३
छित्तप [कवि] ४०	जैनाचार्य १२, १०७, ११८	दहमुहु (दशमुख ,,) २८
জ	जैनालय ३८	दान्ता [श्रेष्टी] ५
	जोगराज १४	दामर [सान्धिविष्रहिक] ३०-३२,
Month of Lather to 2	ज्ञानसागर [मुनि] १०	३४, ५१, ५२
वाराव्यान्यवा [। न पर]	झ	दिगम्बर (दिग्वासस्) ३२, ६६-६८, ११४,
जगहेच ११४, ११५, ११६	झाला [ज्ञाति]	933-933
जम्बृद्दीप ६६	झोलिकाविहार ९३	दुर्रुभराज २०
जयकेशी [राजा] ५४, ७४	ভ	दुर्लभसर २०
जयचन्द्र ७४, ११३	डामर (दामर) [सान्धिविश्रहिक] ३०,	दृहाविद्या ९२
जयतलदेवी ९८, १०४	३१, ३३, ३४	देउलवाहउ ६५
जयदेव [पण्डित] ९६, १०३	डाहरू [देश] ४९, ६४, ९२	देमति [राही] ४९
। जयसिंह सिद्धराज । ६°	ढ	देवचन्द्र [सूरि] ६० (टि०), ८३, ९३
जयदेव-भवन ६० (टि०)		देवराज [पट्टिकल] ९८
जयन्त ९६	ढङ्क [पर्वत] १९९ ढिल्ली [नगरी] ९५	
जयन्ती [देवी]	1081 [1.17.1	$\left\{ \begin{array}{ll} \hat{q} & \hat{q} & \hat{q} & \hat{q} \\ \hat{q} & \hat{q} & \hat{q} \end{array} \right\} \left[\begin{array}{ll} q & \hat{q} & \hat{q} \\ q & \hat{q} & \hat{q} \end{array} \right] $
जयमञ्ज्ञ सिरी ६३	त	देवादित्य १०६
जयसिंह [सिद्धरान] ५५, ६०, ७१, ७६	तापमी दिक्षा	द्वारवती [नगरी] १२०
जाङ्गल [देश] ९५,९६	तारङ्गदुर्ग ९६	ह्याश्रय [महाकाव्य] ६१
आश्र १ र ग म	तिलकमक्तरी [कथा] ४१	घ
जाङ्गलक जाम्य [मंत्री] १२, १३, ६५	तिलङ्ग [देश] १७, २२, ३१	857 55V
9.6	ਰੁङ्ग [सुमट] ੧੧৩	धनद १२२, १२०
जामरस्य	तुरुक्त ९७, ११४, ११७, ११८	धनपाल [कवि] ३६-४२
जालन्धर [देश]	तेजलपुर १००	
जावालपुर ११४	तेजःपाल ९८, ९९, १०३-५	
जाह्नया ६२.८९	तैलिपदेव [राजा] १७, २२, २३, ३१	2 930
रजन १०१	त्रिपुरी ^{9३}	धरणेन्द्र १२०
जिनहत्तसूरि	-	

प्रवन्धचिन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्ध संग्रह

भवन्धिचन्तामणिग्रन्थगत प्रवन्धोंके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रवन्धोंका विशिष्ट संग्रह ।

सम्पादक

जिनविजय मुनि

मूल पाठ

विशेपनामानुक्रम-पद्मानुक्रमणिकादियुक्त

प्रकाशन-कर्ता

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ

'कलक ता

SINGHI JAINA SERIES

A COLLECTION OF CRITICAL EDITIONS OF MOST IMPORTANT CANONICAL, PHILOSOPHICAL,
HISTORICAL, LITERARY, NARRATIVE ETC. WORKS OF JAINA LITERATURE
IN PRÄKRIT, SANSKRIT, APABHRAMSA AND OLD VERNACULAR
LANGUAGES, AND STUDIES BY COMPETENT
RESEARCH SCHOLARS.

FOUNDED AND PUBLISHED

RΨ

ŚRĪMĀN BAHĀDUR SINGHJĪ SINGHĪ OF CALCUTTA

IN MEMORY OF HIS LATE FATHER

ŚRĪ DĀLCANDJĪ SINGHĪ.

GENERAL EDITOR

JINAVIJAYA MUNI

ADHISTHĀTĀ: ŠIŅGHĪ JAINA JNĀNAPĪTHA, SĀNTINIKETAN.

HONORARY MEMBER OF THE BHANDARKAR ÖRIENTAL RESEARCH INSTITUTE OF POONA AND GUJRAT SAHITYA SABHA OF AHMEDABAD; FORMERLY PRINCIPAL OF GUJRAT PURATATTYAMANDIR OF AHMEDABAD; ÉDITOR OF MANY SANSKRIT, PRAKRIT, PALI, APABHRAMSA,





TO BE HAD FROM

SAÑGĀLAKA, SINGHĪ JAINA GRANTHAMĀLĀ

BHARATINIVAS, ELLIS BRIDGE AHMEDABAD. (GUJRAT)



SINGHI SADAN, 48, GARIYAHAT ROAD, BALLYGUNGE, CALCUTTA

PURATANA PRABANDHA SANGRAHA

A COLLECTION OF MANY OLD PRABANDHAS SIMILAR AND ANALOGOUS TO THE MATTER IN THE PRABANDHACINTAMANI; INDICES OF THE VERSES AND PROPER NAMES: A SHORT INTRODUCTION IN HINDI DESCRIBING THE MSS. AND MATERIALS USED IN PREPARING THIS PART, ALONG WITH PLATES.

JINAVIJAYA MUNI

ORIGINAL TEXT

- I. IN SANSKRIT AND PRAKRIT WITH INDICES OF THE VERSES AND
- II. AN INDEX OF PROPER NAMES OF PRABANDHACINTAMANI.

THE ADHISTHĀTĀ-SINGHĪ JAINA JÑĀNAPĪTHA CALCUTTA.

प्रयन्धचिन्तामणि ग्रन्थकी प्रस्तुत आवृत्तिका संकलन ।

इस यन्थका संकलन और प्रकाशन निम्न प्रकार, ५ भागोंमें, पूर्ण होगा।

- (?) प्रथम भाग. भिन्न भिन्न प्रतियंकि आधार पर संशोधित-विविध पाठान्तर समवेत-मूलप्रन्थ; १ परिशिष्ट; मूलप्रन्य और परिशिष्टमें आये हुये संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषामय पद्योंकी अकारादिकमानुसार सूचि; पाठ संशोधनके छिये काममें लाई गई पुरातन प्रतियोंका सचित्र वर्णन ।
- (२) हितीय भाग. प्रयन्धिचन्तामणिगत प्रयन्धिके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रवन्धिका संप्रह; पद्यानुक्रमसूचि; विशेष नामानुक्रम; संक्षिप्त प्रस्तावना और प्रवन्ध संप्रहोंकी मूल प्रतियोंका सचित्र परिचय ।
- (३) तृतीय भाग. पहले और दूसरे भागका संपूर्ण हिंदी भाषान्तर।
- (४) चतुर्थ भाग. प्रयन्धिचन्तामिणवर्णित व्यक्तियोंके साथ सम्बन्ध रखनेवाले शिलालेख, ताम्रपत्र, पुस्तकप्रशस्ति भादि जितने समकालीन साधन और ऐतिहा प्रमाण उपलब्ध होते हैं उनका एकत्र संग्रह और तलिरचायक उपयुक्त विस्तृत वियेचन; प्राक्कालीन और पश्चारकालीन अन्यान्य ग्रन्थोंमें उपलब्ध प्रमाणभूत प्रकरणों, उछेखों और अवतरणोंका संग्रह; कुछ शिलालेख, ताम्रपत्र और प्राचीन ताडपत्रोंके चित्र ।
- (५) पञ्चम भाग. प्रयन्धिचन्तामणिप्रधित सब वार्तोका विवेचन करनेवाली विस्तृत प्रस्तावना-जिसमें तत्कालीन ऐतिहासिक, भागोलिक, सामाजिक, धार्मिक और राजकीय परिस्थितिका सविशेष ऊहापोह और सिंहावलोकन किया जायगा। अनेक प्राचीन मंदिर, मृतियां इत्यादिके चित्र भी दिये जायँगे।

THE SCHEME OF THE WORK OF PRABANDHACINTAMANI

The work will be completed in five parts.]

- Part I. A critical Edition of the original Text in Sanskrit with various readings based on the most reliable MSS.; An Appendix; An alphabetical Index of all Sanskrit, Präkrit and Apabhraméa verses occurring in the text and the appendix; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used for the construction of the text along with plates.
- Part II. A collection of many old Prabandhas similar and analogous to the matter in the Prabandhacintāmaṇi; Indices of the verses, and proper names; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used in preparing this Part, along with plates.
- Part III. A complete Hindi Translation of Parts I and II.
- Part IV. A collection of epigraphical records, viz. stone inscriptions, copper plates, colophons and Prasastis from the contemporary MSS.; all available historical data dealing with the Persons described or referred to in the Prabandhacintāmaṇi along with a critical account in Hindi of the above, as also many plates. and A collection of authoritative references and quotations from other works.
- Part V. An elaborate general Introduction surveying the historical, geographical, social, political and religious conditions of that period; with plates.

॥ सिंघीजैनयन्थमालासंस्थापकप्रशस्तिः॥

.. अस्ति वङ्गाभिषे देशे सुप्रसिद्धा मनोरमा । सुर्शिदावाद इत्याख्या पुरी वैभवशािलनी ॥
निवसन्त्यनेके तत्र जेना ऊकेशवंशजाः । धनाढ्या नृपसदशा धर्मकर्मपरायणाः ॥
श्रीडालचन्द इत्यासीत् तेप्वेको वहुभाग्यवान् । साधुवत् सचित्रो यः सिंधीकुलप्रभाकरः ॥
चाल्य एवागतो यो हि कर्तु व्यापारिवस्तृतिम् । किलकातामहापुर्यो धृतधर्मार्थनिश्रयः ॥
कुशाग्रया खबुद्धांव सद्दृत्या च सुनिष्ठया । उपार्ज्य विपुलां लक्ष्मी जातो कोट्यधिपो हि सः ॥
तस्य मन्नुकुमारीति सन्नारीकुलमण्डना । पतिवता प्रिया जाता शीलसाभाग्यभूषणा ॥
श्रीचहादुरसिंहाख्यः सद्दृणी सुपुत्रस्तयोः । अस्त्येप सुकृती दानी धर्मप्रियो धियां निधिः ॥
प्राप्ता पुण्यवताऽनेन प्रिया तिलकसुन्दरी । यस्याः साभाग्यदीपेन प्रदीष्तं यद्वहाङ्गणम् ॥
श्रीमान् राजेन्द्रसिंहोऽस्ति ज्येष्ठपुत्रः सुशिक्षितः । यः सर्वकार्यदक्षत्वात् वाहुर्यस्य हि दक्षिणः ॥
नरन्द्रसिंह इत्याख्यस्तेजस्ती मध्यमः सुतः । स्नुर्विरेन्द्रसिंहश्च किनष्ठः सौम्यदर्शनः ॥
सन्ति त्रयोऽपि सत्युत्रा आप्तभक्तिपरायणाः । विनीताः सरला मच्याः पितुर्मार्गानुगामिनः ॥
अन्येऽपि वहवश्रास्य सन्ति स्वस्नादियान्यवाः । धर्नर्जनैः समृद्धोऽयं ततो राजेव राजते ॥

अन्यच-

सरखलां सदासक्तो भृत्वा लक्ष्मीप्रियोऽप्ययम् । तत्राप्येप सदाचारी तिचत्रं विदुपां खलु ॥ न गर्वो नाप्यहंकारो न विलासो न दुष्कृतिः । दृश्यतेऽस्य ग्रहे कापि सतां तद् विस्मयास्पदम् ॥ भक्तो गुरुजनानां यो विनीतः सञ्जनान् प्रति । वन्धुजनेऽनुरक्तोऽस्ति प्रीतः पोप्यगणेष्वि ॥ देश-काल्रिस्तिज्ञोऽयं विद्या-विज्ञानपृजकः । इतिहासादिसाहित्य-संस्कृति-सत्कलप्रियः ॥ समुन्नत्यं समाजस्य धर्मस्योत्कर्पहेतवे । प्रचारार्थं सुशिक्षाया व्ययत्येप धनं घनम् ॥ गत्वा सभा-सित्यादाँ भृत्वाऽध्यक्षपदाद्भितः । दत्त्वा दानं यथायोग्यं प्रोत्साह्यति कर्मठान् ॥ एवं धनेन देहेन ज्ञानेन शुमिष्ठया । करोत्ययं यथाशक्ति सत्कर्माणि सदाशयः ॥ जयान्यदा प्रसङ्गेन स्वितः स्यृतिहेतवे । कर्तं किञ्चिद् विशिष्टं यः कार्यं मनस्यचिन्तयत् ॥ पृज्यः पिता सदैवासीत् सम्यग्-ज्ञानरुचिः परम् । तस्मात्रज्ञानगृद्ध्यर्थं यतनीयं मया वरम् ॥ विचार्यंवं स्वयं चित्ते पुनः प्राप्य सुसम्मितम् । श्रद्धास्पद्खिमञ्चाणां विदुपां चापि तादशाम् ॥ जनज्ञानप्रसारार्थं स्थाने शान्तिनिकेतने । सिंघीपदाङ्कितं जनज्ञानपीठमतीष्ठिपत् ॥ श्रीजिनविजयो विज्ञो तस्याधिष्ठातृसत्यदम् । स्वीकर्त्तं प्रार्थितोऽनेन शास्त्रोद्धारामिलपिणा ॥ अस्य साजन्य-साहार्द-स्थयादार्यादिसद्धणः । वशीभृयाति सुदा येन स्वीकृतं तत्यदं वरम् ॥ तस्यव श्रेरणां प्राप्य श्रीसिंघीकुलकेतुना । स्विपतृश्रेयसे चपा ग्रन्थमाला प्रकाश्यते ॥ विद्यजनकृताल्हादा सचिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दित्वयं लोके जिनविजयभारती ॥

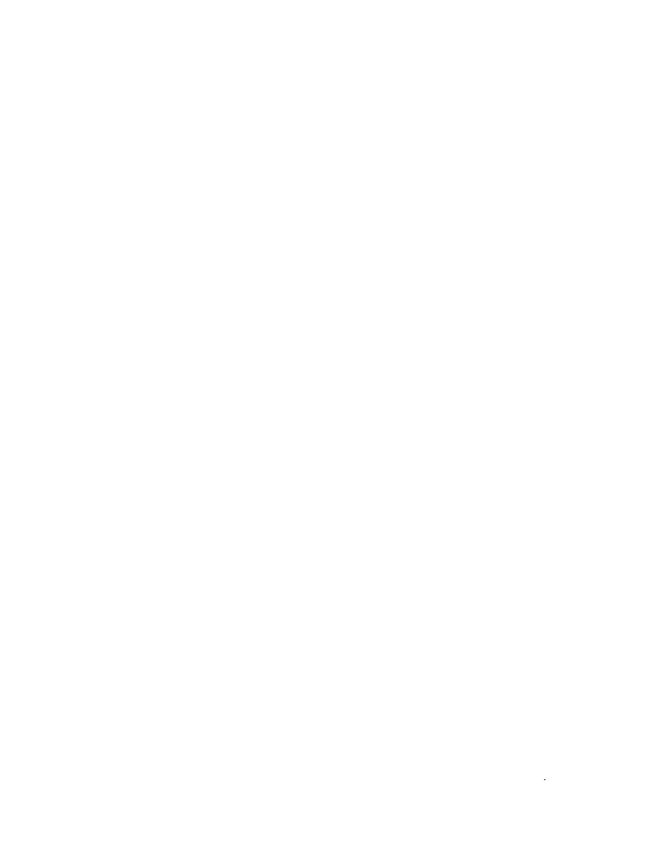
॥ सिंधीजैनयन्थमालासम्पाद्कप्रशस्तिः॥

स्वस्ति श्रीमेद्पाटाख्यो देशो भारतिवश्चतः । स्पाहेठीति सन्नाम्नी पुरिका तत्र सुस्थिता ॥ सद्गचार-विचाराभ्यां प्राचीननृपतेः समः । श्रीमचतुरसिंहोऽत्र राठोडान्वयभूमिपः ॥ तत्र श्रीवृद्धिसिंहोऽभृत् राजपुत्रः प्रसिद्धिमान् । क्षात्रधर्मधनो यश्च परमारकुलाग्रणीः ॥ मुझ-भोजमुखा भूपा जाता यिस्मिन्महाकुठे । किं वर्ण्यते कुठीनत्वं तत्कुठजातजन्मनः ॥ पत्नी राजकुमारीति तस्याभृद् गुणसंहिता । चातुर्य-रूप-ठावण्य-सुवाक्सोजन्यभूषिता ॥ क्षत्रियाणीप्रभापूर्णां शोर्यदीप्तमुखाकृतिम् । यां दृष्ट्वेव जनो मेने राजन्यकुठजा त्वियम् ॥ सृत्रियाणीप्रभापूर्णां शोर्यदीप्तमुखाकृतिम् । यां दृष्ट्वेव जनो मेने राजन्यकुठजा त्वियम् ॥ श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूज्यो यतीश्वरः । ज्योतिभपज्यविद्यानां पारगामी जनिष्ठयः ॥ श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूज्यो यतीश्वरः । ज्योतिभपज्यविद्यानां पारगामी जनिष्ठयः ॥ अष्टोत्तरक्षितव्यानामायुर्यस्य महामतेः । स चासीद् वृद्धिसिंहस्य प्रीति-श्रद्धास्पदं परम् ॥ तेनाथाप्रतिमप्रमणा स तत्सुनुः स्वसन्निधा । रिक्षतः, शिक्षितः सम्यक्, कृतो जनमतानुगः ॥ दार्भाग्यात्तिच्छशोर्वाल्ये गुरु-तातौ दिवंगतौ । विमृदेन ततस्तेन त्यक्तं सर्वं गृहादिकम् ॥

तथा च-

परिभ्रम्याय देशेषु संसेव्य च वहून् नरान्। दीक्षितो मुण्डितो भूत्वा कृत्वाऽऽचारान् सुदुष्करान्।। ज्ञातान्यनेकशास्त्राणि नानाधर्ममतानि च । मध्यस्यवृत्तिना तेन तत्त्वातत्त्वगवेषिणा ॥ अधीता विविधा भाषा भारतीया युरोपजाः । अनेका लिपयोऽप्येवं प्रतन्तूतनकालिकाः ॥ येन प्रकाशिता नेका ग्रन्था विद्वत्प्रशंसिताः । लिखिता वहवो लेखा ऐतिह्यतथ्यगुम्फिताः ॥ यो वहुभिः सुविद्वद्भिस्तन्मण्डलैश्च सत्कृतः । जातः स्वान्यसमाजेषु माननीयो मनीपिणाम् ॥ यस्य तां विश्वतिं ज्ञात्वा श्रीमद्गान्धीमहात्मना । आहूतः सादरं पुण्यपत्तनात्स्वयमन्यदा ॥ पुरे चाहम्मदावादे राष्ट्रीयशिक्षणालयः । विद्यापीठ इतिख्यातः प्रतिष्ठितो यदाऽभवत् ॥ आचार्यत्वेन तत्रोचैनियुक्तो यो महात्मना । विद्वजनकृतश्चाचे पुरातत्त्वाख्यमन्दिरे ॥ वर्पाणामष्टकं यावत् सम्भूष्य तत्पदं ततः । गत्वा जर्मनराष्ट्रे यस्तत्संस्कृतिमधीतवान् ॥ तत आगत्य सँलुयो राष्ट्रकार्ये च सिक्तयम् । कारावासोऽपि सम्प्राप्तः येन स्वराज्यपर्वणि ॥ क्रमात्तस्माद् विनिर्मुक्तः प्राप्तः शान्तिनिकेतने । विश्ववन्यकवीनद्रश्रीरवीन्द्रनायभूषिते ॥ सिंघीपदयुतं जनज्ञानपीठं यदाश्रितम् । स्थापितं तत्र सिंघीश्रीडालचन्दस्य सूनुना ॥ श्रीवहादुरसिंहेन दानवीरेण धीमता । स्मृत्यर्थं निजतातस्य जैनज्ञानप्रसारकम् ॥ प्रतिष्टितश्च यस्तस्य पदेऽधिष्ठातृसञ्ज्ञके । अध्यापयन् वरान् शिष्यान् शोधयन् जैनवाब्ययम् ॥ तस्यव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंधीकुरुकेतुना । स्विपतृश्रेयसे चैपा ग्रन्थमाला प्रकाश्यते ॥ विद्वजनकृताल्हादा सचिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दित्वयं होके जिनविजयभारती ॥

उदारात्मा क्षमामूर्तिः साधुश्रेष्ठो गुणित्रियः । यो मम परमः पूज्यो गुरुवत् , शिष्यवत्सलः ॥ यस्य शिक्षात्रसादेन त्राप्ता मया विशिष्टदक् । यया दृष्टो अन्थराशिरीदक् पौरातनो महान् ॥ सुगृहीतनाम्मस्तस्य प्रवर्तकशिरोमणेः । कान्तिविजयपादस्य पावने करपङ्काजे ॥ अनन्यमिक्तमावेन विनम्रशिरस् मया । पुरातनप्रवन्धानां संग्रहोऽयं समर्प्यते ॥



पुरातनप्रवन्धसंयह विषयानुक्रमणिका ।

		•				
	प्रास्ताविक वक्तव्य - , , , , , , , , , , , , , , , , , ,					१-२५
	प्रास्ताविक-टिप्पनीसूचितपरिशिष्टसंग्रह				~-71	₹ -३₹
٠.	. विक्रमार्कप्रवन्धाः				• •	- 7
	§१ विकमार्कसत्त्वव्रवन्धः (B.)	••••	••••	••••	7 A	2
	§४ द्रिक्तयप्रवन्धः (B. Br)	••••	****	****	****	. R
	§५ वीकमद्युतकारप्रवन्धः (B.) , ,	••••	****	****	*****	ą
	§६ -स्त्रीसाहसप्रवन्धः (^B .)	••••	****	****	****	**
	९७ स्त्रीचरित्रप्रवन्धः (P.)	****	****	****	1800	8
	§८ देहलक्षणप्रवन्धः (B,)	****	***	****	_9888	95
	§९ मनि-मनुत्रवन्धः (B. Br.) · · ·	••••	-	****	****	ધ્ય
	§११ विकमपुत्रविकमसेनसम्बन्धप्रवन्धः (B. G.)		***	4800 ~	; ;
	§१२ विकासम्यन्धे रामराज्यकथाप्रवन्धः (B.P.C	¥.)	****	*144		6
	§१३ G. संग्रहगतं विक्रमवृत्तम्	••••	****	****	***	9
₹,	§१९ सातवाहनप्रयन्धः (. B.)	***	••••	****	•	28
J	··· G. संग्रहे सातवाहनसम्बन्धि गाथावृत्तम्	****	4444	****	****	"
₹.	§२० वनराजवृत्तम्, (G.) ·	••••	****	****	••••	१३
	§२१ लाखाकवृत्तम्. (G.)	***	****	****	****	"
	§२२ मुझराजप्रवन्धः (P)	****	••••	****	•	.१३
	§२४ श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रवन्धः (B. Br.)	••••	••••	****	TR	१५
	§२८ माघपण्डितप्रवन्धः (Br.)	****	****	****	****	१७
	§३१ कुलचन्द्रप्रवन्धः (B.) ·	••••	****	****	****	१८
	§३२ पहदर्शनप्रवन्धः (B. Br.)	****	****	****	****	१९
	§३३ नीलपटवधम्रवन्धः (.B.)	****	••••	****	****	**
	§३४ भोज-गाङ्गययोः प्रवन्धः (B),	****	****	****	****	२०
	§३५ मोजदेव-सुभद्राप्रवन्धः (B.)	-9899		••••	••••	**
	§३६-G. संग्रहगतं भोजकृतम्	·,		••••	****	;;
	§४७ धाराध्वंसत्रवन्धः (В.)	••••	;· ••••	4800	i,	२३
	१४९ सिद्धराजीदार्यप्रवन्धाः (B.)	~,		i	11 **** *	२४

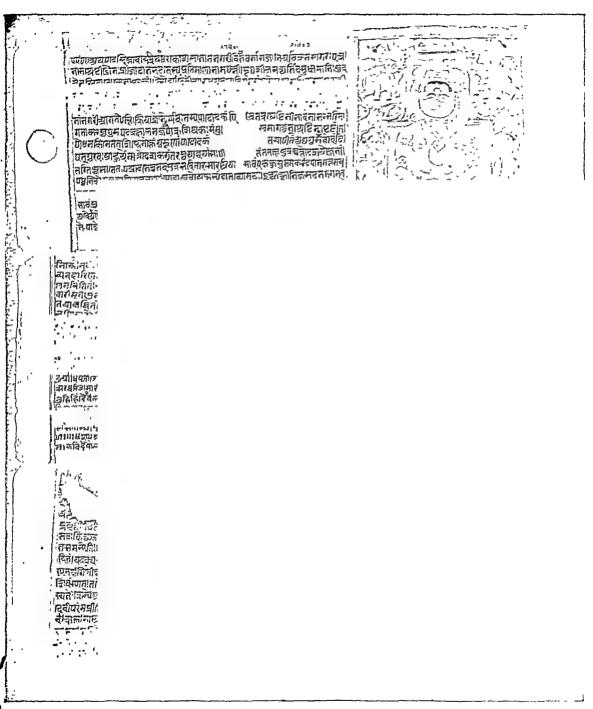
•	() (R)				•	20
	९५१ मदनवस-जयसिंहदेवप्रीतिप्रवन्धः (B.)	••••	••••	****	tr's s	२४
१६.	९५३ श्रीदेवाचार्यप्रवन्धः (Br.)	••••	••••	••••	••••	२५
	९५६ आरासणीयनेमिचैत्यप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	३०
१८,	९५७ फलवर्द्धितीर्थप्रवन्धः (P. Br.)	****	••••	••••	**** ·	३१
१९.	§५८ मन्त्रिसान्त्य्रवन्धः (B. Br.)	••••	••••	••••	••••	"
२०,	§५९ मन्त्रिउद्यनप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	३२
२१.	६६१ वसाहआभडमवन्धः (B. Br. P.)	••••	••••	••••	••••	३३
२२,	६२ .मं॰ सञ्जनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रवन्धः (P.)	••••	****	••••	••••	३४
२३,	§६३ महं आंवाकारितगिरिनारपाजप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	••••	"
	§६४ P. संग्रहे सोनलवाक्यानि	****	••••	••••	****	"
	§६५ G. संग्रहे सिद्धराजसम्त्रनिधवृत्तम्	••••	••••	••••	****	३५
	९७४ .G. संग्रहे हेमचन्द्रस्रिसंविन्धवृत्तम्	••••	••••	****	••••	३७
२४.	९७९ क़ुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः (P.)	••••	••••	••••	****	"
२५,	§८१ राणक आम्बडप्रवन्धः (P.)	••••	••••	****	••••	३९
२६.	§८३ कुमारपालकारितामारिश्रवन्धः (B. P.)	****	••••	••••	****	88
२७.	९८४ कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रवन्धः (B.)	****	••••	••••	••••	४२
२८.	९८६ क़ुमारपालपूर्वभवप्रवन्धः (B.)	••••	••••	***	••••	88
२९.	$\$$ ८७ द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रवन्धः ($\mathbf{B}_{ ext{R.}}$)	****	••••	••••	****	199
	९८८ G. संग्रहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्	••••	••••	••••	••••	४५
₹0,	§१०४ अनयपालप्रवन्धः (₽.)	••••	••••	****	****	८७
	११०६ G. संग्रहगतं अजयपालवृत्तम्.	••••	••••	••••	****	88
३१.	§१०८ धर्मस्थेर्ये सज्जनदण्डपतिप्रवन्धः (B.)	****	****	****	****	४९
३२.	§१०९ मित्रयशोवीरप्रवन्धः (P.)	****	••••	***	***	•
	. G. संग्रहे यशोवीरोहेखः	••••	••••			भ ५१
३३.	१११२ विमलवसतिकाप्रवन्धः (B.)		****	••••	••••	_
રૂ૪.	१११४ ऌ्णिगवसहीप्रवन्धः (B. Br.)		••••		••••)) (1)
	१११५ वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः (B. Br. P. P.		••••	****		42
• ••	११४९ P. संग्रहे वस्तुपाल-तेजःपालविशेपवर्णनम्				****	५३
	B. संग्रहे ,, ,, सम्ब्रह्मिकाच्यानि.		••••			६९
	\$0 C		****	••••		७१
	C			****	••••	७३
	१९७६ ,, ,, वीरधवलवृत्तम्.		••••	••••	****	9 8.
	११७७ ,, ,, नीसलदेववृत्तम्	****	••••	••••	****	23

38.	2288	विश्वासघातकविपये नन्दपुत्रप्रवन्धः	(B.)		••••	••••	****	ર્ડેશ
• • •		G. संग्रहे नन्दनृपोहेख		****	••••	****	••••	८२
30.	_	वलमीभङ्गप्रवन्धः (.P.)	1100	****	****	****	••••	८२
			••••	,,,,	****	****	••••	८३
₹ ८ .		-0	•••	****	***	••••	••••	S 8
•••			****		••••	••••	****	**
३ ९.		(G)	••••	••••	••••	••••	••••	८५
	~	(BP)	••••	****	••••	••••	****	८६
•			****	****	••••	****	••••	60
४१,		जयचन्द्रप्रवन्धः	****	****	••••	****	••••	૮૮
•		a +	****	****	****	****	****	९०
ઇર,			****	****	****	••••	••••	**
		नागार्ज्जनप्रवन्धः	****	****	***	****	****	98
		पादलिप्तसूरिप्रवन्धः (B.)	****	****	••••	••••	****	९२
		G. संग्रहे पादलिप्तस्ररिष्टत्तम्.	****	****	****	••••	****	88
४५.	§ २१ ४	अभयदेवसूरिप्रवन्धः (B. Br.)	****	****	****	****	९५
४६.	§२१६	वाग्भटवैद्यवृत्तम्. (G.)	••••	***	****	****	••••	९६
		रैवततीर्थप्रवन्धः (P.)	****	****	****	***	***	९७
8८,	§२२०	देव्यम्बाप्रवन्धः (B. Br.)	****	****	••••	••••	••••	**
४९.	§२२१	उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवन्धः (P.)	****	****	****	••••	९८
پ ٥,	§२२२	वज्रस्वामिकारितशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्थ	(P.)	****	••••	••••	९९
42,	§२२४	कपर्दियक्ष-जावडिप्रवन्धः (${f B}_{R}$.)		****	****	****	१००
५२.	§२२५	लाखणराउलप्रवन्धः (B. P.)	****	***		****	****	१०१
43.	§२२८	चित्रक्रुटोत्पत्तिप्रवन्धः (P.))	****	****	••••	••••	••••	१०३
48.	§२२९	श्रीहरिभद्रसूरिप्रवन्धः (B)	***	****	****	••••	••••	11
ધૃધ,	§२३१	सिद्धर्पिप्रवन्धः (B. Br.)	****	****	****	****	••••	१०५
५६,	§२३२	शान्तिस्तवप्रवन्धः (P.)	****	****	****	***	••••	<i>७०</i>
40.	§२३३	न्याये यशोवर्मनृपप्रवन्धः (B. B	R. P.)	***	****	****	****	12
46.	§२३४	अम्बुचीचनृपप्रवन्धः (B. Br.	P.)	****	••••	****	••••	१०८
५९,	§२३५	विधिविषये उदाहरणम्. (P.)	****	****	***	****	••••	१०९
ξ ٥,	§२३६	परोपकारविषये उदाहरणम्. (P.)	••••	****	****	****	११०
६१,	§२३७	उद्यमविषये उदाहरणम्. (P.)	****	****	****	****		

६२. १२३८ दानविषये उदाहरणम्. (P.)	••••	****	23	3
६३. १२३९ कर्णवाराविषये उदाहरणम्. (P.)	····		- A	,,
, १२४० G. संग्रह्मता अवशिष्टा प्रवन्धाः		****		
^६ २५८ परिशिष्टम्─प्रवन्धचिन्तामणिगुन्फितकतिपयप्रवन्धसंक्षेप		••••	११६-१३	\$ 8
. G. संज्ञकसंग्रहस्थान्ते पातसाहिनामावरिः	****	••••		}
P. संज्ञकसंग्रहस्यान्तिमोहेखः	••••	••••	٠ १३	१६
पुरातनप्रवन्धसंग्रहस्य अकाराद्यनुक्रमेण पद्यानुक्रमणिका			१३८-१ [,]	18
पुरातनप्रवन्धंसंग्रहान्तर्गतिविशेषनाम्नां सूचिः			884-84	34
भवन्धचिन्तामणिय्रन्थान्तर्गत्विशेषनामां सूचिः		*	१	-Z

पु रा त न प्रबन्ध सङ्ग्र ह

प्रास्ताविक वक्तव्य



P संग्रह-पत्र १, ३०, १२ के द्वितीय पृष्टकी प्रतिकृतियां।

प्रास्ताविक वक्तव्य ।

§ १. प्रवन्धचिन्तामणिसम्बद्ध पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रह

रातन-प्रवन्ध-सङ्ग्रह नामका यह प्रन्थ प्रवन्धचिन्तामणिके द्वितीय भागके रूपमें प्रकाशित किया जा रहा है, इसिलये इसका पूरा नाम हमने 'प्रवन्धचिन्तामणिसम्बद्ध-पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रह' ऐसा रखा है।

प्रवन्धचिन्तामणिके सम्पादन करनेका जबसे हमने सङ्कल्प किया, तभीसे उसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली, साहित्यिक और ऐतिहासिक, सब प्रकारकी यथापाप्य साधन-सामग्रीके सङ्कालित करनेका प्रयत्न शुरू किया। भिन्न भिन्न प्रकारके और भिन्न भिन्न विपयके जैन प्रन्थोंका अवलोकन करते हुए, हमने देखा कि कई उपदेशात्मक और कथात्मक यन्थोंमें भी इस विपयकी कितनी ही सामग्री छुपी हुई पडी है। कई यन्य, जिनका मुख्य विपय तो है आचारप्रतिपादक, लेकिन उनमें भी, इस प्रकारकी कुछ इतिहासोपयोगी वातें लिखी हुई मालूम दीं। इसलिये हमने सोचा कि यदि यह सब सामग्री, चाहे उसमें कुछ अधिक विशेषता या नवीनता न भी हो, उन उन ग्रन्थोंमें से चुन चुन कर एकत्रित की जाय और उसे एक संग्रहके रूपमें प्रकट कर दी जाय, तो इस विषयके विद्वानों और विद्यार्थिओं - दोनोंको संशोधनादि कार्य करनेमें वहुत कुछ सरलता और नवीनता प्राप्त हो सकेगी। इस विचारसे प्रेरित होकर, हमने उन उन प्रन्थोंमेंसे इस सामग्रीको, एक एक करके चुनना ग्रुरू किया। हमारी पूर्व करपना थी कि इस सामग्रीको, प्रवन्धचिन्तामणिके परिशिष्टके रूपमें, उसी ग्रन्थके अन्तमें, दे दी जायगी। लेकिन एकत्रित करते करते हमें वह सामग्री इतनी विस्तृत मालूम देने लगी कि जिससे उसकी, प्रवन्धचिन्तामणि ही जितने वडे, अलग प्रन्थ के रूपमें, दूसरे भागके तौर पर, निकालनेका निश्चय करना पडा। उस निश्चयानुसार, प्रस्तुत द्वितीय भाग उस सामग्रीसे समलङ्कृत होता; लेकिन पाठक देखेंगे कि इसमें वह सामग्री भी नहीं है। इसमें जो सामग्री उपस्थित की जा रही है वह उससे भिन्न संग्रह यन्थों में की है; और वह सामग्री, अब इसके वादके यन्थे में, तीसरे भागमें, प्रकाशित होगी । ऐसा होनेमें कारण यह है कि-ज्यों ज्यों हम इस विपयमें अधिक खोज करते गये त्यों त्यों हमें कुछ और भी अधिक उपयुक्त और खतंत्र प्रन्थात्मक कितनीक सामग्री प्राप्त होने लगी। पाटण, पूना, भावनगर, अहमदावाद, राजकोट वगैरह स्थानोंसे हमें कुछ ऐसे पुराने यन्थ मिल आये, जो खास कर प्रवन्धचिन्तामणि-ही-के ढंगके खतंत्र संग्रहरूप मालूम दिये, लेकिन जिनमें कर्ता वगैरहका कोई उद्देख नहीं पाया गया। इनमें कोई कोई संग्रह तो बहुत पुरातन माळूम दिये-शायद प्रवन्धचिन्तामणिकी रचनासे भी पुरातन । जब हमने इन संप्रहोंका परस्पर मिलान करके देखा तो, इनमें कुछ प्रकरण तो ऐसे मिले जो एक दूसरे संप्रहके साथ शब्दशः साम्य रखते हैं । कई प्रकरण परस्पर न्यूनाधिक वर्णनवाले मालूम दिये । कोई प्रकरण किसीमें कुछ पाठ-फेर वाला है, तो कोई किसीमें कुछ भापा-भेद वाला है। और, कितनेएक प्रकरण एक दूसरेसे सर्वथा मिन्न भी हैं और नवीन भी हैं। इनमें कोई कोई प्रकरण ऐसे भी दिखाई दिये जो प्रवन्धचिन्तामणिगत उस प्रकरणके साथ सर्वथा एकता रखते हैं। कुछ प्रकरण ऐसे हैं जो प्र० चिं० में तो नहीं हैं लेकिन प्रवन्धकोशमें हैं। और कोई कोई प्रकरण मि चिं या प्रव को व की पूर्तिके लिये ही लिखे गये हों ऐसे मालूम देते हैं।

इस प्रकारके इन संग्रहोंमेंसे, हमने कुछ पूर्ण और कुछ अपूर्ण ऐसे समूचे ५ संग्रहोंका प्रस्तुत प्रन्थके ित्रये, पृथक् तारण किया है। इनमेंके प्रायः बहुतसे प्रवन्धों या प्रकरणोंका सम्वन्ध, किसी-न-किसी रूपमें प्र० चिं० के माथ है। जो कुछ थोडेसे प्रकरण ऐसे भी हैं जिनका सीधा सम्बन्ध उक्त ग्रन्थके साथ नहीं है, तथापि उनका रंगढंग और पु० प्र० प्रसा० १ विषय-वर्णन उसी प्रकारका है। इसिलये हमने उनको भी, अलग न निकालकर उनके सजातीय प्रकरणोंके साथ, इस संप्रहमें शामिल ही रखना उपयुक्त समझा है। इनमेंसे कुछ तो ऐतिहासिक प्रकरण हैं, जो, चाहे जिस दृष्टिसे महत्त्वके ही गिने जाते हैं; और कुछ लोककथात्मक हैं जिनका विशेषत्व, हमारे देशके प्राचीन सामाजिक संस्कार और लाकिक व्यवहारकी दृष्टिसे, अवश्य ही अनुशीलनीय है।

§२. संग्रह ग्रन्थोंका सामान्य परिचय

पाठक देखेंगे कि, प्रस्तुत प्रन्थके, प्रथम पृष्ट पर, शिरोलेखके नीचे ही चतुष्कोण देखाके भीतर

[P. B. Br. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेभ्यः सङ्गृहीतः]

ऐसी पंक्ति इमने लिखी हैं। इसका अर्थ यह है कि-इस पुरातनप्रवन्धसंग्रहमें जितने प्रवन्ध या प्रकरण हैं, वे, जिनको इमने P. B. Br. G. Ps. ऐसी संज्ञा दी है उन पुराने लिखे हुए संग्रह प्रन्थों परसे सङ्कलित किये गये हैं। इन संग्रहोंमें ये सब प्रकरण या प्रवन्य, उस कममें नहीं लिखे हुए हैं जिसमें इमने उन्हें यहां छपवाया है। यहां पर जो इनका क्रम दिया गया है वह प्रवन्धिनतामणिके अनुसरणके रूपमें है। प्र० चि० में जो प्रवन्ध या प्रकरण जिस क्रममें आया है उसी क्रममें इमने इन प्रकरणोंको मुद्रित किया है। यह भी ध्यानमें रहे कि ये सब प्रकरण सभी संग्रहोंमें नहीं मिलते। कोई प्रकरण किसी संग्रहमें मिलता है। एवं कोई प्रकरण एक संग्रहमें एक ढंगसे लिखा हुआ मिलता है तो दूसरे संग्रहमें दूसरे ढंगसे। इस प्रकार इन ५ संग्रहोंमें परस्पर जितनी समानता है उतनी ही विभिन्नता भी है। एक हिसाबसे ये न एक-कर्टक हैं, न एक-कालक हैं, न एक-कित हैं। तथापि हैं ये सब समान-उद्देशक और समान-विषयक। इनमें से कीन प्रकरण, किस संग्रहमें मिलता है उसका ज्ञापन करानेके लिये, प्रत्येक प्रकरणके शिरोलेखके साथ, P. B. G. आदि तत्तत् संग्रहमां मिलता है उसका ज्ञापन करानेके लिये, प्रत्येक प्रकरण मिला और यदि उसमें कुछ पाठ-भेद प्राप्त हुआ तो उसे हमने या तो पाद-टिप्पनीमें उद्धत कर दिया है, या प्रचलित पंक्त-ही-में, चतुष्कोण रेखावृत करके, प्रिक्ति कर दिया है। अर्थानुसन्धानका ठीक विचार कर, जहां जैसा उचित माल्हम दिया वहां वेसा किया गया है। ई. संग्रह ग्रन्थोंका विद्रोप परिचय

(१) P संज्ञक संग्रह — संघके भण्डारके नामसे पहचाने जानेवाले पाटणके प्रसिद्ध जैन प्रन्थागारमेंसे प्राप्त ३० पत्रोंका यह एक बहुत जीर्ण-झीर्ण प्रन्थ है। वर्तमानमें, इसकी प्राप्ति हमें, विद्याविलासी साहित्योपासक मुनिवर श्रीपुण्यिवजयजीके द्वारा हुई है इसलिये इसका संकेत हमने, पाटण और पुण्यिवजयजी दोनोंकी स्मृतिमें, P अक्षरसे किया है। इस प्रतिका दर्शन सबसे पहले हमको कोई सन् १९१४ – १५ में हुआ था जब हमने पाटणके उक्त भण्डारके सब प्रन्थोंका, एक एक करके, सूक्ष्म अवलोकन किया था और प्रशस्ति आदि ऐतिहासिक साधनोंके, सर्व प्रथम, टिप्पन करने ग्रुह किये थे। यह प्रति उस समय, उक्त भण्डारमें यों ही अनुहिस्तित-सी और अज्ञात-सी पढी थी। हमने इस पर रेपर वगैरह चढाकर और उस पर प्रवन्धसंग्रह ऐसा नाम लिख कर व्यवस्थित रूपसे रख दिया। तब हमें यह रायाल नहीं था कि भविष्यमें, किसी दिन, इस प्रवन्धसंग्रहका हमारे ही हाथसे, ऐसा समुद्धार होगा। हमें इसकी स्मृति भी नहीं रही। पीछेसे, जब हमने इस सिंची जैन प्रन्थमालाका प्रारम्भ किया और उसमें प्रवन्धचिन्ता-मणि-ही-को पहले हाथमें लिया तब, हमारी प्रार्थना पर उक्त मुनि श्रीपुण्यविजयजीने और और प्रन्थोंके साथ इस संग्रहको भी भेज दिया, जिसकी प्राप्ति हमें एक बहुमृत्य रत्नके जितनी श्रीतिकर प्रतीत हुई। इस संग्रहको मुख्य रख कर ही हमने इस प्रसावित संग्रहका संकलन करना आरंभ किया।

इस प्रतिके कुल ३० पन्ने हैं। पहले पन्नेकी पहली पृंठी विना लिखी—कोरी रखी गई है। दूसरी पृंठीके दाहिने भागपर ३र्दे इंच चाँटाई और ४६ इंच लंबाई वाला, जिनप्रतिमाका एक बहुरंगी चित्र आलेखित है। पाठकोंको इस चित्रके दर्शनका प्रत्यक्ष लाभ हो इसलिये हमने, पन्नेके अतिरिक्त, चित्रकी पूरी नापका भी एक हाफ्टोन च्लॉक अलग वनवा कर उसकी छवी इसके साथ दे दी है। तदुपरान्त, १ ले, १२ वें और अन्तिम ३० वें पन्नेकी द्वितीय पृष्ठि (पूंठी) के चित्र भी हम साथमें दे रहे हैं जिससे इस प्रतिके अक्षर, पंक्ति और लिखावट आदिकी, पाठकोंको प्रत्यक्षवत्, ठीक ठीक कल्पना हो सके। प्रतिके पन्नोंकी छंवाई प्रायः १२ इंच और चौडाई ४३ इंच है। पंक्तियों और अक्षरोंका परिमाण सब पत्रोंमें एक-सा नहीं है। किसी पृष्ठ पर १३ पंक्तियां, किसी पर १४, किसी पर १५ और किसी किसी पर १९-२० तक हैं। अन्तिम पृष्ठपर लिपिकर्ताने जो अपनी परिचायक यंक्ति लिखी है उसे हमने यन्थान्तमें, पृष्ठ १३६ पर, मुद्रित कर दिया है। इस पंक्तिके लेखसे माल्स्म होता है कि-'संवत् १५२८ वें वर्षके मार्गसिर मासकी १४ - विद या सुदि सो नहीं लिखा - सोमवारके दिन, कोरण्टगच्छके सावदेव सूरिके शिष्य मुनि गुणवर्धनने, मुनि उदयराजके लिये इसकी प्रतिलिपी की'। लेकिन प्रतिका सायन्त अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि यह पूरी प्रति मुनि गुणवर्धनकी लिखी हुई नहीं है। इसकी लिखावट दो तीन तरहकी माळूम दे रही है। प्रथम पत्रसे लेकर १५ वें पत्रके प्रारम्भकी दो पंक्तियों तककी लिखावट किसी दूसरेके हाथकी है - और फिर उसमें भी दो तरहकी कलम माल्स देती है- और उससे आगेकी सब लिखावट मुनि गुणवर्धनके हाथकी है। प्रतिका लेख कुछ अन्यविश्वत और अग्रुद्धप्राय है। कहीं कहीं त्रुटित भी है। कई स्थलों पर लिपिकतीने अक्षरों तथा पंक्तियोंकी पूर्तिके लिये '......ंइस प्रकारकी अक्षरशून्य कोरी जगह रख छोडी है। ७ वें पन्नेकी दूसरी पृष्ठि पर तो पूरी ४-५ पंक्तियां ही इस प्रकार खाली रखी हुई हैं। इससे दो वातें सूचित होती हैं - एक तो यह कि यह पूरी प्रति एक साथ और एक हाथसे नहीं लिखी गई; इसका प्रारंभ किसी दसरेने किया और समापन किसी दूसरेके हाथसे हुआ। दूसरी वात यह है कि इसका मूल आदर्श भी कोई एक ही संग्रह न होकर जुदा जुदा दो तीन संग्रह होने चाहिए। सिवा इसके, मूल आदर्शीमेंसे कोई प्रति ऐसी भी माछ्म देती है जो ब्रुटित या खण्डित हो । ऐसा होना यह ज्ञात कराता है कि वह प्रति तालपत्रात्मक होनी चाहिए और उसका कुछ अंश नष्ट-श्रष्ट और कोई पत्र विछप्त हो गया होना चाहिए। तालपत्र लिखित पुरातन प्रन्थोंमें प्रायः ऐसा होता रहता है। उनके उद्घार खरूप, जो पीछेसे कागज पर प्रन्थ लिखे गये, उनमें ऐसे खण्डित या ब्रुटित भागकी सूचना करनेवाले अनेक रिक्त स्थान, जिस उस प्रन्थमें देखे जाते हैं । इसके उपरान्त, यह प्रति भी बहुत जीर्ण दशाको प्राप्त हो गई है और प्रायः प्रलेक पन्नेका, वायें ओरका, ऊपरका कुछ हिस्सा, जो या तो आगसे कुछ जल गया हो या पानीसे कुछ सड गया हो, नष्ट हो रहा है। इससे हमको तत्तत् स्थलोंपर कुछ अक्षर या शब्द और भी अधिक छोड देने पडे हैं। पृष्ठ ११.१४.३४.३५.४१.४८.५० आदि पर जो पंक्तियोंके वीच वीचमें '.....ंऐसे अक्षरच्युत विंदुमात्र वाले पंक्लंश रखे गये हैं वे इसी बातके सूचक हैं। इस प्रतिका आयुष्यत् अव बहुत नहीं है। इसके लिखनेमें जो स्याही प्रयुक्त हुई है उसमें क्षारकी मात्रा बहुत अधिक होनेसे वह कागजको पूरी तरह स्वा गई है। जितनी दफह इसे हाथ लगाया जाता है उतनी ही दफह इसके कागजके दुकडे खिरते जाते हैं और पन्ने टूटते जाते हैं। सिर्फ प्रारम्भके ५-७ पन्ने कुछ ठीक हालतमें हैं; पिछले पन्नोंकी स्थिति उत्तरोत्तर खराव हो रही है। §४. P संग्रहका आन्तर परिचय

हम उपर लिख आये हैं कि, प्रस्तुत प्रन्थमें प्रवन्धों या प्रकरणोंका जो कम दिया गया है वह मूल संप्रहोंके कममें नहीं है। यहां पर हमने उनको प्र० चिं० के कममें मुद्रित किया है। मूल संप्रहोंमें, वे, इससे भिन्न रूपमें, आगे पीछे, लिखे हुए हैं। प्रस्तावित संप्रहका कम कैसा है, और कौन प्रकरण किस पन्नेमें, कहांसे प्रारंभ होता है और कहां समाप्त होता है, इसका दिग्दर्शन करानेवाली सूची नीचे दी जाती है जिससे संप्रहगत प्रवन्धकम, और उसका आन्तरिक परिचय भी, पाठकोंको ठीक ठीक हो जायगा।

\mathbf{P} :	${f P}$ संद्रक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुक्रम			प्रस्तुत यन्थमें मुद्रित-क्रम			
	प्रयन्थनाम		पत्र. पृष्टि. पंक्ति	प्रवन्ध	गंक प्रकरणांक	. पृष्टांक	
१ ,	'पादलिप्ताचार्य प्रवन्ध	{ प्रा॰ स•	รร ร รรระ	0	•	•	
ર્ '	र्वस्थावक प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	રૂ૧૧૪ ५૨ દ્દ	o	0	•	
Đ,	उज्जयन्तर्तार्थआत्मकरण प्र०	∫ प्रा॰ (स॰	ષ૨ ६ ६૧૧૨	86	§ २२१	62-66	
S	मुञ्जराज प्रवन्ध	{ य्रा॰ स॰	६१५२ ७२ ६	Ġ,	§ २२–§ २३	१३–१५	
6,	अमारिविपये कुमारपाल प्र०	{ प्रा॰ { स़∘	७२ ७ ८३ ५	२६	₹ ⋝ §	४१–४२	
B,	राणकआंवड प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	८१ ५ ९२ ७	२५	१८१–१८१	<i>₹९</i> –४१	
૭	रामराज्योपरि कथा [†]	{ प्रा॰ { स॰	९२ ७ १०१ ७	*†\$	§ १२	6-6	
6-°	रैवततीर्थोद्धार तथा पाज प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	909 0 90290	२२–२३	<i>६३</i> –१६३	इ४	
१०	आरासणसत्कनेमिचेत्य प्र०	{ प्रा॰ { स॰	१०२१० १३१ ७	१७	§ ५ ६	३०–३१	
११	रेवततीर्थ प्रवन्ध	{ प्रा° स∘	१११ ७ ११२ ३	४७	<i>६२१९</i>	९७	
१२	फलवर्द्धिकातीर्थ प्रवन्ध [‡]	{ प्रा॰ { स॰	११२ ३ ११२ ९	१८	§ ६७	38	
१३	पृथ्वीराज प्रवन्ध	{ ग्रा॰ { स॰	११२१० १२२ ९	४०	<i>११९८-</i> १२००	८६–८७	
१४	जयचन्द् प्रयन्ध	{ प्रा॰ { स॰	377 9 383 6	४१	§ २०२–§ २०५	८८-९०	
१५	शत्रुञ्जयोद्वार प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	१४१ ८ १५१ २	५०	§ २२२–§ २२३	66-600	
१६	मंत्रियशोवीर प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	૧५૧ ૨ ૧૬૧ ૭	३२	<i>११०९-११०</i>	४९–५१	
१७	सातवाहन प्रवन्ध	{ ग्रा॰ स•	૧૬૧ ૯ ૧૬૨ ૬	Ą	886	??	
८१	ज्ञान्तिस्तव प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	૧૬૨ ૭ ૧૭૧ ૨	५६	§ २३२	१०७	

[ँ] ये दोनों प्रयन्थ, राजशेरार स्रिके प्रयन्थकोशमेंके हैं । पिछ्छे प्रयन्थके अन्तमें उद्येख है कि 'रत्नश्रावकप्रयन्थो विसर्जिताः (तः?) श्रीराजशेखरस्त्रिमिर्मछ्यारिगच्छीयैर्विरचितः ।' प्रयन्थकोशमें आ जानेसे अर्थात् ही हमने इनको प्रस्तुत प्रन्थमें स्थान देना सनावर्यक समझा ।

महालयो महायात्रा महास्थानं महासरः। यत्कृतं सिद्धराजेन क्रियते तन्न केनचित्॥१॥

इसके याद ये दो तीन पंक्तियां लिखी हुई हैं, जो प्रस्तुत संप्रहमें, विक्रमप्रयम्थके § १० वें प्रकरणमें हमने (प्रष्ट ५, पंक्ति १९-२३) दी एँ। एयमें प्रारम्भकी पंक्ति 'अन्यदा एकं पण्डितं द्विजं कणाचचयं कुर्वाणं विक्रमादित्यः प्राह-।' इस प्रकार हैं; और दोनों गायाओं में कुछ थोजसा पाट-मेद भी नजर भाता है। इस प्रतिमें ये गाथाएं इस प्रकार हैं—

निअउअरपूरणिम असमत्था किं च तेहिं जापिं। सुसमत्था जे न परोवयारिणो तेह(हिं)वि न किंचि॥१॥
तेह(हिं)वि न किंचि भणिए विक्रमराएण देवदेवेण। दिन्नं मार्यगसयं एगा कोडी हिरण्णस्स ॥२॥

ं विक्रमके साथ सम्बन्ध रसनेवाले, जितने प्रकरण इसको इन संप्रहोंमें मिले, उन सबको इसने, इस प्रन्थमें, 'विक्रमप्रवन्ध' ऐसा एक मुख्य किरोलेस दे कर, उसके भवान्तर प्रकरणोंके रूपमें सङ्गलित किया है। इसलिये यह 'रामराज्योपरि कथा'वाला प्रस्तुत प्रक्षित प्रकरण भी, इस १ संख्याबाले मुख्य प्रवन्धके अन्तर्गत एक प्रकरण-राण्ड है। ऐसा ही आगे भी वस्तुवाल आदिके प्रवन्धमें समझना चाहिए।

र्म प्रपन्धके बाद, एक वह खोक लिसा हुआ है जिसमें, सिद्धराजने देवस्रिके कथनसे सिद्धपुरमें, एक चतुर्द्धारवाले जैन मन्दिरके मनगानेरा टोसा है। प्रस्तुत प्रायमें, वह खोक (कमांक ९६) पृष्ठ ३० पर, मुद्रित है।

[†] एय एथाके याद, तिदराजकी स्तुतिविषयक निम्नलिखित सुप्रसिद्ध श्लोक लिखा हुआ है-

१९	राञ्जञ्जय माहात्म्य प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	ે ૧૭…૧… ર ૨૦…૧…૧૪	*\$6	ऽ४ <i>१ १–५५</i> १ १	५८–६९
	[वस्तुपाल प्रवस्थान्तर्गत ़उत्तर भाग†]					
२०	ऌ्णिगवसही प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	२०११४ २०११८	· ×	×	५३१
२१	मयूर सर्प प्रवन्ध	{ प्रा॰ स∘	२०११८ २०२ ५	•	٥	o
२२	मंत्रि उद्यन प्रयन्ध	{ प्रा॰ स॰	२०२ ५ २११ ६	२०	१५०,–१ ६०	३२
२३	वसाह आभड प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	२११ ६ २१२ २	२१	§ <i>६</i> १	इइ
२४	श्रीमाता प्रवन्ध	{ प्रा॰ {स॰	२१२ २ २१२२०	३८	<i></i> १९६	SS
२५-	२६ तारणगढपासाद्रक्षण तथा	{ प्रा॰ स॰	२१२२० २२२ ९	३०	§१०४- <u></u> ६१०५	28-68
	अजयपाल प्रवन्ध [ः]					
२७	वस्तुपाल प्रबन्ध					
	[१] आशाराज प्रवन्ध ^३	{ प्रा∘ { स∘	२२२१२ २२२१७	×	×	५३
	[२] वस्तुपाल प्रवन्धान्तर्गत पूर्व भाग ⁴	{ प्रा∘ { स∘	२२२१८ २४२ ७	इंद	§११७–§१२२	५४-५८
	[३] वस्तुपाल प्रवन्धगत परिशिष्टात्मक अन्तिम वर्णन ⁵	5- { प्रा० स०	२४२ ७ २५११८	55	<i>६१४९–</i> ६१५७	६९–७१
26	विधिविपयक उदाहरण	{ प्रा॰ स॰	२५२ १ २६१ ७	५९	§ २ ३ ५	१०९–११०
२०	स्त्रीचरित्र प्रवन्ध	{ प्रा॰ { स॰	२६ १ ७ २६२ २	8	§ 9	8
	[विक्रमचरित्रान्तर्गत]	-				

|| इस प्रबन्धका समावेश वस्तुपाल प्रयन्धके अन्तर्गत होता है। यह इस जगह विना किसी पूर्वसंवन्धके यों ही छह होता है। इसका आदि वाक्य 'श्रीदाञुक्षयमाहात्म्यं लिख्यते' ऐसा है और उसके बाद, फिर वे सव पद्य लिखे हैं जो इस संप्रहमें १५७ से लेकर १६५ तकके कमांकमें दिये हुए हैं। इसके बाद, उसीके आगेके § १२३ वें प्रकरणवाला वर्णन चाल होता है जो आखिरमें § १४८ वें प्रकरणके साथ, समाप्त होता है। यह एक प्रकारसे वस्तुपालप्रवन्धका उत्तरभाग है। पूर्वभाग आगे जा कर लिखा है, जो २० वें प्रवन्धमें मिलता है।

¶ यह प्रवन्ध इस P संग्रहके अतिरिक्त Be संग्रहमें भी लिखा हुआ है, और वह कुछ जरा विस्तृत रूपमें है; इसलिये हमने प्रस्तुत श्रंथमें, उसीको मुख्य स्थान दिया है और इस प्रतिवाले प्रवन्धको उसकी पाद-टिप्पनीके रूपमें उद्धृत कर दिया है।-देखो प्रष्ठ ५३ परकी पहली टिप्पनी।

1 इस प्रवन्धको हमने छोड दिया है। एक तो इसका सम्बन्ध, यों ही प्रवन्धिन्तामणिगत विषयके साथ नहीं है; सीर दूसरा कारण यह है कि, प्रस्तुत प्रतिका वह पन्ना जिसमें यह प्रवन्ध लिखा हुआ है, एक किनारे पर इतना खिर गया है कि जिससे इसका पाठोदार करना सर्वथा अशक्य-सा हो गया है।

2 प्रतिमें तारणगढपासाद्रक्षणप्रवन्ध तथा अजयपालप्रवन्ध ये दोनों प्रकरण जुदा जुदा प्रवन्ध करके लिखे हैं। हमने इनको एक ही 'अजयपालप्रवन्ध' के शीर्षकके नीचे दो जुदा जुदा प्रकरणोंके रूपमें मुद्रित किये हैं।

3 'आश्राराजप्रवन्ध' वस्तुपाल प्रवन्ध-ही-का आदिम भाग होनेसे हमने इसे, उसी प्रवन्धके अन्तर्गत \S ११६ वें अंकवाले प्रकरणके तीर पर रख दिया है । यह प्रकरण, इस प्रतिके सिवा B_R और P_S संज्ञक संग्रहोंमें भी मिलता है और वह कुछ विशेष स्पष्टतावाला है इस लिये हमने सुख्य स्थान उसको दे कर, इस प्रतिवाले उल्लेखको पाद-टिप्पनीमें प्रविष्ठ कर दिया है।-देखो, वहीं, प्रष्ठ ५३ परकी तीसरी टिप्पनी।

4 इसका प्रारम्भ, § ११७ वें प्रकरणके (पृष्ठ ५४, पंक्ति १२) "इतो व्याव्याद्वीयो राणक आना०" इस वाक्यसे होता है, और समाप्ति पूर्वोक्त शत्रुं वय माहात्म्यवाळे उल्लेखके (पृ० ५८, पंक्ति ११) पूर्ववृतां "तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति।" इस वाक्यके साथ होती है।

5 यह वर्णन, पृष्ठ ६९ पर सुद्रित, १ १४९ वें प्रकरणके "अत्राग्नेतनः प्रवन्धः कथनीयः ।" इस वाक्यसे प्रारंभ होता है और पृष्ठ ७१ की ५ वीं पंक्तिमें मिलनेवाले "[सं०] १३०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।" इस टल्लेक साथ समाप्त होता है।

ģo	वलभी भंगप्रवन्धं	{ प्रा॰ स॰	२६२ [.] २ २ <i>э</i> ११०	0	•		•
3.8	न्यायविषयक यशोवर्मनृष प्रवन्ध	य { श्रा॰ स॰	ર્ ૭૧૧૦ ૨૭૨ ૨	<i>७,७</i>	§ २३२	१०७	-१०८
३२	लाखणराउल प्रयन्ध	{ प्रा॰ { स॰	રછ…ર… ર ર૮…૧… ૬	५२	§ २२६–§ २२७	१०१-	-१०२
33	चित्रक्टोत्पत्ति प्रयन्ध	{ ग्रा॰ { स़॰	२८१ ९ २८२११	५३	§ २२८		१०३
इं४	परोपकारविपयक उदाहरण	{ प्रा॰ स॰	२८२११ २८२१८	Éo	§ २३६		११०
34	उद्यमविपयक उदाहरण	{ प्रा॰ { स़॰	२८२१८ २९१ ५	इ १	§ २३७		११०
३६	दानविपयक उदाहरण	{ प्रा° स∘	ર વ…૧… ષ રવ…૧…૧ષ	६२	§ २३८		१११
छ्ड	अम्बुचीच नृप प्रवन्ध	∫ प्रा॰ { स॰	રવ…૧…૧ ઙ રઽ…૨… છ	6,8	§ २३४		२०८
36	क्रमारपालराज्यप्राप्ति प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	ર ુ૨ ક ૨૦૧૧ પ	२४	§ ७९–§८०	३ ७-	-39
30	कर्णवाराविषयक उदाहरण	{ प्रा॰ स॰	३०११५ ३०२११	६३	§२३९	१११-	-११२
४०	सोनलवाक्यानि'	{ ग्रा॰ स॰	३०२११ ३०२१७	•	§ ६ ४		३४
	पुष्पिकालेखात्मक गाथाद्रय [®]		•••	• •	• • • •	• • •	१३६
	,, पंक्तिद्रय°		•••	••		• • •	१३६

इस प्रकार ये ४० प्रवन्ध इस संग्रहों संग्रहींत हैं। इस सूचीके अवलोकनसे ज्ञात होता है कि प्रथमके दो प्रवन्ध, राजशेखर सूरिके प्रवन्धकोशमेंसे लिख लिये गये हैं, और ३० वां प्रवन्ध, सम्भवतः मेसतुङ्ग सूरिके प्रवन्धिचनतामणि प्रन्थमेंसे नकल किया हुआ है। इनके सिवा, कुमारपाल और विकमचरित्रके सम्बन्धवाले कुछ प्रकरण, इसमें ऐसे हैं जिनका प्रवन्धकोशगत तत्तत् प्रकरणोंके साथ बहुत घनिष्ठ साम्य दिखाई देता है। विशेष करके निम्न सूचित प्रकरण तुलना करने योग्य हैं—

•	पुरातनप्रवन्धसंग्रह	प्रवन्धकोश
कुमारपालप्रवन्धान्तर्गत प्रकरण	₹≥ §	896
विकमचरितान्तर्गत प्रकरण	§ १२	800

ये प्रकरण इन दोनों संप्रहोंमें, शब्द और अर्थ दोनों प्रकारसे, प्रायः समान प्रतीत होते हैं, लेकिन हैं ये मिन्न

⁶ यह प्रयन्ध, प्रयन्धिचन्तामणिके, पृष्ठ १०७-९ पर सुद्रित, प्रकरणांक २०२-२०३ वाले इसी नामके प्रयन्धिके साथ शब्दशः भिलता है-और पहुन करके उसी प्रन्थमेंसे यह नकल किया गया है-अतः हमने इसे यहां पुनः सुद्रित करना निरर्थक समझा है।

⁷ विदराज जयसिंदके इतिहासके साथ सम्यन्ध रखनेवाले सोनलदेवीके ये वाक्य, जो गूजरात और सीराष्ट्रमें, लोक गीतके रूपमें खूब प्रिक्षिद हैं और जिनके दान्दोंमें विदराजके जीवनकी, घर घर गाई जानेवाली एक इतिहासानुश्चित, कलंकित कथा ओतप्रोत हो रही है, विना किसी विशेषोहेराके इस प्रतिमें, अन्तमें, लिसे हुए मिलते हैं। हमने इनको, सिद्धराजके समयके प्रकरणोंके अन्तमें, पृष्ठ ३४-पंक्ति ३० पर, एक गीण प्रकरणके टंगसे, कमांक ६ ६४ के नीचे, सुद्धित किये हैं।

⁸ प्रस्तृत प्रन्यके पृष्ट १३६ पर, प्रथम जो दो प्राकृत गाथाएं सुदित हैं, वे इस प्रतिमें, पत्र ३० की पहली पूंठी (पृष्टि=पार्थ) पर, रायसे नीचेकी पंकिंगे लिया हुई हैं। पंक्तिके प्रारंभमें 'x' ऐसा चिछ दिया हुआ है जिसका अर्थ होता है, कि यह पंक्ति, ऊपरकी किसी पंकिंगे लियाते लियाते लियाते लियाते लियाते लियाते एट गई अतः यहां नीचे (हांसियेमें) लिया दी गई है। लेकिन ऊपर किस जगह और कीन पंकिमें यह लिखनी रह गई हमका स्वक कोई चिछ हस सारे पत्रेमें कहीं हिशाचिर नहीं होता। इसकी विशेष मीमांसा आगे चल कर की है।

⁹ इन दो पंक्षियोंमें हे, पहलीं में, छं॰ १४३० में खर्मवास प्राप्त करनेवाले किसी सावदेव सूरिका उक्षेत्र है। इसका पूर्वापर क्या सम्बन्ध है सो ठीह मालम गई देता। दूसरी पंक्षिमें लिपिक्र्तांका—जिसने इस प्रतिका कमसे कम उत्तरी हिस्सा लिख कर पूरा किया—समयादि स्चक निर्देश हैं। ये दोनों पंक्षियों भी प्रन्यान्तमें, पृष्ट १३६ पर सुदित हैं।

भिन्न-कर्नृक । हमारा अनुमान है, कि प्रवन्थकोशकी अपेक्षा प्रस्तुत प्रतिवाले इन प्रकरणोंकी रचना पुरातन है । राजशेखर सूरिने शायद कुछ थोडा वहुत भाषा-संस्कार करके इनको अपने प्रन्थमें सिन्निविष्ट कर लिया है । क्यों कि, प्रस्तुत संप्रहगत इन प्रकरणोंकी भाषा, अधिक लौकिक ढंगकी—परिष्कार विहीन और शिथिल सहपमें—हैं; और प्रवन्धकोशमें वह परिष्कृत और सुश्चिष्ट रूपमें हैं । अतः, इससे यह सूचित होता हैं, कि राजशेखर सूरिके पहले, किसीने, इन प्रकरणोंको, किसी प्रथमाभ्यासी विद्यार्थीके पढनेके लिये, इस प्रकारकी वहुत ही सीधी-सादी भाषामें लिखा, और फिर राजशेखर सूरिने उनमें उक्त प्रकारका कुछ संशोधन-परिमार्जन किया । प्रवन्धकोशके कर्ताने अपने पहलेकी कृतियों मेंसे ऐसे कई प्रकरण ज्यों के त्यों, अथवा कुछ थोडा फेरफार कर, अपने प्रन्थमें किस प्रकार सम्मिलत कर लिये हैं, इसकी कुछ आलोचना हमने उस प्रन्थकी भूमिकामें की हैं ।

इसी प्रकार यदि, प्रस्तुत संग्रहके कुछ प्रकरणोंका मिलान, प्रवन्धचिन्तामणिगत उन उन प्रकरणोंके साथ किया जाय तो उनमें भी कुछ ऐसी शाब्दिक और आर्थिक समानता जरूर दिखाई देगी। यद्यपि वह समानता प्रवन्धकोशके जितनी विपुल और विशेषरूपमें नहीं है, जिससे यह स्पष्टताके साथ निर्णीत किया जा सके कि प्र० चि० के कर्ताने भी इस संग्रहके कुछ प्रकरणोंका अनुसरण किया है; तथापि उसके लिये कुछ अनुमान अवश्य किया जा सकता है। प्र० चि० प्रथित मुझराज प्रवन्ध, प्रस्तुत संग्रहलिखित उस प्रवन्धके साथ वहुत ही सदशता रखता है। इसी तरह कुछ और और प्रवन्धोंमें भी परस्पर कितनाक साम्य दिखाई देता है। निम्न सूचित प्रकरण इस दृष्टिसे मिलान कर देखने योग्य हैं—

प्रवन्धनाम	प्र० चिं०	प्रस्तुत प्रन्थ
उदयन प्रवन्ध	§ ९ 0	§ ५ <u>२</u>
रैवततीर्थोद्धार प्रवन्ध	§ १०७	§ इ.२
[.] सोनलवाक्य	§ १०६	§ <i>६</i> ४
अंवड प्रवन्ध	e \$\$}	§ ८ १
अजयपांल प्रवन्ध	§ १७५	§ १०४

इस तुलनासे यह वात स्चित होती है कि-प्रस्तुत संग्रहमें कुछ प्रकरण या प्रवन्ध तो ऐसे हैं जो प्रवन्धचिन्तामणि या प्रवन्धकोशमेंसे लिखे हुए या उद्धृत किये हुए हैं, अतएव उनसे अर्वाचीन हैं; लेकिन कुछ प्रकरण ऐसे हैं जो उन प्रन्थोंसे भी पुरातन हो कर, उक्त प्रन्थोंके कर्ताओंने, शायद इन्हीं परसे अपने प्रकरण गुम्फित किये हों। यह वात तभी सिद्ध हो सकती है जब इसका प्रमाणभूत कोई उद्धेख इस संग्रहमें दृष्टिगोचर होता हों। प्रस्तावित प्रन्थके पृष्ट १३६ पर जो दो प्राकृत गाथाएं मुद्रित हैं वे, इस कथनके लिये, प्रमाणभूत कही जा सकतीं हैं। ये दोनों गाथाएं, इस संग्रहके ३० वें पत्रके प्रथम पृष्टमें, सबसे नीचेकी पंक्तिमें, हासियेमें लिखी हुई हैं। इसके प्रारंभमें 'x' ऐसा चिन्ह दिया हुआ है जिसका मतलब होता है कि यह पंक्ति, अपर चाल् लिखानमें, लिखते समय, भूलसे छूट गई है जिससे इसको यहां पर हासियेमें लिखा गया है। लेकिन, अपर चाल् लिखानमें, यह किस जगह छूटी हुई है इसका सूचक कोई चिन्ह कहीं नहीं दिखाई देता। इससे यह निश्चित्तया ज्ञात नहीं होता कि यह पंक्ति यथार्थमें किस प्रकरणके या प्रवन्धके अन्तमें होनी चाहिए; तथापि, जैसा कि इस संग्रहकी प्रथार दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इस अन्तिम पत्रके प्रथम पार्थ पर कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्ध समाप्त होता है, और उसके वाद कर्णवारा-विषयक उदाहरणभूत प्रवन्ध लिखा हुआ है। सो इस पंक्तिक स्थान, नियमानुसार, उक्त कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्धके अन्तमें होना चाहिए। परंतु, हमारा अनुमान है कि इसका वास्तविक स्थान, या तो उसके आगेके कर्णवारा प्रवन्धके अंतमें होना चाहिए या उसके वाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यरूप १०–११ प्राकृत पद्य लिखे हुए हैं उनके अन्तमें अंतमें होना चाहिए या उसके वाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यरूप १०–११ प्राकृत पद्य लिखे हुए हैं उनके अन्तमें

होना चाहिए। कहीं नी हों, लेकिन है वह पंक्ति इसी संबहके साथ सम्बन्ध रखनेवाली; इसमें कोई सन्देह नहीं है। इन गाथाओंका अर्थ है यह कि—"नागेन्द्र गच्छके आचार्य उदयप्रभ सूरिके शिष्य जिनभद्रने, मंत्री-श्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, विक्रम संवत् १२९० में, इस नाना-कथानक-प्रधान प्रवन्धावलिकी रचना की।"

इम इहेयसे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि प्रस्तुत संप्रहके लिपिकर्ताने जिन पुराने संप्रहोंमेंसे ये सब प्रबन्ध नकल कियं उनमें 'नाना कथानक प्रधान प्रवन्धावित' नामका (या उसके सूचक वैसे ही किसी और नामका) एक संप्रह यह भी था जिसकी रचना, मंत्रीश्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, संवत् १२९० में उदयप्रभसूरिके शिष्य जिनभट्रने की थी। जिनभट्रकी इस नाना कथानकवाली प्रवन्धाविका स्वतंत्र अस्तित्व अभी तक और कहीं हमारे देखनेमें नहीं आया इससे यह पता नहीं लग सकता कि इस प्रवन्धावलिमें सब मिलाकर कितने कथानक थे और कान कान विषयके थे। प्रस्तुत संग्रहके लिपिकर्ताने, जैसा कि ऊपर दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इन प्रवन्धोंको कई भिन्न भिन्न प्रन्थोंमेंसे लिखा है और सो भी असाव्यस्त ढंगसे। इससे इसमें पुराने और नये प्रवन्धोंका एक साथ संमिश्रण हो कर उनकी एक तरहसे खिचडी वन गई है, जिससे यह जानना या निश्चय करना भी कठिन-सा हो गया है कि, इसमें उक्त गाथा-कथित जिन भद्रके रचे हुए प्रवन्थ कितने और कौन कीन हैं; तथा उसके पीछेके कितने और कीन कीन हैं?। तथापि भाषा और रचना शैलीका सृक्ष्मतया निरीक्षण करने पर इसमेंके कितनेएक प्रकरणोंका कुछ कुछ विश्लेषण या पृथकरण किया जा सकता है। पूर्वोक्त राजदीखर सूरिके रचे हुए जो पादलिप्ताचार्य और रत्नश्राचक नामके दो प्रवन्ध इसमें संगृहीत हैं उनकी तथा प्रवन्धचिन्तामणिमेंसे नकल किये नये चलभी मंग प्रयन्धकी भाषा, और और प्रवन्धोंकी भाषासे विस्कुल अलग पड जाती है। मंत्रियद्योवीर प्रवन्ध और वस्तुपाल-तेजःपाल प्रवन्ध-ये दोनों प्रकरण भी किसी दूसरेकी कृति होने चाहिए। क्यों कि इन दोनोंमें वर्णित कितनीक वस्तु-घटनाएं संवत् १२९० के पीछेकी हैं। यशोवीर प्रवन्धमें, संवत् १३१० में जलालुद्दीन सुस्तान द्वारा, मारवाड अन्तर्गत जाहोरके दुर्ग सुवर्णगिरिपर किये जानेवाले आक्रमणका उक्षेय हैं; और इसी तरह, वस्तुपाल प्रवन्धमें, संवत् १३०८ में होनेवाले मंत्री तेजपालके मरणका निर्देश है। अतः ये दोनों प्रयन्य अर्थात् ही जिनभद्रके बाद की रचना है। इनके अतिरिक्त, और सब प्रवन्ध, यदि उक्त जिनभद्रकी कृतिरूप मान लिये जांय तो उसमें कोई वायक प्रमाण हमें नहीं दिखाई देता।

१५. P संग्रहके कुछ महत्त्वके प्रवन्ध

इस संमहमें, कुछ प्रयन्थ, ऐतिहासिक दृष्टिसे वहे महत्त्वके हैं । पृथ्वीराजप्रयन्ध (१३), जयचन्द्रप्रयन्ध (१४), मंत्रि यशोचीरप्रयन्ध (१६), वस्तुपालतेजःपालप्रयन्ध (१९, २०, २७), मंत्रिउदयनप्रयन्ध (२२), वसात् आभडप्रयन्ध (२३), अजयपालप्रयन्ध (२५-२६) और लाग्वणराउलप्रयन्ध (३२) आदि प्रकरणोंमें इतिहासीपयोगी जो सामधी मिलती है वह बहुत ही विश्वसनीय और विशेषत्ववाली है। इसका विशेष उत्पापित करना यहां अप्रासंगिक है। इस प्रन्थके अगले भागोंमें उसका यथेष्ट अवलोकन और आलोचन आदि करनेका हमारा मंकल्प है ही।

हम यहां पर, एक वात पर विद्वानींका लक्ष्य आकर्षित करना चाहते हैं; और वह बात यह है कि इस संब्रह गत पृथ्वीराज और जयचन्द विषयक प्रयन्थोंसे हमें यह ज्ञात हो रहा है, कि चन्दकाय रिचत पृथ्वीराजरासों नागक हिन्दीके सुप्रसिद्ध महाकाव्यके कर्चृत्य और कालके विषयमें जो, कुछ पुराविद् विद्वानींका यह मत है कि 'वह पन्थ नम्या ही चनावटी है और १७ वी सदीके आसपासमें बना हुआ है' यह मत सर्वथा चल नहीं है। इस संवर्ष उक्त प्रकरणोंमें जो ३-४ प्राञ्चन-भाषा पद्य [पृष्ट ८६, ८८, ८९ पर] उद्धृत किये हुए मिलते हैं, उनका

पता हमने एक रासोमें लगाया है और इन ४ पद्योंमें से ३ पद्य, यद्यपि विकृत रूपमें लेकिन शब्दशः, उसमें हमें मिल गये हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि चंद कि निश्चितत्तया एक ऐतिहासिक पुरुष था और वह दिलीश्वर हिंदुसम्राद पृथ्वीराजका समकालीन और उसका सम्मानित एवं राजकिव था। उसीने पृथ्वीराजके कीर्तिकला-पका वर्णन करनेके लिये देश्य प्राकृत भाषामें एक काव्यकी रचना की थी जो पृथ्वीराजरासोके नामसे प्रसिद्ध हुई। हम यहां पर, पृथ्वीराजरासोमें उपलब्ध विकृत रूपवाले इन तीनों पद्योंको, प्रस्तुत संग्रहमें प्राप्त मूलरूपके साथ

साथ, उद्धत करते हैं, जिससे पाठकोंको इनकी परिवर्तित-भाषा और पाठ-मिन्नताका प्रत्यक्ष वोध हो सकेगा।

प्रस्तुत संग्रहमें प्राप्त पद्य-पाठ।

इक् वाणु पहुवीसु जु पई कइंवासह मुक्कों, जर भितिर खडहडिउ धीर कक्खंतरि चुक्क । बीलं करि संघीउं भंमइ स्मेसरनंदण!, पहु सु गढि दाहिमओं खणइ खुद्दइ सईभरिवणु । फुड छंडि न जाइ इहु लुक्भिज वारइ पलकज खल गुलह । नं जाणंड चंदवलिइज किं न वि छुट्टइ इह फलह ॥ — प्रमु, ८६, पदांक (२०५).

अगहु म गहि दाहिमओं रिपुरायखयंकर, क्ह मंत्रु मम ठवशें एहु जंबूय(प?)मिलि जग्गर । सह नामा सिक्खवउं जइ सिक्खिविउं वुज्झई, जंपइ चंदवलिडु मज्झ परमक्खर सुज्झइ । पहु पहुविराय सईभरिघणी सयंभरि सउणइ संभरिति, कईवास विश्रास विसट्टविणु मिन्छवंधियद्धओं मरिति ॥ —पृष्ठ वही, प्यांक (२०६).

त्रिण्हि लक्ष तुपार सवल पापरीयहं जसु हय, चजदसय मयमत्त दंति गज्ञंति महामय। वीसलक्ष पायक सफर फारक धणुद्धर, व्हूसह यह वलु यान संख कु जाणह तांह पर। छत्तीसलक्ष नराहिवइ विहिविनडिओं हो किम भयड, जह्वंद न जाणड जल्हुकइ गयड कि मूड कि धरि गयड॥

—पृष्ठ ८८, पद्यांक (२८७).

पृथ्वीराजरासीमें प्राप्त पद्य-पाठ।

एक वान पहुमी नरेस कैमासह मुक्यों । उर उप्पर थरहून्यों वीर कर्ष्वतर चुक्यों ॥ वियो वान संघान हन्यों सोमेसर नंदन । गाढों करि नित्रह्यों पनिव गड्यों संमरि घन ॥ थल छोरि न जाइ अमागरी गाड्यों गुन गहि अग्गरीं । इम जंपे चंदवरहिया कहा निघट्टे इय मलीं ॥ —रासो, पृष्ठ १४९६, प्रष्ठ २३६०

अगह मगह दाहिमो देव रिपुराइ पर्यंकर ।
कूरमंत जिन करों मिले जंवू वे जंगर ॥
मो सहनामा सुनौ एह परमारथ सुज्हें ।
अप्पे चंद विरद्द वियो कोइ एह न सुज्हें ॥
प्रथिराज सुनवि संभरि धनी इह संभित संभारि रिस ।
कैमास विष्ठिष्ठ वसीठ विन म्लेच्छ वंध वंध्यो मरिस ॥
—रासो, पृष्ठ २१८२, पद्य ४७६.

असिय रूप तोपार सजड पप्पर सायद्द । सहस हस्ति चवसिट्ठ गरुथ गज्ञंत महावर ॥ पंच कोटि पाइक सुफर पारक धनुद्धर । जुध जुधान वर वीर तोन वंधन सद्धनभर ॥ छत्तीस सहस रन नाइवौ विही क्रिम्मान ऐसो कियौ । जैवंद राइ कविचंद कहि उद्धि बुड्डि के घर लियौ ॥ —रासो, पृष्ठ २५०२, प्य ११६.

इसमें कोई शक नहीं है कि पृथ्वीराजरासो नामका जो महाकाव्य वर्तमानमें एपठव्य है उसका बहुत वढा भाग पीछेसे बना हुआ है। उसका यह बनावटी हिस्सा इतना अधिक और विस्तृत है, और उसमें मूठ रचनाका अंश इतना अस्प और वह भी इतनी विकृत दशामें है, कि साधारण विद्वानोंको तो उसके बारेमें किसी प्रकारकी करपना करना भी कठिन है। माछ्यम पडता है कि मूठ रचनाका बहुत कुछ भाग नष्ट हो गया है और जो कुछ अबशेप रहा है वह भापाकी दृष्टिसे इतना भ्रष्ट हो रहा है कि उसको खोज नीकाठना साधारण कार्य नहीं है। मनभर बनावटी मोतीके ढेरमेंसे मुट्टीभर सचे मोतीयोंको खोज नीकाठना जैसा दुष्कर कार्य है वैसा ही इस सवाठाख फोक प्रमाण-वाले बनावटी पद्योंके विशाल पुंजमेंसे चंद कविके बनाये हुए हजार पांच सौ अस्त-व्यक्त पद्योंको ढूंढ नीकाठना

कठिन कार्य है । तथापि, जिस तरह, अनुभवी परीक्षक, परिश्रम करके, छाख झुठे मोतीयोंमें से मुद्दीभर सचे मोतीयोंको अलग छांट सकता है उसी तरह भाषाशास्त्र-मर्मज्ञ विद्वान् इन छाख वनावटी क्लोकोंमें से उन अल्पसंख्य क सचे पर्योंको भी अलग नीकाल सकता है जो वास्तवमें चन्द कविके वनाये हुए हैं।

हमने इस महाकाय प्रन्थके कुछ प्रकरण, इस दृष्टिसे, बहुत मनन करके पढ़े तो हमें उसमें कई प्रकारकी भापा और रचना पद्धितका आभास हुआ। भाव और भापाकी दृष्टिसे इसमें हमें कई पद्य ऐसे अलग दिखाई दिये जैसे छासमें भक्तन दिखाई पढ़ता है। हमें यह भी अनुभव हुआ कि काञ्चीकी नागरी प्रचारिणी सभाकी ओरसे जो इस प्रन्थका प्रकारान हुआ है वह भापा-तत्त्वकी दृष्टिसे बहुत ही अष्ट है। उसके संपादकोंको रासोकी प्राचीन भापाका कुछ विशेष ज्ञान रहा हों ऐसा प्रतीत नहीं हुआ। विना प्राकृत, अपश्रंश और तद्भव पुरातन देश्य भापाका गहरा ज्ञान रखते हुए इस रासोका संशोधन—संपादन करना मानों इसके अष्ट कलेवरको और भी अधिक अष्ट करना है। इस प्रन्थमें हमें कई गाथाएं दृष्टिगोचर हुई जो बहुत प्राचीन हो कर शुद्ध प्राकृतमें वनी हुई हैं; लेकिन वे इसमें इस प्रकार भ्रष्टाकारमें छपी हुई हैं जिससे शायद ही किसी विद्वान को उनके प्राचीन होनेकी या शुद्ध प्राकृतमय होनेकी कल्पना हो सके। यही दृशा शुद्ध संस्कृत श्लोकोंकी भी है। संपादक महाश्लयोंने, न तो भिन्न भिन्न प्रतियोंमें प्राप्त पाठान्तरों चे चुननेमें किसी प्रकारकी सावधानता रखी हैं, न खरे-खोटे पाठोंका पृथकरण करनेकी कोई चिन्ता की हैं; न कोई शब्दों या पदोंका व्यवस्थित संयोजन या विश्लेषण किया गया है न विभक्ति अथवा प्रत्यका कोई नियम ध्यानमें रखा गया है। सिर्फ 'याहशं पुस्तके दृष्टं ताहशं लिखितं मया।' वाली उक्तिका अनुसरण किया गया माल्य देता है।

माल्स पडता है कि चंद कि विकी मूल कृति बहुत ही लोकिप्रिय हुई और इस लिये ज्यों ज्यों समय बीतता गया त्यों त्यों उसमें पीछेसे चारण और भाट लोग अनेकानेक नये नये पद्य बनाकर मिलाते गये और उसका कलेबर बढाते गये। कण्ठानुकण्ठ प्रचार होते रहनेके कारण मूल पद्योंकी भापामें भी बहुत कुछ परिवर्तन होता गया। इसका परिणाम यह हुआ कि आज हमें चंदकी उस मूल रचनाका अस्तित्व ही विलुप्त-सा हो गया माल्स दे रहा है। परंतु, जैसा कि हमने ऊपर सूचित किया है, यदि कोई पुरातन-भापा-विद् विचक्षण विद्वान, यथेष्ट साधन-सामग्रीके साथ पूरा परिश्रम करे तो इस कूडे-कर्कटके बडे ढेरमेंसे चन्द किके उन रलहप असली पद्योंको खोज कर नीकाल सकता है और इस तरह हिन्दी भापाके नष्ट-श्रष्ट इस महाकाव्यका ग्रामाणिक पाठोद्धार कर सकता है। नागरीप्रचारिणी सभाका कर्तव्य है कि, जिस तरह पूनाका भाणडारकर रीसर्च इन्स्टीटबूट महाभारतकी संशोधित आवृत्ति तैयार कर प्रकाशित कर रहा है, उसी तरह, वह भी हिन्दी भापाके महाभारत समझे जानेवाले इस पृथ्वीराजरासोकी एक संपूर्ण संशोधित आवृत्ति प्रकाशित करनेका पुण्य कार्य करें।

१६. (२) B संज्ञक संग्रह

 ३३ पत्रोंका अभाव है। ७५ मेंसे ४२ पत्रे विद्यमान हैं। पत्रोंका नाप, प्रायः लंबाईमें १०ई इंच और चौडाईमें ४ई इंच है। प्रत्येक पृष्ठि (पार्ष) पर १५-१५ पंक्तियां लिखी हुई हैं। अक्षर सुवाच्य और लिखान प्रायः शुद्ध है। अन्तिम भाग अप्राप्य होनेसे, यह प्रति कव लिखी गुई थी इसके जाननेका कोई निश्चित साधन नहीं रहा। प्रतिकी क्षितिको देखकर अनुमानसे यह कहा जा सकता है कि कमसे कम कोई च्यार सौ वर्ष पहले की यह लिखी हुई जरूर होगी।

§ ७. B संग्रहका आन्तरिक परिचय

जैसा कि ऊपर सूचित किया गया है, इस संग्रहका अन्तिम भाग अनुपलन्ध होनेसे, इसका संग्रहकर्ता या संक-लनकर्ता कीन है और उसका क्या समय है इत्यादि वातें जाननेका कोई उपाय नहीं हैं। वैसे ही यह भी ठीक नहीं जाना जा सकता कि इस संप्रहमें सब मिला कर ऐसे कितने प्रवन्ध या प्रकरण संगृहीत थे। जो अन्तिम पत्र (७५ वां) विद्यमान है उसमें नीलपटवधप्रवंध [देखो प्रस्तुत प्रन्थका पृष्ठ १९, प्रवन्धांक १०, प्रकरणांक §३३] समाप्त हुआ है और आगे फिर देवाचार्यप्रयन्ध प्रारंभ हुआ है। नीलपटवधप्रवन्धका क्रमांक इसमें ६६ दिया हुआ है, लेकिन, जैसा कि आगे दी हुई सूचिसे प्रतीत होता है, उसका वास्तविक क्रमांक ७० होना चाहिए। यदि, इसके आगे लिखे हुए देवाचार्यप्रवन्धके साथ ही इस संग्रहकी समाप्ति होती हों तो, इस प्रकार इसमें कमसेकम ७१ प्रवन्धोंका संप्रह होगा। इस संप्रहगत प्रवन्धोंका आकार-प्रकार देखनेसे हमारा अनुमान होता है कि, उपदेशतरंगिणी अन्थके कर्ता रलमिन्दरगणीने, महामात्य वस्तुपालके कीर्तिदान प्रवन्धोंका वर्णन करते हुए, तद्विपयक विशेप ज्ञापनके लिये जिस २४ (चतुर्विशति) प्रयन्ध अर्थात् प्रयन्धकोश नाम प्रन्थके साथ, (उसके जैसे ही विपयवाले) ७२ (द्वासप्तति) प्रवन्य और ८४ (चतुरशीति) प्रवन्य नामक जिन और दो प्रन्थोंका सूचन किया है, * जन्हींमें से यह एक प्रन्य हों। यदि यह अनुमान सही हों तो, कमसेकम विक्रम संवत् १५०० के पहले इसका संकलन हुआ होना चाहिए । क्यों कि रत्नमन्दिर गणीके १६ वीं शताब्दीके प्रथम पादमें विद्यमान होनेके प्रमाण पाये जाते हैं | । अतः उनके सूचित ७२ या ८४ प्रवन्धोंके संग्रह अवदय ही उनके पूर्व की रचनायें होनी चाहिए । लेकिन हमारा यह अनुमान तवतक विशेष वलवान् नहीं माना जा सकता, जवतक, कहींसे इसका समर्थक और कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता।

§ ८. इस प्रतिमें प्रवन्धोंका संप्रह्-क्रम कैसा है और हमने प्रस्तुत संप्रहमें उनको किस क्रममें मुद्रित किया है, इसका क्रमपूर्वक परिचय होनेके लिये यहां पर दोनों—लिखित और मुद्रित—संप्रहोंकी पृष्ठ-पंक्ति-आदि सूचक विस्तृत सूचि दी जाती है और उसके नीचे पाद-टिप्पनीमें जो कुछ विशेष ज्ञातव्य वस्तु माल्स दी, वह भी, सचित कर दी गई है।

[ृ] उपदेशतरंगिणीमें यह उन्नेख इस प्रकार हैं—'इत्यादि श्रीवस्तुपालकीर्तिदानप्रवन्धाः शतशो यथाश्रुताः खयं वाच्याः ८४, २४, ७२ प्रवन्धेभ्यः । [यशोविजयजैनप्रन्थमाला, वनारस, में मुद्रित प्रति, पृ० ७९]

[†] यद्यपि रलमन्दिर गणीने, उपदेशतरिक्षणीमें, अपना समय-सूचक कोई उल्लेख नहीं किया है, डेक्सिन इन्हींका बनाया हुआ एक भोजप्रबन्ध नामका प्रन्य है उसके अन्तमें जो प्रशस्ति पद्य है उसमें, उस प्रन्थके बननेके समय आदिका निर्देश इस प्रकार किया हुआ है-

जातः श्रीगुरुसोमसुन्दरगुरुः श्रीमत्तपागच्छपस्तत्पादाम्बुजपद्रपदी विजयते श्रीनन्दिरत्नो गणी । तच्छिप्योऽस्ति च रत्नमन्दिरगणिभौजप्रवन्धो नवस्तेनाऽसा मुँनि-भूति-भूते-दादाभृत् संवत्सरे निर्मितः॥

इस पथिसे ज्ञात होता है कि वि॰ सं॰ १५९७ में रलमन्दिरगणीने भोजप्रवन्धकी रचना-पूरी की थी। सिवा, इसके उपदेशतरंगिणीकी वि॰ सं॰ १५९९ के चैत्र शु॰ के दिनकी हस्तिलखत प्रति पूनेके, भाण्डारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट में, संरक्षित राजकीय प्रन्थसंप्रहमें विद्यमान है।

B संग्न प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम		प्रस्तुत	। पुस्तकमें मुद्रित फ	म ै
प्रवन्धनाम	पत्र. पृष्टि. पंक्ति	प्रयन्धांक	प्रक रणां क	पृष्टांक
१-७ [विनष्ट'॥ १-७॥]	0 0 0	0	o .	o .
८ श्रीपुंजराजस्तत्पुत्रीश्रीमातावृ- त्तांतः'॥८॥	{मा॰ ~ ~ ~ स॰ ७११२	٥	۰	٥.
९ वराहमिहरप्रवंधः ॥ ९॥	{ प्रा० ७११२ {स० ८१ १	•	•	•
१० नागार्जुनोत्पत्ति-स्तंभनकतीर्थाव- तारप्रवंधः'॥ १०॥	{म्रा० ८३ ३ स० ८२३३	•	٠	٥
११ भर्तृहरोत्पत्तिप्रवंधः ॥ ११ ॥	{ प्रा० ८३१२ स० ९३१०	•	•	٥
१२ वैचवारभटप्रवंधः ॥ १२॥	{प्रा॰ ९११० स॰ ९२१३	•	•	•
१३ पादलिप्तसृरिप्रवंधः ॥ १३ ॥	(प्रा० ९२१३ (स॰ ११२ ४	४४	§ २१०—§ २१२	९२–९४
१४ मानतुंगाचार्यप्रयंधः ॥ १४ ॥	{ प्रा० ११२ ४ { स० १२२११	Ę	§ २४ – § २७	१५–१६
१५ घीरगणीप्रवंधः ॥ १५॥	{ प्रा० १२२१२ { स० − − −	•	•	•
१६ अभयदेवसूरिप्रवंधः ^६ ॥१६॥	{प्रा० स० १४२ ४	४५	§ २१४–§ २१५	९५-९६

¹ प्रारंभके १ से ६ तकके पत्र अनुपलब्ध होनेसे, १ से ७ तकके प्रयन्ध विनष्ट हो गये हैं । ये विनष्ट प्रयन्ध किस किस विषयके ये इसके जाननेका कोई साधन नहीं है।

7 उंमएका १३ यां पत्र अनुपलन्ध होनेसे इस प्रवन्धका विशेष भाग अप्राप्य है। विद्यमान १३ वें पत्रमें इस प्रवन्धकी निम्न उद्धृत पंक्तियां प्राप्त होती हिं—

श्रीमद्वीरगणस्वामिपादाः पांतु यदादरात् । कपायादिरिपुत्रातो भवेन्नागमनक्षमः ॥ १ ॥

श्रीमालं नगरं, तत्र धूमराजवंशीयो देवराजो नृपः। तत्र विणग्मुख्यः शिवनागो महाविणजः। अन्यदा श्रीधरणें-द्राराधनात् परितोषे कलिकुंडकमं सर्वसिद्धिकरं अष्टनागकुलविषहरधरणेंद्रावाप्ततन्मंत्रगर्भे धरणेंद्रस्तोत्रं चके। तद्यापि जगति विषहरम्। तस्य पूर्णलता विया। तत्पुत्रो वीरः। अनेककोटिद्रव्याधिषः। पित्रा सप्त कन्याः परिणा-यितः। ततः पितरि मृते चैराग्यामित्यमेव श्रीवीरवंदनाय याति। अन्यदा मार्गे संजातचौरोषद्रवेन स्वशालकगृहं गतः। तस्य माता शुज्यर्थमायाता। शालेन हास्याचौरैर्वारविनाशे......।

8 इस प्रयन्थकी प्रारंगकी ५-६ पंकियां, विनष्ट १३ वें पत्रमें विल्लप्त हैं टेकिन Bu संग्रहमें भी यह प्रवन्ध उपलब्ध होता है इस िये उसमें पूर्ति हो जाती है। विल्लप्त पत्रमें, प्रारंगकी पंक्ति छे कर, प्रस्तुत सुद्रित संग्रह [पृ० ९५] की पंक्ति १४ वीमें आये हुए 'नवाज्ञानो पृत्ति' सन्द तकका पाठ चला गया है।

² यद एतांत प्रयन्धियनतमणि गत इसी नामके प्रयन्धिके साथ [इमारी आइत्तिके पृष्ठ १०९-११०; प्रकरणांक २०४-२०५] प्रायः शन्द्राः मिलता हुआ ऐ। इससे संभव ऐ, कि इसके संप्राहकने यह प्रयन्ध उसी प्रन्थमें से नकल किया हो। संभव कहनेका कारण यह हैं कि इन दोनोंमें यथिप पाठकी समानता प्रायः शन्द्राः मिलती हुई ऐ, तथिप, किचित्, किचित् प्रकारका पाठमेद भी मिलता है; और यह पाठमेद उससे एछ भिन्न प्रकारका ऐ जो प्रयन्धियनतामणिकी अन्यान्य सब प्रतियोंमें मिलता है।

³⁻⁶ ये चारों प्रयंघ भी प्रयन्धिचन्तामणि स्थित उन्हीं नामोंके प्रयन्धोंकी प्रायः शब्दशः नकल हैं। इनका क्रम भी वैसा ही है जैसा प्र• चि॰ में है। [देरो, हमारी आयृत्तिके प्रग्नंक ११८ से १३२; और प्रकरणांक १९१८ से १९२४ तक] इनमें भी उसी प्रकारका कुछ पाठभेद मिलता है जो उत्तर वाली टिप्पनीमें स्चित किया गया है। प्र॰ चि॰ स्थित वराहमिहर प्रयन्धमें जो दो पद्य मिलते हैं [पद्यांक २६१-२६२] वे इस संप्रत्में नहीं हैं।

१७	ऋषिदत्ताकथानकम् ^¹ ॥ १७ ॥	{ प्रा° स°	१४२ ५ १६२१२	•	•	o
१८	क्रमारपालपूर्वभवप्र०॥ १८॥	{ श्रा∘ स∘	૧૬૨૧૨ ૧૭૨ ૨	26	\$28	88
१९	मोरनागप्रवंधः ॥ १८*॥	{भा° स॰	૧૭૨ ફ ૧૭૨ દ્દ	•	٥	•
२०	मदनब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीति- प्रवंधः ॥ १९ ॥	{ स∘	१७२ ६ १८२११	१५	§५१–§५२	२४–२५
२१	श्रीमाताप्रवंघः॥ २०॥	{ प्रा॰ स॰	१८२१२ १९११४	३८	§ १९६ .	ሪሄ
२२	विमलवसतिकाप्रवंधः ॥ २१ ॥	{श्र° स॰	૧ ૧૧૧ ૨૦૧ દ	इह	६११२-११३	५१–५२
२३	छ्णिगवसहीप्रवंघः ॥ २२ ॥	{ प्रा॰ स॰	२०१ ६ २०२ १	३४	8888	५२ –इ
२४	भोज-गांगेयप्रवंधः [॥ २३†॥]	{ प्रा॰ स॰	२०२ १ २०२१२	११	४इ १	२०
२५	भोजदेव-सुभद्राप्रवंधः ⁸ ॥ २४ ॥	{ प्रा॰ स॰	२०२१२ २११ ५	१२	§ ३५	२०
२६	घाराध्वंसप्रवंघः ॥ २५ ॥	{ प्रा॰ स॰	२११ ५ २१२११	१३	S8-08§	२३–२४
२७	सिद्धराजीदार्यप्रवंधः'।	{ प्रा॰ स॰	२१२११ २२१ १	१४	§४९–५०	२४
२८	देव्यम्याप्रवंधः॥ २५°॥	{ प्रा॰ स॰	२२१ २ २२१ ९	४८	§ २२०	99-96
२९	विक्रमार्कसत्त्वप्रवंधः॥ २६॥	{ प्रा॰ स॰	२२११० २३१ ७	१ **	§ १ –३	१–२
ξo	दरिद्रऋयप्रयंभः ॥ २७° ॥	{ प्रा॰ स॰	२३१ ७ २३२ २	33	88	२
38	वीकमचृतकारप्रवंधः ॥ २७ ॥	{ श्रा॰ स॰	રરૂર ર ર૪૧ ૬	"	§٩	३
इ२	स्त्रीसाहसप्रवंधः ॥ २८ ॥	{ प्रा॰ स॰	રૄ૧ ૧ રૄ૨ ૬	55	§ ५	₹-8
३३	मनिमनुप्रवंधः ॥ २९ ॥	{ प्रा॰ स॰	२४२ ६ २४२११	8	§ ९	Q
३४	देहलक्षणप्रयंघः' ॥ ३० ॥	{ प्रा॰ स॰	२४२११ २५१ २	55	\$ &	४-५

¹ यह क्यानक पौराणिक ढंगका है। इसकी कथायस्तुका, प्रस्तुत संप्रहके विषयके साथ किसी प्रकारका संबंध न होनेसे, हमने इसकी संप्रहके अंतर्भत न रख कर, प्रयक्त परिविष्टके रूपमें इसी प्रस्ताननाके अन्तमें मुद्दित कर दिया है।

² यह प्रयन्थ भी भनेतिहासिक होनेसे, इसको चाल कममें मुद्दित न कर, ऊपरके प्रकरणके साथ, परिविधके रूपमें दे दिया है।

^{*} प्रतिमें इस प्रयंघका कमांक भी, गलतीसे १८ ही दिया गया है। † इस प्रयंधका कमांक प्रतिमें लिखना रह गया है।

³ प्रतिभें प्रबंधका कोई नामामिधान नहीं दिया गया है। विर्फ अंतमें '॥ २४ ॥' ऐसा क्रमोंक ज़िखा हुआ है।

⁴ प्रतिमें इस प्रबंधका भी कोई नाम निर्दिष्ट नहीं किया गया; और न खतंत्र प्रवन्धका सूचक क्रमांक ही दिया गया है। इससे प्रतिके हैरानुसार, यह प्रकरण, इसके पूर्वके घाराष्वंस प्रवंधके परिशिष्टके जैसा माछम देता है।

⁵ इसका फ़मांक भी गलतीसे '॥ २५ ॥' दिया गया है। ऊपर धाराध्यं धप्रयंधका भी यही अंक है।

^{**} विक्रमार्क राजाके विषयके जितने प्रकरण हैं उन सबको हमने "विक्रमार्कप्रवन्धाः" इस नामके एक ही मुख्य शिरोठेखके नीचे दे दिये हैं।

⁶ इन दोनों प्रयंघोंका भी क्रमांक एक-सा '॥ २० ॥ २० ॥' लिखा हुआ है ।

⁷ इस प्रबन्धके बाद वे दो पंक्तियां लिखी हुई हैं जो प्रस्तुत संप्रहके पृष्ठ ५ पर, प्रकरण §१० वेंमें सुदित की हुई हैं।

विक्रमपुत्र-विक्रमसेनसम्बन्धात्मकाः ५ प्रवंधाः-

	५ मध्याः					
इंद	आद्यपुत्तलिकाप्रवंधः ॥ ३१ ॥	{ प्रा॰ स॰	રષ…૧… ષ રષ…૧…૧૨	55	§ \$ \$ ¹	લ
इद	द्वितीय ,, ,, [॥ ३२॥]	{ ग्रा॰ स॰	२५११२ २५२ १	55	2 55	६
इ.७	तृतीय " " ॥ ३३॥	{ प्रा॰ स॰	२५२ १ २६१ ४	53	8 75	Ę
36	तुर्य " " ॥ ३४॥	{ प्रा॰ स॰	२६१ ४ २७१ ५	"	4 77	5-6
£0,	विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथा- प्रवंधः॥ ३५॥	{ प्रा∘ { स∘	२७१ ५ २७२ ६	55	§ १२	८− ९
४०	विश्वासघातकविषये नन्द्रपुत्र- प्रवंधः ॥ ३६॥	∫प्रा∘ (स॰	२७२ ६ २८११०	३६	§ १८८	८१
४१	उद्यननृपप्रवंधः'॥ ३७॥	{ प्रा॰ स॰	२८११० २९१११	•‡	•	0
४२	क्रमारपालकृतामारिप्रवंधः ॥३८॥	{ प्रा∘ स∘	२९१११ २९२ ६	२६	§ ८३	४१–४२
४३	कुमारपालकृततीर्थयात्रा- प्रवंधः ॥ ३९ ॥	र्या° सं∘	२९२ ७ ३०२ ६	२७	§ ८४–§ ८ ५	४२–४३
४४	मंत्रिसांतृप्रयंधः ॥ ४० ॥	{ प्रा॰ सं॰	રુંર દ રૂંગ૧ છ	१९	§ ५८	३१–३२
86	सज्जनदंडपतिप्रवंघः ॥ ४१ ॥	{ प्रा० स०	રૂ૧૧ છ રૂ૧૧૧ પ	₹ १	§ १०८	४९
8इ	आभडवसाहप्रवंधः॥ ४२॥	{ प्रा० स०	३१११५ १२१ ३	२१	§ ६ १	३३
৪৩	वस्तुपालप्रवंधः²; —वस्तुपालकाव्यानि ॥ ४३ ॥	{श्र∘ स॰	રૂર…૧… ક કર…૧… પ	३५	§ ११५–§ १४८	५३–६९
૪૮	न्याये यशोवर्मन्यप्रवंधः॥४४॥	{ श्रा∘ स•	धर१ ५ धर११५	<i>७</i> ७	§ २३३	20-00
४०	अम्बुचीचन्रपप्रवंधः ॥ ४५ ॥	{ प्रा॰ स॰	४२२ ९ ४२२ ९	GC	§ २३४	२०८

¹ यह प्रयम्भ, राजशेरारस्रि रचित प्रयम्भकोशमें उपलब्ध इसी नामके प्रयम्भके साथ [हमारी भावित्तके पृष्ठ ८६-८८, प्रकरणांक §१०२-६१०५] प्रायः शब्दशः मिलता है। संभव है कि प्रयम्भकोशकारने यह प्रयम्भ इसी संग्रहमें से नकल कर लिया हो। इस संभवतामें वहीं कारण स्चित किया जा सकता है जो जगरकी टिप्पनी नं. २ में उल्लिखित किया गया है। प्रयम्भकोशवाले पाठमें और इस संप्रहवाले पाठमें कियत हिपित हिपित है। प्रयम्भकोशवाले पाठमें कीर इस संप्रहवाले पाठमें किया हुआ प्रति है। और इसी लियो वहान संप्रहकर्ताका किया हुआ प्रतीत होता है। और इसी लिये यह पाठभेद उन पाठभेदोंसे मिल है जो प्रयम्भकोशकी अन्यान्य प्रतियोंने उपलब्ध होते हैं।

[🙏] प्रयम्भकोशमें उपलब्ध होनेसे इस प्रयम्भको हमने प्रस्तुत संप्रहमें पुनर्भुद्रित करना उचित नहीं समझा ।

² इनका प्रारंभ 'अथ श्रीवस्तुपालप्रवंधो यथाश्रुतः।' इस वाक्यसे होता है। फिर वह पर लिखा है, जो प्रष्ट ५३ पर, परांक १४४ के तीर पर मुद्दित है।

मस्त्रत शादर्शने, पत्र २४, ३५, ३६, शीर ३७ शतुपट्य हैं। लेकिन यह प्रबंध Br. P. शीर Ps. संप्रहोंनें भी किचित पाठमेदोंके खाप, और एउ पर्णन-भेदोंके साथ, उपलब्ध होनेसे बुटित भागकी पूर्ति उन संप्रहों परसे कर ली गई है। इसका समाप्तिवाक्य इस प्रकार है−

^{&#}x27;॥ इति श्रीवस्तुपालप्रवंघो गुरुपारंपर्याहिखितो न पुनः खद्यद्या ॥'

इस पंधिके पाद, मस्तुपालकी प्रशंसावाले मे २४ पर्य लिखे हुए हैं जो ए० ७१ से ७३ पर, पर्यांक २२२ से २४६ तक सुदित हैं।

५० ⁻ पृथ्वीराजप्रवंधः¹ ॥ ४६ ॥	{ प्रा॰ स॰	४२२ ९ 	४०	<i>१९९-</i> ६२००	८५–८७
५१–५२ [विनष्ट ^ª ॥ ४७–४८ ॥]		0 0 0)	0	•	•
५३ नाहडराजप्रवंधः ॥ ४९ ॥	{ प्रा॰ { स॰	- ४६१ ८	•	•	•
५४ लाखणराउलप्रवंधः ॥ ५०॥	{ प्रा॰ { स॰	४६१ ८	५२	§ २२५–२७	१०१-०२
५५–५८ [विनष्ट [°] ॥ ५१–५४ ॥]	•	0 0 0	0	•	0
५९ कुलचंद्रप्रवंधः॥ ५५॥	{ प्रा॰ स॰	५०१ ८ ५०११६	6	§ ३ १	१८-१९
६० भोजप्रवंधः ॥ ५६ (१) ॥	{ प्रा॰ { स॰	0 0 0	•	0	•

¹ ४३, ४४, और ४५ ये ३ पत्र विलुप्त हैं इस लिये यह प्रबंध इस संप्रहमें अपूर्ण ही है। मुद्रित प्रष्ट ८६ की पंक्ति १२ में 'क्ष्ट मुक्तमू। इतः'' इस राज्दके साथ, आदर्शका ४२ वां पत्र समाप्त होता है।

.....व्याहृतम्-भवान् किमपि स्परिति । तेनोक्तम्-न । तृतीयवेलायां मृतकेनोत्थाय योगिनः शिरिइछ्नम् । नाहृदेन स ज्वालितः । वहाँ निक्षितः । स्वयं तटस्थे प्रासादे स्थितः । प्रात्यवलोक्यितः, योगी ज्वलितो न वा । तावत्स्वर्णपुरुपं द्द्र्यं । तस्य वलात् क्रमेण राज्यं प्राप । अर्वुदाद्रौ नाहृद्वतटाकं कारियत्वा गर्जनप्रतोव्याः कपाटमादाय तत्र प्रचिक्षिपे । तथा जावालिपुरे राजधानिः छता । पंडितयक्षदेवस्य मातुलिमिति भणित्वा भिक्तं कर्तुं प्रवृत्तः । एकदा कापि कटके गतस्तत्र सर्वपरिकरो मारितः । मात्रा ग्रुद्धिमलभमानया पंडितः पृष्टः । भागिनेयस्य सारा न प्राप्यते । पं० उक्तम्-एकाकी वस्त्रं विना मध्यरात्रौ समेत्य गुक्तायां स्थास्यित, तत्र चीवराण्यादाय जनः प्रेष्यः । स तत्र स्थितः । तस्य मिलितम् । वस्त्रपरिधानं कृत्वा मध्ये समायातः । मात्रा पंडितेनोक्तं कथितम् । तद्रतु हृष्टः । एकदा पंडितेनोक्तम्-वस्त ! असाकं योग्यं किमपि कीर्तनं कार्य । भूमिं द्र्ययत । पंडितेन भूमिर्द्शिता । तत्र नाहृद्वसद्दाति प्रासादः पं० यक्षदेवनाम्ना कारितः । एवं नमस्कारमभावाद् विपद् गता । सुवर्णपुरुषः प्राप्तः । स नाहृद्वराज्ञा जावालिकुंदे निक्षितः ॥ इति नाहृद्वराजप्रवंधः ॥ ४९ ॥

4 मूल आद्शेंके ४७, ४८ और ४९ ये ३ पन्ने निल्जप्त हैं इसिलिये इस प्रवन्धके समाप्ति-सूचक पत्रांकादि नहीं दिये गये। परंतु ४६ वें पन्नेमें जो इस प्रवन्धक अन्तिम शब्द उपलब्ध है उस परमे यह कहा जा सकता है कि अगले पत्रकी पहली ही पंक्तिमें यह प्रवन्ध समाप्त हो गया होगा। यह अन्तिम शब्द 'जींद्राज्ञ' है जो मुद्रित प्रष्ठ १०२ की पंक्ति २८ में दृष्टिगोचर हो रहा है।

5 ५० वें पत्नेमें जो कुलचन्द्र प्रयन्ध उपलब्ध है उंसका क्षमांक ५५ दिया हुआ है, इसलिये, ऊपरवाली टिप्पनीमें सूचित किये गये ४७, ४८, सीर ४९ इन ३ विनष्ट पत्नोंमें ५१ से ५४ तकके ४ प्रवन्ध विलुप्त हो गये हैं।

6 इस ५० वं पन्नेमं जो वर्णन विद्यमान है वह सब भोजप्रवन्ध विषयक ज्ञात होता है और उपर्युक्त कुलचन्द्र नामक प्रवन्ध मी टिसीका एक अवान्तर-सा प्रकरण है। मुख्य प्रवन्ध जो भोज नृप विषयक है उसका ३६ वां पद्य, इस ५० वें पत्रकी पहली पंक्तिमं समाप्त होता है। अन्तिम पंक्तिमं जो पद्य पूर्ण होता है उसका कमांक ६० है। इससे यह विदित होता है कि, पिछले विनष्ट ३ पन्नोंमं से, कमसे कम ४९ वां पत्र तो इसी भोजप्रवन्धके वर्णनसे व्याप्त होगा, और कुछ गद्य पंक्तियोंके साथ १ से ३६ तकके पद्य उसमें होंगे। शेप ४७ और ४८ इन दो पन्नोंमं किस किस विषयके प्रवन्ध ये उसके जाननेका कोई साधन नहीं रहा। इसी तरह यह भोजप्रवन्ध भी कितना वडा होगा, त्या अगले कीनसे पन्नेमं समाप्त हुआ होगा; उसके ज्ञानका भी कोई उपाय नहीं है। क्यों कि ५० के वाद, ७० तकके एक साथ २०, पन्ने अप्राप्य हैं। इन पन्नोंमं भोजप्रवन्धके अतिरिक्त और भी ३-४ प्रवन्ध विनष्ट हो गये हैं। ७९ वें पत्रमें जो 'सिद्धसेनदिवाकरप्रविवोध-प्रवन्ध' पूर्ण होता है उसका कमांक ६० दिया हुआ है।

² ऊपरवाली टिप्पनीमें स्चित किये मुताबिक यहां पर आदर्शके ३ पत्र विल्ञप्त हो जानेसे पृथ्वीराजप्रवन्धके वादके दो बीर प्रवन्ध संपूर्णतः नष्ट हो गये हैं । वे प्रवन्ध किस विषयके ये इसके ज्ञानका कोई साधन नहीं है ।

³ विनष्ट पत्र ४५ में इस प्रवन्धका आदि भाग नष्ट हो जानेसे, और, इस B संप्रहके तिवा अन्य P आदि संप्रहोंमें इसकी प्राप्ति न होनेसे प्रतावित संप्रहके चाद्र कममें इसकी स्थान नहीं दिया जा सका । पत्र ४६ में इसकी सिर्फ निन्नोन्द्रत रोप पंक्तियां प्राप्त होतीं हैं।

६१-६३ [अनुपलग्ध ॥ ५७-५९ ॥]	000	•	•	0
६४ सिद्धसेनदिवाकरप्रतिवोध- प्रवंधः ॥ ६०॥	{म्रा० ~ ~ ~ स० ७३१ ६	•	٥	•
६५ हरिभद्रसूरिप्रवंधः ॥ ६१ ॥	{ प्रा॰ ७११ ७ स० ७२११२	५४	§२२९–३०	१०३-०५
६६ सिद्धर्षिप्रवंधः ॥ ६२॥	र्पा० ७२११३ स०	द द	§ २३१	१०५-०७
६७ [विनष्ट ॥ ६३ ॥]	000	0	•	0
६८ श्रीपालकविप्रवंधः ॥ ६४॥	{त्रा॰	•	•	0
६९ पड्दर्शनप्रयंधः ॥ ६५॥	{ प्रा॰ ७५१ ९ स॰ ७५११४	९	§ ३२	१९
७० नीलपटवधप्रवंधः ॥ ६६॥	्रिया० ७५११४ स० ७५२ ४	१०	§ ३३	१९
७१ देवाचार्यप्रवंधः ॥ ६७ ॥	र्गा० ७५२ ५ स०	१६	§ <i>५३–</i> § <i>५</i> ५	२५ –३०

¹ उपर्युहिरित टिप्पनीमें सूचित किये गये मुताबिक इस प्रयम्धकी लिफ ५-६ पंक्तियां ही, विद्यमान पत्र ७१ में, उपलब्ध हैं; इसिटिये यह अपूर्ण प्रयम्थ प्रस्तुत संप्रहमें सम्मीलित नहीं किया गया।

तेजस्विवातसन्ये नभसि नयसि यत्रांशुपूरप्रतिष्ठाम् । अस्मिन्नत्थाप्यमाने जननयनपथोपद्रवस्तावदास्तां सोहुं शक्यं कथं वा वषुषि कलुपतादोप एप त्वयैव ॥ ४ ॥

एकचक्षविंदीनोऽयं शुक्रोऽपि कविरुच्यते । चक्षुर्द्वयिवद्दीनस्य शुक्ता ते कविराजिता ॥ ५ ॥ नृपेणोक्तम्-िकमपि परं पृच्छवताम् । भगवता समस्यापिता-'अन्ध ! क्रियन्ति वियन्ति भवन्ति ।'

'एकमनेकिमदं वियदासीन्मध्यमवाष्य घटप्रभृतीनाम् । तहत्तेषु घटादिषु नप्टेप्वन्ध ! क्रियन्ति वियन्ति भवन्ति ॥ ६॥

पुनर्रापतावक चट तपसे त्वं शाखिनि कापि सान्द्रे
धय झटिति तटिन्याप्टिहिभस्त्वं तटानि ।
इह सरिस सरोजच्छन्ननीडे समंताछित्रगतिरिदानीं रंस्यते राजहंसः ॥ ७॥

भगवज्ञत्तारके गत्वा स्थानमार्जारयोरमेश्यं युगलान्वितं सरस्ति प्रति होमं प्रारेमे । देव्युवाच-रे ! मम शर्गारे स्फोटकान् किमुत्थापयित । तेनोक्तम्-मया सप्त भवानाराधिता । पट्सु भवेषु स्तोकस्तोकमायुर्मत्वा सप्तमे पाहल्यादायुप एवं याचिता 'यदहमजेयो भृयासं,'मयाऽच पत्तने श्रीदेवाचार्याणां पुरतस्तथा श्रीपालस्य पुरतो हारितम् । देव्याह-मया पत्तनं वर्जितमासीत्,कथं नु त्वमिहायातः । सनुपस्य छत्रं निःस्त्य गतः ॥ इति श्रीपालकवेः प्रवन्धः ॥६४॥

4 प्रस्तुत B संप्रहमें, इस प्रवन्धनी विर्फ वे ही ६ पंक्तियां विद्यमान हैं जो मुद्रित पृष्ठ २६ की टिप्पनीमें दी गई हैं। आगेका भाग पहाँ है जिन्द होतानेसे राज्यित है। यह प्रवन्ध BR संप्रहमें भी, कुछ पाठमेद के साथ, उपलब्ध होता है इसिलये इसकी स्थानपूर्ति, उसी संपर्द परसे की गई है।

² ७२ के पाद ७३ नीर ७४ ये दो पत्र विद्धप्त हैं इसिलये यह प्रयन्ध अगले पत्रमें किस जगह समाप्त होता है सो अज्ञात है। इस आदर्शके तिया Bn संप्रहमें भी यह प्रयन्ध राता है इसिलये इसकी शेषपूर्ति वहीं से की गई है। इस प्रतिमें, यह प्रयन्ध, सुदित पृष्ठ १०६ की पंचि २४ में आये हुए 'निवेदितः' शहके साथ खण्डित होता है।

³ विरामान ७५ वें पत्रमें इस प्रवन्धकी नीचे सी हुईं सिर्फ शन्तिम ८ ही पंक्तियां उपलब्ध होतीं हैं। और सब विशेष भाग पिछले पिछम पत्रमें विनष्ट हो गया है, इसिटिये इस शुटित प्रकरणको भी प्रस्तुत संप्रहके चाल्न क्रममें स्थान नहीं दिया गया।

§९. (३) BR संज्ञक संग्रह

पाटणके सागरगच्छके उपाश्रयमें सुरक्षित यन्थ-भण्डारमेंसे हमें इस संग्रहकी प्राप्ति हुई है। भण्डारकी सूचिमें इसका नाम आदाराजादिप्रयन्ध लिखा हुआ है। वर्तमान सूचिके सुताविक, इसका डिट्या नं० १८, और प्रति नं० ५० है। इसकी पत्रसंख्या छुल ७ है। पत्रोंकी नाप लंदाईमें प्रायः १० इंच और चौडाईमें ४ई इंच है। इसमें सब मिला कर कोई २३ प्रवन्ध लिखे हुए हैं जिनमेंसे ५–६ प्रवन्धोंको छोडकर शेप सब प्रायः उपर्युक्त B संग्रहके साथ पूर्ण समानता रखते हैं। इस संग्रहका लिपिकती पंडित रिवर्द्धन गणि है। यद्यपि लेखकने इस प्रतिके लेखनकालकी सूचक कोई मिति आदि नहीं दी है—केवल 'लिखितं पं० रिवर्द्धनगणिभिः।' इतना लिखकर अपना नामनिर्देश मात्र किया है—तथापि इनके हाथके लिखे हुए बहुतसे ग्रंथ और पत्रादि पाटण वगैरहके भण्डारोंमें जो हमने देखे हैं और जिनमेंसे छुल पर संवत् मिति आदिका मी उल्लेख किया हुआ मिलता है, उससे इनका अस्तित्व विक्रमकी १८ वीं शताब्दीके पूर्व भागमें निश्चितत्या ज्ञात होता है। इस कारणसे, यह संग्रह कोई ढाई सो पौनेतीन सो वर्षका पुराना लिखा हुआ कहा जा सकता है। विशेपतया B संग्रहके साथ समानता रखनेसे, और पं० रिवर्य्वनका लिखा होनेसे इस संग्रहका संकेत हमने Ba अक्षरोंसे किया है। इसमें संग्रहित प्रवन्धोंके कमादिका सूचन करनेवाली संपूर्ण तालिका इस प्रकार है।

		•	•			
\mathbb{B}	संइक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुक्रम		श्रस	तुत पुस्तक	में मुद्रित क्रम	
	प्रवन्धनाम	पत्र. पृष्टि. पंक्ति	Bसंग्रहका क्रमांक	प्रवन्धांक	प्रकर्णांक	पृष्टांक
१	· कपर्दियक्ष-जावडिप्रवन्ध	{ प्रा० १२ १ स० १२१७	•	५१	§ २२४	१००
२	आदाराजप्रयन्धं 🏻	∫प्रा० १२१७ {स० १२२१	•	इ५	§ <i>११६</i>	५३
Ę	ंभर्तृहरोत्पत्तिप्रयन्ध	{ व्रा॰ ३२२२ { स॰ २१ ३	११ -	•	•	•
8	मानतुङ्गसूरिप्रवन्ध	{प्रा० २१ ३ {स० २१२५	<i></i> 88	६	§ २४- § २७	१५
લ	अभयदेवसूरिप्रवन्ध	{प्रा॰ २१२५ स० २२१५	१६	४६	§ <i>२१४-१</i> ५	९५
Ę	*मोरनागप्रवन्ध	{प्रा॰ २२१५ {स० २२१८	१०	•	•	0
૭	छ् णिगवसहीप्रवन्ध	∫प्रा० २२१८ {स० २२२५	२३	₹४	§ ११४	५३
6	अम्विकादेवीप्रवन्ध	{प्रा० २२२५ {स० ३१ ३	२८	४८	§ २२०	९७
9	दरिद्रनरऋयप्रवन्ध	{ प्रा० ३१ ३ स० ३१११	३०	8	88	२
१०	्मनइ मन इति प्रवन्ध	{श्रा॰ ३१११ स० ३११४	३३	55	80	G
११	नागार्जुनप्रवन्ध	{ प्रा० ३१ १५ स० ३२ ३	٥	४३	§२०८-०९	९१
१२	महं सांतूप्रवन्ध	{ प्रा॰ ३२ ३ स॰ ३२१२	88	१९	§ ५८	३१

¹ इस प्रवन्धकी समाप्तिके याद प्रतिमें यहां पर वे २ पद्य लिखे हुए हैं, जो प्रस्तुत पुस्तकके पृ० ३१, पद्यांक ९५-९८ के साथ मुद्रित हैं। इनमें भारासणके नेमिनाथ चैखकी प्रतिष्ठाका वर्णन है।

[†] यह प्रवन्ध, प्रवन्धिचन्तामणिगत इसी नामके प्रवन्धिकी प्रायः शब्दशः प्रतिकृति है इसलिये इसको प्रस्तुत संप्रहमें मुद्रित नहीं किया गया । देखो, ऊपर पृ० १२ की 3-6 वाली टिप्पनी ।

^{*} देखो, उत्पर पृ॰ १३ पर की गई इसी प्रवन्ध परकी टिप्पनी।

१३	वसाहआभडप्रवन्ध	{ प्रा० ३२१२ { स० ३२२६	४६	२ १	<i>६६</i> १	३३
१४	न्याये यद्योवर्मप्रवन्ध	्रिया० ह३ ३ (आ० ह३ ३	88	<i>७</i> ७	§ २३३ ·	१०७
१५	अंबुचीचप्रवन्ध	∫ प्रा० ४३ ८ { स० ४११४	86	96	§ २३४	२०८
१६	दात्रिंशद्विहारमतिष्टाप्रयन्ध	(प्रा० ४११९ स० ४२ ३	0	39	७८ ह	४४
	्वप्य भट्टिप्रवन्धान्तर्गतप्रकर्ण	∫ प्रा० ४२ ४ {स० ४२ ९	•	•	•	0
१८	सिद्धर्षिमवन्ध	{ प्रा० ४२१० { स० ५१ ६	६२	५ ५	§ २३१	१०५
१०	माघपण्डितप्रयन्ध	∫ प्रा० ५३ ६ { स० ५२१३	•	9	§ २८-३०	१७
२०	भोजपड्दश्निप्रयन्ध	(प्रा० ५२१३ (स० ५२१५	हद	9	§ ३२	१९
२१	देवाचार्यप्रयन्ध	{ प्रा० ५२१६ स० ६२२१	६७	१६	§५३-५५	२५
२२	फलवर्द्धितीर्थप्रयन्ध	{ प्रा० ६२२२ स० ६२२५	0	28	§ ५७ ं	38
२३.	- जिनप्रभसूरिप्रवन्ध	∫ प्रा० ७१ १ {स० ७२२०	٥	٥	٥	•
§१०	.(४) G संज्ञक संग्रह	•				

राजकोट (काठियावाड) निवासी जैन गृहस्थ श्रीयुत गोकुलदास नानजीभाई गान्धीके निजी पुस्तक संग्रहमेंसे यह प्रति हमें प्राप्त हुई है। गोकुलदास नामका सूचन करनेके विचारसे इस प्रतिका संकेत हमने G अक्षरसे किया है। इसकी पत्रसंख्या कुल १९ है, लेकिन वीचमें ८ के वादका १ पत्र विलुप्त हो गया है इसिलिये अब इसके १८ ही पत्रे विद्यमान हैं। ये पत्रे चौढाईमें १६ ई इंच और लंबाईमें १२ ई इंच जितने हैं। पत्रके प्रत्येक पार्श्वमें १५-१६ पंक्तियां लिखी हुई हैं। लिखावट बहुत अच्छी है—अक्षर सुवाच्य और सुन्दराकार है। प्रति कहीं, कभी, पानीसे कुल भींग गई माल्म देती है और इसिलिये किसी किसी पत्रेका कुल कुल हिस्सा एक दूसरे पत्रेके साथ चिपक जानेसे, कहीं कहीं कुल अक्षर या शब्द नष्ट हो गये हैं। प्रस्तुत पुस्तकके पृष्ट ३५ और ४५ आदिमें जो खण्डित पाठ दिया हुआ दिसाई देता है, वह इसी सवयसे है। प्रति अच्छी पुरानी है। लेकिन, खेद है कि लेखकके नामादिका कोई निर्देश नहीं गिलता। इसके अन्तमें जो पातसाहिनामावलि लिखी हुई है उससे इतना अनुमान किया जा सकता है कि, वि० सं० १४०७ के बाद, दिलीके बादशाह पेरोज (फिरोजशाह) के राज्यकालमें यह लिखी गई होनी चाहिये।

यनापि, यह संग्रह एक प्रकारसे संपूर्ण ही है-आद्यन्तका कोई भाग खण्डित नहीं है, लेकिन, इसके पत्रोंपर जो मृलभृत कमांक लिखे हुए हैं उनसे सूचित होता है कि यह एक किसी बहुत बडी पोथीका एक छोटासा हिस्सा मात्र है। पत्रोंक ये मूलभृत कमांक प्रत्येक पत्रेकी दूसरी पूंठी (पृष्टि) पर, दाहिनी ओरके हासियेके मध्यभागमें, गेरूआ रंगसे रंग हुए चंद्रक पर लिखे हुए हैं। इसमें प्रथम पत्रका यह कमांक १२६ है और अन्तिम पत्रका १४४।

[‡] मप्पभित्ति प्रवन्धमें का एक प्रकरण इस संप्रहमें लिया हुआ मिलता है लेकिन अन्यान्य संप्रहोंमें इस विपयका कोई प्रकरण या पर्णन न होने छे हमने इसको मूल प्रन्थमें सम्मीलित नहीं किया। यप्पभित्ति सम्बन्धमें अनेक ऐसे छोटे वडे खतंत्र प्रयन्ध लिखे हुए भन्नारोंमें मिलते हैं, और इन सबका एक खतंत्र प्रयक्त संप्रह करनेका हमारा संकल्प है। इसलिये प्रस्तुत संप्रहमें इस प्रकरणको केवल संप्रहित रिथ्से टिप्पनीके परिश्रिष्ट रूपमें दे दिया है।

^{ा ि}नप्रभक्तिया सम्बन्ध प्रवन्धिनिन्तामणि वर्णित म्यक्तियोंके साथ न होनेसे तथा विविधतीर्थव्हल नामक प्रन्थ, जो इन्हींकी एक विविध एति हैं और इस मन्यमालामें इतः पूर्व मूल इपसे प्रकाशित भी हो चुका है, उसके द्वितीय भागमें इनके विवयका समप्र साहित्य एकत्रित करनेका निर्भार है, इमिनि, इस प्रवन्धिनों भी प्रम्थान्तर्गत नहीं दिया गया। वर्रतु संप्रहुमात्रकी दृष्टिसे टिप्पनीके परिविध्में सुद्रित कर दिया गया है।

इससे ज्ञात होता है कि इस पोथीमें, इन पत्रोंके पहले, १२५ पत्रे और अवश्य ये। लेकिन जब तक वे कहींसे मिल न आवें तब तक, उन पत्रोंमें क्या लिखा हुआ था उसके जाननेका कोई उपाय नहीं है।

§११. G संग्रहका आन्तर परिचय

यह संग्रह, ऊपरके P. B. Br. संग्रहोंके जैसा कोई सुसंकित या सुप्रियत ग्रन्थस्तरूप नहीं है। यह एक प्रकारका, पुरानी कथा वार्ता विपयक संक्षिप्त टिप्पणोंका प्रकीर्ण संग्रह मात्र है, जो किसी विद्वान्ते अन्यान्य प्रन्थोंमें पढ कर या अन्य जनोंके मुखसे सुन कर निजकी स्मृतिके िर्य िर्य िर्य हिं। इसमें, प्रारम्भमें जो विक्रमादिस प्रवन्थ िर्या हुआ है वह एक मात्र किसी पुरातन िरिस्त-प्रवन्धकी अनुिर्यि-रूप है; और वाकी सब इस संग्रहके िरिफर्ताका स्वयं किया हुआ संक्षिप्त और अन्यवस्थित संचयन है। इसमें, विक्रमादिस प्रवन्धको छोड कर कोई १३५-३६ कथा-वार्ताओंका संचय है। इसमें न किसी प्रकारका कोई कम है, न पूर्वापरका कोई सम्बन्ध है; न भापाकी संस्कारिता है, न वर्णनकी न्यवस्थितता है। एक ही न्यक्तिके विपयकी कोई वार्ता कहीं िरस्त मुक्त भाम केह कहीं। इनको कुछ न्यवस्थित रूप देनेके िरवे हमने इन सबको अलग छांट छांट कर, प्रस्तुत पुस्तकमें, प्रवन्धिनत्ताम-णिगत विपयवर्णनके क्रममें संकितित की हैं। जैसे कि सिद्धराजके साथ सम्बन्ध रखनेवाली सब वार्ते सिद्धराजके वर्णनप्रसंगमें एकित्रत दे दी हैं और वस्तुपालके इतिष्ठक्तके साथ सम्बन्ध रखनेवाली वार्ते वस्तुपालके प्रवन्धके साथ प्रित कर दी हैं। वसे ही प्रकीर्ण वा फुटकर जो दृष्टान्तादि हैं उन सबको अविद्याछ प्रकरणके रूपमें एक जगह संकित कर दिया है (देखो, ह. ११२ से ११५)।

· इस संग्रहमें ये सब कथा-वार्ताएं किस कममें लिखी हुई है उसका यथार्थ वोध होनेके लिये, P. B. आदि संग्रहोंकी सृचिके मुताबिक इसकी संपूर्ण सूचि भी यहां पर, उसी तरह विस्तारके साथ दी जाती है।

K 11. 2 2 K. K						
G संग्रक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुक्रम					प्रस्तुत पुस्तकमें मुद्रित कम	
. प्रबन्धनाम		पत्र. १	मृष्टि.	पंचित	प्रकरणांक	पत्रांक
ं विक्रमार्केप्रयन्ध	{ प्रा॰ स॰	१२६ १२७	9	3 3	§ ११	6-6
†विक्रमाद्वियमयन्ध्	{ प्रा॰ स॰	१२७ १२८	3	94 90	<i>§ १२</i>	८− ९
१ जयसिंह्देवसभाक्षोभवृत्तान्त	स°	१२८	\$	१२	६७२	इंद
२ सभाक्षोभविषयक अन्यवृत्तान्त	स°	55	8	१५	§ २५ <i>२</i>	११४
३ जीव-इन्द्रियसंवादवृत्तान्त*	स°	53	3	२	•	0
ं ४ गूर्जरविद्वत्ताविषयक डामर-भोजसंब	दस°	33	3	é	S # 8	२१
५ अनुपमाकारितनन्दीश्वरप्रासादकथा	स°	33	3	28	<i>६१६</i> ५	95
६ भोजराज-सिद्धरसवर्णनवृत्तान्त	स°	33	5	१५	इ ४३	२२
७ हेमस्रिरमातामरणवृत्तान्त	स°	१२९	8	8	९७ ७	₹9
८ वस्तुपाल-नोडासइद धनवर्णन	स°	73	\$	१०	§ १५.८	७इ
९ पृथ्वीराजमृत्युवृत्तान्त	स°	55	2	2	<i>६२०१</i>	୯७
१० देवेन्द्रस्रि-क्रमारपालवृत्तान्त	स°	53	२	Ę	§ १०१	४७

[†] विक्रमिष्यक इन दोनों प्रयन्थोंके छिये इस संबर्धों कमस्चक संख्यांक नहीं दिये गये हैं; इसके आगेके सब प्रकरणोंके साथ . १. २. ३. ४. आदि क्रमांक बरावर दिये हुए हैं। इससे माल्यम होता है कि ये दोनों प्रवन्ध किसी पुरातनकृतिके अनुलिपि मात्र हैं, और बाकीका सब छिराान, इस संबर्धके छैराकका निजका संकलन हैं।

^{ैं} इस क्याका विषय आध्यातिमक हो कर, प्रस्तुत प्रन्यके विषयके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रराता । इसल्ये हमने इसको मूलमें प्रविष्ट नहीं की, लेकिन संप्रदेशी दृष्टिंगे टिप्पनीके परिविष्टके रूपमें पृथक दे दी हैं ।

११ वीसलदेवगीतिबाक्षणवृत्तान्त	स॰ ,, २ ११	§ १ ७८	ંહર
१२ नागलदेवीगीतोपदेशवृत्तान्त	स° ,, २ १३	§ १७ ९	७९
१३ जगदृवसाहपाप्तअश्ववृत्तान्त	स॰ १३० १ २	§ १८६	્ટ
१४ पृथ्वीपुरश्रेष्ठीवृत्तान्त‡	स्° " १ ४	٥	· . •
१५ गयणा-मयणा इन्द्रजालिकवृत्तान्त	स॰ ,, १६	§ ७०	ं ३६
१६ विक्रमरोगोत्पत्तिवर्णन	स॰ " १ ७	\$ 8 6	१०
१७ मयणहा पापघटवृत्तान्त	स॰ " ११०	§ ६८	ं इह
१८ अभयदेवसूरिवृत्तान्त	स॰ " १ १३	§२४२	११२
१९ वलभी-यवनागमनवृत्तान्त	स° ,, २ १	§ १९ ३	८३
२० अमरचन्द्रकविवृत्तान्त	स° ,, २ ८	§ १७७	90
२१ कच्छदेशीयजिणहाच्यापारीवृत्तान्त	स° " २ ११	§ २५३	११५
२२ यशोभद्रस्रिपारणावृत्तान्त	स° " २ १३	§ २५४	११५
२३ कर्णाटचपपुरुकेशिमृत्युवृत्तान्त	स॰ ,, २१५	§ ६ ०	३६.
२४ जगहूदानवृत्तान्त	स॰ १३१ १ ६	§ १८ ७	60
२५)	स॰ ,, १८		
२६ जगदेवदानवृत्तान्त+	स॰ ,, १ ११	1886	66
२७	770 993		·
२८ सीनापण्डितावृत्तान्त	3	§ % •	78
२९ हेमाचार्यछत्रज्ञिलावृत्तान्त	970 N N	§ ७८	.इ ७
२० भोजराजनमोविधानवृत्तान्त	37 Y	१४१ १४१	्रव
२४ माजराजनमाविवानपृतीयान्त ३१ कालीदाससमस्यापृतिवृत्तान्त	TO 2 9	§ १७	30
३२ नागलदेवी-मयणसाहारवृत्तान्त	aro	\$? </td <td>७९</td>	७९
२२ नागलप्यानयणसाहारष्ट्रतान्त २३ उदयप्रभसरस्वतीध्यानवृत्तान्त	,,	=	७६
३४ कुमारपालराज्यप्राप्तिशकुनवृत्तान्त	77 0 9. 6 .	\$?	४५ ४५
३५ क्णमातादेमतिमृत्युवार्ता	स॰ "१·६ ·	\$ 90	
दर कणमाताद्मातसृत्युवाता इ.इ.स.च्याच्याच्याच्याच्या	स° ,, १ ७	\$ 8 ¢,	7 3
३६ भोजकुण्डलोत्कीर्णकाव्यवाती	स॰ ,, १ ९	§ ४ २	२२
३७ ह्मच्याकरणकरणवृत्तान्त	स° ,, १ १४	ૄ દેશક	₹ 9
३८ भोज-भीम-कर्णयुद्धवृत्तान्त	स॰ " ११७	§४६ १८०	२२
३९ लघुवारभटकृतांपिधवृत्तान्त	स॰ ,, २ ३	§ २१८	क्ष क क क क क क क क
४० वारभरजलोदररोगवृत्तान्त	स° " २ ६	६२१६	
४१ श्रीमातावृत्तान्त	स॰ " २१०	<i>६१९</i> ७	SS

[🙏] इस कथाका भी इतिहासके साथ कोई संपर्क न होनेसे, इसे भी टिप्पनीके परिशिष्टमें सुद्रित की है।

⁺ पदांक (२०१) के बाद जो ३ व व्यवसाय दी गई हैं और जिनमें क्रमसे (२७२), (२७४), के पवांक दिये हुए हैं थे ही दीन पश्चिम में में २५, २६, चीर २७ संस्या वाली कथायें समझनी चाहिए।

४२ वराहमिहिरवृत्तान्त	स° ,, २१३	§ २०७	. ९०
83 *	स° ,, २ १४	•	•
४४ रामवनवासफलभक्षणवार्ता‡	स° ,, २१५	•	•
४५ घृतवसतिकाउत्पत्तिप्रवन्ध	स॰ १३३ १ १	<i>६१६६</i>	৩২
४६ हेमसूरि-वादि-शब्दच्छलवृत्तान्त	स° ,, १ ५	१७ २	হ্বত
४७ यद्योधनव्यवहारिवृत्तान्त	स° ,, १ ११	§ २४३	११२
४८ मयणसाहारनासाच्छेदनवृत्तान्त	स॰ 🔑 १ १५	§ १८0	ଓଟ୍
४९ सारंगदेवप्रधानवृत्तान्त	स॰ ,, ११७	§ २४१	११२
५० सिद्धि-बुद्धियोगिनीवृत्तान्त	स°	१७१	इ६
५१ सिद्धराज-सान्तृमंत्रीवृत्तान्त	स॰ 🧓 २ ११	<i>§ દ્દ</i>	इ५
५२ उन्मत्तप्रधानवृत्तान्त	स॰ ,, २ १४	[§] २४४	११३
५३ मित्रचतुष्कवार्ता	≖∘ ⊃ 28	§ २४५	११३
५४-६१ [विनष्टपत्रांक १३४ तमे नष्टा	एताः सर्वाः वार्ताः]	•	
६२ मुंज-भोज-वन्धमोक्षवृत्तान्त×	स॰ १३५ १ ५	§ ३ ६	२०
६३ भाग्यविपयकराजिलदृष्टान्त	स॰ १३५ १ ७	६२४६	११३
६४ भोजराज-दामरवृत्तान्त	स° " २ २	६ ३७	२१
६५ वाक्पतिराजकविवृत्तान्त	स° ,, २ ४	§ २४०	११२
६६ रात्र्यन्धकथानक	स॰ ,, २ ९	<u>६२४७</u>	११३
६७ व्यवहारिस्रताकथानक	स° ,, २ १३	37	77
६८ चातुर्थिकज्वरघृत्तान्त	स° ,, २ १४	77	75
६९ काचमयपेटीवृत्तान्त	स॰ ,, २ १६	"	११४
७० राजपुत्रीकथानक	स° १३६ १ २	33	77
७१ भोजराज-खात्रपातकवृत्तान्त*ँ	स॰ ,, १ ५	0	0

^{ैं} छिर्फ आधी पंक्तिमें इस ४३ वें प्रयन्धकी सूचना है। इसमें कीनसी वार्ता या कथाका सूचन है सो स्पष्ट ज्ञात नहीं होता। ची आधी पंक्ति लिसी हुई है वह इस प्रकार है—

"विवाहयित्वा यः फन्यां० ॥ १ ॥ इति द्देतोजेलिधभुक्तराजपत्तीसुतसपादलक्षद्वीपार्पणप्रवन्धः ॥ छ ॥ ४३ ॥"

श्रीचित्रकृटवर्यते प्रथमयनवासे सीमित्रिणा वने भ्रान्त्वा वनफलान्यानीय श्रीरामदेवात्रे मुक्तानि । तदा फलानि हृद्वा देवेन निगदितम्-

षृथिव्यामञ्जर्णीयां वयं च फलकांक्षिणः । सामित्रे ! नृनमसाभिः पात्रे दत्तं पुरा नहि ॥ ४ ॥

. × इस यतान्तका प्रारम्भका तुछ कथन, विनय पत्र १३४ में रह गया है इसिटिये इसके प्रारंभमें......ऐसी राण्डित भाग स्चक बिंदुराजि दी गई है।

* अमवश, यह प्रतांत, मूल संपर्धे मुदित होनेसे रह गया है, इसलिये, इसे यहां पर बहुत कर दिया जाता है-अन्यदा श्रीभोजेन निद्रिा साधोपिरिस्थितेन निजराज्यस्य स्फाति विलोक्य गविंतेन प्रोक्तमिति-चेतोहरा युवतयः स्वजनोऽनुकूलः

सद्वान्धवाः प्रणयगर्भ [गिरश्च भृत्याः । गर्जन्ति दन्तिनिवद्वास्तरलास्तुरद्वा.....]

[🛨] प्रस्तुत प्रन्यमें उपयोगी न होनेसे इस वार्ताको भी हमने प्रन्थान्तर्गत नहीं किया । यह इस प्रकार है-

७२ गृहमहाकालोत्पत्तिवृत्तान्त	स॰	,,,	१	??	११५	१०
७३+ जगद्देवदानवृत्तान्त	770	*: 57	8	१३	§ १९८ † · · ·	24
७७ वराहमिहिरवृत्तान्त	770	5 5	२	?	§ २०७	९०
७८ चारभटवेचवृत्तान्त	770	55	ર્	8	<i>६२</i> १७	९६
७९ वीसल्देवचधुपीडावृत्तान्त	370	"	ર્	१०	§१८ २	ं ७९
८० कुमारपाल-कालिंगीयकवृत्तान्त	270	55	२	११	१९३	४६
८१ ,, द्विकलत्रव्यवहारिवृत्तान्त	770		२	१५	§ 9 8	55
८२ सोमेश्वरकृत वस्तुपालप्रशंसा		30	१	ą	११३१	હેંજ
० 'सातवाहनसम्यन्धिगाथावृत्तान्त	स°	"	१	११	§ १९	११
८३ जलोदररोगि-आचार्यवृत्तान्त	æ°ं	,, ,,	8	१३	§ २४८	११४
८४ द्यावतपोधनकवितावृत्तान्त	770	> 7	ξ	१६	§ १ इ	१०
८५ वस्तुपारुअन्सयात्रावृत्तान्त	770	,, ,,	२	2	§ १७५	96
८६ कुमारपालदाकुनप्राप्तिवृत्तान्त	770	"	7	G	§ ८८	४३
८७ कुमारपालराज्यनिवेदावृत्तान्त	2779	 55	२	१४	§ 98	"
८८ कुमारपाल-कडीतलारक्षवृत्तान्त	_	36	?	२	. § ९२	. ઇંદ
८९ कुलचन्द्रक्षपणकवृत्तान्त	स॰	"	ξ	G	§ ३ ९	38
९० क्रप्ररोगि-आचार्यवृत्तान्त	770	35	१	१२	· § २४ ९	११४
९१ साम्रद्रिकशास्त्रवेदिवृत्तान्त	770	"	8	१४	§ १४	१०
९२ लाखाकफुल्लडवृत्तान्त	33 9	"	२	8	§ २ १	१२
९३ वनराजजनमञ्जानत	770		२	१२	§ २ ०	,,
९४ जयसिंहकृतधाराभंगवृत्तान्त		३९	१	8	§ ६५	इंद
९५ ,, त्रिभुवनपालघातवृत्तान्त	स॰	"	ξ	9	§ ७३	इद
. ^{९६} कुमारपालखणेंसिद्धीच्छावृत्तान्त 🚶	270	"	१	૭	§ ९ ७	४६
,, सिद्धराजग्रणतुलनावृत्तान्त ∫		"	\$	ó	\$96	४७
९७ अम्याकारितपद्यावृत्तान्त	270	"	१	११	800	"
९८ अजयपाल-कपर्दिमंत्रीवृत्तान्तं	स°	55	8	१३	§ १०६	88

वारं वारं पदत्रयमिति पटयमाने दरिद्रोपहुतेनैकेन पण्डितेन खात्रपातं कुर्वता इति पटितम्-"संमीलने नयनयोर्निखिलं न किञ्चित्।"

इत्युक्ते राजा धीरां दत्त्वा प्रसादितः॥ ७१॥

+ मूल भादरीमें ७३, ७४ और ७५ ये फ़माह छोट दिये गये हैं और ७२ के बाद ७६ का अंक दिया हुआ है। इसका कारण कुछ रामानमें नहीं भाता। यया भूलसे ऐसा किया गया है या अन्य किसी विचारसे सो अस्पष्ट है।

† ए॰ ८५ पर जो जगदेव प्रयन्ध दिया हुआ है उसकी प्रथम कण्डिका मात्र ही [पंक्ति १० से १६ तक] इस कर्मांक वाळे यृत्तान्तका भाग है। शेव ३ कण्डिकार्ये जयर निर्दिष्ट २५, २६, २७, कर्मांक वाळे यृत्तान्तकी अंशभृत हैं।

∆ ए॰ ७४ परकी पंचित १८ से २६ तकका अंदा।

1 इन गायाओंके साथ कोई कमांक नहीं दिया गया है।

े गृतमें इसका फमांक भी ९७ ही लिया हुआ है और यह गलती आगेके सभी क्रमांकोंके साथ चलती रही है । इसी तरह आगे १०९ ीर १९६ फमांक भी दो दो दफा लिये हुए हैं।

९९ आम्बङ्कृतमह्यिकार्ज्जनवधवृत्तान्त	स॰ १३९	१२	G		४६
१०० आम्यडोचारितप्रतिज्ञावृत्तान्त	स° "	२	9	६ ९६	75
१०१ भृगुकच्छीयवालहंससूरिवृत्तान्त	₹1° ,,	२	१०	§ १७१	૭ ૬
१०२ राजीमतीछिंपिकावृत्तान्त	स°		१४	§ १८३	८०
१०३ ^६ हेमाचार्योक्तकुमार्पालमृत्युवृत्तान्त	'स° ं,	२		§ १०२	૪૭
१०४ कुमारपालमृत्युपसंगवृत्तान्त	स॰ १४०	ş c	?	§ १०३	"
१०५ सोमेश्वरत्यक्तव्यासवृत्तिवृत्तान्त	स° "	\$	इर ५	§ १८ ४	60
१०६ विक्रमादिल-कापिटिकवृत्तान्त	स° "	\$	Ģ	§ १३	9
१०७ वस्तुपालदानवृत्तान्त	स° 55	8	Ę	§ <i>१६२</i>	७४
१०८ ख्लकृतवस्तुपालनिन्दावृत्तान्त	स° "	8	११	§ १६३	55
१०९ भोजराजप्रदत्तवैद्यग्रासवृत्तान्त	स° ,,	7	२	888	२२
११० लघु-घृद्-वाग्भटवैचयृत्तान्त	स° ,,	२	લ	§ २१८ [±]	९७
१११ षड्दर्शनसम्मेलनवृत्तान्त [°]	स° ,,	२	9	§ ३२	१९
११२ वस्तुपालमंडितचचरवृत्तान्त	स° "	२	??	§ १ ६ ९	ওই
११३ देपाकदत्तपुण्यवृत्तान्त	स॰१४	? ?	\$	§ १५ ९	७३
११४ व्यवहारिजगडूवृत्तान्त	स° "	\$		§ १८ ५	60
११५ पुञ्जराज-श्रीमातावृत्तान्त	स° "	\$	Ę	§ १९७	८४
११६ पादलिप्त-नागार्जुनवृत्तान्त	स° "	8	१०	§ २१३	68
११७ वामनस्थलीयपण्डितवृत्तान्त	स° ,,	8	१२	§ २५०	११४
११८ व्यवहारिमुख-उन्दरिकावृत्तान्त	स° ,,	8	१४	§ २५ <i>१</i>	55
११९ वलभीविनादासूचनवृत्तान्त	स° "	2	१	§ १९४–९५	८३
१२० वस्तुपालकृतसंघामंत्रणवृत्तान्त	स° ,,	2	3	§१ ६८	હલ
१२१ वस्तुपाल-माणिक्यसूरिमीलनवृत्तान्त		२	१४	§ १७२	৩इ
१२२ हरिहर-मदनकविद्वयवृत्तान्त	स॰ १४३	११	8	§ १७३	99
१२३ कुमारपालसन्तत्यभाववृत्तान्त	स° ,,	\$	Ę	§ ८९	४५
१२४ कुमारपालसोमेश्वरदर्शनवृत्तान्त	स° "	8	9	§ १००	૪૭
१२५ मयणहामोचितवाहुलोडकरवृत्तान्त	स° "	\$	S	§ इ.o	इ६
१२६ हेमसूरिसर्वरसवेदकवृत्तान्त	स° "	१	१२	§ ७६	3 9
१२७ रामकृतधान्यकुदालप्रच्छावृत्तान्त	स° ,,	?	१६	§ २५५	११५
१२८ पादलिप्रसूरिकृतवादिपराजयवृत्तान्त	_	२	३	<i>६</i> २१ ३	९५
	٠٠.				

³ प्रतिमं गलतीसे इसका कमांक दुवारा १०१ दिया गया है।

⁴ पृ०९७ की पंक्ति ४ से ८ तकका अंश।

⁵ पृ० १९ पर मुद्रित पङ्दर्शनप्रवन्धका संक्षिप्त स्वन मात्र किया गया है इसलिये यह पंक्ति संप्रहमें पुनर्मुद्रित नहीं की गई।

I पृ॰ ९५ पर, मुद्रित पंक्ति ३ से ७ तकका अँश ।

१२९ खरतराचार्यप्रदर्शितद्यावृत्तान्त	स॰ १४	४२ २	6	§ २५ <i>६</i>	११५
१३० चारणकृतयशोवीरप्रशंसावृत्तान्त	स°,	ລ	22	\$ ११	-५१
१३१ राज्ञीस्रातृबुद्धिपरीक्षावृत्तान्त	 0	, २	१५	<i>§</i> २६७	११ ५
१३२ पं० रामचन्द्रविपत्तिवृत्तान्त	स° ११	-	ર	. § १०७	. 88
१३३ वस्तुपालसैनिकभृणपालवृत्तान्त	TT 0	,	G	\$ १६० .	. ં. ७૪
१३४ सोमेश्वरकृतवस्तुपालस्तुति	π°	,, ?	6	§ १६१	55
१३५ वामनद्विजकृतवस्तुपालचाडावृ०		٠, ١	१६	§ <i>१६</i> ४	. 94
१३६ वस्तुपालकारितमृलराजहस्तच्छेददृ०	770	,, २	२	§ १७४	99
१३७ पिप्पलाचार्यप्रदर्शितविनोददानपृ०	77°	,, ર	G	§१ ६७	७६
१३८ हरदेवचाचरीयाकवृत्तान्त			१२	§ १७६	30:
१३९ पाटलीपुरीयनन्दचपवृत्तान्त	 0	•	१५	§ १८९	. ८२
१४० जयचन्द्रचपवृत्तान्त	स° १	, -	9	६२०६ .	60
पातसाहिनामावलि	स°,	,, २	9		१इंद
	*	. •			

११२. (५) Ps संज्ञक संग्रह

पाटणके संघके नामसे प्रसिद्ध प्रन्य भण्डारमें ६ पन्नोंकी एक प्रति हमें मिली जिस पर वस्तुपाल-तेज:पालप्रवन्ध ऐसा नाम लिखा हुआ है। पाटणके संघका नाम सूचित करनेके लिये हमने इसका संकेत Ps अक्षरसे किया है। नाम मात्र देखनेसे तो ऐसा भ्रम होता है कि यह वही प्रवन्ध होगा जो राजशेखर सूरिके प्रवन्धकोपमें अन्तिम भागमें प्रथित है; क्यों कि इस प्रयन्थकी स्वतंत्र प्रतियां भी कहीं कहीं दृष्टिगीचर होती हैं। लेकिन प्रतिका प्रयक्ष अवलोकन करने पर विदित हुआ कि यह प्रवन्ध राजशेखरकृत प्रवन्धसे सर्वथा भिन्न है। उतना ही नहीं परंतु इस प्रवन्धके प्रणयिताका उद्देश तो उक्त प्रवन्धकोपगत वस्तुपाल-तेजपाल प्रवन्धमें जो जो वातें अनुहिखित रहीं हैं, खास करके उन्हींका संग्रह करनेका है। इस वातका उहेख प्रवन्धप्रणेताने स्वयं प्रकरणके प्रारम्भ-ही-में 'अथ श्रीवस्तुपालस्य २४ प्रवन्धमध्ये यन्नास्ति तद् श्र किश्चिहिरूच्यते। यह पंक्ति लिख कर किया है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि इसका प्रणयन, राजदोखरकृत प्रवन्थके पश्चात् हुआ है। इसका प्रणेता कौन है सो ज्ञात नहीं होता । प्रतिमें कहीं भी कर्ताका नामनिर्देश किया हुआ नहीं मिला । संघके भण्डारकी यह प्रति है यहुत पुरातन। ययि इसमें टिपिकर्ता वगैरहका कोई उद्देख नहीं होनेसे इसका लेखन-समय ठीक निश्चित नहीं कर सकते; तथापि इसकी स्थिति देखते हुए, संभवत: वि० सं० १५०० के पहले या उसके आसपास इसका समय सूचित किया जा सकता है। इस प्रयन्थके प्रणेताने, प्रयन्थगत वृत्तान्तों मेंसे बहुतसे तो B और P संज्ञक पुराने संबहों ही परसे नकल किये माल्म देते हैं। सिर्फ कहीं कहीं कुछ वृत्तान्त या पंक्तियों में न्यूनाधिकता दृष्टिगोचर होती है।

६१३. (६) परिजाप्ट

प्रस्तुत संप्रहके अन्तमें, पृष्ठ ११६ से १३४ तक, प्रवन्धचिन्तामणिगुम्भितकतिपयप्रवन्धसंक्षेप इस शिरोहेन्त्रके नीचे जो १ परिशिष्ट दिया गया है उसकी मूल प्रति हमें अहमदाबादके डेलांके उपाश्रयवाले भण्डारमेंसे प्राप्त हुई हैं। इसकी पत्रसंख्या ५ है। अन्तमें 'श्रीजयसिंहप्रवन्धाः।' ऐसा पुष्पिकावाक्य लिखा हुआ होनेसे भण्डारकी स्िमं 'जयसिंह्पयन्धं' के नामसे इसका निर्देश किया हुआ है। परंतु प्रतिका साचन्त अवलोकन करने पर स्पष्ट हो जाना है कि इसमें, प्रायः प्रयन्धचिन्तामणिसंकलित कितनेएक मुख्य मुख्य प्रयन्धोंका किसी विद्वान्ने संक्षिप्ती-

[×] इस किंग्डादा अस्तिम भाग,-पृ० ५१ की पंक्ति १२ से १७ तक।

करण किया है। इस संक्षेपका कर्ता कौन है सो अज्ञात है, वैसे ही प्रतिके लेखन-समयादिका सूचक भी कोई उड़ेख प्राप्त नहीं हुआ। प्रतिका रूप रंग देखते हुए अनुमान कर सकते हैं कि कोई ३००-४०० वर्ष जितनी पुरातन तो जरूर होगी। प्रतिके हांसियोंमें कई भिन्न भिन्न प्रकारके हस्ताक्षरोंमें टिप्पनादि किये हुए दृष्टिगोचर हो रहे हैं इससे ज्ञात होता है कि इसका पठन वाचन कई जिज्ञासुओंने किया है।

§ **१४. उपसंहार** के किस्तार के किस

इस प्रकार प्रस्तुत संग्रहका संकलन करनेमें हमने मित्र भित्र ऐसे ६ संग्रह ग्रन्थों-का सम्पूर्ण उपयोग किया है; जिनमें ५ तो स्वतंत्र प्रयन्ध-संग्रह हैं और १ प्रयन्धिन्तामिण-ही-के कुछ भागका स्वल्प संक्षेप मात्र है । एक Ps संग्रहको छोड कर शेप पांचों प्रतियोंके कितनेएक पत्रोंके हाफ्टोन च्लाक वनवा कर उनकी प्रतिकृतियां इसके साथ संलग्न कर दी गई हैं जिससे पाठक प्रतियोंके वर्णनगत परिचयके साथ इनके आकार—प्रकार आदिका प्रयक्ष दर्शन भी कर सकेंगे। अन्तमें हम इन प्रतियोंके संरक्षक, और इस प्रकार यह समुद्धार करनेमें हमें पूर्ण सहानुभूति पूर्वक इनका यथेष्ट उपयोग करनेमें मुलभता प्राप्त करा देने वाले सज्जनोंके प्रति हम अपनी आदरपूर्ण कृतज्ञता प्रकट करते हैं। इनमें P प्रतिके साथ विद्वान् मुनिवर श्रीपुण्यविजयजी महाराजका, तथा G प्रतिके साथ उसके संग्राहक श्रीयुत गोक्कलदास नानजी भाई गान्धीका नाम निर्देश हमने ऊपर स्पष्ट कर ही दिया है। यहां पर B प्रतिके संरक्षक, स्वर्गत मुनिवर श्रीमिक्तिन विजयजीके मुशिष्य और साहित्यप्रिय मुनि श्रीजसविजयजी महाराजके प्रति हम अपना सविशेष कृतज्ञतमाव प्रकट करते हैं जिन्होंने कई वर्षों तक इस प्रतिको हमारे पास पड़ी रहने देनेकी उदारता वतलाई है तथा और और भी पुस्तकादि प्राप्त करने-करानेमें जो सदैव हमारे प्रति सोत्साह प्रेरणा एवं प्रयत्न करते-कराते रहते हैं।

महाबीर जन्मतिमि, चैत्र, सं॰ १९९२. } भारतीनिवास; अह्मद्रावादः {

जिन विजय

. प्रास्ताविक-टिप्पनीसूचितपरिशिष्टसंग्रह

[१] B संग्रहगत ऋषिदत्ता कथानक।

रथमईनं नगरम्, राजा हैमरथः, सुयशा राज्ञी, पुत्रः कनकरथः । इतश्च कौवेरी नगरी, राजा सुन्दरपाणिः, राज्ञी वासुला, सुता रुक्मिणी । प्राप्तवरा जाता, कनकरथस्य दत्ता । ततः परिणेतुं तस्यागच्छतो देशसीमि आवासेषु दत्तेषु केनापि पुरुपेण इति विज्ञसम्—यत्, अस्य देशस्य स्वामी राजा अरिदमन इति ज्ञापयति—मम सीमि राजचिन्हानि सुक्त्वा त्या एकािकना गन्तव्यम् । अन्यथा युद्धसज्जो भव । तथा तस्य दूत[स्य] मुखादमुं श्लोकं श्लुत्वा—

यदि मत्तोऽसि मतंगज! किममीभिरसारसरलदलनैः। हरिमनुसर खरनखरं व्यपनयति स करटकण्ड्रतिम्॥१॥

श्लोकमाकर्ण्य युद्धाय समागतः ।

एयति घोडा एअ वल एअति निसिआ खग्ग । इत्थ मुणीस जाणीअइ जो निव वालइ वग्ग ॥ २ ॥ धडु घोडइ सिरु धरणिअलि अंतावलि गिद्धेहिं । महु कंतह रिणसामीअह दिन्नं तिहु खंधेहिं ॥ ३ ॥

स राजा कुमारेण जितः । आज्ञाविधायी जातः । स वर्तं पालियत्वा मुक्तिं जगामः । कुमारेण श्रीनेमितीर्थं [प्रति] प्रयाणं कृतम् । एकसिव्विष सरिस आवासेषु-जातेषु वनमध्ये काञ्चित्कन्यकां दृष्टा गतां ज्ञात्वा परिश्रमन् श्रीयुगादिचैत्यं गतः । देवस्तवनानन्तरं यावत्यवायां निविष्टः, तावदेको वृद्धतपोधनः कन्यासिहतः पूजोपचारयुतो 'दृष्टः । कन्या कुमारं विलोक्येति चिन्तितवती—

किमिन्द्रः किम्रु वा चन्द्रः किम्रु वासौ दिवाकरः । देवः किमथवा साक्षादयं मकरकेतनः ॥ ४ ॥

अथवा

ः कंरुङ्की रजनीजानिस्तपनस्तपनः पुनः । अनङ्गस्तु मनोजन्मा तत्कोऽयं सुभगात्रणीः ॥ ५ ॥

अथ कुमारेण स नमस्कृतः । मुनिना इत्युक्तः-त्वं कत्य युतः १, केन कारणेनात्रायातः १ । कुमारस्य भट्टेन पूर्ववृत्तान्तः कियतः । कुमारेणापि मुनेः पार्थादिति पृष्टम्-कथमत्र १, के यूयम् १, का कन्या १, कथमत्र देवगृहम् १ । कारणं कथयत । ततो मुनिना देवप्जाऽनन्तरं कुमारं निजाश्रये नीत्वा स्वचिरत्रमिति कथितम्-वत्स । श्रूयताम् , असिन् भरते मंत्रिवती पुरी, हरिपेणो राजा, प्रिया प्रियदर्शना, पुत्रोऽजितसेनः । कदाचित्स राजाऽधापहतो वनेऽसिन् कच्छ-महाकच्छानुक्रमे कुटपितं विधमृतिं प्रणम्य उपविष्टः । आशीर्वादः पदत्तसेन । राजन् !

यसांश्रयोः खेलति क्रन्तलाली श्रियेस्तु वः स प्रथमो जिनेन्द्रः । गम्मीरसंसार्समुद्रमध्यादुन्मजतः शैवलवछरीव ॥ ६ ॥

ततोऽनन्तरं त्यणेर्नुपं विज्ञाय मुनिना प्रष्टम्—कुतो यूयमेकािकनः ?, कथिमहागताः ? । तेन वृपभान्ययेन श्रीआदिनाथः भासादः कािरतः । मुनिना तस्य विपापहो मंत्रो दत्तः । ततः स राजा खपुरं गतः । तत्र समये मंगलावती पुरी, प्रिय-दर्शननरेन्द्रस्य पीतिमती दुहिता । केनचित् पुरुपेण राज्ञः सर्पद्षष्टा कथिता । ततो हरिपेणस्तत्र गत्ना, तां निर्विपीकृत्य परिणीय च सपुरं समायातः । कियत्यपि काले वृद्धत्वे भार्यया सह तापसी दीक्षां जम्राह । तां प्रकटगर्भी निरीक्ष्य, राजिषम्पालभ्य कुरुपतिरन्याश्रमं तो त्यक्त्वाययो । तेन दुःखितो यावदास्ते तावत्युत्री जाता, राज्ञी मृता च । पश्चात्रेनाष्टवर्पाण यहपभदत्ता

सुता पालितो । ततस्तां रूपवर्ती ज्ञात्वा लोकापहारभयेनादृश्यीकरणमञ्जनं दत्तम् । सा वालां, या, हे राजकुमरं! त्वया हृष्टा । तया च त्वं हृष्टः । परस्परानुरागतः सांप्रतं मम सुतामिमां त्वं परिणय । तेन सा ऋषिदत्ता परिणीता । ऋषिणा कुमारं प्रसुक्तम्—अस्यास्त्वं जीवितेशवत् इति ज्ञेयं भवता ।

युक्तोऽसि भ्रवनभारे मा नम्नां कन्यरां कृथाः शेप!। त्वय्येकसिन् दुःखिनि सुखितानि भवन्ति भ्रवनानि ॥ ७॥ सम्प्रति न कल्पतरवो न सिद्धयो नैव देवता वरदाः। जलद! त्विय विश्राम्यति जगतोऽपि हि जीवितारम्भः॥ ८॥

मुनिः पुत्रीं प्रति शिक्षां ददाति-

रक्लाकंडयमंतोसहीभि मा लिवसु पुत्ति! अप्पाणं ।
छंदाणुवत्तणं पिअयमस्स एअं वसीकरणं ॥ ९ ॥
कुलवध्वा विधातव्यं श्वश्रुश्रुश्रूपणव्रतम् ।
देवतं हि पतिः स्त्रीणां माता तस्यापि देवतम् ॥ १० ॥
संसारभारनिर्वाहे वामा वामाङ्गवाहिनी ।
प्रसादपात्रं मोहस्य तेनैवालमलंकृता ॥ ११ ॥
अभ्युत्थानस्रुपागते गृहपतौ तद्भापणे नम्रता
तत्पादार्पितदृष्टिरासनिविधिस्तस्रोपचर्या स्वयम् ।
सुप्ते तत्र शयीत तत्प्रथमतो जहाच शय्यामिति
प्राच्यैः पुत्रि! निवेदिताः कुलवधूशुद्धान्तधर्माश्रमाः ॥ १२ ॥
इति शिक्षा प्रदत्ता ।
मा भूः सुखे च दुःखे च वत्से! धर्मपराञ्जुखी ।
धर्म एव हि जन्तूनां पिता माता सुहत् प्रश्नः ॥ १३ ॥

पश्चान्मुनिः राजमुतं मुतां मुत्कलाप्य ख्यं नमस्कारपरः सन् अमौ प्रविष्टः । तत आत्मीयकलत्रं स्दिन्नवार्य प्रतिकृत्यं कृत्वा तत्थाने वेदी विधाय निजपुरं प्रति कुमारश्चलितः । तया मार्गे सर्वत्रापि देवतादत्तवीजेर्नृक्षा रोपिताः, उद्गताश्च । प्रयाणैः पश्चाद्वहं गतौ । पित्रा मात्रा वर्द्धापनं कृतम् । मुखेन तिष्टन्ति ।

इतश्च, राजसुता रुक्मिणी ऋषिदचां परिणीतां श्चला कुमारं वाञ्छती महादुः खिता योगिनीं सुरुसाभिषां पर्कमिनिरतां सपत्यीस्त्यागाय रिथमईनपुरे प्रेप्य तयाऽवसापिनीं विद्यां दला पुरुषवध-नरमांसमक्षणे ऋषिदचायाः कर्लकमारोप्य श्चरुरपार्श्वाद् देशमध्यानिष्कासिता। सा केनापि सार्थेन सह औषधप्रभावेण पुरुषवेषं विधाय खजन्मसूमौ पैत्रिकं वनं गता। सा योगिनी खपुरं गता। तया रुक्मिण्या अप्रे सर्व निवेदितम्। ततो रुक्मिण्या पितुरप्रे ऋषिदचामृतदृचान्तं कथित्वा पाणिप्रहणार्थं कुमारस्याकारणाय विज्ञसेन जनकेन मनुष्यान् पेष्य सुतादानं विधाय प्रगुणितः। तैर्मनुष्यः समं पाणि यहीतुं पूर्ववनं याव-कुमारः समायातः, तां पूर्वम्मिकां दृष्टा ऋषिदचागुणान् स्मृत्वा मुक्तकण्ठं रोदनं विधाय यावचैत्यं गतः, तावद्क्षिणाङ्गस्फरणं विचार्य, अत्र किं शुमं भावि श इति किश्चिचन्तयन् यावदास्ते तावत्युष्पो[प]हारहस्तः तपिसकुमारस्त्रपथारी कोऽपि मुनिः समायातः। रूपपरावर्चन पुष्पाणि कुमारस्य समर्प्य खयं देवपूजादिकृत्यं विधाय इति चिन्तितम्—यत् एप परिणेतुं गच्छिति। ततः कुमारेण स मुनिः पृष्टः—कुतो यूयम्श कथमत्रश । मुनिनोक्तम्—अत्राश्चमे पूर्व हरिषेणराजिपः सुतां ऋपिदचां कस्यापि आगतस्य राजकुमारस्य दत्वा काष्ठमञ्चणं कृतवान्। असिन् शून्याश्चमेऽहं तस्य शिष्यतुल्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः। पञ्चवर्षणि वसृदुः। निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तस्य शिष्यतुल्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः। पञ्चवर्षणि वसृदुः। निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तपःकुवर्णोऽसि । ततः कुमारोऽतीव केहोहासार्च मुनिं

सेहाट्यभाषणपूर्व भोजनवसीभरणादिदानं विघाय कौवेरी प्रति तेन मुनिना समं गृहीत्वा गतः । रुक्मिणी परिणीता । तया रुक्मिण्या एकान्ते महासेहे जाते पृतिः ऋषिदत्तावृत्तान्तः पृष्टः । तेन कथितम् —ऋषिदत्तायाः शीलगणो विनयगणो रूपगणा-दिकोऽनिर्वचनीयस्तत्र किं कथ्यते । उक्तं च—

> रूपलक्ष्मीयुपो यसाः समसा कामकामिनी । कर्णिका-मेनिका-नागयोपितः पदपांशवः ॥ १४ ॥ जाते तद्विरहे दैवादासी त्वमसि मे प्रिया । यत् क्षीरेण विना घृष्टिरपि प्रीतिकरी न किम् ॥ १५ ॥

तदभावे त्वं मया परिणीता । यथा पर्रसपेशलस्य भोजनस्याप्राप्ट्या किं कथितानं न मुज्यते । तद्वनं श्रुत्वा गृह-वासमवगणय्य सा रुविमणी पूर्वकारितं निजं पौरुपं सर्वं कथितवती । कुमारस्तदाकण्यं महासकोपस्तामङ्कात्त्यक्त्वा, रे! पापिष्ठे! आत्मानं मां च नरके कथं क्षिपति! गच्छ, मम नेत्रादपसर । अदृष्टमुखी भव । सा रूपवती महासती कथाशेपी कृता । लोकद्वयविरुद्धमभेक्ष्य तदा मुनिस्तद्वचनं श्रुत्वा निजकलङ्कगमनेनातीव हृष्टः । निशान्ते राजाङ्गणे चितां कारियत्वा कुमारः काष्टमक्षणाय श्रुप्तेण लोकेन च वार्यमाणोऽपि यावचितः, तदा सर्वलोकवचनोपरोधात्तपित्वमुनिनोक्तम्—देव ! तव सेहाकृष्टा सा मृताऽपि मिलिप्यति, इति ज्ञानेन जानामि । कुमारः पृच्छति—भवद्धिः कापि सा दृष्टा ज्ञाता वा । कथं किंवा हास्यपदम्?—हित पृष्टे यमपुरे कृतान्तमन्दिरे तव प्रिया विद्यते । यदि तस्याः स्थाने ग्रहणके कोऽपि मुच्यते, तदा समिति । इत्युक्ते कुमारिधन्तातुरः तत्र को याति, कित्वष्ठितः; इत्युक्ते मुनिनोक्तम्—देवाहं यास्यामि । यतो दुक्त्यजः स्नेहस्त्वया समम् । यदि भवान् ममादेशं दास्यति तदाहं यास्यामि । कुमारः पाह—मयाग्रे तुभ्यं जीवितव्यं हृद्यं दत्तम्, शेपं जीवितव्यं विद्यते तदपि गृहाण । तेनोक्तं पुनर्भते कार्ये यत्किच्चद्वहं याचि (?) तिन्वपेधयितव्यं नहि । ओमित्युक्ते पतिश्चते समुनिल्क्षसंस्यलोकसमक्षं पटान्तरे पविष्टः । कृणान्तरे मुक्तं पूर्वम् । हृष्टिः क्षिप्ता । ततोऽतीव हृष्टः कुमारः । ऋपिदत्तायुतः श्रुप्रेण पूजितः । निजा मुता निर्भित्तता । अकृत्यकारिणीति भणित्वा । पश्चात्रयाणकमुह्तें ऋपिदत्ताया अप्रे इति भणितम्—अहं समित्रं यममन्दिरे तत्र (व?) स्वाने मुक्ता कथं यामि गृहम् । अहं मित्रसमीपे गिमण्यामि । तदा हिस्ता प्रिया माह—देव! प्रतस्व जनकद्वीपपविलसितम्। भवद्विरन्यनावधारणीयम् । परं यथा हिमण्यां प्रसादो भवति तथा कर्तव्यम् । यतः—देव! प्रतस्व जनकद्वीपपविलसितम्। भवद्विरन्यनावधारणीयम् । परं यथा हिमण्यां प्रसादो भवति तथा कर्तव्यम् । यतः—

न हसंति परं न थुणंति अप्पयं विष्पिअं पि न चवंति । एसो जाण सहावो नमो नमो ताण पुरिसाण ॥ १६ ॥

पियावचनं श्रुत्वा हृष्टः । श्वशुरेण पेपितः । पियाद्वययुतो निजपितृगृहं ययौ । ततो हेमरथौ राजा निजापराघिविरुक्षो वपूमनुनीय कुमारं राज्ये संस्थाप्य भद्राचार्यपार्धे व्रतं गृहीत्वा मुक्तिं गतः ।

ततः कनकरथस्य पृथ्वीं पालयतः ऋषिदत्तायाः सिंहरथो जातः । हर्पपूरितस्य राज्ञः कियत्यिप गते काले गवाक्षोप-विष्टस्य मेघमण्डलं संपूर्ण हष्ट्वा प्रचण्डपवनेन खण्डीकृतं गलितं च विज्ञाय चेतिस विरागवान् जातः संसारोपिर । इति चिन्तयिति—

> जजरइ जहा देहं खणेण तहा जोवणं विणासेइ। खणदिटनटरूवा इह इट्टसमागमा सबे॥ १७॥

मापिदणायाः समं यावत् रात्रो इति चिन्तयित, तावत्यभाते उद्यानपालकेन तत्रायातसूर्यागमनं कथितम् । ततः पियया सह गुरुं भणम्य देशनां श्रुत्वा पियाया राक्षसीकलक्षकारणं निष्कारणं पृष्टवान् ।

॥ इति ऋषिदत्ताकथानकं समाप्तम् ॥ १७ ॥

[२] B और B. संग्रहस्थित मोरनागप्रवन्ध।

एकदा श्रीशत्तुंजये राजादनतरोरधः श्रीआदिनाये (Br श्री ऋषभदेवे) समवस्रते मयूर्मुलात् सर्पश्चरणाये पपात । मयूरः पृष्ठिमाययो । लामी विस्मितः । वेरं दृष्ट्वा तयोर्भगवानाह—मोः ! पूर्वभवाभ्यासादिहापि वेरमारव्यम् ! श्रृणुतः—वालाकदेशमध्ये सुग्रामग्रामे दत्तः श्रेष्ठी । तस्य हो सुतौ । एकदा श्रेष्ठी अनशनं जगृहे । निर्व्यंजनं मत्वा लघुना कटाहिः कृष्टा । इतो वृद्धो श्राता आययो । तेन दृष्टा...गार्थे कल्हं कृत्वा मृतौ । तत्रेव सपैं जातौ । युद्धा मृतौ । तृतीयनरकं गतौ । तद्नु संडी जातौ । मिलितौ, युद्धा मृतौ । तद्नु सर्प-मयूरी जातौ । अत्रापि तदेवारव्यम् ! । ततो जातजातिस्मृती भगवता दृत्तमनशनमादाय मृतौ । चतुर्थदेवलोकं गतौ ॥

॥ इति मोरनागप्रवन्धः ॥ १८॥

[३] BR संग्रहोपलब्धवप्पभहिसूरिकथाप्रकरण।

एकदा प्रेक्षणे जायमाने गुरूणां वप्पभिष्टसूरीणां पुस्तकं(?) दृष्टिस्तिमिरेणावृता वप्पभिष्टसूरिभिर्निर्त्तक्या नीलीकंचुकें दृष्टिः क्षिप्ता । आमनृपेण ज्ञातं मम मित्रस्थैतस्थामिनलापोऽस्ति । अत्र किं दुष्करम् । कांठुलीमाहूय रात्रौ मम मित्र-मठे वसनीयम् । इतः सा रात्रौ छन्ना मठं गत्वा गुरूणां चरणसंवाहनं चके । गुरुमिरुक्तम्-का त्वं ?। अहं नर्तकी देवेन प्रहिता । इतो गुरुवो रोदिर्तु प्रवृत्ताः । तथा ज्ञातं दशम्यां कामावस्थायामेते । यथा-

> नयनप्रीतिः प्रथमं चित्तासङ्गस्ततोऽथ सङ्करमः । निद्राच्छेदस्तनुता स्वभावन्यस्ययस्वपानाशः ॥ उन्मादो मूर्च्छो मृतिरिसेताः स्मरदशा दशैव स्युः ॥

तयोक्तम्—मयि खाधीनायां किमिति रुद्यते ?। ताभ्यामु(तैरु ?)क्तम्—अस्माकं गुरवः स्पृताः । कथं ? –शिशुत्वे गुरुणां पाश्चासप्रदेशेषु छुठनं तव पयोधरैः स्पृतम् । तदनूकम्—

चक्षः संवृणु वक्तवीक्षणपरं वक्षः समाच्छादय रुन्द्रि स्फूर्जदनेकमङ्गि चतुरं श्रङ्गाररम्यं वचः । अन्ये ते नवनीतिपण्डसदृशा मर्स्यो भवन्ति क्षितौ सुन्धे ! किं परिखेदितेन वपुषा पाषाणकस्पा वयम् ॥ त्रातर्नृपेण पृष्टा-

गयइ (?) वइकेरइ देव मिंह नेहु केणइ परिभुत्त । निचोरइ गुजररिज जिम पाय पसारिव सुत्त ॥ नृपेण प्रातश्चरणयोर्लगित्वा मानिताः ।

[४] 🗛 संग्रहस्थितजिनप्रभस्रिययन्ध*।

रारतरपक्षे श्रीजिनसिंहस्रितः श्राद्धादिभेदेन पश्चद्वयमजिन । ततः श्रीजिनसिंहस्रितिः पद्मावतीदेव्या राधनार्थं पण्मासान् यावदाचान्छतपः स्मशाने गत्वा तदाराधनं चके । ततः श्रत्यक्षीभूतया पद्मावतीदेव्या पायादि । तेम्कम्—राद्धः प्रतिवोधशिक देहि । देव्योक्तम्—तव पण्मास्येवायुः । तेन किं नृपवोधशक्या ? । तथापि वागडदेशे गच्छ । तत्र प्रामे दश श्रातरः सन्ति, तत्रैकस्य छष्ठः सप्ताष्टवार्षिकः सुतोऽस्ति, पादे किञ्चित्र्यन्तां गुलित्वेन छंघायमानः । तान् प्रतिवोध्य । तस्य च स्तर्पाराधनेनात्यहं श्रत्यक्षा भाविनी । स च नृपप्रतिवोधकः शासनप्रभावको भाविन् रयुक्ता तिरोद्धे देवी । स च सूरिः सर्वं तथा कृतवान् । तं । चादीक्षयत् । स्वायुःप्रान्ते तस्य चायं पदम्पि दर्वे योग्यतां प्रात्या । ततः श्रीमहिषेणसूरेः स्याद्धादमञ्जरीकर्तुः पार्थेऽधीतवान् । [स]श्रीजिनप्रमसूरिः । तस्य च यदा यदा भाणने संशयो भवित तदा वदा निद्रायमाण इव किञ्चित् विमुशति । तदा सम्यग् वुध्यते च । ततो घूर्मा(ण ?)-सरस्ति तस्य नाम तावता दत्तम् । श्रीजिनप्रमसूरिस्तु कियद्मन्थाध्ययनानन्तरं वहुशुद्धप्रज्ञत्वेन तद्धूर्णनावसरे तमर्थं हिस्ति सम्यग् वुध्यते च । ततो ग्रुक्तिस्तं तथा कुर्वन्तं द्वा तस्य प्रत्यक्षसरस्ति विकृदं ददे । स क्रमेण म्लेच्छाधिराज पाठ पीरोजादिप्रतिवोधकश्चाभूत् । तेन च साहाय्येन स्याद्धादमञ्जरीवृत्तिः स्वगुरोः कृतिरिति शोधिता । ततः 'श्रीजिनप्रमसूरीणां सहायोद्धिक्रसौरभे''सादि तत्रशस्तौ तैन्यस्तम् ॥ इति श्रीजिनप्रभसूरीणामुत्पत्तिप्रवापन्यः ॥

एकदा सभास्ये सुरत्राणे सूरिभिः समं धर्मगोष्ठीं छुर्वाणे कोपि मुलाण आगतः। तेन निजदोपिका आकाशे स्थापिता। तदा प सभासदां पमत्कारः समजिन । तद्यु सुरत्राणेन सूरेर्मुखं विलोकितम्। ततः सूरिणा निजरजोहरणमुच्छाल्यं टोपिका पातिता, परं रजोहरणं नभसि स्थितम्। गुरुणोक्तम्—यस्य क्रस्यापि शक्तिरस्तु स पातयतु । परं केनापि नापाति । ततस्तेरेव दक्षिणकरेणात्राहि । द्वितीयदिने तेनैव सजल्कुम्भो नभसि स्थापितः। ततो गुरुणा सुरत्राणानुज्ञया रजोहरणेन छुट्टियित्वा घटो भन्नः, पानीयं तत्रेव मोदकाकारेण स्थितम्। तेन चमत्कारेण जिनशासने महती प्रभावना जाता। एकदा सुरत्राणेनोक्तम्—भोः सभ्याः! शर्करा कस्य मध्ये क्षिप्ता मिष्टा स्थात्। ततः सभ्यः स्थियोक्तं परं तन्मनित न पमत्करोति। ततस्तेन सूरिः पृष्टः। मुलमध्ये। तेन रिजतः। अन्येद्युः स्वमुद्रिकां स्थयं पर्यद्वपादत्तले संस्थाप्य सूर्रे प्रति प्राह—मम मुद्रिका गता सम्प्रति कास्ति? सूरिणोक्तम्—योगिनीपुरमध्ये। पुनः पृष्टे, राजभवनान्तः। पुनः पृष्टे, समान्मध्ये। पुनः पृष्टे पत्यद्वे पादचतुष्ट्यमध्ये। तत एकं पत्यद्वपादमुत्पाट्यांगुल्यर्पितां । तेन स रिज्ञतः।

एकदा पृष्टम्-दुनीमध्ये किं पुष्पं युद्धम् १। सभ्येः स्विधयोक्तम्-परं तत्र मनश्चमत्कारकारि । सूरिणोक्तम्-बुणिफलं युद्धम् । येन नवसंडपृष्ट्या छज्ञा ढंक्यते । तेन हेतुना जगढंकणीति विरुदं दत्तम् । एकदा ततः सुरत्राणः समुत्थाय सूरिणा सह स्वावाससोपानकानुहंध्यमानः, एकस्मिन् सोपानके श्रीवीरिविम्वं म्लेच्छेः स्थापितमस्ति, तदुपरि सूरिणा पादो न दत्तः । सुरत्राणेनोचे-कुतोऽस्मिन् प्रस्तरे पादं न ददासि १ । तेनोचे-महावीरोऽसो कथ्यते । सुरत्राणोऽवक्-यपसावीद्य नाम विरुदं धत्ते तदा कस्मान्मोनेन स्थितः । सूरिराह्-हे देव । यतः कथितं देवभ्योऽपि दानवा चलिनः स्यः । दुरवस्थापतितानां सर्वपामीद्यावस्था स्थात् । तदनु सुरत्राणेन निजनरा निष्कासनहेतवे प्रहिताः परं सहस्रेरपि न निःसरित । तदनु सुरत्राणेन पृष्टः सूरिराह्-यदि स्वयमेव गत्वोत्पाट्यते तदा निस्सरित नान्यथा । तथा कृत्वाऽऽक-

एप प्रयन्थः BR सङ्ग्रहे लिखितो लब्धः । तथैवैकस्मिन् अन्यकथासङ्ग्रहेऽप्युपलब्धः । अतोऽस्य पाठमेदा अपि अत्र सङ्ग्रहीताः सन्ति । 1 रविवर्दनप्रती 'देवी' नास्ति († एतदन्तर्गता पंकिः पतिता प्राचीनाद्दे । 2 प्र०-अंग्रुनीयमर्पितम् ।

र्षितः। निजानाससम्मुखं प्रौढं जिनालयं कारयित्वा स्थापितः। पृष्टम्-भोः सूरे । श्रीवीरः पृष्टस्तन् किमप्युत्तरं दत्ते न वा । सूरिराह-सर्वं कथयति । तदनुं, अन्ते जवनिकां वद्भा सुरत्राणनोक्तम्-अस्मित्रगरे कियन्तः सुरत्राणा जाताः १। वीरेणोक्तम्-सर्वेपां नामायूराज्यपद्पालनपूर्वकं संख्यादि । तेनातीव हृष्टोऽभूत् । पुनः पृष्टम्-भवन्तः कियन्तः सन्ति ?। वीरेणोक्तम् वयं ऋपभप्रभृतयः २४ संख्याः साः । तदनु अतिहृष्टेनं तेन पंचाशतं द्रम्भाणां प्रतिदिनं भोगपुष्पादि पूरितम् । परमेतत्सर्वं सूरिध्यानवलेनैव । तस्मिन्मेले जिनालयं कारितं येन निजावासस्थितो नित्यं प्रणामं करोति । एकदावसरे सूरिणा विजयवत्रप्रभावः प्रोक्तः। तद्ते पंचाशतद्रम्मैः स कारितः। सुरत्राणेन पृष्टम्-कः प्रभावः १। सूरिणा कथितम्-यत्रायं यस्त्रो भवति तत्रारिः कोऽपि नायाति । ततः सुरत्राणेन निजच्छत्राधराखुर्न्यस्तः । ततो मार्जारी मुक्ता परं छत्रच्छायायां कथमपि ओतुर्नेति । अपरः प्रभावः -यस्य देहे असी वध्यते तस्य प्रहारो न छगति । तदनु सुरत्राणेन छागमानाय्य तस्य देहे विजययश्रो वद्धः । वहवः खद्दगप्रहारा सुक्ताः परमेकोऽपि न छप्तः । एकदा सुरत्राणो गूर्जरघरित्री प्रति यात्राभिप्रायेण सूरि पाह-पाँड ! अहं कस्यां प्रतोल्यां निस्सरिज्यामीति पृष्टे सूरिणा चिठिकां लिखित्वा सर्ववृत्तान्तयुतां गोलकान्तस्तां क्षिष्ट्वा मुद्रां दत्त्वाऽपितो गोलकः । हे देव ! त्वया योगिनीपुरवहिर्गत्वा गोलकं स्फोटयित्वा वाचनीयमिति प्रोक्तम् । सुरत्राणेन तथा कृतम् । यत् सुरत्राणः काकराख्यकोटस्य एकत्रिंशच्छराणि पातयित्वा निस्सरिष्यति । तेनाभिज्ञानेन स हृष्टः । सच्छायमंजरीफलभ्राजिष्णीराम्रस्य तले सर्वकृदकं मेलयित्वा प्रस्थानं साधितम् । तेन स्रिः प्रष्टः-भो पांडे ! कीदशो नयनानंदकारी सहकारोऽस्ति ? । सू० सत्यमेतत् । ततः स्रिणा स वृक्षः प्रयाणद्विकं सुरत्राणोपरि छायां कुर्वन् सार्द्धं चालितः । सूरिः सुरत्राणैन पृष्टः-भो पांडे ! असौ वृक्षः कस्मा-त्सार्द्धं समिति ?। सूरिणोचे-यदि सुरत्राणो विदाहिं ददाति तदा पश्चाहिलता स्वस्थाने याति नान्यथा । तदनु सुरत्राणेन् विसर्जितश्रुतो निजस्याने गतः । स सूरिः कियत्प्रयाणेनीगपुरादिमार्गण मरुखल्यां प्राप । प्रतिप्रामं तन्निवासिना-र्थोऽक्षतनालिकेरकुमुममालाचन्दनादिभिः [सूरिराजं] सुरत्राणं च वडीपयन्ति । स ताः सर्वा विलोक्य कंचन पार्श्वेस्ं नरं प्राह-एताः स्त्रियो विभूपणपट्टकूलमौक्तिकादिमिर्विवर्जिताः कथम् १ । केनापि दंडिता वानीपाते पातिता वा; येने ह-शीनिःश्रीका दृश्यते । (१) तद्तु तेन नरेणोचे-हे देव ! अयं देशो निर्द्धनः स्वभावेनैव, अन्यत्किमिष कारणं नास्ति । ततः सुरत्राणेन परोपकारियया प्रतिस्त्रियं , दीनारटङ्कनाः खर्णमयाः समर्प्य प्रणामं कृत्वा स्वगृहे प्रहिताः । एवं प्रतिप्रामं समस्तिविद्धेनजनानामाशाः सफलयन् पत्तनं यावत्पूर्वरीता प्राप । जंघरालनगरे विहः कटकमुत्तरितम् । श्रीजिनप्रभ-सुरयं: पंत्तनतगरं गच्छन्तः तपापक्षश्रीसीमश्रभसुरिशालायामीयुः । श्रीसीमप्रभसुरिभिस्तेषां प्रशंसा कृतां । श्रीप्रभूणाँ प्रभावादेव सम्प्रति श्रीजिनधर्ममाहात्स्यमित इति । तैः प्रत्युक्तम्-वयमविरताः सुरत्राणेन सार्द्ध रात्रिदिव व्रज्ञामः । सर्वदाऽस्वतन्त्राः । यूर्यं चारित्रिणः । युष्माकमाधारे 'चारित्रमसीति । एवंविधप्रसावे साधुभिः प्रतिलेखंनार्थं सिकिकी-त्तारिता। एकस्य साघोः सिकिका मूपकैर्जग्वा। तद्वनः श्रुत्वा श्रीसूरिभी रजोहरणं श्रामितम् । ततः सर्वे मूपकाः शाला [तो वहिः] निःसृत्य सूरेरप्रे उपविष्टाः । सूरिभिरुक्तम्-अहो आखव ! एते साधवः कीटिकाया अपि विरूपं न चिन्त-यन्तिः भवद्भिः कस्माद्विनाशोऽकारि ? । पुनरुक्तम्=वयं कस्यापि विरूपं न चिन्तयामः, एवं यः कश्चिद्पराधी स तिष्टतु, अन्ये गच्छन्तु । ततस्तस्य मूपकस्य देशपट्टो दत्तः, शालान्तर्न स्थेयम् । ततः स द्वारेण निःसृत्यान्यत्र गतः । कियिनानि पत्तने स्थित्वा गूर्जरत्राव्यवहारिभिः सह सुराष्ट्रां प्रति चितः । एकदा सूरिः पृष्टः-भो पांडे ! हीन्दूजनमध्ये किं तीर्थ बृहत् ?। सूरिराह-राजादनो दुग्धेन वर्पति । तद्नु पातसाहिना संघपतीभूय पूजामहाध्वजाऽऽवारिकारात्रिकादिकं कृत्वा संघेन सार्द्धं सहस्रहोकेन सूरिभिः सह त्रिःप्रदक्षिणां कृत्वा राजादनितरोरघः स्थितम् । तावता सूरेर्ध्यानवहेन संघसहितसुरत्राणोपरि कुंकुमकेसरकपूरिमिश्रं दुग्धं राजादनितो ववर्ष । ततश्चमत्कृतचित्तेन सुरत्राणेन सह गिरिनारं प्रति चिलतः । तीर्थासन्नगतेन तेन सूरिः पृष्टः-अस्य तीर्थस्य कः प्रभावः ?। सूरिराह-अच्छेयोऽभेयोऽयम् । किन्तु वन्त्रमयी

¹ प्र०-कोष्टस । 2 प्र०-वदाहि । 3 प्र०-विलिता' नास्ति । 4 प्र०-नागपुरनगरमार्गेण । 5 प्र०-एतेत्पदं नास्ति । '

मृतिः । ततः सुरत्राणेन सुद्गरयाते दत्तेऽप्रिस्कृहिंगाः प्रकटीभूताः, परं न भगः । तेन प्रभावेण रिक्तिन स्थालं टक्केंमृत्या नेमिर्वर्द्धापितः । रात्रो केनापि म्लेच्छेन सर्वाः इयामलप्रतिमा एकत्र मध्ये संस्थाप्य रात्रौ सुप्तम् । एवं च व्यवहारिणाममे कथितम्—यद्येते भूता रात्रौ मम प्रत्ययं दर्शयिष्यंति तदा छोटयिष्यामि नोचेत्सर्वाञ्चणीकरिष्यामि । एवं
कथित्वा सुप्तः । परं कालवदोन कोऽपि चमत्कारो न दृष्टः । प्रातः श्राह्मजनेन म्लेच्छव्यतिकरं विम्वव्यतिकरं च
सुरत्राणामे निवेदितम् । सुर० स आहूतः पृष्टश्च—भो ! तवामे भूतेः किमिष कथितं न वा ? । तेनोक्तम्—निह निह । ततः
सुरत्राणेनोक्तम्—सर्वर्भृतिर्ममामे मीनितः कृता, अयं दुष्टः अस्मानिभमवित तेन त्वया शिक्षा दातव्या । ततः स धृतो
निर्धातनार्यं श्राद्धेः कृच्छ्रेण मोचितः । एवं प्रकारेण गमनागमने सर्वजनाशां पूर्यन् योगिनीपुरे सूरिभिस्सह महामहोत्सवपूर्वकं प्रावीविशत् सुरत्राणः ॥

॥ इति श्रीजिनप्रभस्रीणां प्रवन्धोऽयं ॥ लिखितं पं० रविवर्द्धनगणिभिः॥

[४] G संग्रहस्थित जीव-इन्द्रियसंवादकथा।

अन्यदा जीवस्थेन्द्रियेः सह विवादः । तानि भणन्ति—वयं भव्यानि, अस्पद्विना न स्युः किञ्चन । स जीवो भणे-दृष्टं चारः । एवं सित जीवेनोक्तम्—यान्तु भवन्तः । गते नेत्रे । ताभ्यां विनापि भ्रमणादिकाः क्रियाः क्रुरुते । ततः कर्णों गतो । ताभ्यां विनापि जातं सर्वम् । नाशिकापि जिह्वापि गता । स्वादं न रुभते । गतैः सर्वेरिप जीवः सर्वोनिप व्यापारान् क्रुरुते । ततो जीवेनोक्तम्—आयान्तु भवन्तः । अहं यामि । तथा क्रतम् । जीवो वपुपो दूरे स्थित्वा स्थितः । ततः मृत इव स्थितः । वालोव्यो (?) भणत—को गरीयान् ?। तरुक्तम्—भवान् । एवं निर्णयः झकटकस्य । अतो जीवो नरके न क्षेप्य इन्द्रियाणां स्वार्थं साधियत्वा ॥ ३ ॥

[५] G संग्रहगत धनश्रेष्ठीकथानके।

पृथ्वीपुरे धनश्रेष्ठी। तस्य चत्वारः पुत्राः। त्रियमाणेन पित्रा शय्याधःस्थिताश्चत्वारः कलशा विभन्य समर्पिताः। तेषु रजो-ऽस्थि-भूर्ज-हेमादि विद्यते। ततः पितुर्मृतेरनन्तरं ते परस्परं विवादं कुर्वाणाः पशुपालेनैकेन वारिता एवम्-रजः सेत्रम्, अस्य पशुअश्वमतुष्यादि, भूर्जं लेख्यादि, कलाहीनः किमपि न वेत्ति सुवर्णम् ॥ १४॥

¹ नारत्येतत्पदं रविवर्द्धनप्रती ।

प्रबन्धचिन्तामणिसम्बद्धः-

॥ पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहः ॥

[P. B. Br. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेभ्यः सङ्गृहीतः ।]

१. विक्रमार्क-प्रवन्धाः।

विक्रमार्कसत्त्वप्रबन्धः (B.)

- (१) अकार्षीदनृणामुर्वी विक्रमादित्यभूपतिः। स्वर्णे प्राप्ते तु है रंकस्तुरष्काकुलितां व्यधात्॥
- (२) ह्णवंदो समुत्पन्नो विक्रमादित्यभूपतिः। गन्धर्वसेनतनयः पृथिवीमन्द्रणां व्यधात्॥
- § १) उज्जयिन्यामुच्छिन्नवंशो विक्रमादित्यनामा जननीसहायोऽस्ति । तस्य भट्टमात्रो नाम मित्रम् । स एकदा द्रव्यार्जनाय मित्रेण सह जननीमापृच्छ्य चचाल । वजाकरं स्मृत्वा तदुपरि प्रस्थितः । क्रमेण रोहणाचले 5 गतस्तत्र ग्रामे रात्रौ वसितः । प्रातः खनित्रमादाय रोहणाद्रौ गतः । तत्र कौपीनमाधाय त्रिवेलं 'हा दैव' इत्युक्त्वा ललाटं करेण हत्वा वातो दीयते । अतो भट्टमात्रेण चिन्तितम्—असौ सच्चवानस्ति । अपूर्ववार्तां विना न 'हा दैव' इति वक्ष्यित । अतो भट्टमात्रेणोक्तम्—देव ! उज्जयिन्या एको जनः समायातस्तेन तव मातुरनिष्ट-मुक्तम् । इति श्रुत्वा विक्रमार्केण 'हा दैव' इत्युक्त्वा करात्ज्ञदालकः क्षिप्तस्तस्य संघातेन दिच्यं रतं प्रादुरास । विक्रमेणात्ते मित्रेणोक्तम्—कुशलं गृहे, कोऽपि नायातः । तिर्हं कथमलीकमुक्तम् १ । तदन्त इमं श्लोकं पठता 10 विक्रमार्केण करात्त्यक्तं दरे—
- . (३) धिग् रोहणगिरिं दीनदारिद्यव्रणरोहणम् । दत्ते हा दैवमित्युक्ते रह्नान्यर्थिजनाय यः ॥

इत्युक्त्वा यथागतं ययौ । पुनरुजियन्यामायातस्तत्र पटहो वाद्यमानः श्रुतः। कमिप नरं पप्रच्छ-को हेतुरत्र ?। तेनोक्तम्-अत्र राजा विलोक्यते । कथम् १ । योऽत्र राजा भवित स रात्रौ विपद्यते । विक्रमेणोक्तम्-अहं भवि-च्यामि । इत्युक्ते प्रधानै राज्ये स्थापितस्तेन सन्ध्योपिर नैवेद्यानि कारितानि । पुष्पाद्युपस्करः सकलोऽपि सज्जी-15 कृतः । पल्यङ्कपार्श्वे पुष्पगृहं तत्र नाना नैवेद्यानि हौकियित्वा स्वयं सङ्गाकृष्य जाप्रकृति । इतो गवाक्षविवरात् धूमो विस्तृतः । क्रमेण वर्वरो वेतालः प्रकटीभूतः । नैवेद्यं सेच्छ्या भक्तवान्, विलेपनं च । पश्चानुष्टः सन् विक्रममाह्य वभापे-राजन् ! तव भक्त्याऽहं तुष्टः । त्वं राज्यं कुरु । परिमयिद्देने दिने देयम् । तिस्ति गते नृपः सुप्तः । प्रातन्पकर्पकाः समाजग्रः । ते नृपं जीवन्तमालोक्य हर्पकोलाहलं चकुः । प्रधानपुरुपेर्पेपोऽभिपिक्तः । नित्यं नित्यं तावन्तेवेद्यं निष्पद्यते।एकदा नृपेणोक्तो वर्व्वरः-कस्त्वम् १।तेनोक्तम्-इन्द्रसेवकः। तिर्हे महाक्यादिन्द्रं 20 प्रष्टा कल्ये वाच्यम्-यिद्वक्रमस्य कियदायुः । स द्वितीयदिनेऽवादीत्-वर्ष १ शतम्, नाधिकं न न्यूनम् । तिर्हे इन्द्रपार्थान्मे वर्षद्वयमधिकं करु । तेनोक्तम्-इन्द्रणाप्यनेनायुरिकं न भवित । तिर्हे वर्षद्वयं न्यूनं कुरु । तदिपि न भवित । इति विमुश्य द्वितीयदिने नैवेद्यं नाकार्पात् । स क्षुधितः सन् नृपं प्राह-त्वं स्ववाक्याच्युतः । अतः शस्त्रं कुरु । नृपेण भूमौ पातियत्वा कण्ठे चरणः प्रदत्तः । तेनोक्तम्-मा मारय । तवाहं किंकरः । स्मृतेरमु समेण्यामि ॥

- §२) एकदाऽप्रिकवेतालेनोक्तम्—त्वं नारीहृद्यं वेत्सि परं चिरत्रं न । एकदा नृपस्तदन्वेपणाय चिलतः । किसंशिद्युरे गतः । तत्रको द्विजस्तत्सुता कुमारिकाऽस्ति । नृपेण भोजनार्थे द्विजोऽभ्यार्थितः । कुमार्या (अत्र कियान् पाठो म्लाद्यें पिततः प्रतिभाति) . . चिन्तितम् मृत्युरुपिश्यतः । सेवोक्ता । तव किङ्करः । मां किं मार्यित । तयोक्तम्—तिहं अवाद्युत्वो भृत्वा पत । तया दिविकरम्बोऽग्रे त्यक्तः । मुखं च खरण्टितम् । जनेन पृष्टं किमिदम् ? । असी देशान्तरिको भोजनाय भणितोऽस्य ऊर्द्धं गाढं जातं अतो पूत्कृतम् । खस्ये जाते जनो गतः । तयोक्तम्—त्वं स्तीहृद्यं वेत्सि परं चरितं न वेत्सि । नृपः स्तीहृद्यपरीक्षां कृत्वा खराज्ये गतः ॥
- ६३) इत एकदा नगरमध्ये दन्तकः श्रेष्ठी नृपमान्योऽस्ति । तेन गृहार्थे भूराचा । स्त्रधारानाहृयोक्तम्—
 ताहग्गृहं मण्डयत यत्र सप्तान्ययिनः खादन्ति पिवन्ति च । द्रच्यं खेच्छया दाखामि । निमित्तज्ञानाहृय शुभमुहूर्ते
 गर्नाप्रः कृतः । भच्येष्टिकासञ्चयेन भव्यकाष्ठः कृत्वा सप्तपणः (खण्डः) प्रासादो नृपप्रासादसहृकारितः ।
 10 पूर्णो निष्पन्ने स्त्रधारेकक्तम्—एप ईदृशोऽस्ति यादृशे धनिकभाग्यात् सुवर्णपुरुषः पति । तेन सत्कृतास्ते
 स्त्रधाराः । निमित्तज्ञर्महृत्तं दत्तम् । तत्र प्रवेशे प्रारव्धे राजपर्यन्तो जनो भोजितः । द्विजातीनां दानं दत्तम् ।
 तदन्ता रात्रो सुप्तस्तदा 'पतामि' इति वचनमशृणोत् । चिन्तितमभिनवगृहे धृंसकः । द्वितीयवेलायामुक्तम्—पतामि ।
 तावत्परिजनं प्राह्—रे ! रे ! उत्तिष्ठत वहिनिस्तरत । एप पतिष्यति । यावदुत्तिष्ठति तावत्पतामिति श्रुत्वा
 निःसृतः । कुपितो गत्वा नृपं प्राह—देव ! तव राज्ये सृत्रधारोनिमित्तज्ञेश्च सुपितः । कथम् १ । सुरूपमुक्तम् । नृपेण
 15 सृत्रधाराः पृष्टाः । देवासौ निर्दोप ईदृशोऽस्ति यसात्सुवर्ण्णनरः पतिते । निमित्तज्ञर्भहृत्ते निर्दोपतोक्ता । राज्ञोक्तम्—
 कियद्रव्यं लग्नम् १ प्यान्ति नवा । तेनोक्तम्—देव ! त्राहाद्रक्तम् । खट्टाग्रे सुवर्णपुरुपः पपात ।
 प्रातन्तिण सर्वेपां दन्तकस्य च दृशितः । सपश्चात्तापः स प्राह—देव ! याद्य तव भाग्यं तव सत्त्वं च, ताद्यम् न
 कस्य । इति सुवर्णनरप्राप्तिः सत्त्वात् ॥ इति श्रीविक्रमार्कसत्त्वप्रवन्धः ॥

20दरिद्रक्रयप्रवन्धः (B. Br.)

\$8) अर्थेकदा सर्वत्र देश—देशान्तरे इयं वार्ता—यदुज्जियन्यां सर्वं विक्रयमामोति । एकेन राज्ञोक्तम्—तद्हं प्रेपिप्यामि यत् कोऽपि न लाति । तेनायोमयो दिरद्रनरः कारितः । एकिसन् करे सर्व्यमन्यसिन् प्रमार्जनी । एवं कृत्वा व्यवहारिणोऽपितवान् । उज्जिपन्यां गतः सर्वं वस्तु विक्रीय एप दर्शनीयः । लक्षं मूल्ये वाच्यम् । यदि कोऽपि न गृह्णाति तदा नृपप्रतोल्यां शब्दं क्षित्रा पुरस्य दोपं दत्त्वा व्यवर्त्तनीयम् । तेन तत्र गत्वा सर्व कोऽपि न गृह्णाति तदा नृपप्रतोल्यां शब्दं क्षित्रा पुरस्य दोपं दत्त्वा व्यवर्त्तनीयम् । तेन तत्र गत्वा सर्व कोऽपि नेव तिमील्य नष्टुं प्रवृत्ताः । तेनोक्तम्—लक्षं दत्त्वप गृह्णताम् । पुर्या दोपं नानयतेति वदतोऽपि जनो द्रं गतः । तेन नृपद्वारे नीत्वा व्याहृतम्—असाकं द्रिद्वनरं न कोऽपि गृह्णाति । पुरद्पणं दत्त्वा यामः । नृपेणा-हृतः । दरिद्रपुत्तलः समानीतः । सभाजनस्तु नेत्रे निमील्य स्थितः । नृपेण लक्षं दत्त्वा कीतः । भाण्डागारे क्षिप्तः । इतेत्रपुत्तलः समानीतः । सभाजनस्तु नेत्रे निमील्य स्थितः । नृपेण लक्षं दत्त्वा कीतः । भाण्डागारे क्षिप्तः । इतेत्रप्रयात् । यत्र दारित्रं तत्र गजाः करे । तिर्हं याहि । तस्त्वम् १ । गजािष्ठाता । कथं व्यासि १ । दरिद्रक्रयात् । यत्र दारित्रं तत्र गजाः करे । तिर्हे याहि । तस्त्वम् यामे प्राते यामे प्राते व्यादे याहि । इतस्तुरीय-यामे पुमानत्य यभापे—देव ! ग्रुत्कलाप्यसे । कस्त्वम् १ साहसपुमान् । नृपेणोक्तम्—त्वं मा त्रज । कथं न कीतम् । यदि यास्ति तदा विक्रमादित्ये मृते; इत्युक्त्वा क्षरिका कृष्टा । तेनोक्तम्—देव ! मैतं कुरु । सकलः सार्थो मिये पिति सिताः। प्रातर्नृपेण दरिद्रपुत्तलकं सभायामानात्य रात्रिवृत्तान्तं निवेद्य द्रिकृतः । इति दरिद्रक्रयप्रवन्धः ॥

वीकमद्यूतकारप्रबन्धः (B.)

§ ५) तथैकदा नृपतिरन्धकारपटमावृत्य पुरे अमन्नेकां दिव्यरूपां स्त्रियं दृष्ट्रा प्राह-देवि! क यासि?। तयो-क्तम् तव पार्श्वे । तेनोक्तम् चल । साऽग्रे नृपः पृष्ठे । एकसिन् प्रासादे गतौ । तत्र प्राहरिका आकृष्टखङ्गा उपविष्टाः सन्ति, परं चित्रलिखिता इव । तत्र शुनः सन्ति [तेऽ]पि तथैव । सा मध्ये प्रविष्टा, नृपोऽपि । सा तं पश्चमभूमौ निनाय । तत्र स्नानसामग्रीं कृत्वा स्नापितो नृपः। सा तु च्छवना नृपं विश्वत्वा मध्ये पल्यङ्के 5 विवेश । नृपस्तु द्वारमागत्य ऊर्द्धीभूय स्थितः । पल्यद्भद्वयं दृष्ट्वा सन्देहपरः कं पल्यङ्कं श्रयामि । तत्र स्त्रीयुग-मुपविष्टमस्ति । नृपे सन्देहपरे मुख्या जगाद-रे ! कोऽयं नृपशुः समानीतः । वहिः कृष्टा कमपि नरमानय । चेटी उत्थाय नृपं विहिर्निनाय । तदनु नृपेण चिन्तितम्-मां विनाऽन्यं विदग्धं कमानेष्यति । तदनु चतु-प्पथान्तर्भ्रमित । इतो वीकमो धूतकारी धूतादुत्थितः । कान्द्विकगृहे दत्ते, वहिः खित्वा द्वारम्बद्धाटयेत्याह । तेनोक्तम्-कस्त्वम् १। वीकमओं इत्युक्ते स आह-कस्ते द्वारमुद्धाटयति । मम किं त्रङ्गटकं ग्रहीतुकामः १। तेनो-10 क्तम्-वाढं युअक्षितः । द्रव्यमर्पय, विहःखसैवानं दिश । तेन किञ्चिदिपतम् । कान्दविकेनोक्तम्-कथं गृहासि १ । भाजनमर्पय । तेनोक्तम्-गृहीत्वा यातुकामः । तर्हि कर्परे कृत्वा समर्प्यताम् । तेनार्पितम् । आदाय प्रपां प्रति व्रजन् तां चेटीं यान्तीं प्राह-रे ! दासि क यासि ! । तयोक्तम्-तवानयनाय । तिह भोज्यं गृहाण । तयोक्तम्-परित्यज । तत्रापि भविष्यति भोज्यम् । तया सह चिलतः । नृपः पृष्टे लग्नः । तत्र नीतः स्नापितश्रीवराण्य-र्पितानि भोजितश्च । नृपस्य पञ्चतस्सा तदृष्टिं वश्चियत्वा पल्यङ्के उपविष्टा । नृपे चिन्तातुरे स मध्ये प्रविश्य 15 एकसिन्पल्यङ्के उपविष्टः । सा स्त्री उत्थिता । पत्राण्यादायाग्रे कर्त्तनं कृत्वाऽर्पितवती । तेन विण्टकर्त्तनं कृत्वा पुनरिपतानि । तयोक्तम्-शयनं कुरु । स पल्यङ्के किञ्चिदृष्टिं दन्वोच्छीर्पके मस्तकं कृत्वा सुप्वाप । नृपो विसितः । कथमनेन खामिनी ज्ञाता, कथं पत्राण्यर्पितानि, कथमुच्छीर्पकं ज्ञातम् ?। स क्रीडितुं प्रवृत्तः । नृपस्तु खस्थाने गतः । प्रातवीकमो निष्कासितः । प्रपां गत्वा सुप्तः । रात्रिवृत्तं पृच्छ्यमानोऽपि न वक्ति । नृपेण शूलोपरि प्रहितः। यदि रात्रेर्ष्ट्रेनं वक्ति तदा न क्षेप्यः। स शूलोपरि नीयमानोऽस्ति। आरक्षकस्त्विति वक्ति-यन्नपो रात्रि-20 वृत्तं पृच्छत्यसौ न वक्ति । तया नार्या गवाक्षस्यया शब्दः श्रुतः। स दृष्टः । चेटीं प्राह-अरे दृष्टौ विल्वयुगं भञ्ज । तया तथाकृते तेनोक्तम्-कथयिप्यामि नृपनीतः । नृपेणानायितः । रे ! कथय-मया सा चेटीति [न] व्याहृताः त्वया चेटी किमिति ज्ञाता ? । तेनोक्तम्-देव! चेटीजनस्य सुरिभवस्तुप्राप्तिः प्रस्तावे भवति । अतोऽस्याः ज्ञरी-रेऽम्लो गन्यः । अतथेटीत्युक्ता । तत्र प्राहरिकाणां किं कृतमस्ति यत्ते न श्वसन्ते ? । धूपनशात् । कथं खामिनी-चेटी-पल्यङ्को ज्ञातः ? । देव । उत्तमस्य मनुष्यस्य गृहस्य दक्षिणे भागे पल्यङ्कः स्यात् । पत्राण्यग्रं छित्त्वा तवापिं-25 तानि, त्वया तु विटमपाकृत्यः तित्वम् ?। तयोक्तम् -अहं तव खहृदयमर्पयामि परं वहिन वाच्यम्। मया व्याह-तम् -यत् शिरो याति, परं न विच्म । तिहं कथं कथयसि १ । तयैवोक्तम् । तया कथम् १ । चेटीं प्रेप्य महृष्टौ विल्वं विल्वेनाहत्य भग्नम् । अत उक्तम्-तत्कथय । पल्यङ्के उच्छीर्पकं प्रान्तो वा कथं ज्ञातः ? देव ! उच्छीर्पके चूर्णोन पादः खरिण्टितो भवति । एवं तस्य वचः श्रुत्वा राज्ञोक्तम्-द्युतं त्यज । त्वया सदैव मत्समीपे खोयं मत्पुत्रवत् । स प्रसादपात्रं कृतः । इति वीकमद्यूतकारप्रवन्धः ॥ स्त्रीसाहसप्रबन्धः (B.)

• § ६) एकदा विक्रमादित्ये जननीं नन्तुं गते माता तस्याशिपं ददौ—वत्स ! स्त्रीणां ते साहसं भवतु । नृपे-णोक्तम्—मातः ! किमिदं साहसम् १ स्त्री तृणसमा । देव्याह—दशियण्यते वत्स ! प्रातः प्रतोलीद्वारे आवासान् दत्त्वा स्थेयम् । नृपस्तत्र गतः । अथ देव्या मालिन्येका पृष्टा—रे ! कोऽत्र व्यवहारी मुख्यः १ । कस्य गृहे वाढं

गृहिणीरक्षा १। तयोक्तम्-देवि ! सोमभद्रश्रेष्टिनः । तत्र त्वं यासि १। तयोक्तम्-पुष्पाण्यादाय यामि । तस्या 35

देहलक्षणप्रवन्धः (B.)

गृहिण्याऽग्रे वाच्यम्—यद्विक्रमार्कस्त्वामभिलपति । तया तत्र गत्वा निवेदितम्। तयोक्तम्—अहं सप्तमभूमेरध उत्तरितुं न लेमे । तया देच्यग्रे व्याहतम् । देच्या द्वितीयदिने प्रेपिता । अहं रखुं प्रेपिप्यामि, तत्रयोगेण त्वयाऽऽगन्तच्यम् । तया मानितम् । मालिनी पुष्पक्षाने रखुमादाय गता । तस्या अपितः । तया स्तम्मे वद्धा विहः
क्षिमः । देच्यादेशाद्राज्ञा गुइरस्य स्तम्मे वद्धः । सा भक्तिर सुप्ते दवरकेण भूत्वा वहिर्गता । नृपशय्यान्ते उत्तीर्य
गृपं प्राप्ता । नृपेण पृष्टा—का त्वं देवि ? । व्यवहारिपत्ती । राज्ञोक्तम्—समर्हकां नाहमभिलपामि । सा तेनैव प्रयोग्या गृणं गृहं गता । सुप्तं पति हत्वा पुनरागता । नृपेणोक्तम्—पतिमारिकां न मेजे । तयोक्तम्—देव ! यञ्जातं तन्नान्यथा भवति । परं प्रातमें साहसमवलोकनीयम् । सा वेक्षमिन गता । रज्जुं क्षिष्त्वा प् चक्रे—यत् धावत धावत, श्रेष्ठी केनापि हतः । कलकले जाते जनो मिलितः । किमिदं न ज्ञायते । सा मुक्तकेशा काष्टारोहणे सज्जा जाता । जनो वारयित सा तु न निवर्तते । इतः प्रातर्गृपस्तत्र जनाज्ज्ञात्वा तदावासे आयातः । नृपेणोक्ता—रात्रिवृत्तं तत्,
10 आधुनिकमिदं निवर्तस्य । महपुरलंकुरु । कोऽपि न ज्ञास्ति । देव ! नैतदक्तच्यम् । वीटकं देहि । अस्य व्रतस्तिदेवोद्यापनम् । सा विसर्जिता । पत्या सहाग्रौ प्रविष्टा । नृपस्तु जननीं नन्तुं गतः । वत्स ! स्त्रियः साहसं तेऽस्तु ।
नृपेणोक्तम्—देवि ! तथ्यमिदं दृष्टम् । इति स्नीसाहसप्रवन्धः ।।
स्वीचिरित्रप्रवन्धः (१०)

§७) कएदा नृपविक्रमेण देन्ये धावनाय वामपादः पूर्वमर्पितः । तयोक्तम्-यदि स्त्रीचरितं वेत्सि तदा वामं 15 पादं प्रक्षालयामि । नृपत्तमन्वेष्टं चचाल । मार्गे किसंश्वितपुरे जलहारिणीमेकां ददर्श। तया व्याहृतं कुतः समायातः ? तेनोक्तमुखिन्याः । क यास्यसि ? नारीचरितमन्वेष्टम् । तर्हि मया सह मद्गृहे एहि, यथाऽत्रैव ज्ञापयामि । परमहं यहचिम तत्त्रया पृष्ठानुगेन वाच्यम्। नृपो गृहे नीतः। सकलेऽपि कुटुम्बे इति व्याहृतम्-एप मद्राता वाल्यादिप मातृशाले वर्द्धितः। अधुना मम मिलनाय समायातः। राज्ञा नितः कृता। तिस्रयो भगिनी-पतिरिति कृत्वा नतः । गौरवेण भोजितः । तया रात्रौ खपतिरुक्तः-यदावयोः सम्बन्धो जन्मावधि । परम-20 द्यतनो दिनो आतालभ्यः । एकान्ते भूत्वाऽस्य पार्श्वात्पितृगृहवार्त्तां शृणोमि सुखदुः खकरां च । दिवा वक्तमि प्रस्तावो नाऽभृत् । उपवरकान्तर्नृपस्य शय्या । राजा भगिनीपतिना सह वार्त्ता कृत्वा शय्यायां गतः । सा स्वयं पृथक् शय्यां कित्वा मध्ये विवेश । पत्युरग्रे प्राह-तालकं दत्त्वा खं समीपे गृहाण । मा जनापवादो भवतु । तेनोक्तम्-को जनापवादो मिय सित १। तयोक्तम्-एवं क्रुरु । तथा कृते वार्त्ताप्रसङ्गादनु तयोक्तम्-मद्भिलिपतं कुरु । राज्ञोक्तम्-त्वं मे भगिनी । तयोक्तम्-कुतः ? त्वं पथिकः । को श्राता का भगिनी । तयो(तेनो)क्तम्-25 जिह्नयोक्ता, तदहमकृत्यं [कथं] करोमि?। न विधासासि, तर्हि पश्य यद्भवति। तया पूत्कृतम्-धावत धावत सत्वरम्। द्वारमुद्वाटयत । नृपेण विनष्टमपि सञ्चित्योक्तम्-मा मारय यत्कथयसि तत्करिष्ये । तर्ह्यधःपत श्वासस्तु न ग्राहाः। तया पादेनाहत्य करम्बकरोटं पूर्वधृतं त्यक्तम् । नृपवदनं खरिडतम् । तावत्पत्या द्वारमुद्धाटितम् । र्दापः कृतः । जनेन पृष्टम्-किमिद्म् १ । पापार्हं किं जाने । अस्य मद्भातुः पानीयरसो जातः । उदरव्यथाऽस्य रवात्पपात । मया तु भीतया पूत्कृतम् । जलमानीय वदनं क्षालितम् । शकटिकामाधाय उदरसेकः कृतः । ²⁰ नृपस्तु श्वासमेव न गृह्णाति । सर्वः कोऽपि निष्कासितो मध्यात् । क्षणं सुखासिकाऽस्ति । यदि निर्जनं भवति तदा निद्रा एति । इति कृत्वा जने गते द्वारं दचोक्तम्-इदं स्त्रीचरितम् । ज्ञातं न वा १। राज्ञोक्तम् खकुलादि आगमनकारणं च । प्रातम्तिकलाप्य स्त्रियो मुद्रारतं दत्त्वा खपुरे गतः । पत्ये वृत्तान्तमावेदितवान् । तयोक्तम्-कथं वामपादमर्पयसि ? । तेनोक्तमतः परं न । इति स्तीचरितप्रवन्धः ॥

^{२५ (४८)} एकदा नृपो राजपाट्यां बजन् केनापि पण्डितेन दृष्टः । तं दृष्टा पण्डितः शिरःकम्पं चक्रे । नृपस्तु राजपाटी

20

कृत्वा धवलगृहे गतः । केनाप्युक्तम्-देव ! पण्डितः कोऽपि देशान्तरीयश्रतुप्पथे साम्रद्रिकशास्त्रपुस्तकानि ज्या-लयनस्ति । नृपेणाकारितः । कथं ज्वालयसि ? । देव ! मया जन्मावधि इदमेवास्यस्तम् । तव देहमालोक्य एपु विरक्तिर्जाता। तव देहे तछक्षणं नास्ति येन कापि भद्रवेला भवति। त्वं तु राजराजेश्वरोऽसि। राज्ञोक्तम्-पुनर्मे सर्वशरीरलक्षणान्यवलोकय । देहद्शिते तेन विशेषतो मुखमोटनं कृतम् । नृपेण पृष्टम् । देव ! किमिद्रमु-च्यते, किमपि न पञ्यामि । पुनः किमपि गुप्तं प्रकटं वा सार । तेनोक्तम्-यदि वामकुक्षौ कर्बुरमन्त्रं भवति तदा 5 सर्वमेवास्ति । तन ज्ञायते । देवेनोक्तम्-ज्ञास्तते । क्षुरिकां कृष्ट्वा यावद्विदारयित कुक्षिं तावत्तेन करे धृत्वोक्तम्-देव ! सर्वलक्षणानि सन्ति । कथम् १ । यदि सत्त्वमस्ति, तत्सर्वाण्यपि । देव ! भिक्षुरहम्, मद्वचसा प्रवृत्तः । उक्तं च "सर्व सत्त्वे प्रतिष्ठितम् ।" नृपेण प्रसादं दत्त्वा विसृष्टः । इति देहलक्षणप्रवन्धः ॥ मनि-मनुप्रबन्धः (B. Br.)

§९) एकदा विक्रमार्को भट्टमात्रं प्राह-भो ! 'मिन मनु' इति किमुच्यते । देव ! दर्शयामि । पुरोपान्ते पाद-10 मवधारयत । द्वाविष पुरो वाह्ये गतौ । तदवसरे एकः काष्ट्रभारवाहको दृष्टः । भट्टेनोक्तम्-देव ! अस्रोपरि तव चित्तं कीद्यम् ? । न वर्यम् । स भट्टेन चोदितः – अरे! कस्ते काष्टानि लास्यति । अद्य नृपः परासुरासीत् । तेनोक्तम्—चिल्रितं जिह्वाया अद्य विशेषतो मम काष्टानि महार्घ्याणि विकेष्यन्ते । बहवो जनाः काष्ट्रमक्षणं किरिप्यन्ति । अप्रे चिल्रिते । अप्रे महीरीआ एकाऽभ्येति। महेनोक्तम्—अये मध्ये क यासि १। अद्य नृपः परोक्षो जातः, कस्ते दिघ लास्यति १। तया तत्कालं गोलिका त्यक्ता। रुदितं प्रवृत्ता। भहेनोक्तम्—तव नृपेण किं 15 दत्तम् १। न किमिप । स पृथिन्या आधार आसीत् । भहेनोक्तं नृपस्य । अनेन नरेण पश्चादागतेन क्षेममुक्तम् । सा हृष्टा। नृपेण मुद्रारतं दत्त्वा प्रहिता। अतो मनिस मनो भवति। नृपः स्वगृहे गतः। इति मनि-मर्जं-सम्बन्धप्रवन्धः ॥

§१०) एकटा राजपाट्यां राजा व्रजन द्विजमेकं कणावचयं क्वांणं दृष्टा प्राह—

(४) निअउअरपूरणंमि वि असमत्था किं पि तेहिं जाएहिं।

[द्विज:-] सुसमत्था वि हु न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि॥ (५) 'तेहि वि न किं पि' भणिए विक्रमराएण देवदेवेण। दिन्नं मायंगसयं जचसवनस्स दो कोडी ॥

विक्रमपुत्र-विक्रमसेनसम्बन्धप्रवन्धः (B. G.)

§११) अथ विक्रमार्के दिवं गते विक्रमसेनकुमारस्य राज्याभिपेकसमये पुरोधसाऽऽञीर्वचः प्रोक्तम्-यन्तं 25 महाराज ! विक्रमार्कस्याधिको भावी । तदा राज्याधिष्ठात्रीभिर्देवीभिरिधष्ठिताभिः सिंहासनस्याभिश्रतस्रभिः प्रचित्रकाभिरीपद्धसितम् । राज्ञा पृष्टाः-किमिति हस्यते ?। ताः प्रोच्चः-देव ! तेन सह साम्यमपि न घटते, क्रतोऽधिकत्वम् ? ।

1. आद्याह-तव पिताऽपूर्वो वार्तो थ्रत्वा ि वार्ता कथकाय दिनारपंचशतीं ददाति । एवं थ्रत्वा खापरका -चौरेण दीनारपंचशती याचिता। [G वार्ता चैका कथिता] देव ! पातालविवरं गन्धवहक्रमशानतीरेऽस्ति । तत्र 30 विवरे देवीहरिसिद्धिक्षिप्तो दीपः पतन्मया दृष्टः। तस्यानुपदिकेन मयापि झम्पा दृत्ता। पाताले दिव्यं सौधं दृष्टम् । तत्रोत्कलमाना तैलकटाहिका दृष्टा । तत्पार्थे एको नरो दृष्टः । पृष्टश्च किमर्थमिह १ । तेनोक्तम् –अत्र सौधे

¹ प्रत्यन्तरे-जानेऽसुं पापं मारयामि । वर्हि पश्यताम् । 2 प्र०-मनहं मन । 3 G खर्परकः ।

शापश्रष्टा देव्यस्ति । योऽत्र झम्पां यच्छति स तस्या वर्षश्चतं पतिर्भवति । अतोऽहं तिदेच्छयात्रासि । [G परं साहसं नास्ति] इत्युक्ते दीनारपंचशतीं दत्त्वा नृपोऽपि तेन खर्परदिशितेन पथा गतस्तत्र सत्वरं कटाहिकायां झम्पां ददी । स तया नार्या जीवितः । यावत्सा राजानं वृणोति तावत्रृपेणोक्तम् अधं नरं वर, मे पूर्णिमित्युक्त्वा परोपकारं कृत्वा स्वपुरे समायातः । एवं यः परोपकारी । [G तदिधिकोऽयं कथं भावी ।]

- 2. हितीययोक्तम्-एकदा काशीतो हो हिजो समागतो। नृपेणापूर्वं पृष्टो। ताभ्यामुक्तम्-असहेशे [G पाताल]-विवरमित । तत्रान्धो राक्षसोऽस्ति । असहेशस्वामी यशोवर्मसौलक्तटाहिकायां झम्पां दत्ते [G दत्ता स्वमांसेन राक्षसस्य पारणं कारयति] स राक्षसस्तं पुनर्जावयति । प्रतिदिनं रात्रो सप्तापवरिकाः सुवण्णाः करोति । नृपस्तु प्रातद्ते । इदं श्रुत्वा तयोद्विजयोदीनारसहस्रमदात् । नृपस्तत्र गत्वा कटाहिकायां झम्पां ददौ । राक्षसेन मिलतो जीवितथ । राक्षसस्यान्ध्यशापस्थान्तोऽभृत् । नेत्रैनिरीक्ष्य विक्रमं प्राह-तुष्टोऽस्ति तव सत्त्वाद् । विक्रमाक्षः-परं 10यदि तुष्टस्तद्वाऽस्य नृपतेर्झम्पां विना नित्यं सुवर्णां देयम् । इत्युक्त्वा परोपकारं कृत्वा खस्थाने गतः । तत्कथं विक्रमादिधकस्त्वं भवसि ।
- 3. तृतीययोक्तम्-एकदा केनाप्युक्तम्-देव ! त्वं परकायप्रवेशविद्यां न वेत्सि । नृपेणोक्तम्-को जानाति ?। श्रीपर्वते भरवानन्दोऽस्ति, स जानाति । नृपः खल्वाटं कुम्भकारमादाय तत्र गतः । योगी मिलितः । स शुश्रूपया तुष्टः प्राह-विद्यां गृहाण । पूर्वं मम मित्रस्य देहि । तेनोक्तम्-असौ कुपात्रं विद्यायोग्यो न । नृपेणाग्रहाद् 15 दापिता । नृपस्त्ववन्त्यां गतः । नृपस्तु द्वारे स्थित्वा किञ्चन्नरं नगरस्य शुद्धं पप्रच्छ । तेनोक्तम्-नृपस्य पट्ट-इस्ती अद्य विपन्नः । नृपस्त्वन्तः पुरपरीक्षायै मित्रं प्राह-भो ! यदि मम शरीरं रक्षसे, तदाहं परीक्षां करोमि । तेनोक्तम्-करिप्ये। शरीरमेकान्ते ग्रुक्त्वा तं प्रहरके मुक्त्वा गजे प्रविश्य गजं सजीवमकरोत् । स स्वपादैः पुरान्त-र्गातः । इतो मित्रेणाचिन्ति-अमं भुण्डतरं त्यक्त्वा नृपश्रिरमधिष्टाय भोगान्भोक्ष्ये । स स्वश्रीरं त्यक्त्वा नृप-शरीरे प्रविक्य मध्ये आयातः । नृपे आयाते गजो जीवितः न्इति वर्द्धापनकान्यभूवन् । गजेन चिन्तितम् असौ 20 पापो ममोपरि चटिप्यति । इति सश्चिन्त्य गजः स्तम्भमुन्मूल्य वहिर्गत्वा प्राणानौज्झत् । इतः प्रत्यासन्ने आखेटक एकः शुकान् व्यापादयत्रस्ति । नृपजीवस्त्वेकस्य शुकस्य देहे विवेश । स शुको छव्धकं प्राह-रे ! रे ! शुकान्मा मारय । मां गृहाण । यदि ते द्रव्यस्पृहा पुरे चल । परमहं यत्र कथयामि तत्र विक्रेयः । सर्वोऽपि जनो याचते । शुको न वक्ति । मुख्यदेवीचेट्या याचितः । तेन पृष्टम्-दिश १ । देहि । तेन दीनारानादाय चेट्या अर्पितः । सा देवी शुकं दृष्टाऽऽकृष्टा । सुवर्ण्णपञ्जरे चिक्षेप । नृपोऽन्तः पुरमाययौ । देवी तं दृष्टा खिन्ना सती प्राह—देव ! त्विय 25 देशान्तरं प्रस्थिते मया चिन्तितं क्षेमेणागतेऽपि देवे ततोऽपि मासं यावद्रह्मचर्यम् । तदनु कुलदेवीपूजनं कृत्वा नियममपाकरिप्ये । स पश्चाद् गतः । जनस्तु चिन्तयति-कथं नृपतिरन्य एव जातः ? । देहमस्ति परं सम्यग् न ज्ञायते । देवी शुकेन वाढं संस्कृत-प्राकृतकान्यैस्तथा रिक्षता यथा त्विय जीवति जीवामि । इतो देन्या शुक आकारितः । तेनोक्तम्-देवि ! मार्जार्या विभेमि । देव्याह-यदि मरसि तदाहमपि त्वामनु मरिप्यामि । एकदा शुकोऽपि परीक्षार्थ मृतां गृहगोधां दृष्ट्रा शुकदेहमुत्सृज्य तत्र विवेश । सा भित्तौ चिटता । शुकं मृतमालोक्य देवी 30 तेन सह काष्ट्राधिरोहणसञ्जा नृपेण वारिता । सा वक्ति यदि शुको जीवति तदा जीवामि, नान्यथा । नृपस्त्वपव-रिकां प्रविश्य देहमुत्सृज्य शुकदेहे प्रविष्टः। इतो विक्रमार्कः पछीदेहमुत्सृज्य खशरीरमादाय वहिरायातः। शुको जीवितः, परं देव्या दृष्टोऽपि न सुखायते । नृपं दृष्टा तत्कालमभ्युत्थानं चक्रे । नृपेण शुको भाषितस्तेनोक्तम्-देवाहमदृष्टव्यमुखः। मां वामपादेन हत्वा मुश्च। नृपेणोक्तम्-तव सान्निध्येन मया देवीपरीक्षा लब्धा। स

कीरदेही हिजो गतः।

¹ G फन्ययासी मृतेन जीवितः। 2 G राज्यस्वरूपं। 3 G निर्यन्धात्तस्यापि दापिता।

(६) विषे प्राहरिके निपो निजगंजस्याङ्गेऽविद्याद्वियया, विष्रो भूपवपुर्विवेदा तदनु क्रीडाशुकोऽभूत्ततः। पह्णीगात्रनिवेद्यितात्मनि निपो व्यामृद्य देव्या मृतिं विष्रः कीरमजीवयन्निजतनुं श्रीविक्रमो लब्धवान्॥

एवं यः परोपकारी कथं तेन समो भविष्यसि ।

• 5

- 4. तुर्ययोक्तम्-एकदा विक्रमार्केण उत्तमं सौधं कारितम्। राजा तत्र गतः। तत्र चटकयुग्ममितः। चटकेनोक्तम्-साधु सौधमितः। चटकयोक्तम्-याद्द्यं स्वीराज्ये लीलादेच्या वाह्यगृहमितः ताद्द्यमेतत्। राज्ञा श्रुतं तत्।
 चृपत्तत्र गमनोत्सुकः। स्थानं तु न वेति। सचिन्तं नृपं दृष्ट्वा भट्टमात्रस्तदाश्चयं परिज्ञाय तत्स्थानिवलोकनाय
 चिलतः। तन्मार्गे लवणसमुद्रः। तमुत्तीर्याग्ने रात्रौ मदनायतने स्थितः। निश्चीथे हयहेपारवस्चितं दिच्यालङ्कारभूपितं दिच्यं स्वीवृन्दं आगतम्। तत्स्थामिन्या कामपूजनं कृतम्। च्यावर्त्तमानानां तासामेकस्याश्चस्य पुच्छे लिगत्वा 10
 तत्र गतः। दासीभिर्द्यः। स्थामिनीसमीपे नीतः। तया स्नानादि कारितः। रात्रौ तत्रैव सुप्तः। तया स्थनन्त्योकम्-मम विक्रमार्कः पतिर्भावी, किं वा मां यश्चतुर्भिः शब्दौर्जागरयित। इत्युक्त्वा सुप्ता। तेन चिन्तितम्चतुर्भिरपि शब्दौर्न जागित्तं तिर्हे एनामहमेव जागिरप्यामि। शब्दाः कृताः। न जागित्तं। तदा पादाङ्कुष्टश्चमिपतः।
 तया पादेनाहत्य तत्र क्षिप्तः, यत्र विक्रमार्कः प्रसुप्तोऽस्ति। राज्ञा पृष्टं किमिदम्-तेन वृत्तान्तः प्रोक्तः। राजाऽपिकवेतालमारु तत्र गतः। वेतालञ्छनं स्थितः। राजा दासीभिस्तत्र नीतः। तयोपचरितः। तद्रपदर्शनात्सरागा 15
 जाता। परं शयानया पूर्ववत्प्रतिज्ञा कृता।
- A. राज्ञा दीपस्थो वेताल उक्तः—भो दीप । ताबद्य कुवासको जातः । यस्या गृहे आगताः, सा वक्त्येव न । अतस्त्वं कामिष कथां वद । तेनोक्तम्—देव ! कोऽपि विप्रस्तस्य सुता चतुण्णां वराणां दत्ता । एकस्य पित्रा, परस्य मात्रा, एकस्य मात्रालेन, एकस्य भात्रा । एवं चतुण्णां दत्ता । चत्वारोऽपि आगताः । विवादे जाते कन्यया काष्ट्रभक्षणं कृतम् । एकश्वितायां तामनु विवेश । एको देशान्तरं गतः । एकस्त्वस्थीन्यादाय गङ्गां गतः । एकस्तु उटजं कृत्वा 20 तत्र स्थितः श्वातं रक्षति । देशान्तरिणा सङ्गीविनी विद्या शिक्षिता । चत्वारोऽपि मिलिताः । देशान्तरिणा विद्या जीविता । पुनर्विवादो जातः । सा राज्यतुण्णां मध्ये कस्य पत्नी १। राज्ञोक्तम्—नाहं वेद्यि, ब्रूहि । स आह—यश्वित्तायाः सहोत्थितः स भ्राता । योऽस्थिनेता स पुतः । येन जीविता स पिता । यो भस्परक्षकः स भर्ता, पालकत्वात् ।
- B. द्वितीययामे राज्ञा ताम्यूलस्थिगिका पृष्टा-रे! कथां काञ्चित्कथय । वेतालाधिष्ठाता साऽप्याह-कापि पुरे एका मृता व्राह्मण्यस्ति । तस्या जारेण सह सुता जाता । सा तां त्यक्तं रात्रौ वहिर्गता । इतस्तत्र कोऽपि 25 शूलाक्षिप्तो जीवन्नस्ति।तस्याः पादेन स्वलितः। तेनोक्तम्-कः पापी दुःखिनोऽपि दुःखसुत्पादयिति ?। तयोक्तम्-

^{*} G सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे एपा कथा किञ्चिद्धिन्नरूपेण लिखिता लभ्यते। यथा—

अस्य किं दुःखम्? । देहपीडादिकमेकमपुत्रत्वमपरम् । चौरेणोक्तम्-त्वमिष कथय का त्वम् ? कथिमहागतासि ? । निजचिरतं तयोक्तम् । ग्रूलास्थनरेणोक्तम्-मां विवाहयेमाम् । मया पुरादाहृतं भूक्षिप्तं द्रव्यं गृहाण च कये । व्राह्मणी आह-त्वं मिर्ण्यिसे । सुता लघ्वी, पुत्रः क ? । तेनोक्तम्-अस्या ऋतुकाले कस्यापि द्रव्यं दत्त्वा पुत्रमुत्याद्येः । तया सर्वं कृतम् । यावत्पुत्रो जातः । मात्रा छन्नं नृपद्वारे मुक्तः । केनापि राज्ञे निवेदितम् । उन्येणापुत्रेण पालितः । राज्यं दत्तम् । राजा मृतः । स पितुः श्राद्धं कर्तुं गङ्गायां गतः । जलात्करत्रयं निर्ययौ । राजा विस्तितः । कस्मिन्करे पिण्डं मुश्चामि । वेतालेनोक्तम्-देव ! वद । स पिण्डं कस्य करे मुश्चतु । राज्ञोक्तम्-चौरस्य । येन परिणीता यस्य वित्तम् ।

- C. राज्ञा सुवर्णापालकं जिल्पतम् । तदिप कथां प्राह—किसनिप ग्रामे किथित् कुलपुत्रः । स परिणीतोऽन्यग्रामे । तत्पत्ती श्रञ्जरगृहे न याति । स जैर्नेहस्ते । एकदा जनप्रेरित आनयनाय गतो मित्रान्वितः । मार्गे 10 सर्त्तीरे यक्षदेवकुलम् । तत्र यक्षं नत्वा प्राह—देव ! यदि मे पत्ती समेष्यिति तदा वलमानस्ते शिरो दास्यामि । तत्प्रभावाच्छ्युशुरकुले सत्कृतः । सा हृष्टा तेन सह चिलता । स चलन् मार्गे वाहिन्या उत्तीर्थ यक्षं नन्तुं गतः । यक्षाग्रे स्त्रीलान्छिरक्छेदितम् । स नायाति । मित्रं तु तमनुगतम् । विनष्टं दृष्टा जनापवादात् भीतेन तेनापि शिरिक्छन्तम् । तस्त्रिनप्यनागच्छिति, सा गता । द्वाविप तदवस्थो दृष्टो । चिन्तितम् जनोऽग्रेऽपि मां पतिद्वेपिणीं कथयित । अधुना पतिर्झो कथिप्यति । ततः सापि शिरक्छेत्तं प्रवृत्ता । यक्षेणोक्ता साहसं मा क्रुरु । तयोक्तम्—15 द्वाविप जीवापय । तेनोक्तम्—निज २ कवन्ये शिरोदानं कुरु । तयोत्सुकभावादन्यान्यकवन्धयोर्न्यस्ते । द्वाविप जीवितौ । परस्परं भार्याविवादो जातः । एको मदीयां वक्ति, द्वितीयस्तु मदीयाम् । तेनोक्तम्—देव ! सा कस्य भवति ? । नृपेणोक्तम्—यस्य शिरस्तस्य भार्या । ['सर्वस्य] गात्रस्य शिरः प्रधानिम'ति वचनात् ।
- D. वेतालवशात्कर्प्रसमुद्गकः पृष्टः—रे! कामिष कथां कथय। देव! क्वतोऽिष पुराचित्वारः कलाविद्ग्धा- श्रेलुः । एकः काष्ट्रघटकः सत्रधारः । अपरः स्वर्णकारः । तृतीयः शालापितः । तुर्यो द्विजः । कापि वने रात्रौ 20 स्थिताः । प्रथम [यामे] सत्रधारः प्रहरके स्थितः । काष्ट्रमयी पुत्तिलका कृता । स सुप्तः । द्वितीयप्रहरे सुवर्णकार उत्थाय [यामिके] स्थितः । तेन सा पुत्तिलकाऽऽभरणैर्मण्डिता । तृतीये शालापितिस्तेन दुक्लं परिधापिता । चतुर्थे द्विजेन सजीवा कृता । प्रातः सजीवां दृष्टा विवदितुं प्रवृत्ताः । इतस्तेन वैतालेनोक्तम्—देव! विक्रमादित्य! सा कस्य भविति ! [त नाम श्रुत्वा सा चुक्षोभ] राज्ञोक्तम्—नाहं वेधि, यदियं सुप्ता वेत्ति । [त तयोरकथ-यतोश्च तया जित्पतम्—भो राजन्!] कस्य सा ! । राज्ञोक्तम्—सर्ण्णकारस्य । पितं विना को नारीं मण्डयित । 25 [त सा पप्रच्छ—के यूयम् ! । दीपस्थेन वेतालेनोक्तम्—असौ स विक्रमादित्यः ।] सा हृष्टा, राज्ञा परिणीता च । [त तामादायावन्तीमागमत् ।] य ईद्य हे महाराज! तत्समः कः १; आधिक्ये त का कथा इति हिसतम् । इति श्रुत्वा विक्रमसेनेन गर्वस्त्यक्तः । इति विक्रमसेनगर्वत्यागप्रवन्थः ॥ विक्रमसन्वन्धे रामराज्यकथाप्रवन्धः (В. Р. С.)
- § १२) अथैकदा विक्रमसेनः पुरोधसमप्राक्षीद्—यदेताः काष्टपुत्रिका मम पितरमद्भुतगुणं वर्णयन्ति, तर्हि स

 30 एव लोके प्रथमः । [G तत्प्रथमतयोत्तमत्वेनावतीणों भविष्यति । प्राक् तु न कोऽपि ताद्दगुत्तमोऽभूत्—इति

 बूमः ।] पुरोधाः प्राह—राजन् ! अनादिर्भू रत्नगर्भेयम् । [G अनादिश्रतुर्पुगी ।] युगे युगे रत्नानि जायन्ते ।

 अहमेव प्रधान इति गर्वो न श्रेयःकारी [G न निर्वहते] । तव पितुर्मनिस एकदा इत्यभूत्—यथा रामेण जनः

 सुखी कृतः तथाऽहमपि करिष्यामि [G ततो रामायणं व्याख्यापितम् । तत्र यथा—] रामस्य दानं सत्रागारस्थापनं वर्णाश्रमव्यवस्थादि गुरुभक्त्यादि तथा सर्वमारव्धम् । ततोऽभिनवो राम इत्यात्मानं पाठयति । मित्रिभि
 35 रिचन्ति—असावज्ञचितकारी । [G असात्प्रभुर्यो गर्वादात्मानं तद्धन्मनुते] यतः—

(७) *उत्क्षिप्य टिटिभः पादावास्ते भङ्गभयाद्भवः। स्वचित्तकल्पितो गर्वः कस्यान्यस्य न विद्यते॥

[G उपायेनोत्तारियतव्यः प्रस्तावे] एकदा राज्ञोक्तम्-स कोऽप्यस्ति योऽश्रुतपूर्वा रामकथां कथयति । एकेन वृद्धमित्रणा प्रोक्तम्-राजन् ! कोशलायामेको वृद्धद्विजोऽस्ति । स पारम्पर्येण कामपि रामवार्त्ता विक्त । [G आहय पृच्छचते] स राज्ञा सगौरवमानीतः पूजितथ । पृष्टं च–हे वृद्ध ! कांचिद्रामवार्त्ता [नव्यां] वद् । सोऽभाणीत् - 5 देच ! कोशलायां यद्यागच्छिस तदा किमप्यपूर्वं दर्शयामि [G इह स्थितस्य तु वक्तुं न पारयामि]। राजा मित्रिपु राज्यं न्यस्य खर्यं कटकेन सह कोशलां प्रति चचाल । तत्र गत्वा विहःस्थितः । वृद्ध ! दर्शय । देव ! अत्र जन-पार्श्वात्खानय । तथा कृते, स्वर्णकल्याः प्रकटो जज्ञेः तद् हैमी मण्डपिका च । पुनः खनिते एकक्षण-द्विक्षण-तृतीयक्षण-चतुर्थक्षणे प्रकटीकृते महती खर्णोपानदेका प्रकटी जाता। खर्णवालकगुम्फिता सर्वरत्नखचिता। विसितेन गृहीत्वा हृदि कण्ठे च दत्ता नृपेण । वर्णनं कुर्वति, द्विजेनोक्तम्-देव ! चर्मकारपत्या उपानदेपा न 10 स्प्रष्टुमहिति । नृपेणोक्तम् -सा चर्मकार्यपि धन्या, यसा ईद्युपानत् । परं कथ्यतां कथम् १ । देव ! श्रीरामे सत्यत्र चर्मकारगृहाण्यासन् । इदमेकस्य गृहम् । तत्पत्नी लाडवहुला, अतः सगर्वा । विनयं न करोति । सा भर्त्री हिकता शिक्षिता च । उक्तश्च-महहाद याहि । सा वाणहीमेकां पतितां सुक्त्वा एकां च पादे कृत्वा पितृगृहं गता । पत्युरपमानमूचे । पित्रा दिनद्वयं स्थापिता पश्चादुक्ता-वत्से ! कुलिस्रयः पतिरेव शरणम् । त्वं तत्र याहि । सा द्वित्रिवारं भणिताऽपि न याति । तदा पित्रा प्रोक्तम्-वत्से ! श्रीरामः सलक्ष्मणः सप्रियश्च त्वामनुनेष्यति । 15 साऽप्यलीकाऽभिमानिनी प्राह-यदि समेष्यति तदैव यास्यामि [G नापरथा] । इयं वार्त्ता छन्नेर्नृपपुरुपैः श्रुता । तैर्नृपाय न्यवेदि । [‡]श्रीरामस्ततः श्रुत्वा तद्गेहद्वारे स्थितः । तेन कथितम्-देव ! पादमवधार्यताम् । मम रङ्कस्य गृहेऽद्य कल्पद्धमागमनम् । तव पुत्रीमानयितुं वयमागताः साः । मात्रा सा त्वरितं पत्युर्गृहे नीता । तस्या औत्सु-क्येन त्रजन्त्या इयमत्रैवोपानद्विस्पृता । श्रुत्वा देवस्तु खस्थानं गतः । देव ! रामराज्यमीदश्रमासीत् । तच्छुत्वा विक्रमादित्यः गर्वे त्यक्त्वा निजपुरीं प्राप् ।। इति विक्रमादित्यविविधप्रवन्धाः ॥ 20

(G.) सङ्ग्रहगतं विकमवृत्तम्।

§ १३) श्रीविक्रमादित्यसत्रागारे नित्यं कार्षटिका विनञ्यन्ति । तदपवाददोपभयेन राजा प्रच्छन्नः स्थितः । तावता

* G नास्ति एप छोकः । ‡ पतद्नतर्गतपाठस्थाने G सङ्गृहे कियानिधको विस्तृतश्च पाठः प्राप्यते । यथा—
ततो देवः श्रीरामः प्रजावस्तरुः प्रातः ससीतः सरुद्दमणः समागत्य तद्यमंकारभवनमगात् । तन्मध्यं प्रविष्टः पूजितः कारुमिविसितै
विज्ञसश्च-देवायमसान् कीटकान् प्रति कियान् प्रसादः कृतः । स्वप्तेऽपि नेदं संभाव्यते, यहेवोऽस्सानुपतिष्ठते । किं कारणमागमनस्य ।
श्रीरामः प्राह-स्वत्पुच्याः स्वशुरकुरुप्रणायायातोऽस्मि । तस्या हि वरावयास्त्रथाविधा सन्धाऽऽसे । ततो हृष्टस्त्रज्ञनकः । अपवरकं गत्वा दृष्टितरमाह सा—मुग्धिके ! तव प्रतिज्ञा पूर्णा । रामदेवोऽप्यायातः सदेवीकः । एहि वन्दस्य तं जगत्पतिम् । तत्तस्तुष्टा रामान्तिकमागता । ववन्दे
तम् । आलापिता प्रजातातेन-वत्ते ! गच्छ स्वशुरमन्दिरम् । तया भणितम् आदेशः प्रमाणम् । ततो गता पितृ(पति)गृहम् । रामः स्वस्थानमयासीत् । श्रीविक्रमस्य द्वितीया उपानत् तत्रापि गृहे सन्यधोमाने (अधःसन्यमाने) रूप्यते । स्वामिन्नायाति तन्न सान्यते । गतो राजा
तत्र । खानितं तत् । रूप्या द्वितीया उपानत् । दर्ष हेमगृहम् । एवमन्यान्यपि तेन विप्रेणासानयिपत । लातं तद्वेम । राजा विप्रः पृष्टः — विप्र ! कथमीदशं सम्यग् जानासि ? । विप्रेण गदितम्-पूर्वजपारंपर्योपदेशात् ज्ञातं तुभ्यमुक्तं च । परं गर्वं माधाः । स रामः स एव । तसाज्ञया जलज्ञकनो स्वभ्यते स्म । पतन्यो दत्तायां तदाज्ञायां न पेतुः । रुत्ता हित्तत्यार्ति, अन्यगद्याः सप्तविद्यतिः, स्कोटिका अष्टोतरं शतं, विद्वराणि दोपाश्च सर्वे व्यनेशन् । या तु तदेवी सीता, ये तद्रातरः, ये तद्नत्या हन्त्रस्तुप्रीवाद्यस्तपां महिमानं वर्पश्ततेनापि
वाक्पतिरपि वक्तं न शक्तः । इति श्रत्वा विक्रमेण गर्वो मुक्तः । वि[स्]दं निपिद्यं 'अभिनवराम' इति । युनरुज्यविनीमगात् । यथाशक्ति लोकमुद्यस्यत् । तस्य हि अग्निवेतल-पुरुपसिद्धिभ्यां सुवर्णसिद्धश्यां चोपकारेश्वर्यं तदा निरुपममासीत् । ततो विक्रमो धन्य एव । ततोऽधिकास्तु
परे कोटाकोटयोऽभूवन् । इत्याकर्यं विक्रमसेनो विवेवयभूत्॥

भोगीन्द्रः समागतः । राज्ञा षृष्टं–कथं त्वं कारणं विना नित्यं तीर्थकरणप्रवणपात्राणि मारयसि । तेनोक्तं–[कथय] किं पात्रं १ । राज्ञोक्तं–'भोगीन्द्र ! बहुधा० ।' इति तुष्टो मनुष्यपात्राणि ररक्ष ।

- § १४) केनापि साम्रद्रिकशास्त्रवेदिना मध्याहे चतुःपथे कस्यापि काष्टभारवाहकस्य चरणलक्षणानि भ्रुवि प्रतिविवितानि वीक्ष्य शास्त्रं वितथिमिति विचार्य प्रस्तकैः सह राजद्वारे काष्ट्रभक्षणं प्रारव्धम्। ततो राज्ञा पृष्टं-मम किक्षणानि कथय। तेनोक्तं-नैकमपि। तत्कथं राज्यम् १। पुनरुक्तं-यदि वामक्रक्षौ करडांत्रं भवति। तदा राज्ञा श्रुरिकामाक्रुष्योक्तं स्थानं दर्शय। तेनोक्तं-सन्त्वेनैव राज्यम् १। राज्ञापि दरिद्रमुखे कणिकगोलिकाप्रयोगेन तालुनि काकपदं दिश्तितम्।
- § १५) अन्यदा सिद्धसेनदिवाकरेण गुरुचरणसंवाहनां विधीयमानेन गुरव उक्ताः—यदि यूयमादेशं ददत, तदाहमागमं संस्कृतेन करोमि । गुरुभिरुक्तं—तव महत्पातकमजिन । त्वं गच्छयोग्यो न, गच्छ । तेनोक्तं—प्रायिश्वं

 10 ददत । गुरुभिरुक्तं—यत्र जिनधम्मों न तत्र जिनप्रभावनां विधाय पुनः समागन्तव्यं । इत्यवधृतवेपेण चिर्तिः ।
 ततः सप्तवर्पानन्तरं मालवके गृहमहाकालप्रासादे शिवाभिमुखं चरणौ विधाय सुप्तः । तत्र वारितोऽपि तथैव ।
 अत्रान्तरे राज्ञा रक्षकपुरुपान् प्रेपित्वा उपहुतः । तावतान्तः पुरे प्रदीपनकं लग्नम् । ततो राज्ञा समागत्य पृष्टः—
 कथं शिवनमस्कारं न विद्धासि १ । तेनोक्तं—मम नमोऽसौ न सहते । राज्ञोक्तं—विधेहि । तेन सकललोकसमक्षं
 द्वात्रिंशतिका विहिता । तदा लिंगमध्यादवन्तीसुकुमालद्वात्रिंशत्यत्वीकारितप्रासादे श्रीपार्थनाथविम्वं प्रकटीभृतम् ।

 15 तन्नमस्कृतम् । असन्तमस्कारमसौ सहते । तदाप्रभृति गृहमहाकालोऽजिन ।
 - § १६) अन्यदा सकलकवीनां दानं ददानं राजानं वीक्ष्य शिवतपोधनचतुष्टयं कविताकृतेऽरण्यमगमत् । तत्र गजवर्णनमारव्धं तैः, एकैकेन प्रहरेण एकैकश्वरणो विहितः । तद्यथा-
 - (८) च्यारि पाय विचि दुडुगुसु दुडुगुसु, जाइ जाइ पुणु रुडुग्रुसु रुडुग्रुसु । आगलि पाछलि पुंछु हलावइ,ं....
- 20 तुर्ययामे तुर्यपादो न भवति । तदा श्रीकालिदासकविना वृक्षान्तरितेन चतुर्थश्ररणः पूरितः.....अंघार जं किरि मूला चावह ॥

तुर्यतपोधनेनोक्तं-मम सरखतीत्रसादो जातः । तैर्नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तं-तुर्यचरणोऽमीपां न भवति । इदम्रप-मानं कालिदासस्यव नान्यस्य ।

- § १७) अथ कुमारसम्भवमहाकाव्ये नवभिः सर्गैः शृंगारसुरतवर्णनकुपितयोमया कालिदासकवेः शापो दत्तः। 25 यत्—त्वं स्त्रीव्यसनेन मरिष्यसि। तेन वेश्याव्यसनी वभूव। राज्ञा श्रीविक्रमेण व्यसनिनं मत्वा तिरस्कृतः। वेश्या-सदने स्थितः। अत्रान्तरे राजपाटिकायां गतेन राज्ञा सरसि कमलं कम्पमानं विलोक्योक्तं—'पवनस्यागमो नास्ति । ।' कैरपि कविभिः प्रत्युत्तरं न दत्तम्। राज्ञा नगरे पटहो वादितः। यः कोऽपि समस्यां पूर्यति तस्य सुवर्णलक्षं दिवा। इति वेश्यया कालिदासस्य निवेदितम्। तेनोक्तं—अहं पूरियत्वा तव समर्पयिष्यामि। पूरिता। तया सुवर्णलोभेन स मारितः। तदन्त तथा राज्ञोऽग्रे न्यगादि समस्या। यत्—'पावकोत्सिष्टवर्णाभः शर्वरी०।' राज्ञोक्तं—केन पूरिता?। 30 तयोक्तं—मया। 'कांते०' इति पदेन त्वया न बद्धा। ततस्तयोक्तं—कालिदासेन। स च मया मारितः। राज्ञो विपादोऽजनि।
 - § १८) अन्यदा श्रीविक्रमस्य रोगः समजिन । वैद्येन कुचेष्टां वीक्ष्य काकमांसभोजनेनाऽऽरोग्यं कथितम् । राज्ञोक्तं─भवतु । ततो वैद्येनोक्तं─राजन् ! धर्मीपधं विधेहि । त्वं प्रकृतिव्यत्ययेन न जीवसि ॥

॥ इति विक्रमप्रवन्धः ॥

२. सातवाहनप्रवन्धः (P.)

§१९) मरहहदेशे प्रतिष्ठानपत्तनम् । नरवाहनो नृपः । सुभटोऽङ्गरक्षः । तत्पत्ती मनोरमा । गर्भाधाने सित शुभदोहदे जाते नैमित्तिकाः पृष्टाः । तरुक्तम्—सुतो भावी, परं पोडशवर्षाणि भूमिगृहे स्थाप्यश्क्वनम् । तेन तथा कृते, पश्चवार्षिकः कलाभ्यासं करोति । इतश्च नृपो राज्यद्धें स्नीविलापं श्चत्वा प्राहरिकानाह [कोऽत्र १] सुभटेनो-क्तम्—देवाहमस्पि । इमां पृष्ट्या समागच्छ कथं रोदिति । स गतः । पुरे श्रान्त्वा समेतः । देव ! नगरमध्ये क्वापि । न दृष्टा । तिर्हे विहर्गत्वा विलोकय । पृच्छां कुरु । स विद्यत्विरणात्सनृपस्तत्र गतः । वने स्नियं दृष्टा पत्रच्छ—कथं रोदिपि १ राज्याधिष्ठात्री देवी । तिर्हे कथं रोदिपि १ । तथा क[थितम्] पण्मासान्ते नृपः पश्चत्वं प्रयास्यति ।

(९) वैधव्यसदृशं दुःखं स्त्रीणामन्यन्न विद्यते। धन्यास्ता योपितो यास्तु म्रियन्ते भर्त्तुरम्रतः॥

तत्कथं निवर्तते १ इति सुभटे पृष्टे तयोक्तम्—यदि चामुण्डाग्रे द्वात्रिंशल्लक्षणो वध्यते, तदा नृपस्य क्षेमम् । इत्युक्त्वाऽदृश्या जाता । नृपाग्रे उक्तम् । नृपः स्वस्थानं प्राप्तः । प्रातर्नृपेण सुभटाग्रे उक्तम्—यदि द्वात्रिंशल्लक्षणं 10 नरमानयसि तदाऽर्द्वराज्यं ददामि । तेन गृहे गत्वा स्वपत्ती पुत्राय याचिता । पोडशवाह(हाय)नः सुतो दत्तः । नृपायोक्तम्—देव ! स्थाने कृतोऽ प्राप्तिकास्य वध्यस्य नेपथ्यधरं कृत्वा चामुण्डाग्रे नीतः । नृपत्तत्र गतः । नैवेचेन सह कल्पितः । मात्रा केशैर्धतः पित्रा खद्गं कृष्टम् । तेन प्राप्तितम् ।

(१०) राजा खयं हरति मां यदि जीविताथें द्रव्येच्छयान्धविधरौ पितरौ मदीयौ । त्वं देवता मनुजमांसरसस्पृहासि प्राणाः खयं हसत किं [प]रि[दे]वितेन ॥

15

30

देवी सन्तेन तुष्टा। वरं ष्ट्रण् । याचितः-िकमर्थिमहानीतः । देच्या खभाव उक्तौ, तेनोक्तम्-नृपाय राज्यं देहि, त्वं जीववधाद्विरमस्य । तयोक्तम्-राज्यं मया दत्तं राज्ञे, [जीवे]प्वभयः । जीववधान्तिवृत्ता । सर्वोऽपि खस्थानं गतः । प्रातर्लोकापवादमसहता नृपेण राज्यं सर्वं सातवाहनाय दत्त्वा ख्यं तापसीं [दीक्षां] जगृहे । नृपोऽपि राज्यं कुर्वन् समाताऽस्ति (१) । अन्यदा नृपेण मत्री पृष्टः-ममाज्ञा कियतीं भूमिं यावदस्ति । देव । मथुरायां न वर्तते । नृपेण कटकं प्रहितम् ।.....जाते मित्रिभिद्धिंथा कृतं तेन मथुराद्वयम् । खर्योदये पुत्रजन्म-20 वर्द्वापनम् । द्वितीये प्रहरे वापीमध्यात् कोटि ९ सुवर्णलामः । तृतीये प्र० दक्षिणमथुरा । चतुर्थे प्र० उत्तरमथुरा वर्द्वापने । एवं दिवसमध्ये वर्द्वापनचतुष्के जाते नृपो हृष्टिश्चन्तयति-िकं मया पूर्वभवे पुण्यमकारि । प्राता राजपाट्यां गतः । हदे गोदावर्या मत्स्यहसने विस्तितो गृहे गतः । सर्वः कोऽपि पृष्टः परं कोऽपि न वेत्ति । इतश्च श्रीकालिकाचार्यागमं विदित्वा विन्दित्वा ते पृष्टाः । तैः क[थितम्]—त्वं पूर्वभवे अत्रैव काष्टवाहकस्तेन सक्तुभिरि-हैव शिलापट्टे मुनिः पारितः । तन्मत्स्येन द्ष्यम् । अतो जलदेवतया हिततं मत्स्यमिपात् । तव दानप्र[भावा]त् 25 वर्द्वापनं जातम् ॥ इति सातवाहनप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे सातवाहनसम्बन्धिगाथावृत्तम् ।

- (११) ताण पुरओं य मरीहं कयलीथं भाण सरिसपुरिसाणं। जे अत्तणो विणासं फलाइं दिंता न चिंतंति॥१॥
- (१२) जह सरसे तह सुके वि पायवे घरइ अणुदिणं विंझो । उच्छंगसंगयं निग्गुणं वि गरुया न मुंचंति ॥ २॥
- (१३) सरिसे माणुसजम्मे दहइ खलो सज्जणो सुहावेइ। लोह चिय सन्नाहो रक्खइ जीयं असी हरइ॥३॥

(१४)	सयलजणाणंदयरो सुक्षस्स वि एस परिमलो जस्स ।
	तस्स नवसरसभावंमि होज्ञ किं चंदणदुमस्स ॥ ४ ॥
	–इति गाथाचतुष्टयं श्रीसातवाहनेन राज्ञा चतुःकोटिभिर्गृहीतम् ।
(१५)	हारो वेणीदंडो खट्टुग्गलियाई तहय तालु त्ति।
, , ,	सालाहणेण गहिया दहकोडीहिं च चडगाहा ॥ १ ॥
(१६)	मरगु चिय अलहंतो हारो पीणुन्नयाण थणयाण ।
•	उन्बिंबो भम इ उरे जउणाणइफेणपुंज व ॥ २ ॥
(१७)	कसिणुज्जलो य रेहइ०॥ ३॥
(25)	परिओससुंदराइं सुरए जायंति जाईं सुक्खाईं।
	ताई चिय तिवरहे खट्टुग्गलियाई कीरंति ॥ ४ ॥
(१९)	ता किं करोमि माए खज्जड सालीउ कीरनिवहेहिं०॥५॥
	—इति गाथाचतु एयं कोटिभिर्दश मिर्गृहीतम् ।
(२०)	अहलो पत्तावरिओ फलकाले मुयसि मूढ ! पत्ताई ।
•	इण कारणि रे विड विडव मद्ध ! तय एरिसं नामं ॥ १ ॥

निव्वृहपोरिसाणं असचसंभावणा वि संभवह। (२१) इक्काणणे वि सीहे जाया पंचाणणपसिद्धी ॥ २ ॥

आसन्ने रणरंभे मूढे मंते तहेव दुव्भिक्खे। (२२) जस्स मुहं जोइज्जइ सो चिय जीवउ किमन्नेण ॥ ३ ॥

─इति गाथात्रयं कोट्या गृहीतम् ।

20

15

10

३. वनराजवृत्तम् (G.)

§२०) आंबासणवास्तव्यचापोत्कटज्ञातीयचंड-चाग्रंडाभिधौ आतरावभूताम् । ततः केनापि नैमित्तिकेनोक्तम्-चाम्रंडपत्नीगर्भेण चंडो मरणमगमिष्यदिति सा सगर्भा परिहृता। ततः सा पंचासरग्रामं गता। ओष्ट्छवृत्या जीवति। अन्यदा श्रीशीलगुणस्रिरिभवीसभूमौ गतैर्वणच्छायामनमन्तीं वीक्ष्य सुलक्षणं वालकं दृष्ट्वा च सा निजचैत्ये स्था-पिता । कियतापि कालेन वार्यमाणोऽपि वनराजो मृपकमारणं कुर्वन् गुरुभिर्निर्वासितः । चरडः सन् सेहर-सेप-25 राभ्यां सह संखेश्वर-पंचासरग्रामान्तरे चौर्यवृत्ति वितन्वन् शरद्वयभञ्जकं श्रेष्ठिजाम्बाकं पत्रच्छ । तेनोक्तं-यूयं त्रयः । अतो द्वयं भग्नम् । तेन वाणत्रयेण परीक्षा दर्शिता।तेन प्रीतिर्जाता। अन्यदा काकरग्रामे श्रेष्टिगृहे क्षात्रपातं कृत्वा सर्वेखं गृह्णतस्तस्य करो मंजूपान्तर्देधिमांडे पतितः । ततस्तेन सर्वमिष ग्रुक्तम् । प्रातः श्रीदेव्यास्तत्पह्या पंचागुली-प्रतिविम्बं दिन्न वीक्ष्य कुलीनः कोऽपि चौरोऽयं इति विज्ञाय, चौरे मिलितेऽहं भोक्ष्ये, इति अभिग्रहो गृहीतः। स सप्तमे दिने समेत्य तां भगिनीमिति नमश्रके । अन्यदा श्रीकन्यकुब्जदेशीयमहणकराज्ञ्याः [पश्चकुलं] गूर्जरधरोद्धा-30 हणके गच्छति । अन्तरा युद्धं विधाय वनराजेन सर्वं जगृहे । ततः शक्षकेनैकेन खानभंगाभिज्ञानेऽणिहृद्धपश्चपा-ेलेनापिते वीरक्षेत्रेऽणहिस्रपुरस्थापना । श्रीदेव्या वर्द्धापनकं कृतम् । गुरुभिर्मत्राभिषेकश्च ॥

४. लाखाकवृत्तम् (G.)

§२१) परमारवंशे समुत्पन्नया प्रासादे रममाणया कामलया स्तम्भभ्रान्त्या फूलडाभिधः पशुपालो **इतः।**

तत्सुतो लापाकः । स कच्छेश्वर एकविंशतिवारत्रासितमूलराजः समजिन । द्वाविंशतिवेलायां कृपिलकोटिश्वतो लापाको रुद्धः । माहेचनामः पदातेराकारणं प्रहितम् । सोऽन्तरावस्थितश्रीमूलराजभिष्टैः प्रहरणानि गृहीतः । ततः तिसन् निरायुधे समागते लापाकेन राज्ञा समं युद्धमकृत । लापाको रणभुवि पतितो राज्ञा रोपाचरणेनाहतः । ततो लापाकस्य मात्रा राजा श्वप्तः । ततः प्रांते स्फोटिका समजिन । ततो राज्ञा तांव्लमध्येऽलिका विलोक्य सार्ताः शुभमरणं पृष्टाः । तैरुक्तं—इंगिनीं साधय । तथा विहिते सप्तमिदने स्वविमानमायांतं वीक्ष्य ग्रुदितः । उपनरन्यतो गोकार्यमृतस्वपाकमानयित्वा (१) समेते तत्र पुनः सार्ताः पृष्टाः । एवं सित सुखमृत्यौ कथं मम कप्तमृत्युरुपिदृष्टः । तैरुक्तं—राजन् ! कस्तव भूमौ गोग्रहं तनोति । एवं विपनः ॥

५. मुञ्जराजप्रवन्धः (P.)

· §२२) श्रीउज्जयिन्यां नगर्यो सिंहो नृपः । स एकदा मृगयां गतः । तत्र शरवणमध्ये [वालः] पतितो दृष्टः । नृपेण गृहीतः । प्रच्छन्मन्तःपुरे प्रहितः। देच्यैकया स्रतिकर्माणि कृतानि । वालस मुझ इति नाम दत्तम् । स्रेहेन् 10 वृद्धि गतः । इतो नृपसापरसां पत्यां सिन्धुलनामा पुत्रो जातः । उभावपि निरवशेपभावेन वृद्धि गतौ परिणीतौ च । इतो नृपो वृद्धो जातः । एकदा मुझावासे गतः । आवासान्तर्मुझः सपत्नीकोऽस्ति । नृपेण विहःस्थेनोक्तम्-रे मध्ये कोऽप्यस्ति ?। नृपशन्दं श्रुत्वा मुझक्शंकितः । प्रियां भद्रासनाधो निवेक्य न्याहतवान्-देव! मध्ये पादमवधारयत । नृपः सिंहासने उपविष्टः । कुमारः प्रणम्य भद्रासने निविष्टः । आदिश्यतां कार्यम् । नृपेणी-क्तम्-राज्यं कस्य दीयते १ । मुझः प्राह-तातः प्रमाणमत्र । वत्स ! त्वं मम पालितः पुत्रः । सिन्धुलस्त्वङ्गजः । 15 व्यतिकरे उक्ते मुझेनोक्तम्-मम आतुर्देव! राज्यं भवत्वहं तस्य सेवां तावत् करिप्यामि । नृपेणोक्तम्-एवं मा भण । राज्यं तवैव । अधुना परावर्त्ते कृते जनो न मन्यते । परं मम शिक्षां शृष्ट । सिन्धुलो नापमान्यः । मुन्नी रुद्रादित्यो न पृथकार्यः । गोदावरीं तीर्त्वा परतीरे न गम्यम् । तेन सर्वं मानितम् । चृपे वहिर्गते भेदभयाद्राञ्ची खड़ेन पातिता। तस्या आक्रन्दं श्रुत्वा नृपो वलितः। वधूं पतितां दृष्टा प्राह-रे पाप ! किमकार्यमकार्याः ? अपरा-मपि शिक्षां न करोपि । अतोऽनहोंऽपि निवेश्यः, वाक्यभङ्गभयात् । मुझस्य राज्यं जातम् । नृपो दिवं ययौ ।20 स सिन्धुले सदा प्रसादपरो वर्तते । जनः सर्वोऽपि सिन्धुलेऽनुरक्तः । एकेन मित्रणा प्रोक्तम्-देव ! सिन्धुलात्तव विनाशों भावी । नृपेण तद्वचनमङ्गीकृत्य प्रासो निपिद्धः । सिन्धुलः खावासे तिष्ठति । एकदा नृपो राजपाव्या गजारुढो वजन् सिन्धुलगवाक्षाधः प्राप्तः । सिन्धुलेनोपरि निविष्टेन दक्षिणकरे आदर्शे सित वामकरेण करी वर-त्रया धृतः । तद्नु पुच्छे धृतः । पदमपि न चलति । आधीरणे नैष्टिष्ट । नृपेणोक्तम्-करी किं न चलति ? देव नृसिंहेणाक्रान्तः । तावत्क्रमारो दृष्टः । वत्स ! मुश्च । तेनोक्तम्-अहं देवपादानां केनाभक्त उक्तः, यद्रासः श्वितः 125 गजं मुञ्ज, द्विगुणं गृहाण । सिन्धुलेनोक्तम्-एप गजस्त्रुटितः, अपरमानयत । नृपस्तु द्वितीये निविष्टः । करी तत्रैव पतितः । नृपेण वलं वन्धोर्देष्ट्वा वर्द्धापनं प्रारव्धम् । पिशुनेन मित्रणा देव उक्तः-एप त्वां हिनिष्यत्येव । नृपेण देशपट्टो दत्तः । सोऽर्द्वदे कासहदग्रामे गतः । दीपदिने रुमशाने गतः । तत्र स्करं वीक्ष्य वाणसन्धानमकरोत् । इतो र्जन (१) सुप्तः। तेन प्रत्यासन्तं मृतकं जानोरधः प्रदत्तम्। तत् सलसलितम्। तेन वामकरेण वारितम् – वाणेन सूकरी विद्धः। तत्साहसेन तुष्टः, वरं याचस्र। तेनोक्तम्-मालवराज्यं देहि। तव भाग्यं न, परं तत्र याहि। तव पुत्रस्र 30 भविष्यति। पुनर्रुपाहूतः स्वधरे गतः। राज्ञा दुर्जनवचसा नेत्राकर्पणं कृतं सिन्धुलस्य। तत्पुत्रो भोजः। स नृपस्या-तीव वस्त्रभः। योवनाभिम्रस्तो जनेनानुरागात् सेन्यते। अतस्तेन कूटमत्रिणा नृपस्रोक्तम्-देव। त्वां हत्या कुमारो राज्यं ग्रहीष्यति । राज्ञा रुद्रादित्येन मित्रणा छन्नमाज्ञापितः । मित्रणा एकान्ते नीत्वा नृपाज्ञा उक्ता । कुमारेणी-क्तम्-श्रीघं इरु । किमपि राज्ञः कथापयसि १ । तेन 'मान्धाते'ति लिखित्वा पत्रिकाऽर्पिता । काले दर्शनीया ।

मित्रिणा प्रोक्तम्-त्विय मारिते राज्यं निमर्जाते । अतश्छनं तिष्ठ । मित्रिणा कार्यं कृतं निवेदितम् । तेनापि 'किम-प्युक्तम् १' तदा पत्रिका दर्शिता । नृपः काष्ठारोहणाय गतः । मित्रिणा कुमारो दर्शितः । अथ नृपो हृष्टः ।

§ २३) अथ कर्णाटे उरङ्गलपत्तने तैलपदेवो नृपः । तस्य मन्नी कमलादित्यः । स मालवेशेन सह वैरप्रारम्भं कर्त्तुं स्वां नासां कर्णाविषि वृध्या अपाकृत्य नृपेणापमानितो ग्रुङ्जनृपमाययौ । देव ! मया स्वामिनोऽग्रे उक्तम्—
 ग्रुङ्जेन सह वैरं त्यज । तेनाहमपमानितः । नृपेण सत्कृतः । रुद्रादित्येन नृपो वारितः । यावद्वित्तं (द् हितं १) न
 शृणोति तावद्वद्रा[दित्यो]ग्रुत्कलाऽप्य स्थितः । गोदावरीतटे नृपः कमलादित्यवचसा कटकं सम्मील्य चिलतः ।
 रुद्रादित्योऽपि चितां प्रविष्टः । कमलादित्येन कटकं सम्ग्रुखमाकारितम् । मन्त्रिणो वचसा कोऽपि न युध्यति । ग्रुङ्गो
 नष्टः । वुश्रुक्षितः कस्मिन् वासे गतः । तत्र ज्ञीताशनं याचन् महीआरीं गर्वोद्धतां दृष्ट्वा पपाठ—

(२३) मा गोलिणि मन गव्बु करि पिखि वि पहुरूआई। पंचइ सई विहुत्तरां मुंजह गय गयाई।।

10 इति पठन् नृपचरैरानीतः। नृपायार्पितस्तेन गुप्तौ क्षेपितः। मृणालवती चेटी परिचर्याकृते मुक्ता। नृपस्तस्यामासक्तो जातः। इतो धारायां रुद्रादित्येन भोजो राज्ये मुख्यः कृतः। स सैन्यं कृत्वा गोदावरीतीरमागत्य
स्थितः। भोजेन सुरङ्गा दापिता सिद्धा च। पुमानेको नृपानयने प्रहितः। स सुरङ्गाद्वारेण गत्वा नृपमाह—चल्यताम्। राजाऽऽह—प्रतीक्षस्त, यावन्मृणालवती आयाति। देव! किं चेट्या १, चल्यताम्। नृपे स्थिते, विनष्टं नृपं
मत्वा गतः। चेटी आयाता। भोजनमादाय नृपं सचिन्तं वीक्ष्य पप्रच्छ—देव! किं चिन्ता १। न वक्ति। तया

15 भोजनमध्ये लवणमुष्टिः क्षिप्ता तेन नाज्ञायि। तया निर्वन्धेन पृष्टः प्राह—चल्यताम्, त्वां प्रतीक्ष्यमाणोऽसि।

तयोक्तम्-आभरणान्यादाय त्वरितमेमि। गत्वा तैलपदेवाय सुरङ्गाद्यमुक्तम्। नृपेणागत्य वन्धितः। स वध्यमानः प्रोचे—

अच्छ(अत्रादर्शे गाथाप्रमाणा पङ्किरक्षरशून्या मुक्ताऽस्ति ।)..... ॥

भिक्षां भ्रामयित्वा वनमध्ये नीत्वा श्रूलांश्रोतः कृतः।

20(२४) यशःपुञ्जो मुञ्जो गजपतिरवन्तीक्षितिपतिः सरखत्यावासः समजनि पुराविष्कृतगतिः । स कर्णाटेशेन खसचिवबुध्यैव विधृतः कृतः शूलाप्रोतस्त्वहह विषमाः कम्भगतयः ॥

(२५) गय गय रह गय तुरय गय गय पाइक अनु भिच । सग्गडिय करि मंत्रणंडं महँता रुद्दाइच ॥

(२६) मुंज भणइ मिणालवइ केसा काइं चुयंति । लद्भुउ साउ पयोहरहं वंधण भणीअ रअंति ॥

(२७) मुंज भणइ मिणालवइ गउ जुवण मन झूरि। जइ सक्कर सयखंड किअ तोइ स मिट्टी चूरि॥

25(२८) इच्छउ इअरमणोरहाण मणवंछिआण संपत्ती। न पहुप्पइ वंधणदोरिआ वि दिवे पराहुत्ते॥

(२९) झोली तुद्दिव किं न मूच न हूच छारह पुंज। घरि घरि भिक्खभमाडीइ जिम मंकड तिम मुंज॥

(३०) मा मण्डक! कुरूद्रेगं यदहं खण्डितोऽनया। रामरावणभीमाचा योषिद्भिः के न खण्डिताः॥

(३१) वेसा छंडि वडाइ ती जे दासिहिं रचंति । ते नर मुंजनरिंद जिम परिभव घणा सहंति ॥

(३२) आपद्गतान् इससि किं द्रविणान्धमूढ ! लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमन्न चित्रम् ।

30 एता न पर्यसि घटीर्जलयन्त्रचके रिक्ता भवन्त्यविरतं भरिताश्च रिक्ताः॥

(३३) क तरुरेष महावनमध्यगः ।। (३४) उत्तंसकौतुककृते तु विलासिनीभिर्द्धनानि ॥

^{1 &#}x27;यः कृतिरिति' इति प्र॰ चि॰ शुद्धपाठः ।

(३५) इयं कटी मत्तगजेन्द्रगामिनी०॥ (३६) लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे०॥
ग्रुञ्जे धृते राजपुत्रीवाक्यम्—'चिन्तामिमां वहसि किं गजयूथनाथ०'॥
सिन्धुलवाक्यानि—(३७) अद्धां अद्धां नयणलां जइ मुं मुंज न लिंत।
सत्तइ सायर सघर घर महि सिंधलु भंजंत॥

(३८) पश्चादात्पश्चवर्षाणि षण्मासाश्च दिनन्नयम् ।

5

॥ इति मुझराजप्रवन्धः॥

६. श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रवन्धः (B. Br.)

(३९) प्रभोः श्रीमानतुङ्गस्य देशनायां रदत्विपः । जयन्ति ज्ञानपाथोधिशारदेन्दुसहोदराः ॥

§२४) वाणारखां हर्पो राजा। तत्र ब्रह्मक्षत्रियो धनदेवः श्रेष्ठी। मानतुङ्गः सुतः। सोऽन्यदा दिगम्बर्चेदो जिनं नत्वा गुरुपादान्ते गतः। प्रतिवोध्य दीक्षितः। चारुकीर्तिर्नाम। स्त्रीमुक्ति-केबलिश्चक्तिनं मन्यते। दिगम्बरत्वं 10 दुष्करं कुर्वन् भगिनीपतिलक्ष्मीधरेण सगौरवं निमंत्रितो गृहमायातः। अशुद्धेर्यावत् कमंडळुजलेनाचमनं गृह्णाति, तावद् भगिन्या श्वेताम्बरभक्तया पूतरानालोक्य तद्वतं निन्द्यित्वा श्वेताम्बराणां पश्चसमित्यादि स्तुत्वा प्रतिवोध्य किथितम्—समायातान् जैनाचार्यान् मेलियप्यामि । परिमदं पयो यसाजलाशयादानीतं तसिन्नेव क्षिप । यथान्यान्यजलसंपर्कात् पूतरका न प्रियं[ते]। अन्यदा श्रीअजितिसिंहस्ररीणामागमने गङ्गातीरोद्याने भगिन्या किथिते मानतुङ्गः पूर्विपिसामाचारीश्रवणात् तदीक्षां गृहीत्वा समग्रसिद्धान्तमधीत्य गुरुभिर्दत्तस्ररिपदः सुललित-15 काव्यकर्ता वभ्रव।

§२५) इतश्र तत्र पुरि मूर्तीब्रह्मा मयूरो नाम महाकविरस्ति । तस्य श्रीनाम्नी पुत्री रूपवती ।

(४०) पङ्के पङ्कजमुज्झितं कुवलयं चापारनीरे हदे विम्वी चापि वृतेवहिः प्रकटिता क्षिप्तः दाद्गी चाम्बरे । यस्याः पाणिविलोचनाधरमुखान् वीक्ष्य खसृष्टिं विधि-रुद्धिष्टेव पुरातनी समभवदेवाद्विधा येहताम् ॥

20

तदनुरूपं वाणनामानं कविम्रद्वाहिता। ततः श्रीहर्पस भेटियत्वा तस्य धान्यादि पृथक् धवलगृहं च कारितम्। अन्यदा वाणपत्ती सञ्जातकलहा पितृगृहं गता। वाणेनागत्य प्रदोपेऽनुकूलियतुमारच्धा।

(४१) मानं मुञ्ज खामिनि रात्रुं जगतो विनाशितखार्थम् । सेवक-कामुकपरभवसुखेच्छवो नावछेपभृतः॥

25

अमानिते पण्डितं गृहाद् वहिः प्रेपयित्वा सखी तां जगाद । तथापि न मानयति । उक्तं च-

(४२) लिखन्नास्ते भूमिं वहिरवनतः प्राणद्यितो निराहाराः सख्यः सततरुदितोच्छूननयनाः ।
परित्यक्तं सर्वे हसितपठितं पञ्चरशुकैस्तवावस्था चेयं विसृज कठिने मानमधुना ॥
सख्या वहिरागत्य कथिते विभातसमये वाणेन गत्वा-

(४३) गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णित इव। 3 प्रणामान्तो मानस्तद्रि न जहासि मानमधुना कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमि ते सुश्च कठिनम्॥ इति भित्तिपुरतः सुप्तेन मयूरेण-सुभुशब्दस्थाने चण्डीत्याख्यां कथय, यतोऽस्या दृढकोपायाश्रण्डीशब्द उचितः। इति पितुर्वचनेन कुपिता लिखता भर्तृवचनं मानयित्वा सतीत्वप्रभावेण पितरं कुष्टीभवेति शप्तवती । सञ्जातकुष्टेन मयूरेण राजभणितेन सूर्याराधनाय पद्पादं रञ्जयत्रं बद्धा खिदराङ्गारचितां काराप्य तत्स्तवने एकैकवृत्ते छुरि-कया एकैकरञ्जपादच्छेदे यावता पश्च च्छिनाः। पष्टच्छेदे सूर्यपरितोपे नव्यदेहदानेन मयूरप्रमोदे वाणपक्षीयैरुक्तं 5 राजसभायाम्-

(४५) यद्यपि हर्षोत्कर्षं विद्यति मधुरा गिरो मयूरस्य । बाणविज्ञम्भणसमये तदपि न परभागभागिन्यः ॥

राज्ञोक्तम्-यूयं गुणिषु मत्सरिणो यस्य शक्तिर्भवति किमप्यधिकं दर्श्यते । ततो वाणेनोक्तम्-मम हस्तपादौ छेदय, यथा नव्यान् करोमि । ततिश्छकोषु चण्डिकास्तुतौ सप्तमाक्षरे नव्या जाताः । तथाप्युभयोविवादे राज्ञो10 क्तम्-काश्मीरे श्रीसरस्वती विवादं भञ्जयति । यो हारयति तेन पुस्तकानि ज्वाल्यानि । इति प्रतिज्ञाय राजपुरुपैः समं काश्मीरगमने देव्या समस्याऽप्यन्त । पदे पृष्टे वाणस्य शीघपूरणे मयूरस्य सविलम्बे-तथाहि-

(४५) दामोदरकराघातिहलीकृतचेतसा । दृष्टं चाणूरमहेन द्यातचन्द्रं नभस्तलम् ॥ मयूरेण पराभूतत्वादागत्य पुरतकज्वालने श्रीद्धर्यज्ञतकपुरतकेऽदग्धे उभयोर्मानदानैः राजप्रसादः ।

§ २६) अन्यदा राज्ञा मिन्नसम्मुखं भणितम्-पश्य भूमिदेवानां कीद्यक् प्रभावः १। मिन्नणोक्तम्-जिनशासनेऽपि

15 महाप्रभावोऽितः । यदि कौतुकं ततः श्रीमानतुङ्गाख्यं सरिमाकार्य विलोकय । राज्ञोक्तमाकारयस्य । ततो मिन्नणा गत्वा मिक्तवचनैदर्शनप्रभावार्थं निरीहा अपि तत्रानीताः । राज्ञो धर्मलाभाशिपं दत्त्वा यथोचितासनसमासीनाः । मयूर-वाण-प्रशंसापूर्वं राजोवाच-यदि भवतां काचिच्छक्तिरितः तिकिश्चित् कौतुकं दर्शयत । गुरुभिरुक्तम्-असाकं किमपि कार्यं निह । जिनमते मोक्षार्थं एवाभ्यस्यते । तथापि शासनोत्कपीय दर्शयामः । ततो राज्ञा तमिस आपादमस्तकं चतुश्चत्वारिश्रह्णोहर्श्यखलाभिनियंत्र्यापवरके क्षित्वा तालकं दत्त्वा मोचिताः । ततो 'भक्तामरस्तवः' 20 कृतः । एकैकवृत्तपाठे एकैकनिगडभङ्गे निगडसंख्यया वृत्तभणनम् । सरयो मुत्कला जाताः । तालकं भग्नम्, स्वयं कपाटोवृद्याटने निर्गत्य सभायां राज्ञ आञ्चीर्वादं ददुः । राज्ञाऽनेकस्तुतीः कृत्वा सिवनयं नत्वा कृत्यादेशेन प्रसीदत्त । सरिणोक्तम्-असाकं कापीच्छा निह । परं तव हिताय वृमः-जिनधमं प्रपद्यस्य । राजाऽङ्कीचकार । दान-पात्रौचित्यात्रिधा दानं देयं-जीणोद्धारे(रं) नव्यविभ्वकारणं चैत्यादिधर्ममादिश्य प्रभावनां कृत्वा सरयः साश्रयं गताः । तदाख्यातो 'भक्तामरस्तवः' अद्यापि सर्वोपद्रवहर्ता । अन्यदा कर्मवज्ञात् सञ्जातकुष्ठोऽनश्चनाय धरणेन्द्रं ससार । प्रत्यक्षीभूयायुःशेपतया धरणेन्द्रोऽप्टादशाक्षरं पार्श्वनाथमचं दत्तवान् । सरयः सर्वोपद्रवहरं तन्मचगभितं 'भयहरस्तवं' कृत्वा पुनर्नवतां प्राप्ताः ।

§ २७) एकदा तन्नगरेशसैन्ये परदेशं प्राप्ते तद्विपवस्तमल्पवलं ज्ञात्वा सम्भूय भूरिसैन्येस्तन्नगरमावेष्ट्य तस्थुः । पौरजने न्याकुले, भयभीते राज्ञि, गोपुरेषु पिहितेषु राज्ञा बाण-मयूरादिषु पण्डितेषु तदुपसर्गोपशमनायादिष्टेषु पातालप्रवेशार्थमिव भूमिमालोकयत्सु श्रीसरयो धवलगृहमूर्द्धानमारु 'भयहरं' प्रकटीचक्कः । तत्प्रभावात् तेषु 30 वैरिषु स्तम्भितेषु गुरोराज्ञ्या तेपां घातमकुर्वन् सर्वस्वं हस्ति-हयाद्यं जग्राह नृषः । ततः स्वरिं राजानं नत्वाऽऽज्ञां प्रपद्य प्रसादं च प्राप्य स्वं स्वं स्थानं ययुः । ततो 'भयहरस्तवः' पठ्यमानो भयहर्ता सर्वेपाम् । इत्थं प्रभावनां कृत्वाऽन्तसमयं प्राप्य श्रीगुणाकरस्वरिं न्यस्य पदेऽनशनमरणेन स्वरयो दिवं ययुः ।

॥ इति श्रीमानतुङ्गसूरिप्रवन्धः ॥

७. माघपिडतप्रवन्धः (Br.)

§२८) अथ दत्तसनोर्मायसोच्यते । मायस जन्मनि पित्रा जातकं कारितम् । आयुर्वर्पाणां चतुरशीतिः, परं प्रान्ते चरणशोफेन मृत्युः । पित्रा ऋद्विप्राग्भारकिलेन पोडशवर्षादृर्द्धं दिनदिनसम्बन्धी लिहतो हारको द्रम्माणां मुक्तः । अतिव्ययवानपीयता सुखं निर्वहिष्यते । स प्रौढः सन् पिठतुं प्रवृत्तः । किन्तत्वं कृत्वा पितुर्दर्शयति । ईदृशानि किन्तत्वानि कुरुपे, पूर्वकिन्तिनानां शतांशेनापि न प्रभवन्ति । पुत्रेण शिशुपालवधो नाम- क् कान्यं कृत्वा चुल्हकोपिर च्छनं धृतम् । एकदा पितुः पुत्तकं जीर्णप्रायं धृमेन कृत्वा दिशतम् । पिता वाचयन् शिरोऽवधृनन् आह—वत्ता ! ईदृशानि किन्तत्वानि कियन्ते । तेनोक्तम्—तात ! भव्यानि ? । किमुच्यते । तिर्हे मया कृतानि । जनकेनोक्तम्—मया छलः कृतोऽतस्ते इयता किन्तत्वसीमा जाता । अतःपरं तव किन्तद्वं न । स अधीत्य पितर्थपरते विलसितुं प्रवृतः । जन्मपत्रिकां दृष्टा सिश्चिं हारकं व्यवीकुरुते ।

§ २९) तस्य भोजन्यतिना मालवाधीशेन मैत्री जाता। एकदा श्रीभोजेन मिलितमाकारितो मायस्तत्र गतः। 10 नृपेण सगौरवं धवलगृहे स्थापितः । स्नानं कुर्वता पण्डितेन मुखं कृणितम् । नृपेण भोक्तुमुपविष्टस्य दिव्यरसवती-समाना रसवती परिवेपिता । स मुखमेव कृणयति । नृपेण चिन्तितम्-खगृहे किमसौ भुनक्ति । उत्थितः । पृष्टो नृपेण-रसवती की ह्यी ? । देव ! कद्यनेनोदरं पूर्तम् । भव्यशीतरक्षा पार्श्वे हसंतिका च रात्री सुप्तः । पण्डितो नृपस्य नातिदृरे । रात्रौ पण्डितः शय्यायां पुनः पुनः पार्श्वे वातं करोति । नृपेण-किमसौ भ्रुनिक्तं, कथं शेतेऽस्य गृहे ?। अवलोकनीयं गत्वा एतत्। प्रातरुत्थिते नृपेण पृष्टम्-सुखेन निद्रा समायाता?। देव! रासभवद्भारितानां 15 निद्रा क्रतः । दिनचतुष्कं खित्वा पण्डितेन नृपो मुत्कलापितः । राज्ञा श्रीमाले भोजखामिप्रासादः कारितः । तस्य प्रण्यं पण्डितस्य प्रदाय पण्डितः सम्प्रेपितः । पण्डितेनोक्तम्-देव! कदाचिन्ममोपरि प्रसादं विधायासार्पुरे पाद-मवधारणीयम् । एवमित्यभिधाय सम्प्रेप्य नृपः प्रत्यावृत्तः, खगृहमायातः । इतो द्वितीये शीततौं नृपः प्रौढकटकेन श्रीमालं प्राप्तः। माधेन सम्मुखं गत्वा नृपः खगृहे एव सकटकोऽप्युत्तारितः। नृपस्तु आवासमवलोकितुं प्रवृत्तः। स्थाने स्थाने विचित्रकौतुकानि पश्यन्, स्थाने स्थाने धृपवटीपरिमलमाजिव्रन्, सश्चारभृमिमतीव परिमलाव्यां 20 दृष्टा पृष्टवान्-किमेप देवतावसरोपवरकः ? । देव ! एप सञ्चारकोऽपवित्रः । नृपो लिखतः । इतो मजनावसरे पूर्व मर्दनिकैर्मर्दनं दत्तं यथा नृपोऽतिरिक्षितः । स्नानपीठे स्वर्णमये महाविच्छित्या स्नानं कारितः । तद्तु देवदृष्यसमानि नासानिःश्वासहार्याणि वस्ताण्याजग्यः । महद्धा देवान् नत्वा भोक्तप्रपविश्वतः । स्वर्णस्थाले द्वात्रिंशत्कवीलकैईते मण्डिते श्रीरमयं पकान्नं परिवेपितम्। श्रीरतन्दुलमयः क्ररः। एवं वटकान्यपि तस्यैव। अपराणि नानाव्यञ्जनानि परिवेपितानि । नृपश्चिन्तयति स-य ईदशीं रसवतीं धनिक्त तस्य मे रसवती कथं रोचते । भुक्तोत्तरं पञ्चसु-25 गन्धिनामताम्बृले जाते वार्त्तां विद्धतो रात्रिरजनि । सर्वोपरितनभूमौ नृपाय पल्यङ्कः सज्जितः । राज्ञोक्तम्-मित्र ! शीतकारुं न जानीथ १ । देव । जानीमः । चन्दनं सज्जितम् । नृपस्तत्र शय्यामरुंचके । तत्र महान् तापश्चन्दन-मपितम् । तालद्यन्तैर्विज्यमानस्य निद्राऽऽयाता । प्रातः पण्डितेन पृष्टम्—देव ! शीतकाल उप्णकालो वा १ । उप्णकाल इति प्रत्युत्तरं द्दौ । पण्डितप्रीत्या कियन्ति दिनानि स्थित्वा मुत्कलाप्य नृपः खपुरीं ययौ ।

§३०) ऋमेणैवंविलसतः पण्डितस्य धनं क्षीणं वार्द्धक्यमपि चागमत् । इतः पण्डितेन घ्रिया उक्ता— अ (४६) न भिक्षा दुर्भिक्षे पतिति दुरवस्थाः कथमृणं लभन्ते कर्माणि क्षितिपरिवृहान् कारयति कः । अद्त्वापि यासं यहपतिरसावस्तमयते क यामः किं कुर्मो गृहिणि! गहनो जीवनविधिः ॥

इति निर्वाहमिनमुश्येतो माथेन माधकान्यपुरतकमर्पयित्वा प्रिया माल्हणादेवी नाझी धारायां नृपसमीपे प्रिहिता—यद्मुं ग्रन्थं ग्रहणकेऽङ्गीकृत्य लक्षत्रयं द्रम्माणां ददत । सा तत्र गता नृपेण शुद्धिः पृष्टा । पुरतकम-पितम् । लक्षत्रयी याचिता । राज्ञा शलाका क्षेपिता । प्रातर्वर्णने पण्डितस्वरूपस्चकं कान्यं निस्सृतम्—
पुरुष्ठ सर ३

35

25

(४७) क्रमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोजखण्डं त्यजित मदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः। उदयमहिमरिइमर्याति शीतांशुरस्तं हतविधिललितानां ही विचित्रो विपाकः॥

नृपेण विमृश्य ही इति अक्षरस्य लक्षत्रयं दत्तम् । ग्रन्थस्तावत् दूरेऽस्तु काव्यं च । पण्डितपत्त्या नृपक्कलादुत्तरन्त्या पण्डितविरुदान्यधीयानानां लक्षत्रय्यपि दत्ता । नृपेण पुनराहूयोक्ता—पुनर्द्रव्यं गृहाणेत्युक्तो- व्याच—अधिकं नानायितमतोऽहं न गृह्णे । सा क्रमेण खगृहं प्राप्ता । यथा गता तथा आगता । पण्डितेनोक्तम्—पुस्तकं राज्ञा किमिति नात्तम् १ । तया वृत्ते उक्ते पण्डितेनोक्तम्—सत्यं आवयोयोंगो विधिना कृतः । अद्य त्यं परीक्षाशुद्धा निवृत्ता । एतावन्ति दिनानि चेतस्येवं विकल्प आसीत् यन्मे गेहिनी ममानुरूपा न वा । अद्य सन्देहो भग्नस्तव दानेन । यत्त्वया गृहदौस्थ्यं न गणितम् ।

(४८) अर्था न सन्ति न च मुश्रिति मां दुराशा दानान्न सङ्कचिति दुर्ललितः करो मे । याच्या च लाघवकरी खवधे च पापं प्राणाः खयं व्रजत किं परिदेवितेन ॥

इतो दर्भस्रक्तरसुप्तः चरणयोः श्वयथुर्जातः । असिन्नवसरे कोऽपि विप्रः क्षुघार्थौ पण्डितावासे प्रविष्टः । भोजनं याचितम् । पण्डितेनोक्तम्-

> (४९) क्षुत्क्षामः पथिको मदीयभ्रवनं एच्छन् कुतोऽप्यागतः तिंकं गेहिनि ! किञ्चिदस्ति यदसौ भुङ्के बुभुक्षातुरः। वाचाऽस्तीत्यभिधाय सत्वरपदं प्रोक्तं विनैवाक्षरं स्थृलस्थूलविलोललोचनगलद्वाष्पाम्भसां विन्दुभिः॥

> > इतोऽर्थी विमुखीभूय गतः। पण्डित आह-

- (५०) व्रजत व्रजत प्राणा अर्थिनि व्यर्थतां गते । पश्चादिप हि गन्तव्यं क सार्थः पुनरीहदाः ॥ इति कथनादनु प्राणैस्त्यत्यजे । पत्यानु सहगमनमकारि । इतः श्रीभोजराजो वित्तस्य करभीर्भृत्वा 20 त्वरितमाययौ । पृष्टम्-पिष्डितः क ? । जनैर्वृत्तमुक्तम् । नृषः प्राह-रे रे इदं श्रीमालं न, भिल्लमालिमदम् । यत्र मम मित्रस्य मिय सत्यपि केनाप्युद्धारकेऽपि किमपि नार्पितम् । अतः पुरेष्विप [अप]वित्रमिदम् । शेपकार्याणि तस्यार्थस्य व्ययेन विधायेति विमृशन् मनसि-
 - (५१) शशिद्वाकरयोर्थहपीडनं गजभुजङ्गविहङ्गमवन्धनम् । मतिमतां च समीक्ष्य दरिद्रतां विधिरहो वलवानिति मे मतिः॥ ऋमेण खपुरीं गतः।
 - (५२) उदयति यदि भानुः पश्चिमायां दिशायां विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायाम् । प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वहिः तदपि न चलतीयं भाविनी कर्मरेखा ॥

।। इति माघपण्डितप्रवन्धः ॥

८. कुलचन्द्रप्रवन्धः (B.)

30 § ३१) एकदा श्रीभोजो वीरचर्यायां भ्रमन् दिगम्वरं मठोपरिखं इति वदन्तमशृणोत्— (५३) तिक्खा तुरिक्ष न माणिआ भडसिरि खग्ग न भग्गु । एह जम्म नग्गहं गयउ गोरी कंठि न लग्गु ॥ नृपेण चिन्तितम्- नैप सामान्यः । प्रातराहृय उक्तः- तव किं नाम ? । देव ! कुलचन्द्रः ।

(५४) देव! दीपोत्सवे रम्ये प्रवृत्ते दन्तिनां मदे। एकच्छत्रं करिष्यामि सगौडं दक्षिणापथम्॥ राज्ञा गृहिवेपं ग्राहितः। इतो राजकुमारी तसिन्ननुरक्ता जाता। सा एकदा वर्णरात्रौ प्राह्-

> (५५) नव जल भरिआ मग्गडा सजल घडुक्कइ मेहु। इअ वारि जइ आविसिइ तउ जाणीसिइ नेहु॥

2

द्वारस्थेन श्रुतम् । स कटकमादाय गूर्जस्त्रोपरि गतः। पत्तनं भग्नम् । नृपस्तु नंष्ट्वा गतः। वलमानस्य स्तम्भनकाचार्यर्थाटे रुद्धे, घाता जाताः। तेन सङ्कटस्थेन भोजं प्रति पत्रिकामादाय [नरः] प्रहितः। तत्र-

(५६) विस्फारस्फारधन्वा मृगयुरनुपदं पार्श्वयोदीवदाघः

क्ष्वेडानादः पुरस्तात् तपित च तपनो मूर्धि तापर्ज्ञतीवः । अन्तःश्चर्यं शिरस्सु स्थपुटगिरिनदी दुस्सहा क्षुद् तृपार्त्ति-दुईवादय जातं व्रजतु हि हरिणः कां दिशं कांदिशीकः ॥

10

राज्ञा दृष्ट्वा 'कां' स्थाने 'किं' कृत्वा प्रहितः । स तु युद्धा मृतः ॥ इति कुलचन्द्रप्रवन्थः ॥

९. षड्दर्शनप्रवन्धः (B. Br.)

§ ३२) एकदा श्रीभोजराजेन दर्शनानि सम्मील्य उक्तम् मोक्ष एकः पन्थानः पश्च । एकसम्मती भव । लिक्क्ताः । कः कं मन्यते । कः कं न । इतस्तैर्नृपो विज्ञप्तः –देव ! देवी भारती पह्दर्शनानां सम्मता । सा तव 15 प्रत्यक्षाऽस्ति तां पृच्छ । नृपेण उपोपितेन पूजापूर्वं प्रत्यक्षीकृता । देवी उवाच – कथं स्मृता ? । नृपेणोक्तम् – मम तथ्यं कथय, कस्मिन्मार्गे यामि । देवी आह –

(५७) श्रोतव्यः सौगतो धर्मः कर्त्तव्यः पुनराईतः। वैदिको व्यवहर्त्तव्यो ध्यातव्यः परमः शिवः॥ इत्यभिधाय देवी अदृत्याऽभूत् । प्रातर्नृपेण सर्वे सम्भूय सत्कृत्य प्रहिताः ॥ इति पह्दर्शनप्रवन्धः ॥

१०. नीलपटवध-प्रवन्धः (B.)

20

§३३) श्रीभोजराजवारके नीलपटा दर्शनिन आसन् । ते तु, एका स्त्री एकः पुमान् नीलीं दोटीं प्राष्ट्रत्य मध्ये नप्रीभूय विजहतुः । एकदा धारायां प्राप्तास्तत्रापूर्वान् द्या सर्वः कोऽपि तेषां समीपे याति । ते त्वित्थं प्ररूपयन्ति-वयमीश्वरस्य तथ्याः सन्तानिन अर्द्धनारीश्वरत्वात् । इतश्र कौतुकाद् भोजपुत्री समागमत् । कर्त्तव्यं पृष्टम् । तैरुक्तम्-

(५८) पिव खाद च चारुठोचने ! यदतीतं वरगात्रि ! तन्न ते । नहि भीरु ! गतं निवर्त्तते समुद्रयमात्रमिदं कछेवरम् ॥

25

तया व्याहतम्-भवन्मतमङ्गीकरिष्ये । नृपं मुत्कलापयितुं गता । ताताहं नीलपटानां धर्ममङ्गीकरिष्ये । नृपेण आहृताः, पृष्टाश्र– सुखिनः स्य १ । मुख्येनोक्तम्-

(५९) न नद्यो मद्यवाहिन्यो न च मांसमया नगाः। न च नारीमयं विश्वं कथं नीलपटः सुखी॥

नृपेणोक्तम्- यूर्यं कियन्तः स्व ? । एकोनपञ्चाशद् युगलानि । नृपेणोक्तम्- सर्वानप्याकारयत्, अहं त्वद्भक्तो 30 भविष्यामि । ते सर्वे मिलिताः । नृपेण पुरुषाः सर्वे मारिताः, ख्रियश्च निष्कास्य मुक्ताः । अतस्तेषां वीजमपि नाशितम् ॥ इति नीलपटवधप्रवन्धः ॥

११. भोज-गाङ्गेययोः प्रबन्धः (B.)

§ ३४) एकदा वाणारसीपतिः श्रीमाङ्गेयक्कमारो गजसहस्र १ शत ४ एवं १४००, तुरङ्गमलक्ष ३ जीणसालार्हान्, द्वयं उद्घाटं एवं लक्ष ५, मनुष्यलक्ष २१; एवं सामय्या मालवपति मोजं प्रति चचाल । गोलातीरे आवास्य स्थितः। इतो भोजन्योऽपि तुरङ्गसहस्र ४४, मनुष्यलक्ष ५, गज २००; एवं सामय्या सम्मुलो गोदानरी5 तीरे आवासान् ददौ । इतो गाङ्गेयस्य पण्डितेन परिमलेन भोजं प्रति 'वकोटित' काव्यं प्रहितम् । नृपः कुपितः। परं किं कुरुते । इतो भोजेन काष्ट्रध्वलोपि स्थित्वा विलोकितम् । वहु सैन्यं दृष्टा छित्तिपमहामात्यं सन्ध्यर्थमप्त्रेपीत् । स तत्र नृपसदिस गतः । नृपेणोक्तम्—अरे ! तव खामी मत्सैन्यं न पत्र्यति, यदिममुखः समाययौ ! द्वा ! सैन्यस्य को गर्वः ! इति वार्त्तायां सत्यां कटके कलकलं नृपोऽश्रोपीत् । पृप्टम्—रे ! किमिदम् १ । देव ! हस्ती परवशो जातस्तस्य कलकलोऽयम् । नृपस्तदाकण्यं उत्थाय काष्ट्रपञ्जेपीत् । स उपानहं नृपायादर्शयत् । नृपः सञ्जीभूय गाङ्गेयसैन्ये पपात । सर्वमाचम् । नृपोऽप्यन्तस्थो धृतः । सुवर्णानिगडे क्षित्वा गजमिश्वरोप्य धारायामानीतः । धवलगृहेऽपरे सिंहासने निवेशितः । पण्डितपरिमलोऽपि राजवर्णीण सहायातः। राज्ञा भोजेनोक्तम्—
पं० उपविशत । परमासनं न मोचयित । "इह निवसित मेरुः शेखरो भूधराणां०" । भोजेनोक्तम्—कोटकः (१) । किं तस्य चित्ते(तं) । मं(पं)डितेन "अयं वरामेके०" इति उक्ते "जन्मस्थानं न खलु विमलं०" इत्युक्तवता—
15 पण्डित उक्तः—पारितोपिकं याचस्य । देव ! अयं नृपतिर्मुच्यताम् । भोजेन सिंहासने निवेश्य तिलकं कृत्वा पुनर्वाणारसीराज्ये प्रहितः ॥ इति भोज-गाङ्गेययोः प्रवन्धः ॥

१२. भोजदेव-सुभद्राप्रबन्धः (B.)

§ ३५) इतो गोपगिरीश्वरो नरवर्मदेवस्तत्सुता सुभद्रा । सा भोजराजस्य 'अभिनवार्जन' इति विरुदं पट्यमानं श्रुत्वा जनकं प्राह—तात ! मां प्रेपय । भोजो राधावेधं कृत्वा मां परिणयते, विरुदं वा सुश्चित । सा

20 निर्वन्थे जनकमापृच्छ्य तुरगसहस्तेद्वीद्यभिः सह चचाल । नृपाप्रे कथापितम्—यदहं त्वां वरीतुमागतेति । श्रुत्वा
नृपश्चिन्तातुरो जातः । सा तु गोदावरीतीरमेत्य स्थिता । राधावेधं कुरु विरुदं वा त्यज । एवं श्रुत्वा नृपः
सम्मुखं प्रयाणमकरोत्, अभ्यासमार्व्धवांश्च । सर्वः कोऽपि कौतुकान्वेपी सन्धेर्वात्तामपि को न विधत्ते ।
पण्मासान्ते तथा कन्यया भर्तितः साहसमवलम्वय गोदावरीतीरमायातस्तत्र राधावेधो मण्डितः । तस्याधसौलकडाहिरुत्कलति । नृपस्तस्थास्तीरे स्थाने स्थितः । कवीन्द्रैर्नानावर्ण्णनमार्व्धम् । तत्र द्यद्वसरस्वतीति नाम्नाऽ
25 चार्या नृपसेवकाः सन्ति । "तैर्विद्धा विद्धा शिलेयम्०" इत्युक्तम् । नृपेण राधावेधे कृते कन्यया वरमाला क्षिप्ता ।
नृपेण काव्यस्य दूपणं पृष्टे कोऽपि न वेत्ति । नृप आह—"विद्धा विद्धा" इति मत्वा मया चिन्तितम्—मम कार्य
स्तम् । "भवतु कार्मुकक्रीडितेन" अनेन भोजस्य पण्मासान्ते सृत्युः । स्वामिनिति । प्रसीदेति । असदाचार्याणां
पण्मासमायुः । "धारा ध्वस्ता" इति प्रकटम् । मालवश्चाप्रधानो विनंक्ष्यति । तदनु सा परिणीता । पष्टे मासे
नृपोऽतीसारान्यतः । सुभद्रया सहगमनं कृतम् ।

30(G.) सङ्ग्रहगतं भोजनृपवृत्तम्।

§ ३६) *भोज जातके "पंचाशत्पंच वर्षाणि" इति श्लोके तेन गणको निषिद्धः । इतश्च मुझेन स एव गणकः सन्तानहेतोः पृष्टो भवान् अपुत्र एवेत्यवादीत् । श्रावणसुदि पंचम्यां प्रथमप्रहरे यो भवत्समस्यां पूरियता

^{*} एतस्य सङ्गहस्यात्रेकं पद्मं ब्रुटितं तस्मिनस्य वृत्तस्य कियान् भागो नष्टः ।

स एव राजा भविता । इति निर्णाते दिने कस्यापि सौधस्योपिर पितः कृष्णः पत्नी गौरीति वीक्ष्य राज्ञः समस्या समुत्पन्ना-'ढुछुड सामल्ड धण चंपावनी०।' केनाप्यपूरिते भोजेन पठता पूरितेति-'छज्जइ कणयारह कसवहुइ दिन्नी०।' पिछतेनोक्तम्-मया पूरिता। सा राज्ञो दर्शिता। अर्द्धराज्ययोग्यं तं ज्ञात्वा भोजं विहाय यावत् युवराज्याभिलापिथन्तयति, तावज्ञालन्थरेण राज्ञी मुस्नाता प्रोक्ता। ततो निर्घृणशम्मा मारणायाप्पितः। भोजेनोक्तम्-''मान्धाता स महीपितः।' इति तुप्टेन पुनर्मोचितः।

§३७) अन्यदा श्रीभोजेन श्रीपत्तनाधिपतेः श्रीमीमस्य गाथाहस्ताः पण्डिताः व्रेपिताः । तथा गाथा-"हेलानिद्दल्यि॰ ॥" तत्प्रत्युत्तरेऽजायमाने नृपो विपि(प)ण्णो जातः । पण्डितैस्ततो विगोपनाय गाथायां संस्कार्य-माणायां स्रोरिभिरुक्तं-जीवमाना कथं मार्यते । भविता भवतां स्त्रीहत्या । इति निषिद्धे राज्ञा सन्मान्य गुरवः प्रत्युत्तरं पृष्टाः । तथा चोक्तं-"अंधयसुयाण कालो ।।" इति प्रत्युत्तररुप्टेन भोजेन पत्तनोपरि वाह्यावासा दत्ताः । श्रीमीमेन तत्परिज्ञाय डामरनामा सान्धिविग्रहिकः प्रहितः । राज्ञा भोजेन तं क्ररूपं वीक्ष्य हसितम् । उक्तं च-10 "योप्माकाधिप॰ ॥" ततो राज्ञा स्नानोत्तीर्णेन गलद्भिः केरोः पृष्टं-मन्त्रिन ! भीमडाको नापितः किं करोति । तेनोक्तं-अश्वपति-गजपति-नरपति-नृपत्रयस्य शिरांसि भद्रितानि । चतुर्थस्य शिरसि साद्रीकृते श्रुरमा-चालयन्नितः । रिञ्जतेन कौतुकिना राज्ञा स कौतुकवादी आत्मनः समीपं स्थापितः । निर्द्धं कौतुकवक्तत्वेन राजानं रख्जयति । अन्यदा राजविडम्बननाटके कारिते भीमे रूपे मार्दंगिके मृदंगं वाद्यमाने राज्ञोक्तं-मन्त्रिन् ! भीमडाकस्य करौ मृदंगपुटे भव्यौ पततः । तेनोक्तं-देव! पुरा भीमेन पार्वतीपुरस्ताण्डवे क्रियमाणेऽभ्यस्तम् । एवं 15 विधावेव मीमस्य करों कठोरौ वर्त्तते । अन्यदा तैलपदेवरूपे समागते मत्री प्रोक्तः-मन्त्रिन्! भवदेशीयोऽयं राजा उपलक्ष्यताम् । एवमुक्ते तेनोक्तं-अभिज्ञानं नास्ति । "मत्स्वामी तैलपदेवो यदि० ॥" इति प्रोक्ते रुटेन राज्ञा पितृच्यवैरीति तदेव सैन्यं तैलपदेवस्थोपरि चालितम् । चिलते राज्ञि मित्रिणोक्तं-राजन् ! श्रीभीमः पाण्णिघातं विधास्यति । राज्ञोक्तं-यात्वा वार्य । वचनेन न स्थास्यतीत्युक्ते ततः अश्वसहस्र ४, जात्यगज ४, सुवर्णलक्ष ९-एतत्सर्वं प्राभृते प्रेपितम् । मन्त्री सार्थे गृहीतः । तस्यैव बुद्ध्या योजन १६ शिक्षितगतिभिर्नवभिः तुरगसहस्त्रैः 20' पाद्रदेवतां नमस्क्रवीन तैलपदेवो धृतः ॥

§३८) एकदा मित्रडामरसाग्रे उक्तं-विद्वान् यावान् लोकः श्रीमालवकेऽस्ति, न तादशोऽपरदेशेषु । ततो डामरेणोक्तं-नृप ! यादशो लोको गोपाल-वेश्यादिको विद्वानस्ति गौर्जरे, न तादगत्र । नृपो मौनेन स्थितः । डामरेण चिन्तितं-राज्ञा धूर्नत्वेन स्थितम् । पुनः कदाचिदेपा वार्त्ता कर्त्ता । अतो भाणितं स्वनृपाग्रे । यदेका विदुपी स्वीपण्डिता देशसीमायां स्थाप्या । एको विद्वान् गोपालरूपो देशसीमायां स्थाप्यः । ततोऽन्यदा भोजे-25 नोक्तं-आनयत । प्रधानरानीतौ तावेव । प्रथमभेटायां राज्ञोक्तं-भण पण्डित ! वर्णय किंचन । स आह- "भोयराय गलि कांद्रलेड भण० ॥" प्रशंसितो राज्ञा । सा उक्ता-इह किं । साह-"पृच्छंति० ॥"

§ ३९) अन्यदा निशीथे भोजराज्ञा परिश्रमता कुलचन्द्र नामा क्ष्पणक एवं पठन् श्रुतः—"तिक्खा तुरिअ न मा०॥" "नव जल भरिआ०॥" ततो राजा निजपुत्रीखरूपं दृष्टा प्रातराकार्य गूर्जरदेशोपरि सेनाधिपत्यं दत्तम् । तदा तेनोक्तम्—"देव दीपोत्सवे०॥" ततो गूर्जरदेशो विनाशितः समग्रोऽपि । श्रीपत्तनचतुष्पथे ३० कपर्दका उप्ताः । ततस्तस्यागतस्य राज्ञोक्तम्—रम्यं न कृतम् । अद्यप्रभृति मालवदेशदण्डः श्रीगूर्जरं यास्यति । कपर्दका मालवदेशीयनाणकम् ।

§४०) धारानगर्यां सीता नाम रन्धनी । केनापि दूरदेशान्तरिणा तस्या गृहेऽत्रं कारितम् । तया निशि घृत-कुम्पकच्यत्ययेन कांग्रणीतैलकुम्पकात् तैलं परिवेषितम् । स मृतः । तं तथा विलोक्यापवादमीतया तया तदे-

20

वान्नमुपभुक्तम् । तत्प्रभावात्सारखतमजनि । राज्ञो मानपात्री सीता पण्डिता जाता । एकदा राज्ञा तस्याः स्तनयुगं वीक्ष्यापाठि-

(६०) किं वर्ण्यते कुचद्वन्द्वमस्याः कमलचक्षुषः । सप्तद्वीपकरग्राही भवान् यत्र करप्रदः ॥ सीतया उत्तरार्द्धं पठितम् । तथा राज्ञा पुनः पठितं—"सुरताय नमस्तस्मै०॥" अन्यदा तया जालान्तरे वन्द्रकरस्पर्शे इदमपाठि—"अलं कलंकश्रृंगार०॥"

§ ४१) अन्यदा राजपाटिकायां गच्छतो राज्ञो भोजस्य सर्वैरिप नमो विहितम् । परमेकेन पुरुपेण हद्दमध्य-स्थितेन राजा न नमस्कृतः । ततो राज्ञा तत्सम्मुखमालोकितम् । तेनांगुलित्रयम् ध्वींकृतम् । राज्ञा चिन्तितम् कि-मनेनांगुलित्रयेण का सञ्ज्ञा विहिता । द्वितीयदिने तथैव तेनांगुलिद्वयम्, हतीयदिने एकांगुलिः । आकार्ष राज्ञा पृष्टम् । तेनोक्तं-राजन् ! दिनत्रयं चूणिरिस्त, किं राज्ञा । इति तुष्टेन तसे वर्षाशनं दत्तम् ।

10 §४२) केनापि पण्डितेन श्लोकद्वयमिद्मपाठि—
"ग्रासादर्द्धमपि ग्रासमर्थिभ्यः ।। १॥" "यदनस्तमिते सूर्ये०॥२॥"
एतत् द्वयमपि राज्ञा भोजेन कुण्डलयोः सम्रुत्कीर्णम् । द्वयस्थापि दाने लक्षद्वयी दत्ता ।

§४३) श्रीभोजेन सिद्धरससिद्धिहेतोः सुवर्णसप्तकोटीर्भक्षिताः । रत्तिकामात्रापि न सिद्धिरजनि । ततो रस-विडम्बननाटकममिण्ड । तत्र पात्राण्यागत्य विजल्पन्ति─

(६१) कालिका नट्टा नट्टा कस्स कस्स नागस्स वा वंगस्स वा । नहि नहि धम्मंत फुक्कंत अम्ह कंत सीसस्स कालिम…॥१॥

इति राजा हसति । अत्रान्तरे सिद्धरसयोगी तिन्नशम्य समागतः । प्रदीपिकाधूमवेधेन राज्ञस्ताम्रमण्डिका सुवर्णीकृता । राज्ञा दृष्टं किमेतिदिति ? भ्रान्तेन नाटकनिवारितम् । राज्ञोक्तं—तदा भोक्ष्ये यदा स सिद्धयोगी मिलिष्यिति । एवं दिनत्रयेण मिलितः । तेनोक्तं—राजन् ! रसो दैवतम् ।

(६२) अतिथ कहंत किंपि न दीसइ। [नितथ] कहउ त सुहगुरु रूसइ। जो जाणइ सो कहइ न कीमइ। अज्जाणं तु वियारइ ईमइ॥

इत्यवगत्य मानितः।

१४४) श्रीमोजेन लोकोपकारकरणाय सप्तोत्तरशतवैद्यग्रासो विहितः। चतुष्पथचत्वरके जयघण्टा बन्धापिता। इत्युक्तं च-रोगिणा घण्टा वादनीया। यथा वैद्या मिलन्ति, चिकित्सां कुर्वन्ति च। अपरं च रोगिणा वलहहेषु 25 मेपजान्नादि ब्राह्मम्। एवं कियति काले गते सित एकदा कोऽपि जलोदरी समेतः। घण्टारवादागतेन भिपजाऽ-साध्यः कथितः। ततो रोगी रान्नो मिलितः। रान्नापि कृपयोक्तं-चैद्या! अम्रं जीवयत। राजन्! असौ न जीवत्येवासाभिः। इत्युक्ते दीनारपंचश्चतीं दत्त्वा रोगी प्रस्थापितः। स निदाधे मध्यन्दिने सार्थरिहते पथि वटच्छायायां विश्रामायागमत्। तत्र सर्प्प एक आगच्छन् तहुर्गन्चेन नष्टः। स च विपि(प)ण्ण आत्ममरणाय पृष्ठे धावितः। तत्रस्तेन सर्प्यवान्तगरलिलप्ताक्तंपत्राणि मिश्वतानि। तैविरेको लगः। ततः कयाचिन्नायिकया स्वगृहं 30 नीत्वा निरामयो व्यधायि। पुनर्व्याष्टस्य घण्टारवो विहितः। तन्नादागतैभिपग्मितः सञ्जं वीक्ष्य प्रोक्तं—त्वया कथं घण्टारवोऽकारि। तेनोक्तं—मम राजैव वेत्ति। तैत्तत्रानीतः सः। राज्ञा पृष्टः—को रोगोऽस्ति?। तेनोक्तं—अहं वैद्यमुक्तः स एव जलोदरी। त्वत्प्रसादाञ्जीवितः। किमोतदिति दोपज्ञवैद्यमुख्येनोक्तं—स एवायम्। परमेकौपधसाध्य एव। तदौपधं कर्म्ययोगेनैव मिलितम्, नार्थेन। किमौपधम्?। राजन्! निदाधमध्याहे कृष्णसर्पस्रयंम्रक्तारलिलप्रान्यकप्रत्राण्येव। तदौपधं विना यदि जीवितो भवति तदा मम काष्टानि। इत्युक्ते राज्ञा पृष्टं—किमहो?। उत्तेनोक्तमेवमेव। ततो राज्ञा द्वयसापि प्रसादो दत्तः।

§४५) अन्यदा डाहलदेशीयकर्णमात्रा देमतया सिद्धयोगिन्या प्रहरं यावत् शुभलमकृते प्रसवसमये कपा-लासनेन गर्भो धृतः । कर्णो जातः । सा तु मृता । शुभलमप्रभावात् पद्त्रिंशद्धिकशृतराजचकाधिपत्ये किय-माणे राजा रोदिति । मन्त्रिभिः कारणं पृष्टम्-"मा स्म सीमन्तिनी काचित् ॥"

§ ४६) अन्यदा श्रीकर्णेन श्रीभोजं प्रति कथापितम्—यत् भवतश्रतुरुत्तरशतं प्रासादाः, गीतवद्धप्रवन्धाश्च वर्त्तन्ते।अतस्तुरगद्धनद्वयुद्ध-विद्यात्यागयुद्धेन मां विजित्य एकं प्रासादं प्रवन्धाधिकप्ररितक्करः। ततः पंचाशद्वतः 5 प्रासादप्रतिज्ञायां भोजे जिते मित्रिभिराहूयमाने शरीरापाटवे सित घाटमार्ग्गेषु वद्धेषु रुद्धेषु श्रीभीमेन श्रीकर्णस्य शुकचरणेन कृत्वा लेखः प्रस्थापितः। "अंवय फलं०॥" इति यौगपद्येन मालवभंगे कृते भागहेतोर्डामरेण श्रीकर्णो वन्दी कृतः॥ इति विविधा भोजनृपप्रवन्धाः॥

१३. धाराध्वंसप्रबन्धः (B.)

§४७) मालवमण्डले उज्जियिनी पुरी अपरा धारा । तत्र राजा यशोवर्मा । इतश्च पत्तने श्रीजयसिंहदेवः । स¹⁰ मालवं जेतुं प्रयाणमकरोत् । समीपभूमौ गतः प्रतिज्ञामकरोत्-यद् धारां लात्वा भोक्ष्ये । इतो धारायां गन्यति ५ मध्येऽयोमयाः क्षरिकाः क्षिप्ताः सन्ति । प्रतोल्यो दत्ताः । कपाटेषु योजितेषु सम्मुखानि नाराचानि । तत्र गज-स्याप्यवकाशो नास्ति । धारायाः प्रत्यासन्तैरपि भवितुं न शक्यते । अथ सिद्धराजप्रधानैः कणिकाया धारा कृता । तस्या भङ्गे ५०० परमारा युद्धा मृताः। द्वादशवार्षिके विग्रहे सिद्धनाथे खिन्ने वर्व्यरको वेतालः प्राह-देव! यदि यद्यःपटहः करी किराह्रवास्तव्यो जेसलपरमारस्तत्र प्रेप्यते, गजारूढेन तेन धारा गृह्यते अन्यथा न । राज्ञोक्तम्-15 स करी कास्ते 🖁 । कान्त्यां मदनब्रह्मनृपतेरस्ति । जयसिंहदेवस्तु कियता परिकरेण तत्र गतः । वर्षाकालोऽस्ति । पुर्या द्वारे स्थितः । मांइदेवमत्त्रिणो मिलितः । आदिश्यतां कार्यम् । नृपदर्शनमवलोक्यते । नृपो महानवम्यां विना दर्शनं न ददाति । जयसिंहदेवः स्थितः । इतो गाढे घर्मेऽभिजायमाने नृप उपरितनभूमौ आकाशे प्राप्तः । प्ररम-वलोक्य पुराद वहिर्दशं ददौ । मदनकपटैः कृष्णान् चतुरकान् दृष्टा प्राह–अरे ! पूर्द्वारे किमिदं दृश्यते ? । देव ! गूर्जरत्रानृपतिर्देवदर्शनार्थी प्राप्तोऽस्ति । अरे ! नृपो न किन्त्वेप कवाडी । य एवंविधे वर्पाकाले श्राम्यति ।20 आकार्यताम् । जयसिंहदेवस्तूपायनमादायाययौ । श्रीमदनत्रक्षेण राज्ञा सत्कृतः । आगमनकारणं पृष्टम् । राज्ञो-क्तम्-यशःपटहः करी विलोक्यते । किमर्थम् १ । देव । तेन विना द्वादशवार्षिको विग्रहो न भज्यते । राज्ञो-क्तम्-गजानानयत । जनैरुक्तम्-प्रसिद्धानां मध्ये स नास्ति । सिद्धराजः कृष्णवदनो जातः । इत एकेनाधोरणे-नोक्तम्-देव! स यशःपटहः करी । तं समानाय्यत । नृपेणोक्तम्-यद्यम् नार्यं सरित तदा गृहाणान्येपि हस्त्यश्चादयः । देव! पूर्णामनेनैव । राजा परिधाप्य करिणं दत्त्वा चोक्तम्-अतः परं विग्रहो न कार्यः । यतः 25 स्रल्पायुपि जीवलोके राज्यस्य सौख्यं नानुभूयते तत्तस्य को गुणः । नृपस्तु धारायां गत्वा सगौरवं जेसलपरमार आहतः । तं दृष्टा चारणेनोक्तम-

(६३) तुह मूंडिए घणेहिं घार न लीजइ कर्णउत्त !। जिम जे हेडे(?)प्रकंचेहि जोइ न जेसल आवतउ॥

स यशःपटहमारुह्य प्रतोलीं गतः। कपाटयोर्नाराचानि सम्मुखानि तैः करी विध्यते। स पश्चात् स्थितः। जेस-30 लेन हिकतः। करी कुपितः। कपाटाध ईपत् शुण्डाप्रवेशं प्राप्योद्धृतवान्। प्रतोली अतिवलेन पतिता। धारा गृहीता। नुपतिर्यशोवमी धृतः। श्रीजयसिंहदेव उपकारिणो जेसलसौद्धिदेहिकं कृत्वा वलितः।

१४८) यावत्क्रमेण द्यद्वनगरमायातस्तत्र ब्राह्मणैः प्रवेशोत्सवे कारिते श्रीयुगादिदेवप्रासादाग्रे नृपे प्राप्ते, द्विजैरुक्तम्-देव! देवं नमस्कुरुत । किमसौ ब्रह्मा १। देव! असौ युगादिदेवप्रासादः । किमत्रापूर्वम् १। देव!

असाकं पुरे एप देवो मुख्यः । नृपस्तु मध्ये गत्वा देवं नमस्कृत्य ध्वजां प्रासादोपिर दृष्ट्वा जनानाह—मया मालवे रुद्रमहाकालं विना ध्वजा कापि न दृष्टा । अतः कथमत्र १ द्विजैरुक्तम्—उत्तारके चलत यथोच्यते । ततो नृपतिर्वह्मदेवकुले गत्वोत्तारके गतः । तदनु ब्राह्मणैः श्रीयुगादिदेवभाण्डागारात्कांस्यतालाई गोष्टिकैरानीय नृपाय दर्शितम् । देव ! असौ स प्रासादो यत्रैवं कांस्यतालान्यासन् । एवं प्रासादाः २१ सकलशा भूगताः सन्ति । एप इद्वाविंशतितमः । नृपस्तु चमत्कृतः । देवायाधिकं ग्रासं दत्त्वा पत्तनं गतः ॥ इति धाराध्वंसप्रवन्धः ॥

१४. सिद्धराजौदार्यप्रबन्धः (B.)

§ ४९) अथैकदा गुप्तिस्थाय यशोवर्मनरेश्वराय सिद्धराजेन पत्तनं दर्शितम् । तेन प्रासादपरम्परां दृष्टा उक्तं च-देवासाकं वैरं सुखेन वलिष्यति । कथम् १ । एषु देवकुलेषु मानातीतो ग्रासोऽस्ति । पाश्वात्यास्तं लोपयिष्यन्ति । अतो देवद्रव्यभक्षणाद्विनश्यन्ति । सहस्रलिङ्गं दृष्टा प्राह─वयं देवद्रव्यभक्षकाः, यूयं शिवस्नातजलपायिनः । अत 10 एवावां तुल्यो ।

(६४) न मानसे माद्यति मानसं मे पम्पा न सम्पादयति प्रमोद्म् । अच्छोदमच्छोदकमप्यसारं सरोवरे राजति सिद्धभर्त्तुः ॥

§५०) अथैकदा सिद्धनृपतिर्नगरचरितं ज्ञातं छन्नं अमित सा । व्यवहारगृहश्रेणौ एकसिन्नावासे बहून् दीपानालोक्य प्रातस्त्रस्याकारणं प्रहितम् । तेन भयभीतेन कारणं पृष्टम् । आकारकेणोक्तम्—नाहं जाने । स गतः । 15 नृपेण पृष्टम्—िकयन्तस्ते गृहे दीपाः १ । तेनोक्तम्—चतुरशीतिः । नृपेण भाण्डागारात्पोडशलक्षान् दन्त्वा ध्यजा कारिता, दीपका विध्यापिताश्च ।

१५. मद्नब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीतिप्रबन्धः (B.)

६५१) कान्तीपुरी सर्वपुरश्रेष्टा । तत्र चतुरशीतिश्रतुष्पथानि । चतुरशीतिर्जैनाः प्रासादाः । तावन्तो माहे-श्वराः । तावन्त्यो वाप्यः । ८४ उद्यानानि । ८४ सरोवराणि । एवं ८४-८४ स्थानानि । तत्र मदनब्रह्मा राजा । 20 तस्य धवलं गृहम् । योजनप्रमाणः प्राकारस्तत्र धवलगृहं सप्तदशभूमिकम् । तस्य पाश्चात्यप्राकारमध्ये सर्वऋतूपयोगि उद्यानम् । तत्र सप्त[दश ?]भूमौ गवाक्ष ४। आदौ विमानविश्रमः पूर्वस्थाम् । उत्तरस्यां कैलाशहासः । दक्षिणस्यां पुष्पाभरणः । पश्चिमार्यां गन्धर्वसर्वस्वः । एते चत्वारो मुख्या गवाक्षाः । सर्वे स्वर्णमयाः । नानाकौतुकोप-शोभिताः । अपरे ११६ । एवं १२० तहुर्गो । वाप्यश्रतस्रश्रतुर्दिश्च । क्षीरोदवापी १, कमल़केदारा २, हंसविश्राम-वापी ३, सुधानिधिः ४ एवं । तदन्त पुरमध्ये चन्द्रज्योत्स्ना तटाकिका धवलगृहप्रवेशप्रत्यासन्ना नानारतैर्निवद्धा । 25 तस्याश्रतुर्दिक्षु वाटिकाधारागिरिः सर्वर्त्तूपयोगिभिर्दृक्षैर्विराजितः । तस्य राज्ञोऽन्तःपुरसहस्र ५ । एवं ३६००० पिंड-विलासिन्यः । मुख्यदेच्यश्चतस्रः । वावन १, [चन्दना २,] सुमाया ३, सींघण ४ । बावनदेवीवाहिगि-सुगति १, इंसगित २, सुललित ३, लीलावती ४ मुख्य । चन्दनावाहिंगि ४ साऊ १, सुसीला २, दक्षमणी ३, वहुभा ४। सुमयावाहिगि ४-कांऊ १, कपूरी २, कामल ३, कस्तूरी ४। अमृतमयी १, अमृतवत्सला २, वचन-वत्सला ३, सहसकला ४-सींघणदेवीवाहिंगे । मेरी १, हम्मीरी २, फतू ३, फलू ४-एता मुख्याः राज्ञः 30 प्रसादपात्राणि । आलि १, आलित २, अलिव २, अलवेसरि ४, वील्ट् वामणी कौतुकपात्राः । गज २२२०, तुरंगम लक्ष ५, पदाति लक्ष २१। सर्वमित्रिश्रेष्ठो माईदेवः सर्वमुद्राधिकारी । सेनापतिः साईदेवः । वारओँलगउ माधवदेवः । तथा वर्षमध्ये सर्वावसरः २-एको महानवम्याम्, अपरश्रेत्राप्टम्याम् । एवमिन्द्रसमानो राज्यं पालयति । सोलही सोल १६ नृत्यं सदा नृपाग्रे क्रवन्ति ।

§५२) एकदा गूर्जरत्राधिपतिर्जयसिंहदेवो दिग्विजयं विधाय व्याष्ट्रतः कान्तीपरिसरे प्राप्तः । चिन्तितम्— मम रणश्रद्धा केनापि नापूरि । "पुष्पेषु जाती नगरेषु कान्ती*…" सा ताबद्दिलोकनीया । परिग्रहोऽप्यजु-त्साहोऽपि नृपमनुययौ । क्रमेण पुरीद्वारभूमावावासान् दत्त्वा स्थितः । मध्ये कोऽपि न वेत्ति । नृपेण वहिःस्थेन प्ररीप्राकारे कनककिपशीर्पाणि दृष्टानि । प्रासाददण्डकलशैः सर्वसुवर्णमयी लंकेत्र भाति । सिद्धराजेन चिन्तितम्-वयमविमृत्र्य प्राप्ताः । इतः सेनानीः सन्नद्धीभूय पुराद्वहिर्निर्गत्य फेरकं दत्त्वा मध्ये याति । अमात्येन पुरीरोघः 5 कृतः । सैन्यसामग्री च सर्वा विहिता । इतो मित्रिणा लेखद्वारेण नृपो विज्ञप्तः-देव ! किमपि सैन्यं द्वारि केनापि हैतनाऽगतमस्ति । नृपेणोपरितनभूमिस्थितेन दृष्टम् । द्वारावलगकस्य प्रति खरूपपत्रमर्प्पितम् । मन्त्रिणा खरूप-मालोक्य पोडशतुरङ्गमानपरवस्तु नृपयोग्यमर्पयित्वा माधवदेवद्वारावलगकः प्रहितः। स सिद्धनार्थं गतः। नृपेणो-क्तम्-किमिदम् ? । मित्रणाऽतिथ्यं भवतां प्रहितम् । प्राघुणका ययं सत्काराहीः । नृपेणोक्तम्-वयमातिथ्यार्थिनो न, किन्तु युद्धार्थिनः । स तत् श्रुत्वा मित्रणे निवेदितवान् । मित्रिणा नृपो विज्ञापितः । राज्ञा पत्रकेण द्वारि 10 कथापितम् । भन्यमेतत् । आगामिके मङ्गलवारे तव श्रद्धां पूरियव्यावः। मित्रिणा द्वारि रणक्षेत्रं नृपस्य जयसिंह-देवस्य वचनात्सञ्जीकृतम् । चतुर्दिक्षु वृक्षादि क्षत्रियैक्छित्रम् । मित्रणा युद्धार्थे सैन्यसामग्री कृता । नृपादेशमेव विलोकमानिस्तष्टित । नृपस्तु किमपि न कथापयित । इतो निर्णातिदिनोपरि जयसिंहदेवेन जगदेवस्य परमार्वशो-द्भवस्य पट्टबन्धः कृतः । पश्चदश चान्येऽपि तत्सदशाः सञ्जीकृताः । इतो मङ्गलवारदिने नृपः प्रबुद्धो दन्तशौचं स्नानं शृङ्गारं च विधाय देवतावसरमकरोत् । तत्र प्रेक्षणीयं जातम् । पश्चाद्रसवती निष्पन्ना । भोजनं विधाय 15 ताम्बूलमादाय तुरगान् सञ्जीकृत्य खयं सन्नाहं जगृहे । पोडश नार्यः सन्नाहं ग्राहिताः । तद्नु ताभिर्युक्तो युवत्या भृतातपत्रो द्वाभ्यां वीजितवालव्यजनः स्थाने २ प्रेक्षणकान्यवलोकयन् पुर्यन्तरेवाष्टौ दिनानि कौतुकेनैव [निर्गम्य] नवमदिने बहिरायातः । इतो रणभूमौ पटो विधृतोऽन्तरा तावज्ञयसिंहदेवसुभटाः सन्नह्य समाजग्रुः । याव-त्पटोऽपाकृतः, तावन्नारीवेष्टितं नृपं दृष्टा जगदेवाद्याः पश्चाद्ववलुः । नृपेणोक्तम्-किमिति भग्नाः स्थ । जगदेवे-नोक्तम्-केन सह युध्यते ? । खयमवलोकयतु देवः । तावज्ञयसिंहदेवः खयं सम्मुखे धावितस्तुरङ्गं मुक्तवा पाद-20 चारेण । मदनब्रह्मनृपोऽप्युत्तीर्णः । द्वयोरालिङ्गने जाते द्वयोरिप प्रीतिर्जाता । प्रवेशमहोत्सवे जायमाने सिद्धनाथ-क्त्वनेकानि कौतुकानि विलोकयत्रनेकानि वाद्यानि शृष्यंत्र राज्ञा समं प्रतोल्यामागतः । एवं नवभिर्दिनैश्चन्द्र-ज्योत्स्नातटाकिकायां प्राप्तौ । तत्र स्नातौ । सुवर्णवेष्टितपादपां धारागिरिवाटिकामवलोकयन्तौ धवलगृहद्वारमा-यातौ । मन्त्रिणा कारितमङ्गलोत्सवौ धवलगृहं प्राप्तौ । सिद्धनाथस्तु सर्वरमणीयतामालोक्य प्रामीण इव विसाया-तुरः स्थितः । भोजनाद्या सर्वा सामग्री तथा जाता यथा वाढं चेतिस चमत्कृतः । मासान्ते मुत्कलापयामास 125 राज्ञा हरूत्यश्वादीन्युपढौकितानि । जयसिंहदेवस्तु पात्राष्टकं ययाचे । नृपेणार्पितम् । राजा मुत्कलाप्य पत्तनोपरि चिलितः । पात्राप्टकं यावत्पुरत्रतोल्यामागतं सुलासनादि संहत्य.....तावित्रर्गमे उक्तम्-अग्रे पत्तनं कः?। जनैरुक्तम्-'पत्तनं दूरे' इति श्रुत्वा पण्णां हृदयसङ्घद्दो जातः । इतो ह्रयस्योपर्याच्छादनं दत्तम् । द्वयं जीवितम् । तन्नुपेण सह क्रमेण पत्तने प्राप्तम् । माऊनाम एकखाः, परखाः पेथु । अद्यापि माऊहराणि पेथुहराणि च पात्राणि श्रयन्ते । एवं श्रीजयसिंहदेवः कान्तीं गत्वा समायातः ॥ इति मदेनत्रसनृपतेर्जयसिंहदेवस्य श्रीतिप्रवन्धः ॥

१६. अथ श्रीदेवाचार्यप्रवन्धः (Bb.);

(६५) वस्त्रप्रतिष्ठाचार्याय नमः श्रीदेवसूरये । यत्प्रसादमिवाख्यान्ते सुखप्रश्लेषु साघवः ॥ (६६) नग्नो यत्प्रतिभाघर्मात् कीर्तियोगपटं त्यजन्। हियेवात्याजि भारत्या देवसूरिर्भुदेऽस्तु सः॥

^{*} अत्र पद्यस्य पूरणार्थे मूलाद्शे तत्प्रमाणा पंक्तिः रिक्ता मुक्ताऽस्ति । पु॰ प्र॰ स॰ 4

- (६७) प्रभाधिनाथैर्मुनिभिः कलासृत् मुख्यैरुपेतो गुरुतारकौषैः। अनन्तलीलाकलितः किलास्ते गच्छो बृहद्गच्छ इति प्रतीतः॥
- (६८) तत्र चित्रचरितः परितापं हर्तुं मेघ इव भव्यजनानाम् । शिष्यवृद्धिकरसंवरवानप्युक्ववलोऽजनि गुरुर्मुनिचन्द्रः ॥
- 5 (६९) दुःषमाजलधौ येन मग्ना सुविहितस्थितिः। हेलयेव समुद्धे धरित्रीवादिपोत्रिणा॥
 - तच्छिष्य:- (७०) पडिबोहिअमहिवलओं निन्नासिअक्रमतिमिरलरो । सचक्रपवोहकरो जयउ जए देवसूरिरवी ॥
 - (७१) तावचिअ गलगाजि कुणंति परवाइमत्तमायंगा । चरणचवेडचमकं न देइ जा देवसूरिहरी॥
- 10 १५३) तस्य चरितारम्भ:- *धन्याधारदेशे मङ्घाहडपुरे वीरणागश्रेष्ठी प्राग्वाटज्ञातीयो वसति । तित्रया जिन-देवी । साऽन्यदा स्वभे चन्द्रं मुखे विश्वन्तं ददर्श । अथ गुरूणां श्रीमिनचन्द्रस्रीणामुक्तम् । तैरुक्तम्-चन्द्रवत्सौम्यः सतो भावी । सा समये ग्रुभदिने सं० ११४३ वर्षे वैशाखग्रुद्धदशम्यां सुतमस्त । पूर्णचन्द्र इति नाम कृतम् । कदाचिन्मड्डाहडेऽशिवम्रुत्पन्नम् । लोको दिशोदिशं गतः । वीरणागोऽपि भृगुकच्छे गतः । पूर्णचन्द्रस्तु अष्टवा-पिंकः सन् शुष्कभक्षिकां विकीणाति । गुरवस्तत्रायाताः । स शुष्कभक्षिकां विकेतुं कस्यापि गृहे गतः । तद्गृहे-15 शोऽपि निधानद्रव्यमङ्गाररूपं त्यजन् पूर्णचन्द्रेणोक्तः-खर्णं किं त्यजिस ? । तेनोक्तम्-मम भाग्यादङ्गारा जाताः, त्वं स्वकरे कृत्वा ममार्पय। तेनार्पितम्। धनिकेन कनकं दृष्टम्। धनिकेन शुण्डो भृत्वा स्वर्णस्यार्पितः। तेन पितु-रिपतः । पित्रा गुरूणामुक्तम् । स्रिभिरुक्तम्-एप न सामान्यः, यद्यसाकं ददासि तदा प्रभावको भावी । पित्रो-क्तम्-अहं वृद्धः, तथा एकसुतो निर्द्रव्यः । पूज्यानां च वचोऽन्यथा कर्तुं न शक्यते । गुरुभिरुक्तम्-मम तपो-धनानां पश्चशत्यस्ति ते सर्वे तव सनवः । स द्यितां पृष्टा पुत्रं गुरूणां ददौ । सं० ११५२ वर्षे दीक्षा । प्राज्ञ-20 त्वात् समग्रशास्त्रपारङ्गतो जातः । रामचन्द्र इति नाम दत्तम् । स महावादी जातः । पूर्वं धवलकापुरे धन्धो नाम द्विजो जितः । काश्मीरदेशीयो द्विजः सत्यपुरे सागरो जितः । नागपुरे गुणचन्द्रो दिगम्बरो जितः । चित्रकूटे शिवभृतिर्भागवतो जितः । गोपगिरौ गंगाधरो द्विजः, धारायां धरणीश्वरः, पुष्करिण्यां पद्माकरः । इतो विमल-चन्द्र-हरिचन्द्र-पार्श्वचन्द्र-सोमचन्द्र-शान्तिकलश-अशोकचन्द्राद्याः सहायाः सङ्जाताः । गुरुभिः सं० ११६२ वर्षे पदे स्थापित:-देवसूरि इति नाम जज्ञे । तथा वीरणागश्रेष्टिना जिनदेवीसहितेन तथा सरस्वतीनाझ्या पुत्र्याऽ-25 न्वितेन व्रतमात्तम् । प्रत्याश्चन्दनबालानाम्ना गुरुभिर्महत्तरापदमदायि ।
 - §५४) अन्यदा धवलक्के विहारे गताः । तत्र ऊदाश्रेष्ठिना श्रीसीमन्धरप्रासादोऽकारि । तस्यायमभिप्रायः— यत् सीमन्धरो यं कथयति तेन प्रतिष्ठां कारयामि । उपवासत्रयं जातम् । सङ्घो मिलितः । शासनदेवी स्मृता । कार्ये निवेदिते, देव्या उक्तम्-श्रीसङ्घः कायोत्सर्गं करोतु । तस्य वलात् देवी तत्र गता । श्रीसीमन्धरं नत्वा

^{*} B सङ्ग्रहे एतच्चरितस्पारम्भः किञ्चिद्धिन्नपाठक्रमेणोपलभ्यते । यथा-महाहडम्मि नयरे निवसह सेही अ वीरणागु ति । सिरिपोरवाडवंसे जिणदेवी तस्स भजा य ॥

तयोस्तन्तः शुभस्त्रप्तस्त्वितो रामचन्द्र नामास्ति । अन्यदाऽवृष्टो सत्यां दुर्भिक्षवशात् भृगुपुरे सुभिक्षं श्रुत्वा श्रेष्टी तत्र गतः । राम-चन्द्रस्तु नोवित्तवाट्यां वाणिज्याय यदापे तद्ग्यादाय याति । एकदा श्रीमुनिचन्द्रसूर्यो विहारेणाजग्युः । वीरणागो वन्द्रनायायातः । इतो रामचन्द्रेण पोडशवर्षदेशीयेन पौपधागारमागत्योक्तम्–तात ! मया चणकान् दत्त्वा तावत्यो द्राक्षाः समानीताः । गुरुभिर्छक्षणान्यवलोक्य श्रेष्टी उक्तः-श्रेष्टिन् ! पुत्रो महाभाग्यवान् , त्वद् गृहे सन् तव कुलस्यैव द्योतको भावी; परं गृहीतदीक्षः सकलस्यापि जिनशासनस्य द्योतको भविता । ततः श्रेष्टिना श्रेष्टिन्या च क्षमाश्रमणं दत्तम् । भगवन् ! सपुत्रयोरप्यावयोर्दाक्षया प्रसादं कुरु ।... (इतोऽग्रे B सङ्ग्रहः लिडतः)

15

20

25

पप्रच्छ-भगवन् ! धवलकपुरे श्रेष्ठिना ऊदाकेन भवतां प्रासादः कारितः । तस्य प्रतिष्ठां कः करोतु ? । स्नामिना उक्तम्-श्रीदेवाचार्याः कुर्वन्तु । निवृत्य उक्तम् । कायोत्सर्गः पारितः श्रीसङ्घेन । प्रतिष्ठा जाता । ऊदावसहीति नाम जज्ञे ।-इत्याद्यनेकवर्णनानि, तथापि किश्चित् खण्डितसम्बन्धा लिख्यन्ते ।

§५५) अथ कर्णावतीसङ्घप्रार्थनया कर्णावतीं गताः । चतुर्मासकं स्थिताः । तत्र श्रीमदरिष्टनेमिनः प्रासादे व्याख्यानं भवति । इतः कर्णाटनृपगुरुश्चतुरशीतिवादान्−एवं देशे देशे जित्वा मालवमण्डलस्य मध्ये भूत्वा उग्र्जरत्रां प्रति चचाल । क्रमेण आसापह्यामाययौ । तस्य वादाः−

(७२) वंभ अह नव बुद्ध भगव अहारस जित्तय, सहव सोल दह भट्ट सत्त गंघव विजित्तय। जित्त दिगंवर सत्त च्यारि खत्तिय दुय जोहय, इकु घीवर इकु भिल्ल भूमिपाडिओं इकु भोईओं। ता कुमुदचंदि इय जित्त सवि अणिहल्लपुरि जओं आह्यओं। वडगच्छतिलह पहुदेवसारि कुमुदह मदु उत्तारियओं।

वासुपूज्यचैत्ये स्थितः । इतो धावँस्तत् श्राद्धोऽमन्दतरमायातः । क्रुमुदेनोक्तम्-किं चिरेण दृष्टः १ । तेनोक्तम्-श्वेताम्बरश्रीदेवाचार्यपौपधागारे समर्थनमजिन । तत्र वेला लग्ना । क्रुमुदेनोक्तम्-मिय आगते श्वेताम्बराणां समर्थनमेव युक्तं न त्वारम्भणम् । तेनोक्तम्-मैवं वद ।

(७३) आस्तां सुधा किमधुना मधुना विधेयं, दूरे सुधानिधिरलं नवगोस्तनीभिः। श्रीदेवसूरिसुगुरोर्थिद् सुक्तयस्ताः पाकोत्तराः श्रवणयोरतिथीभवन्ति॥

इति श्रुत्वा सकोपः सन् साहारणं नाम भट्टमाहूय प्राहिणोत् । स पौपधागारे क्रमुद्विरुदान्यवादीत्—सकल-चादिवेताल, वादितरुप्रवलकालानल, वादीन्द्रमानपर्वतदावानल, वादिगजघटापश्चानन, वादिसिंहशार्दूल, मुक्तिनि-तिम्बिनीकण्ठकन्दलालंकारहार, श्वेताम्बरदर्शनप्रहसनस्त्रथार, पट्दर्शनपाठी जयति वादीन्द्रश्रीक्रमुदचन्द्र ।

> (७४) हंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोऽस्ति सण्टङ्कितैः संसारावटकोटरेऽतिविकटे सुग्धो जनः पात्यते । तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकछेशस्तदा सत्यं कौसुदचन्द्रमङ्कियुगलं राज्ञिन्दिवा ध्यायत॥

ततः प्रभोः शिष्येण माणिक्येनोक्तम्-

(७५) कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसटाभारं स्पृश्चत्यंहिणा कः क्रन्तेन शितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्कृति। कः सन्नद्यति पन्नगेश्वरशिरोस्त्रावतंसिश्रये यः श्वेताम्बरदर्शनस्य कुरुते वन्यस्य निन्दामिमाम्॥

अन्यदा प्रभोर्भगिनी सरखती तनुगमनिकायां गता। क्रमुदः प्राह-केयं गंडिरिका श्वेताम्बरी १ क्रमुदेनोक्तम्-आर्ये ! नृत्यं कुरु । नम्राट ! त्वं मृदङ्गं वादय । ततः सा पौपधागारे गत्वा रोदितुं प्रवृत्ता । गुरुभिर्निमित्तं पृष्टा तयोक्तम्-

> (७६) हा कस्स पुरोहं पुक्तरेमि असकन्नया महं पहुणो । नियसासणनिकारे जोऽवयरइ वरं सुगओ ॥

दिगम्बरविडम्बना उक्ता । गुरुभिश्चिन्तितम्-

25

30.

- (७७) आः कण्ठशोषपरिपोषफलप्रमाणो व्याख्याश्रमो मयि वभूवं गुरोर्जनस्य । एवंविधान्यपि विडम्बनविड्वराणि यच्छासनस्य हहहा! मस्रणः स्रणोमि ॥ दुर्वादिचक्रगजसंयमनाङ्कशश्रीः श्वेताम्बराभ्युद्यमङ्गलवालदूर्वा । श्रीदेवसूरिसुगुरोर्भुकुटिर्ललाटपट्टे स्थितिं व्यतन्तुत प्रथमावतारम् ॥
- 5 तद्ञु नयसारभट्टमाहूय प्रेपितः। स दिगम्बराग्रे गत्वा जगौ-
 - (७८) दिगम्बरिशोमणे! गुणपराञ्ज्यो मास्म भूर्गुणग्रहफलं हि तत् वसति पङ्कजे यद्रसः। ततस्यज मदं क्रर प्रशमसंयतान् खान् गुणान्दमो हि मुनिभूषणं स च भवेत् मदो व्यव्यये॥
 - (७९) नास्माकं हृदि दर्पसर्पगरलोद्गाराः स्थितिं तन्वते न्यत्कारं च न शासनस्य कलयाऽप्यालोकितुं शिक्षिताः । तत्तूर्णं समुपेहि सिद्धन्यतेरग्रे हरिष्यामहे तीक्ष्णेर्युक्तिमहौषधव्यतिकरैस्त्वत्तुण्डकण्डुं वयम् ॥

यदि तव वादेच्छा तत् श्रीपत्तने वज । तत्रावयोर्वादः । इत एकदा माणिक्यं दृष्ट्वा दिगम्बर आह-

- (८०) श्वेताम्बराः कलितकम्बलयष्टयोऽमी गोपालतामविकलां सुनयो वहन्ति । उच्छुङ्खलं विचरतां सुवि निर्शुणत्वात् युष्मादशामनडुहां परिरक्षणाय ॥
- 15 (८१) तथा—नग्नैर्निरुद्धा तरुणीजनस्य यन्मुक्तिरत्नप्रकटं रहस्यम् । तर्हिक वृथा कर्कशातकेकेलौ तवाभिलाषोऽयमनर्थमूलः ॥

इतः स शकुनैर्वार्यमाणोऽपि श्रीपत्तनं प्रति चचाल । प्रवं सम्मुखा श्चित् जज्ञे, विडाली दृष्टा उत्तरिता च, कृष्ण-सर्पः सावडू जगाम । एवं शकुनैर्वार्यमाणोऽपि पत्तने गतः । नृपद्वारे प(ख)डपानीयं चिक्षेप । देव ! मया सह वादः कार्यताम् । अहं सिद्धचक्रवर्त्तीति विरुदं न सहे । विवेकच्रहस्पतिर्गूर्जरत्रोति च नरसमुद्रं पत्तनं च-एतानहं 20 न मन्ये । विद्वांस आह्योक्ताः । देव ! न स कोऽप्यिक्ति पुरे योऽनेन सह वादं कुरुते । तैस्सर्वेरप्युक्तम्-देव ! देवाचार्यान् विना कस्यापि शक्तिनीक्ति अम्रं जेतुम् । तदनु नृपेणाह्य श्रीसङ्घो भणितः-यत्तथा कुरुत यथा श्रीदेवाचार्याः कर्णावत्याः समायान्ति । श्रीसङ्घेन विज्ञितिका प्रहिता, आप्तपुरुपाश्चानेतुम् । तैः खरूपमर्पितम् ।

(८२) तत्र-गुणचन्द्रजयांजनतः प्रवादिनकाकुछे भवामभोधौ। त्वं वत्स कर्णधारो जिनशासनयानपात्रस्य॥

(८३) देवाचार्यवेलात् युक्तः शासनस्य किलाईताम् । प्रभावनासरोजाक्ष्याः पाणिग्रहमहोत्सवः॥

खरूपं विलोक्य शुभदिने शुभशकुनानुक्ल्यात्पत्तनोपरि चेलुः।

(८४) नयनविषयं यातश्चाषः श्चतं शिखिशन्दितं विषमहरिणश्चेणी हषात् प्रदक्षिणमागता । तुहिनकिरणक्षेत्रे भानुमहोद्यमाश्चितः प्रकृतिमदुलो वायुः पृष्टानुगश्च न्यजृम्भत ॥

क्रमेण पत्तने प्राप्ताः । नृपेण प्रवेशोत्सवः कारितः । कुग्रुद्जुन्द्रेणु लब्बां दत्त्वा वारही परावर्त्तिता । भाण्डा-गारिककपर्दिनं विना शल्यहस्तं वाहुकनामानं मन्त्रीश्चरं वाहुडदेवं च विना । तदा कुग्रुदचन्द्रेण नृपस्य मातुर्म-

¹ पक्षे वृहस्पतिवलात् (-टिप्पणी)।

	-अहं जयकेशिनरेश्वरस्य प्रियस्तव भ्रातुः । इतः करणे स्व-स्वमतख्यापनाय पत्रं लेख-	•
	मण्डितेन श्रीदेवस्रीनुद्दिश्य हासं कृतम्।	
(८५) वे	षः कोऽपि तुरुष्कसन्ततिभवः कक्षान्तरे लम्बित-	
	इछायामाश्रयते गताञ्जकपद्योर्जीणींर्णकापोद्दलः ।	
3	तन्धानामिव यष्टिका करतले मुण्डं समुह्यश्चितं	5
	युक्तं केवलमास्यमुद्गतमलं यद्वस्त्रखण्डावृतम् ॥	
(८६) ट	स्तानां म्लमण्डलीपरिचयस्थूलंभविष्णुस्ततिः	
•	कृत्वा भैक्षभुजिकियामविरतं शौचं किलाचाम्लतः।	
र्न	रिं साक्षि शरीरशुद्धिविषये येषामहो कौतुकं	
	तेऽपि श्वेतपटाः क्षितीश्वरपुरः काङ्क्षन्ति जल्पोत्सवम् ॥	10
वतः प्रभुराह-(८७) य	गदोऽङ्गद्योणितकपायितचीवराणां सन्मांसभक्षणविचक्षणदक्षिणानाम् ।	
	वेद्वन्निकायजननिन्दनकोविदानां पावित्र्यमुत्तममहो द्विजसत्तमानाम् ॥	
(22)	तस्याः कुक्षिकोणे विद्घति वसतिं कोटयः स्वर्गधान्ना-	
, ,	मेतल्लाङ्ग्ललग्राः सपदि तनुभृतो वैतरण्यास्तरन्ति ।	
ग्	।ामित्थं स्तौति विप्रः पदि पदि न वयं कारणं तन्न विद्यो	`15
	गृह्णानामात्मगेहात् तृणमपि निविडं ताडयन्त्युग्रदण्डैः ॥	
इत्युक्त्वा पौपधा(१)वृ	रुपेण गांगिलस्य देशपट्टो दत्तः । तदा कुमुद्चन्द्रः प्रतिज्ञामवादीत्—	
(८९) इह नृपति	सभायां वाहुरूद्वीकृतो मे वदतु वदतु वादी विद्यते यस्य शक्तिः।	
मेथे बदित	वितण्डावादविद्याधुरीणे जलधिवलयमध्ये नास्ति कश्चिद्विपश्चित्॥	
(९०) बृहस	पतिस्तिष्ठतु मन्दबुद्धिः पुरन्दरः किं कुरुते वराकः ।	20
मि	रे स्थिते वादिनि वादिसिंहे नैवाक्षरं वेत्ति महेश्वरोऽपि ॥	
श्रीदेवाचार्येः कुमुदं प्र	ाति─	
(९१) न ल	राभयामो ललनां न भोज्यं सुगन्धिसर्पिः ष्टुतसुष्णमद्यः ।	
	र्भ विवादेन सखे न तत्र खशासनोद्योतकृते च क्कर्मः ॥	
ख-खमतख्यापनाय प	पत्रकमलेखि । कुमुदेनोक्तम्-	25
(९२) के	वलिहुओ न भुंजइ चीवरसहियस्स नित्थ निद्याणं ।	
इत	थीहुआ न सिज्झइ मयमेयं कुमुदचन्दस्स ॥	
देवाचार्येणोक्तम्-		
(९३) वे	भवलिहुओ वि संजइ, चीवरसहियस्स अत्थि निवाणं ।	
ş	त्थीहुआ वि सिज्झइ मयमेयं देवसूरीणं॥	30
गूर्जरत्राया विवेकचृहा	स्पतित्वम् , नृपस्य सिद्धचक्रित्वम् , पत्तनस्य नरसम्रद्रत्वमसहन् विवदते । सं० ११८२	2
~ 2	The state of the s	

गूर्जरत्राया विवेकच्हरपितत्वम्, नृपस्य सिद्धचिकित्वम्, पत्तनस्य नरसमुद्रत्वमसहन् विवदते । सं० ११८२ वर्षे वैद्याखपूर्णिमादिने वादहेतोराह्तौ । दिगम्बरः पूर्वं गतः । श्रीदेवस्तरिः शुभशकुनैः प्रेर्यमाणः पश्चाद्भतः । क्रमेण सभायां गताः । कुमुदेनाशीर्वादो दत्तः, प्रभुभिश्च । तदनु गद्यपश्चशती उपन्यस्तते, तस्याः प्रत्युत्तरं पश्च-श्चत्या दीयते । पुनर्गद्यपश्चशती उपन्यस्तते । एवं तत्र पश्चविंशतिदिनानि विवादो जज्ञे । कुमुदो वारत्रयं निग्रह-

: 5

15

स्थानमायातः । ऋमेण सर्वेर्नृप-राज्ञीप्रमुखैर्मानितम्-क्रमुदचन्द्रो हारित-इति कृत्वा देशानिष्काशितः । क्रमुद-स्याशोकवनिकां गतस्य हृदयास्फोटो जातः । राज्ञा तत्सर्वस्वमादाय प्रभूणां प्राभृतीकृतम् ।

(९४) च्यारि जोड नीसाण हय हिंसइ पंच पंच्यासी, इग्यारह सई सुहड सीस सई दुन्नि च्छिआसी । बलदह सई चिआरि कम्मकर पंचछहुत्तर, अत्थ लक्ख पणवीस दम हुइ लक्ख बहुत्तर । ता चमर छत्त तुहर बिरुद सुखासण बाहण लियओं । बडगच्छतिलइ पहुदेवसूरि नग्गओं विल नग्गओं कियओं ॥

श्रीगुरुं प्रति नृपः प्राह-भगविन्दं भवद्भिरेवार्जितं तत् गृह्णीत । स्रिराह-

10 (९५) भुश्रीमहि वयं भैक्षं जीर्णवासो वसीमहि । दाघीमहि महीपीठे कुर्वीमहि धनेन किम् ॥ नृपेण महोत्सवपुरस्सरं पौपधागारे सूरयः प्रेपिताः ।

(९६) श्रीसिद्धपुरे रम्ये सिद्धन्तपो देवसूरिगुरुवचसा । तुर्यद्वारं चैत्यं कारितवान् तुर्यगत्यर्थम् ॥ [*श्रीवादिदेवद्वरिसदुपदेशवासितचेतसा सिद्धराजजयसिंहदेवेन सं० १८८३ वर्षे पत्तनमध्ये श्रीऋपमप्रासादः कारितः ८४ अङ्गलऋपभविम्बयुग् राजविहारनाम्ना ।]

॥ इति देवाचार्यप्रवन्धः ॥

१७. आरासणीयनेमिचैत्यप्रबन्धः (P.)

§५६) अथैकदा आरासणपुरात महं गोगासुतः पासिलो दौर्वल्यात् कूपिकामादाय पत्तनमाययौ । तत्र राय-विहारे देवं नत्वा विम्बमपने लग्नः । इतः ठक्करछाडापुत्र्या देवकुलमागतया दृष्टः पृष्टश्र-भ्रातरेवं विम्बप्रमाणं गृह्णासि, किं नृतनमेवंविधं करिष्यसि १। तेनोक्तम्-भगिनि! यदि कार्यते तदा प्रतिष्ठायामागन्तव्यम्। एवमस्तु। 20 स खपुरे गतः । विम्बरचनेऽन्यमुपायमलब्ध्वा, अम्बाबिदेवीप्रासादे गत्वा लङ्घितुमारेभे । दश्भिरुपवासैर्देवी प्रत्यक्षीभूयोवाच-वरं वृणु । तेनोक्तम्-देवि ! तथा कुरु यथाऽहं नृपविहारसमं प्रासादं कारयामि । देव्या स्थान-मुक्तम्-सानिर्दर्शिता । परं पोडशप्रहरेस्ते मनोरथः सेत्स्यन्ति, तदनु न । इतो लब्धवरः सङ्घेन सह व्रजन् बुद्ध्या चतुष्पथमध्ये उपविष्टः। इयन्ति दिनानि देवीनिमित्तम्, अतः परं सङ्घोपरि । कथम् १ । यदि सर्वः कोऽपि खतो जनेन खसमुदायेन पोडशप्रहरान् सानिध्यं करोति तदा भुझे नान्यथा । सङ्घेन मानितम् । पारणकादनु जनं [']25 सम्मील्य खनौ गतः । खननं प्रारव्धम्-प्रहरत्रयं जातं खनताम् । अतस्तस्य गुरवस्तनुगमनिकायां प्रस्थिताः । पासिलेन वन्दिताः। तैरुक्तम्-पूर्णा मनोरथाः?। तेनोक्तम्-देवगुरुप्रसादात् । देवी रुष्टा मम प्रसादो न किन्त्वे-तेपाम् । सत्वरं निःसरत । खानिः पतिता । दीनारसहस्र ४५ विमलो निर्गतः । इष्टिकामयः प्रासादः प्रारब्धः । विम्बं कारितम् । चन्द्रमा सहस्र २ अवशिष्यन्ते । चिन्तितं विम्वग्रुपवेशयामि । इति ध्यात्वा पत्तनं गतः ठक्कर-छाडावासे प्रतोल्यां स्थितः । प्रवेशमलभमानो महता स्वरेण पूत्करोति । ठक्करेण मध्ये मोचितः । नमस्कारे '30 कृते ठकुरेणोक्तः—कुतः समायातः ?। छाडापुत्री वाई हांसी तस्या मीलनाय।ठकुरेण पुत्री आहूता। वत्से ! तव आता। तेन नमस्कृत्योक्तम्-मां न वेत्सि ?, राजविहारे विम्बं मपन् दृष्टः सोऽहम्। मया विम्बं कारितम्, प्रतिष्ठायामागच्छत । ततः श्रीदेवस्रिः समं श्रेष्ठिपुत्री चलिता, पित्रा प्रेपिता । तत्र प्रतिष्ठा जाता ११९३ । तत्र तया दोपं सम्पूर्णं कृतम् । मण्डपस्तया भगिनीत्वेन कारितः । लक्ष ९ द्रव्यलागिः । स च मेघनादः ।

(९७) गोगाकस्य स्तेन मन्दिरमिदं श्रीनेमिनाथप्रभोन् स्तुङ्गं पासिलसञ्ज्ञकेन सुधिया श्रद्धावता मित्रिणा। शिष्यः श्रीमुनिचन्द्रसूरिसुगुरोर्निर्ग्रन्थचृडामणे-र्वादीन्द्रैः प्रभुदेवसूरिगुरुभिनेंमेः प्रतिष्ठा कृता॥ (९८) रामनन्दशशिमौलिवत्सरे माधवे च दशमीतिथौ सिते। वाक्पतेः सुदिवसे प्रतिष्ठितोऽरासणे पुरवरे शिवाङ्गभृः॥ ॥ इति आरासणसत्कनेमिचैत्यप्रवन्धः॥

१८. फलवर्ष्ट्रितीर्थप्रवन्धः (P. Br.)

§५७) अथैकदा श्रीदेवाचार्याः शाकंभरीं प्रति विज्ञहुः । अन्तराले मेडतकपुरपाट्यां फलवर्द्धिकाग्रामे मासकल्पं स्थिताः । तत्र पारसनामा श्राद्धस्तेन जालिवनमध्ये श्रीपार्श्वतीर्थं प्रादुःकृतम् । तेनैकदा वनं निरीक्ष्यमाणेन 10 जालिवनमध्ये लेष्टुराशिर्द्धः । अम्लानशितपत्रिकापुष्पेः पूजितः । लेष्ट्यो विरलीकृताः । मध्ये विम्वं दृष्टम् । तेन श्रीदेवस्रिमक्तेन गुरवो विज्ञापिताः । तैः स्रिभिर्धामदेव-सुमितिप्रभगणी वासान् दृक्ता प्रहितौ । धामदेव-गणिना वासक्षेपः कृतः । पश्चादेवगृहे निष्पन्ने श्रीजिनचन्द्रस्रयः स्वशिष्याः वासानपीयत्वा प्रहिताः । तैश्च ध्वजा-रोपः कृतः । पश्चात्तत्र प्रासादेऽजमेरीयश्रेष्टिवर्गाः नागपुरीयो जाम्बर्डवर्गः समायातः । ते गोष्टिका जाताः । संवत् ११९९ वर्षे माहसुदि १३ शुके कलशध्वजारोपः ॥ 15

।। इति फलवर्द्धिकातीर्थप्रवन्धः ॥

१९. मन्निसान्त्प्रवन्धः (B. Br.)

\$५८) श्रीपत्तने जयसिंघदेवस्य मत्री सान्त्नामा सर्वमुद्राधिकृतः श्रीदेवस्रिणां भक्तः। तेन घवलगृहानुकारी आवासः कारितः। गुरवोऽवलोकनायाकारिताः। मत्रिणा अग्रेसरेण भृत्वा दिश्तः। पृष्टम्-प्रभो! कीहगावासः १। इतः शिष्यमाणिक्येनोक्तम्—यदि पौपधशाला भवति तदा वर्ण्यते। मत्रिणा क्षमाश्रमणं दत्तम्। एपा 20 पौपधशालेव भवतु। तदनु सा मुख्यपौपधशाला जाता। तत्र पट्टशालायामुभयोः पार्श्वयोरादर्शाः पुरुपप्रमाणा आसन्। श्रावका धर्मध्यानादनु यथा वक्त्राण्यवलोकन्ते। तथा वांका-निहाणाभिधानयोग्रीमयोद्धीं प्रासादौ कारितौ। एकसारत्तपनं कृत्वा सुरङ्गया गव्यतिमितया द्वितीये गम्यते। एकदा मत्रिणो राज्ञा सहाऽप्रीतिर्जाता। मत्री स्त्रणके मालवदेशं प्रति सपरिच्छदोऽचालीत्। राज्ञा ज्ञातमेपो मध्यवेदी। सैन्यं सत्त्वरमानिवण्यति। छन्ना नरा राज्ञा तेन सह प्रेपिताः। तत्र गतोऽसौ किं कुरुते। मन्नी उज्जयिन्यां गतो नृपमन्दिरे, परं नृपस्य नमस्कारं न 25 करोति। पार्श्वस्थैरुक्तम्—मन्निन्! नमस्कारं [कथं] न कुरुपे १। देव ! देवं मत्वा श्रीतरागो नमस्कृतः, गुरुत् भणित्वा सुसाधवः, नृपस्तु जयसिंघदेवः। अन्यस्य कस्य श्रिरो न नाम्यते। राज्ञोक्तम्—मन्निन्! मुद्रां गृहाण। देवासाकं स्त्रामी केनापि कारणेन रुष्टोऽस्ति। कल्येऽप्यसानाकारियप्यति। तदनु राज्ञा गौरवेण स्थापितः। छन्नपुरुपैः पत्तने गत्वा नृपाय निवेदितम्। नृपेण सत्वरमाकारणं प्रहितम्। मन्नी नृपं मुत्कलाप्य चलितः। मालव-मेवाडसन्यौ आहड्यामे महं० सान्त्योग्यं पाश्रात्यप्रहरे मृत्युः। मन्निणा तदेव क्षामणाद्यं कृत्वा 30 पुत्रस्य शिक्षां दत्त्वाऽनशनं गृहीतम्। पुत्रीवयज्ञ तथा प्रदत्तम् । तातः! किमवशिष्यते १ पृष्टे, वत्से! तपोधना-दर्शानादन्यन्ति किमपि। तथा वण्ठत्तपोधनवेषं कारयित्वाऽग्रे नीतः। उक्तम्। तद्दिनान्मित्रणा हृष्टेन नमस्कृतः

¹ Br कारापितं। 2 Br विस्वमः। 3 Br लेपूनि विरलीकृतानि। 4 Br सेठिवर्गो। 5 Br जावड। * P ११८८।

तन्मुखान्नमस्कारं प्राप दिवं ययौ । स तथेव समुद्रो निवेक्य स्थितश्रलनवेलायामुक्तः-रे वेपं मुश्च, सकर्माणि कुरु । तेनोक्तम्-यत्प्रसादान्मन्त्री सान्तू चरणयोर्निपतितस्तं वेपं न मोक्ष्ये । क्रमेण पत्तने नीतो गुरूणां पार्श्वे दीक्षितः । नृपेण पुत्रस्य महं ॰ देवलस्य महन्मानोऽदायि ॥ इति मन्त्रीसान्त्रयनन्धः ॥

२०. मन्त्रिउदयनप्रबन्धः (P.)

६५९) श्रेष्ठीबोहित्थपुत्र अश्रेश्वरः । पुत्रयक्षना[ग]-पुत्रवीरदेव-पुत्रउदयनः । तत्पुत्रो मन्त्रिगुरुर्वाहडदेवः । श्रीकरणम् । लाटाह्वयदेशकरणमपि तस्य अर्पयति स नरेन्द्रो, येन वशेकरणपश्चकमनुष्यः (१) ॥

मरुखल्यां जावालिपुरसमीपे वाघरात्रामे श्रीमालज्ञातीय उदयनो वणिक् । भार्यो धवलक्क ठ० साम्बपुत्री सहादेवी । स क्रिपकां करोति । अन्यदा घृतक्रुपं मस्तके कृत्वा धनुरादाय मेघान्धकारयामिनीं विभातप्रायां मत्वा रामशेनोपरि चचाल । इत एकसिन् क्षेत्रे कलकलं श्रुत्वा, धनुरारोप्य, पृष्टवान्-के युयम् ? । अस क्षेत्रधनिकस्य 10 कमा । उदयनेनोक्तम्-असीव स्युः किं वा अन्यस्थापि १ । भवन्ति, परं स्थानान्तरिताः । मम क सन्ति । तैरु-क्तम्-आञ्चापह्यां कर्णदेवोऽपरः शालापतिस्तिहुणसीहः। स ततः श्रुत्वा पश्चाद् व्याष्ट्रस्य, महिलाम्रत्थाप्य, सुत-बाहुड-चाहुडान्वितः आशापल्लीं गूतः । तत्र चैत्ये सुंडु मुत्तवा देवं नन्तुं मध्ये गतः । तत्र तिहुणसिंहस्य पत्नी चेटीवृता देवं नन्तुमागता । अपूर्वान् दृष्टा वन्दनां चकार । पृष्टं कस्यातिथयः ? उदय०-आदौ देवो दृष्टः, पश्चा-त्त्वम् । ततः स्वसार्थे स नीतः । सा घरं (गृहं) मध्ये गता । द्वारपाल उदयनं न मुश्चति । प्रतोल्युपरिस्थेन शाला-15 पतिनोपरि आनायितः । उदयनेन नमस्कारे कृते, पृष्टम्-कृतः प्राघुणकाः ? । मरुखल्या भवन्तं ध्यात्वा वर्तना-यागताः । भव्यं जातम् । भोजनाय सक्कटुम्वो [उपवे]शितः । भोजनादनु पृष्टम्-मध्ये स्थास्यथ पृथग्वा १ । तेनो-क्तम्-पृथम् । स्तोकमपि स्थानमर्प्यताम् । तेन गृहद्वारेऽपवरको दर्शितः । तत्र भूमिशुद्धं कृत्वा यावद्वारं ददाति ताविन्धानं निर्गतम् । स विलसति । तन्नृपस्य सारा जाता । शालापतिराहृतः । याचितं तत् । देव ! मदीये [गृहे] मारुक एक आगतः । तस्य गृहे किश्चिन्निस्सृतम् । तदहं न वेबि । ततः स नरैर्धृत्वा नीयमानी निरी-20 धार्थं शून्यं हट्टं विवेश । तत्रापि निधानं दृष्टम् । राजकुले गतः । राज्ञा पृष्टम्-रे निधानं दर्शय । तेनोक्तम्-देव ! बुभुक्षितेन भक्षितम् । ततो गुप्तौ क्षेपितः । स यदा शरीरचिन्तायां याति तदा निधानमेव विलोकयति । अन्यदा नृपेणोक्तम्-रे अर्पयसि १ । तेनोक्तम्-कियन्ति दर्शयामि । राज्ञोक्तम्-एतत्किम् १ देव । यत्र यत्र यामि तत्र तत्र निधानानि । दर्शय । तेन ५-१० दर्शितानि । तं भाग्यवन्तं ज्ञात्वा खमुद्रा दत्ता भूपेन, राणिमा च ।

§ ६०) एकदा मित्रपत्नी विनष्टा । वाग्भटेनाचिन्ति-मम पिता दुःखितः । कापि कन्यां विलोकयामि । 25 वायडपुरे कोऽपि व्यवहारी तस्य सुता बृद्धाऽस्ति । सा वाग्भटेन ख्यं तत्र गत्वा याचिता । तेनोक्तम्-कस्यार्थे ? किं तेन ? ममैव देहि । तेन दत्ता । इतो वाग्भटदेवेन राणक उक्तः-तात ! वायडपुरे जीवितस्वामिनं श्रीम्रिनि-सुत्रतमपरं श्रीवीरं नन्तुं चलत । सङ्घं सम्मील्य ततो गतः । तत्र गत्वा, पूजां विधाय, भोजनवारा प्रारव्धा । इतो वाग्भटदेवसङ्केतात् कोऽपि स्थालं न मण्डयति । मित्रणोक्तम्-स्थालानि किं न मण्ड्यन्ते ? । यदि सङ्घवचः प्रमाणीक्तरुत तदा सर्वः कोऽपि सनिक्त । आदिशत । यत्परिणयनं मन्यध्वम् । मन्त्रिणोक्तम्-सप्तति वर्पाणि 30 जातानि । अतः कोऽवसरः १ अवसरं विना न शोभते । अतो वाग्भटेनोक्तम्-ज्ञातिर्वलीयसी । उदय०-कः कन्यां प्रयच्छति । सर्वं निष्पन्नम्, भवतां वाक्यमेव विलोक्यते । ततः परिणीतः । तस्याः सुतो रायविङ्वार आम्बडो जातः । उदयनेन खङ्गारो जितः । पथान्मेलगपुरे साङ्गणडोडीआकेन सह युद्धं जातम् । घाताः लग्नाः । तत्राभि-ग्रहद्वयम्-श्रृञ्जयोद्धारे द्विवेलं भोजनम्, श्रीम्रुनिसुत्रतप्रासादोद्धारे स्नानम् । अभिग्रहद्वैविध्यं सत्याप्य कालं कृत्वा सुगतौ प्राप्तः ॥ इति मन्त्रिउद्यनप्रवन्धः ॥

२१. अथ वसाह आभडप्रवन्धः (B. Br. P.)

§६१) श्रीअणिहिछपुरे नागराजंश्रेष्ठी कोटीध्यजः। तस्य प्रियां लीलादेवी। अन्यदा श्रेष्ठी आपन्नसत्त्वायां पत्यां विद्याचिकातो सृतः । तद्यु सृपपुरुषेपृहसारमपुत्र इति कृत्वा गृहीतम्। श्रेष्ठिनी धवलकके पितृगृहे गता। तत्र तस्या अमारिदोहदो जज्ञे । स पित्रा पूरितः। क्रमेण पुत्रो जातः। तस्याभयकुमार इति नाम दत्तम्। स क्रमेण पश्चवपीयो जातः। पठनाय क्षिप्तः। अध्ययनं करोति। अथैकदा वालकैर्निस्तात इति कथितः। स मातरं 5 पत्रच्छ-मातः! को मे तातः । तया खपिता दिशितः। तेनोक्तम्-एप ते, मम क १ तया स्वभावे उक्ते, तेनोक्तम्-पत्तने यास्यामि, अत्र न स्थास्यामि। इत्याग्रहमादाय स्थितः। मातामहेन सम्प्रेपितः। पत्तने गतः । तत्र स्थगृहे स्थितः। क्रमेण व्यवसायः प्रारव्धः। ठाछलदेवी मार्या परिणीता । किमापि निधानं पूर्वजसर्त्कां लेमे। व्यवसायात् पितृतुल्यो जातः श्रिया। सुतत्रयं जातम्। अथ कर्म्मदौर्वल्यात् श्रीर्गन्तुं लग्ना। मन्दं मन्दं निर्द्धनत्वमाययौ । पत्नी पुत्रानादाय पितृगृहं गता। आभडोऽप्येकाकी मणिकारहट्टे धुर्घरकान् धर्मति। यवानां माणकं 10 लभते। तेन द्वितः। । तं पीष्य स्वयं पक्तवाऽश्वाति। एवं दुरवस्थां गमयित। यतः-

(९९) वार्द्धिमाधवयोस्सौधे प्रीतिप्रेमाङ्कधारिणोः । या न स्थिता किमन्येषां स्थास्यति व्ययकारिणाम् ॥

एकदा कुलगुरूणां हेमाचार्याणां पौपधागारे गतः । जनान् परिग्रहप्रमाणं गृह्णतो वीक्ष्य सोऽपि ययाचे । गुरुमिर्द्रम्मान् पृष्टः । योग्यतां ज्ञात्वा टिप्पने द्रम्मलक्ष ९ कृताः । एवं श्रेपवस्त्नि । टिप्पनमिर्पतम् । तेनी-15 क्तम्—कस्यापि पुण्यवत इदम् । ममेवं योग्यता निह । गुरुमिरुक्तम्—भविष्यति । शेपं धम्में देयम् । ऋमेण द्रम्मपञ्चकं प्रन्थो कृतम् । एकदा चतुःपथान्तरे । एकामजां दीनार ५ जग्राह । गले आभरणं साथें क्रीतम् । तस्य पापाणस्य दलानि वैकटिकात् कारितानि । क्रमेण धनी जातः । । कुटुम्यं मिलितम् । तपोधनानां विहरणे पृत्त-घट १ दिनं प्रति । तथा सत्राकारस्त्ववारितः । नित्यं प्रासादेषु पूजा । सदैव साधिमकाणां वात्सत्यं सत्कारः । वर्षं प्रति सकलदर्शनसङ्घार्चा २ । तथा प्रस्तकान्यनेकशः लेखितानि । जीर्णोद्धाराश्च कारिताः । वहूनि विम्यानि 20 कारितानि । एवं सङ्गगुरूवतामासाद्य वर्ष ८४ प्रान्तेऽनशनमादातुकामः पुत्रपञ्चकं स्वजनानप्याहूय प्रोवाच—हे वत्साः । धर्मवहिकां वाचयत । वाचितायां 'मीमंप्रीद्राम ९८ लक्ष ।' इति अङ्कं श्वत्वा वसाहो विपण्णः । व्येष्ठस्रतेन आसपालेन व्याहतम्—यूयं तात ! मा विपीदत । यदसाभिः सकलोऽर्थो व्ययीकृतः । अद्याप्यादिश्यताम् । भव-रमसदिन सर्वमित्त । वसाहः प्राह—रे वत्साः ! जनके मिय गर्भस्थिते विपन्ने सर्वसं नृपेणात्तम् । पुनर्जतिन पुनर्जितं पुनर्गमितम् । महदुःस्वमनुभूतम् । पुनर्थे जातेऽहं कृपणो जातः । कोट्यपि न प्रिता । पुत्रैरुक्तम्—तातः । अष्टो पुनर्थर्माच्यये । एवं पुण्यानि कृत्वा सर्गभाग् जातः । । पुत्राणां मध्ये हो माहेश्वरिणो त्रयः श्रावकाः सञ्जाताः ।

।। इति आभडवसाहप्रवन्धः ॥

¹ B गूर्जरत्रामण्डले श्रीपत्तने श्रीमालज्ञातीयो नागराज । 2 B दिवं ययो । 3 B पंचवपंदेशीयः । 4 B अत्र मातुः शाले । 5 P नास्ति । 6 B पाणिग्रहणं क्रमेण जातं लाङ्कदेवी नाम कृतम् । 7 B प्रंजक्रमागतं च । 8 P नास्त्येतद्वाक्यम् । † एतदन्तर्गतः पाठः P नास्ति । ‡ एतदन्तर्गतपाठस्थाने B आद्शें एताहशः पाठः-'एका अजा विकेतुमायाता । तस्याः कण्ठे पापाणोऽस्ति । स इन्द्रनीलमयो वसाहेनोपळक्ष्य मूल्यं पृष्टम् । पंच दीनारा उक्ताः । तेनापिताः । कण्ठाभरणं गृह्ण्त् वारितः । स अजामादाय गृहे गतः । पापाणोऽपि वैकिटकाय दिश्वाः । अर्द्धमुक्त्वा विदारितः । लक्ष्यमूल्या मणयः कृताः । अर्द्धमर्दं कृत्वा गृहीताः । क्षमेण धनवांस्त्येव जहे ।' 9 B भीमपुरी । 10 B नृपेणेत्वरं गृहीतम् । 11 B ०कृत्वा ८४ वर्षसम्पूर्णेऽनदानं प्राप्यं शुभध्यानादिवे । स्वर्गमगात् ।

२२. मं० सज्जनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रबन्धः (P.)

६२) अथ सिद्धराजे राज्यं शासित श्रीमालज्ञातीयवान्धवाः ३—साजंण—आम्बा—धवैलाः । इतः श्रीजयसिंहेन सज्जनः सुराष्ट्रायां व्यापारे प्रहितः । श्रीरविते तीर्थं नन्तुं गतः । प्रासादो जाकुड्यमाल्येन शैलमयः प्रारच्धः ।
अमाल्यो मालवावासी दिवं गतः । १३५ वर्षाण्यन्तरे गतानि । ततः सज्जनेन कर्मस्थायः प्रारेभे । वर्षत्रयोइत्तितं द्रव्यलक्ष २ व्ययीकृत्य प्रासादः कारितः । कियन्ति वर्षाण्यन्तरे गतानि । तत्रत्यान् इभ्यानाकार्यः
प्रोक्तम्—मया प्रासादः कारितः । पुनर्नृपो द्रम्मान् यदि याचते तदा भवद्भिरङ्गीकार्यः । तैरमन्यत । इतश्र
सिद्धेशः सोमनाथयात्रायामागतः । सर्वे व्यापारिणो मिलनाय आगताः । सज्जनो नाययो । नृपेण तदनागमने
कारणं पृष्टम् । तैरुक्तम्—देव ! तेन द्रव्यं विनाशितमतः स कथमायाति । ततः सज्जनस्थाकारणं गतम् । स आयातः ।
नृपेणोक्तम्—रे द्रम्माः क १ देव ! सन्ति । कथं नानीताः । स्थामिन् ! रैवतकं दुर्गं मत्वा तत्र भाण्डागारे
10 स्थापिताः । नृपेणोक्तम्—तत्रागम्यते तदा दर्शयसि । देव ! दर्शयामि । नृपस्तु तत्र गतः । पृष्टः—कास्ते । उपर्यागच्छत । तथा कृतम् । प्रासादे नेमिं नत्वा बहिरायातः । पृष्टम्—केनात्र प्रासादः कारितः ? । सज्जनेनोक्तम्—
श्रीसिद्धेशेन । मम तु श्रुद्धि[रिप न] कथं जातः ? । देव ! इदसुद्वाहितम् । राज्ञोक्तं न मन्यते । ममादेशं
विना कथं कारितः । द्रम्मानानय । आनयामि । कथम् ? । देव ! अत्रत्येनेभ्यवर्गेणाङ्गीकृतमित्त ।द्रम्मान् देवो
गृह्वातु, पुण्यं वा । राज्ञा पुण्यमङ्गीकृतम्, परं मन्नाम्ना प्रासादोऽस्तु । देव ! त्वन्नाम्नैव, मम दासस्य किम् ।

15 नृपेण तुप्टेन पुनर्च्यापारो दत्तः । अवलोकनासिखरमारुख दिशावलोकनं कृतं सिद्धेशेन । चारणेनोक्तम्—

(१००) मइं नाईउं सिद्धेश तउं चडियओ उज्जिलसिहरि। जीता च्यारइ देस अलीउं जोअइ कर्ण्येउन्र॥

ततः उत्तरितः।

20

(१०१) जाकुड्यमात्य-सज्जनदण्डेशाचा व्ययीकरन् यत्र। नेमिभुवनोद्धृतिमसौ गिरनार्गिरीश्वरो जयति॥

(१०२) नाखानि खानितरतो घरितो न टङ्कैर्नास्त्रि सूत्रकलया प्रमितो न मानैः। नाचार्यमञ्जकलया कलितप्रतिष्ठो यः खेन विश्वकृपया प्रभुराविरासीत्॥

२३. महं आंबाकारितगिरिनारपाजप्रवन्धः (P.)

§६३) अत्र धवलेन प्रपा कारिता । महं आम्बाकस्य श्रीकुमारदेवेन सुराष्ट्राच्यापारो दत्तः । तेन व्रजता महं 25 वाहडदेवो विज्ञप्तः । तत्र गतोऽहं रैवते पद्यां कारयामि । मित्रिणोक्तम्-कार्या । पश्चात्तेन तत्र पद्या कारिता । च्यये भीमप्री[य]द्रम्मलक्ष ६३ । इतः कुमारेशो यात्रायामागतः । साङ्कलीआपद्यायां चिटतः । वलमानो वाहडदेवेन सुखासने समारोप्याध आनीतः । केनेयं पद्या कारिता १, पृष्टं देवेन । तेनावादि मया । कदा १ । ततः स्वरूपं प्रोक्तम् । तुष्टः [सन्] आम्बाकस्य च्यापारो दत्तः ॥ इति पाजप्रवन्धः ॥

(P.) सङ्गहे सोनलवाक्यानि ।

30 ६४) प(ख)ङ्गारे जीर्णदुर्गाधिपतौ उदयनेन हते तिस्रया सोनलदेवी जगाद-(१०३) षडहडीयां षंगार धणीविह्नणां धूलहर । गया करावणहार जाइसिइं.....॥ (१०४) पइं गरूआ गिरनार काहुडं मनि मत्सर धरिडं। मारितां षंगार एकू सिहर न ढालिडं॥

- (१०५) वीजलिआ वीजी वार सोरठ म आवे प्राहुणड । अम्मीणड भंडार लाई तई लूसी लीउ ॥ (१०६) मन तंबोल म मागि कंषि म ऊघाडई म्रहिहिं। देवलवाडइ सागि तवं षंगारिं सउं गयउं॥
 - (१०७) जेसल मोडि म वाह विल विल वरूए भाविअइ। नदी जिम नवा प्रवाह नवघणविणु आवहं नहीं॥
- (१०८) का हउं करिसि गमार अणहिलवाडइ रूअडई। सिहरतणां गिरनार सूर्ताहीं सालई हीअइ॥ 5
- (१०९) विल गरूआ गिरनार दीहू नीझरणे झरइ। वापुडली ग्जरात पाणीहइ पहुरउ पडइ॥
- (११०) राणा सबे वाणिया जेसल वडुड सेठि। काहउं वणिजडु मांडीउं अम्मीणा गढहेठि॥
- (१११) गया ति गंगह तीरि हंस जिसी वइसता । अड्डीणइ ढंढारि वगला वइसेवडं करई ॥
- (११२) अम्ह एतलइ संतोस जं पहुपाय पेलीआं। इक राणिम अन रोसु वेड पंगारिइं सडं गयां॥
- (११३) वढी तउं वढवाण वीसारतां न वीसरइं। सोनलकेरा प्राण भोगावहिसिउं भोगव्या ॥ 10
- (G.) सङ्ग्रहे सिद्धराजसम्बन्धिवृत्तम् ।
- §६५) श्रीजयसिंहदेवेऽष्टवार्षिके श्रीकर्णो दिवं गतः । अप्टवार्षिक एव स सांत्मित्रिणा गुणश्रेणि नीतः । कटकं कृत्वा धाराभङ्गप्रतिज्ञां चकार । मित्रणा तृतीये दिने प्रतिज्ञापूरणाय मितर्दत्ता । ततः कणिकधारायां भज्यमानायां परमारपंचराती मृता । तद्तु विग्रहायालिगेन सह मन्त्रे विधीयमाने चारणेनैकेनापाठि-
- (११४) एहे टीलालेहिं धार न लीजइं करण उत्र । जम जेहे प्रउंचेहिं जोइइ जेसलु आवतउ ॥ 15

इति श्रुत्वा वन्दीकृतस्य तस्य लेखः प्रहितः। तेनोक्तम्-पितुराज्ञया समेण्यामि । ततः पित्रा समागत्योक्तम्वत्स ! याहि । तदनु स्वयं नि विधाय गतः । सैन्ये राजा भेटितः। अत्रान्तरे जसपडहहस्ती
मत्तो जातः। राज्ञोक्तम्-जेसल ! धाराभङ्गं विधेहि । तेनोक्तम्-देव ! प्रसीद[सकल] विधाय गतः । स च
गजिशक्षावेदी यशःपटहं स्वीचकार । ततः सहस्राश्चतुश्चत्वारिशन्मिताः तुरङ्गमाः पृष्टे अप्रतो रम्याः। पत्तयश्चत्वारो लक्षा देहमोक्ष जिल्ला । प्रतोल्यां गतो हस्ती । प्रहारे दत्ते दन्तभङ्गः समजिन । ततो लक्ताप्रहारेणा- 20
गीला भगा । यदा जेसलेन लक्तया हत्वा त्याजितः । स तदा त्रिखंड [डो (१) वभूव] यशःपटहो जेसलश्च स्वयं
भुवौ जातौ । राजा च वन्दीकृतः। पत्तनप्रवेशे जयसिंहदेवेन राज्ञोक्तम्-निजमोक्षं विना सर्वं याचस्य । करस्थकुपाणस्य मम भवान् कवचहीन एव गजाधिरूदस्य प्रवेशं देहि । एवमुक्ते [काष्ट १] क्षुरिकां समर्प्य प्रवेशो विहितः।

' ६६) श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरदेवं नमस्कर्तं चचाल । मन्नी सांतूः श्रीपत्तने मुक्तः । पंचगव्यूतप्रयाणके कृते धरापतौ मयणछदेवी अग्रे खिता याति । अत्रान्तरे मालवेशयशोवर्मणा श्रीपत्तनं वेष्टितम् । तदिष श्रुत्वा 25 श्रीसिद्धराजश्रिलत एव, न विलतः । गाढं गढरोधं भिणत्वा मन्निणा दण्डो मानितः । यशोवर्मणा श्रीसिद्धराजयात्रा-पुण्यं याचितम् । ततक्तत्करे पुण्यं दत्तम् । गतो मालवेशः । ततो यात्रां कृत्वा समेतः सिद्धेशः । मन्नी भेटनाय गतः । राजा कृद्धः । मन्निणा मुद्राऽपिता । अपरो व्यापारी जातः । अखास्थ्यं चौरवाहुल्यम् । ततो लोके राज्ञोऽग्रे पूत्कृतम् । तदवगत्य राजा तत्रागत्य मानितो मन्नी । गृहाण मन्नित्वम् । ततो मन्निणोक्तम्-राजन् ! शृष्ण । केनापि तपिखना यथभ्रष्टः कलमो वर्द्धितः । स च महावस्थामुपेतो यावताश्रमोपद्रवं कर्त्तं लगः, तावता 30 तपस्ती नष्टः । तदा—

(११५) नीवारप्रसवाग्रमुष्टिकवलैयों वर्द्धितः शैशवे पीतं येन सरोजपत्रपुटके स्नानावशिष्टं पयः । तं दानासवमत्तपट्पदकुलव्यालीढगण्डस्थलं सानन्दं सभयं च पश्यति गजं दूरे स्थितस्तापसः॥

- ष्ठं जातम् । राज्ञोक्तम्-पुण्यं मम कथं दत्तम् १ । तेनोक्तम्-तवैकस्य पुण्यं दत्तम् । त्वं करं धारय यथा तेपां सर्वेपां पुण्यं तव ददामि । राज्ञोक्तम्-मूढ ! तव भणितेन कथं तेपां पुण्यं दत्तं याति । मत्रिणोक्तम्-आभीर ! यद्येवं वेत्सि तदा तव पुण्यं मम दत्तं तत्र कथं याति । स तु मया वचनेन छलितः । हपिंतेन राज्ञा मत्रित्वं पुनर्दत्तम् ॥
- §६७) तीर्थयात्रायां पंचगन्यूतमात्रेणैकप्रयाणेनाग्रभागस्थितया श्रीमयणछदेन्या श्रीजयसिंहदेनपार्श्वात् द्वासप्ततिलक्षप्रमाणो वाहुलोडकरो मोचितः । तदनु श्रीसोमेश्वरिलंगहेतोर्हेमकोटिपूजा विहिता । पूर्णमनोरथा 10 गर्वमावहन्ती । ततो देवेनेति कथितम्-यत्कस्याश्चित्कार्पिटिक्याः पिण्याकपुण्यं याचेः । सा तु नार्पयति पुण्यमिति गर्वपरिहारः ॥
- §६८) अथ मयणछदेन्या पापघटे दीयमाने कोऽपि न गृह्णाति । अत्रान्तरे विपण्णां तां कश्चिद्धिजन्मा जगा-देति—मातर्! यदि भवत्रयस्य पापघटान् ददासि तदा गृह्णामि । हिपंतया तया तसै भवत्रयपापघटो दत्तः । अन्ये सर्वेऽपि विस्सिताः पत्रच्छुः—त्वया किं कृतम् १; पापघटस्यैकस्य निर्वाहो नास्ति, त्वया कथं त्रयं गृहीतम् । 15 तेनोक्तम्—अस्या जन्मत्रयेऽपि पापमेव नास्ति, तत्कथं धनं न गृह्यते । सर्वेरिप मानितम् ॥
- §६९) अथ कर्णाटदेशे पुलकेशिराजा ग्रीष्मसमये राजपाटिकायां गतः। सच्छायफलितसहकारतरोरधो विश्रशाम । अत्रान्तरे वनविहरुत्थितः । तेन दह्यमानेन वृक्षेण सह राजापि स्वक्षात्रधम्मभ्रंशभीत्या ज्वलितवान् । तस्य सुतो जयकेशिनामा नृपोऽभृत् । तस्य महाविद्वान् क्रीडाशुकोऽस्ति । तं विना राजा न भुद्धे । अन्यदा राज्ञा भोजनावसरे पंजरात्समाकारितः शुकः । तेन मार्जारभयाद्विभेमीत्युक्तम् । राज्ञा सर्वत्र मार्जारो गवेपितः । न 20 दृश्यते । पुनरुक्तम्—समेहीति । तेनोचे—विभेमीति । राज्ञोक्तम्—समेहि यदि त्वां भक्षयति मार्जारः, तदा भवता सह काष्टभक्षणं करोमि । एवमुक्ते समागतः । स्थालाधःस्थितेन मार्जारेण भक्षितः । राज्ञापि स्वप्रतिज्ञा-भङ्गभयात् सह काष्ट्रभक्षणं कृतम् ॥
- § 90) गयणा-मयणाभ्यामिन्द्रजालिवद्या साधिता । ततः पत्तने नृतने सहस्रलिङ्गसरिस गयणो निजिवद्यां प्रकाशियतुं मकररूपेण प्रविश्योपद्रवति । वहुभिरुपायैरलब्धे तत्र राज्ञा पटहो वादितः । लघुश्रात्रा मयणेन 25 धीरां याचिरता निष्कासितः । प्रसादितौ तौ राज्ञा ॥
 - § ७१) श्रीसिद्धि-बुद्धियोगिनीभ्यां कदलीपत्रासनोपिवष्टाभ्यां श्रीसिद्धराजो जयसिंहः सिद्धराजत्वं पृष्टः । एवं विपि(प)ण्णेन राज्ञा रात्रौ वीरचर्यायां सज्जनसाकरीयाकः पुत्रेण समं योगिनीप्रतिमल्लत्वं वदन् श्रुतः । प्रातराकार्य सन्मानितः । तेन सप्तदिनान्ते सितां कावलयित्वा(१) क्षुरिकाद्वयं विधाय परमंडलभेटामिपेण राज्ञेऽपितम् । राज्ञा फलद्वयं भक्षयित्वा लोहमुष्टिद्वयं योगिनीद्वय[ाय भक्षण]हेतोर्रितम् । ताभ्यां न भक्षितम् ॥
- 30 §७२) श्रीजयासिंहदेवस्थान्यदा महं गांगाकेन आम्राणि प्रहितानि कस्यापि विष्रस्य शये । ततः स श्रीजय-सिंहदेवसदो दृष्ट्वा क्षुभितः । तत आह–राजन् । महं आंविल गांगे मोकल्यां छदं । सता उपरी पसावउ । ततो हसितस्सः ॥
 - § ७३) एकदा श्रीसिद्धराजे दिग्विजयं द्वादशवार्षिकं विधाय समागते प्रजा मिलनाय गता । राज्ञा कुग्रलं पृष्टम् । ताभिरूचे-राजन् ! कुग्रलमित । परं चेतिस न निर्द्यतिः । राज्ञोक्तम्-कथम् १ । तैरुक्तम्-राजन् ! असाकं

रक्षको भवदीयसुतो विलोक्यते। राज्ञा तद्र्थं शाकुनिकः पृष्टः। तेन कुमारपालस्य राज्यं कथितम्। राज्ञा चितितम्-मम राज्यं अकुलीनस्य भविता। तदेनं मारियण्यामि। इति विचिन्त्य घातकान् सम्प्रेष्य त्रिस्रवनपालो मारितः॥ (G.) सङ्कहे हेमचन्द्रसूरिसम्बन्धिवृत्तम्।

§ ७४) श्रीहेमसूर्योऽप्टम्यां चतुर्द्श्यां श्रीजयसिंहदेवभवनं प्रयाति । पौपधशालायां सदिस स्थूलभद्रचरित्रं नित्यं वाचयन्ति । एकवेलमालिगपुरोहितेन राज्ञोऽग्रे कथितम् –यन् महाराज । कोऽयमसत्प्रलापः, सर्वरसभोजने पूर्वपरिचितवेश्याभवने च कामनिग्रहः । परं किं कियते भवद्रल्लभाः । राज्ञोक्तम् –आचार्या इह समेप्यन्ति तदा वक्तव्यम् । परोक्षे नोच्यते । स्रिभिरागतम् । राज्ञोक्तम् –यूयं किं किं वाचयन्तः स्थ । ततः स्रिभिः संक्षेपतः साद्यन्तमपि श्रीस्थूलभद्रचरितं कथितम् । आलिगेनोक्तम् –महाराज । "विश्वामित्रपराश्चारः ॥" गुरुभिरुक्तम् –शृणु "सिंहो वलीः ।" ततः आलिगेनोक्तम् –किं कियते असाकीनान्येव शास्त्राणि पठित्वा असाकमेव सम्भुलाः संजाताः । गुरुभिरुक्तम् –ऐन्द्रं व्याकरणं किं भवदीयम् श्रिथाद्यापि श्रीमातृकावर्जं सर्वं नवं करोमि । 10 ततः श्रीजयसिंहदेवाभ्यर्थनया व्याकरणं कृतम् ॥

§७५) श्रीहेमस्रिपार्श्वे कोऽपि वादी कपटेन पृच्छनाय समागतः । पृष्टम्—उर्वशीयकारः कीद्दशो भवति । स्रीणां मनः सन्देहदोलारुढं सम्पन्नम् । परं सचिन्ता अपि पुस्तकविलोकनं कुर्वतः [आयातः कार्पटिकः ।] तत उपि भूमिस्थेन लेखकं संपाठयता भाण्डागारिकेन कपिद्नाम्ना दृष्टाः । तेनेति लिखित्वा पित्रका तथा मुक्ता यथा पृच्छको न पश्यति । तद्यथा—उरू शेते उर्वशी । तद्विलोक्येवं स्थिता गुरवः । पुनस्तेन पृष्टम् । गुरुभिः 15 कथितम् । किं पृच्छन्नसि १ । तेनोक्तम्—उर्वशीशकारः । गुरुभिरुक्तम्—तालच्यः । तेनोक्तमहं वादी परं कपटेन नागतोऽभृत् । नमो विधाय गतः । गुरुभिरुक्तम्—भांडागारिकेन रम्या चाडा विहितास्ति ।।

\$ 9६) केनापि मिथ्यादृष्टिना व्याख्यानानन्तरं श्रीस्रयः पृष्टाः । यूयं सर्वानपि रसान् वेत्थ । परं मम सन्देहोऽस्ति । विष्ठारसः कीद्यः स्यात् । गुरुभिरुक्तम् सत्यं पृष्टम् । परं वयं सर्वानपि रसान् बूमहे । परं रसवेदकाः पृथगेव हि । वयमेतद्रसाभिप्रायं कथयिष्यामः । परमनाखादितत्वात् भवान्न मानयिष्यति । अतो 20 भवान् पूर्वमाखाद्यत्—इति वचनेन पराजितः ॥

. § 99) श्रीहेमसूरिमाता पाहिणिनाम्नी अनशने स्वीकृते भूमौ मुक्ता । श्रीसंघेन कोटित्रयधर्म्मञ्ययो दत्तः । ततो ज्ययो (हर्षो) न भवति । केवलं रोदिति । रोदनकारणे पृष्टे मात्रोक्तम्—मम सदशा घनतरा अपि विपद्यन्ते । नामाऽपि कोऽपि न वेत्ति । परं मम कोटित्रयं धर्माञ्यये जातं । तदयं मम सुतश्रीहेमसूरिः प्रमाणम् । परं
यस्य मम लगति स किमपि न वक्ति । इत्युक्ते श्रीगुरुभिर्लक्षत्रयीशास्त्रपुण्यञ्ययो दत्तः । ततो निर्वाणमजनि । 25
ततस्त्रपुरुपद्वारि द्विजैर्विमानोपद्रयो विहितः । ततो रुपितैर्गुरुभिरुक्तम्—"आपणपइं प्रभु धाइयइ०॥"
इति विचिन्त्य श्रीक्वमारपुरो विच्छाया गताः ॥

\$७८) एकदा हेमाचार्याः छत्रशिलायां निविष्टास्तेजो दद्दशुः । विलोकयतां समीपे समागतं तत् । मध्यगतपुरुपभेटः । कृष्णचित्रकार्पणं लोभवृद्धिहेतुरिति निस्पृहैर्निपिदः ॥

२४. कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः (P.)

(११६) आचार्या वहवोऽपि सन्ति भुवने भिक्षोपभोगक्षमा निस्यं पामरदृष्टिताडनविधावत्युग्रजाग्रत्कराः। चौलुक्यक्षितिपालभालदृषदा स्तुस्यः स एकः पुन-र्निस्योत्तेजितपादपङ्कजनसः श्रीहेमचन्द्रो गुरुः॥ 30

§७९) तिहुअणपालपुत्रः कुमारपालः । तस्य द्वे भिगन्यौ-एका प्रेमलदेवी सपादलक्षाधिपतिना आनाकेन नृपेण परिणीताः द्वितीया नामलदेवी राज्ञो महासाधनिकेन प्रतापमछेन परिणीता ।

§८०) अथान्यदा सिद्धेशो निरपत्यश्चिन्तयति-

- (११७) निर्नामताम्बुधौ मज्जत्राज्यभूवलयोद्धृतौ । पुत्राः क्रीडावराहन्तः सम्पद्यन्ते महात्मनाम् ॥
- (११८) घटिकाऽप्येकया घट्या कुम्भीपयसि मज्जित । गोत्रं पुनरपुत्रस्य क्षणान्निर्नामताम्भसि ॥

इति विचिन्त्य देवपत्तने श्रीसोमेश्वरयात्रायै चचाल । परं विहङ्गिकां स्कन्धे निधाय तत्र गत्वा सोमेश्वर आराधितः । स प्रत्यक्षीभूय आह-कष्टं कथं कृतं यत्स्कन्धे विहक्षिकां विधायेहागतः ? । तेनोक्तम्-सुतं देहि । 10 किं तेन ? । राज्यार्थम् । राज्यधरस्ते कुमारपालो भविष्यति-इत्युक्तं सोमेश्वरेण । नृपो निवृत्यायातस्त्वेवमचिन्त-यत-चेदमुं मारयामि तदा सोमेश्वरः पुत्रं यच्छति । अतस्तं मारयितुमारेभे । सोऽपि विंशतिवर्षदेशीयः पुरा-च्छनो निःससार । सप्तवारं अमन् केदारयात्रामकरोत् । अन्तरान्तरा प्रच्छन्नमभ्येति तपस्वी सन् । राज्ञा मार्थ-माणी नष्टः। सज्जनकुलालेन कोष्टीमध्ये क्षेपितः। तस्य चित्रक्टं दत्तम्। पुनरप्येकदा अनादिराउलमठे प्रविष्टः। कदाचिद्धेमस्रिगुरुपौपधागारे प्रविष्टः । तत्र तैरुक्तम्-संवत् ११९९ मागसिरवदि ४ रवौ तव राज्यम् । परं 15 तब प्रत्यासन्नं कप्टम् । तदा पौपधागारे आगम्यम् । इतश्चानादिराउलतपखिसप्तशत्या सार्द्धं जेमनाय गतो नृपवे-इमिन । राज्ञा तपिखनां पार्थे खङ्गधराः [स्थापिताः] सन्ति । यस्य तपिस्वनः पादौ प्रक्षालयन् विम्रच्य उपिर यामि स मारणीयः । तथा कृते तेपां जनानां तद्भाग्यवशाद्धिस्पृतम् । भोजनावसरे एकं हस्तमुदरे न्यस्थापरं मुखे वान्तिमिपेण नष्टः। श्रीहेमस् ० पौपधागारे गतः। दिन ३ उपवरके तालकं दत्त्वा स्थापितः। ततो भाण्डा-गारिककपर्दिनो दत्तः । तेन खगृहे छत्रं स्थापयित्वा पत्रचोलकमध्ये क्षित्वा २० योजनप्रान्ते मोचितः । कान्त्यां 20 गतः । तत्र सरिस तस्करस्य शिरः केनापि निःकृत्य क्षिप्तम् । तदनु तत्प्रातः प्रातरिदं त्रूते-एकेन बुडित । नृपे-णामात्याः पृष्टास्तैः पण्डिताः । तैर्मास एको याचितः । मुख्यपण्डितः खगृहसूत्रं कृत्वा निर्ययौ । अटवीं अमन् एकसिन् दृक्षकोटरे रात्रौ स्थितः । तत्र भूताः सन्ति । लघुभिरुक्तम्-तातासाकं क्षुधा । तातेनोक्तम्-दिनत्रयान-न्तरं यास्यामि । कथम् १ । प्रत्यासन्नपुरे नृषेण पण्डिताः शिरसो वाक्यं पृष्टाः । ते न जानन्ति । नरेन्द्रस्तान् सक्कदु-म्वान् व्यापादियव्यति । तैः पृष्टम्-तात ! किं कारणम् ? । निर्वन्धे कृते उक्तम्-लोभेन बुडित । तत्पिण्डितेन 25 श्रुतम् । गृहमायातः । मासप्रान्ते नृपेणाहृतः । तेन सरस्तीरे गत्वा उक्तम्-यदि लोभेन बुडित तदा पुनर्न वाच्यम् । शिरस्तथैव स्थितम् । नृषेण प्रासादः कारितः । अतो मध्ये शिरः पूज्यते । ततः कुण्डगेश्वरप्रासादे श्रीसिद्धसेनिलिखितां गाथां ददर्श-॥ "पुण्णे वाससहस्से०।" एवं तस्य देशान्तरे ३० वर्षाणि जातानि। कदाचिदुज्जियन्यां चर्मकारहट्टे सिद्धेशो विनष्टः श्रुतः । ततः कृष्णमुखो जातः । तेनोक्तम्-िकं कृष्णास्या यूयम् १ भवतो नृपः किं सगीनः ?। उत्तरः कृतः-नृपमृतौ को न दूयते । ततः पत्तनमागतः । तत्र भगिनीपतिः प्रता-30 पमछः । तेन जागरणिरेका गृहमानीता । तया पणवन्धः कृतः । अन्याः सर्वाः पितृगृहे प्रेपय । तेन तथा-कृते, क्रमरस्य खसा नामलदेवी पितृगृहमदृष्ट्वा समयज्ञा तस्याश्वरणयोः पपात । तयोक्तम्-किमिदम् ?। देवि ! त्वं [म]म पितृगृहम्, तव दासीसमा स्थास्थामि । तथा कथितम्-स्थीयताम् । इतः क्रमरिको भगिनीं एत्य प्राह-अहं क्षुधा मिये, मम दशां पश्य । खस्रा उक्तम्-मम भ्राता भवान् । तया वेश्योक्ता-मम भ्रातुर्दालिमुप्टेरादेशो दीयताम्। तथाकृते स पाणउठे (१) नित्यं दालिमुप्टिं गृह्णाति। इतो नृपे मृते यो यो राज्ये स्थाप्यते स स अधानैरपाकियते । एवं सिद्धेशस्य पादुके राज्यं कारयतः । एकदा प्रतापमल्लो रात्रौ वैकालिकं कर्त्तुग्रुपविष्टः । सा वेश्या परिवेपयति । नामलदेवी दीपकरा पराखी (१) वर्तते । तां दृष्टा प्रतापमछ उवाच-रे ! तव आता का-प्यस्ति । तया वेश्या दृष्टा । उक्तम्-पाणउठे प्रतिदिनं दालिमुप्टिं गृह्णाति । तत्र पृष्टस्तैरुक्तम्-यद्द्य नायातः । तेन गवेपयितुं नराः प्रहिताः । ते प्रपादि शोधयितुं नराः प्रवृत्ताः । इतः प्रपायां कुमरिको वोसरिकद्विजेन वार्त्ताः कुर्वन् श्रुतः-रे वोसरिक! अद्य द्युताक्षिप्तेन दालिरापि नानीता। ततोऽसिन् सम्मुखे हट्टे गत्वा दीपच्छायायां करं 5 प्रक्षिप्य चणकमुप्टिं समानय । तेनोक्तम्-प्रथिलोऽसि । तव प्रातः पितृराज्यं भविष्यति, मम त्वारक्षकैर्वाहुव्छि-द्यते । इति श्रुत्वा नृपपुरुपैरभाणि सन्कः १। कुमरिकेनोक्तम्-को विलोक्यते १। कुमरिकः । केन हेतुना १। प्रता-पमछ आकारयति, चलत । इतो वोसरिकेन ज्ञातम्-एप मारणाय नीयते । स जीवग्राहं गतः । कुमारोऽपि खसु-पतिं भणित्वा नमश्रकार । तेनोक्तम्-यदि राज्यं दिश्च तदा मे किम् १ । यद्भणिस तत् । तिई यावजीवं साध-नम् । वर्षं प्रति लक्षत्रयं द्रम्माणाम् । प्रातर्नृपकुले आगम्यम् । क्षुधार्त्तः । बोसरिं प्रपायां न पञ्यति । 10 अचिन्ति-राज्यं सन्देहे, बोसरिरपि गतः । इतः प्रातर्दन्तधावनं कृत्वा नगरान्तः प्रविशति । तावत्खङ्गकरवैज्ञा-निकं दुद्र । तेन खड़ी दुत्ती वन्दितः । चिन्तितं मम कार्यं जातमेव । शकुनं भन्यम् । तेन किमपि न याचि-तम् । अग्रे मीचिकेनोपानहौ दत्ते । दोसिकेन बस्नाणि । मालाकारेण पुष्पाणि । ताम्वृलिकेन पत्राणि । ततो राजकुले गतः। प्रतापमछ्लेन प्रधाना उक्ताः-कुमारः किं न स्थाप्यते १, सोऽपि धनिकोऽस्ति । तैरुक्तम्-स्थापयत। असिवलेन तदा राज्यं जातम् । सं० ११९९ । ततोऽप्यनेकानि कष्टानि अनुभूतानि । एवं कद[र्थ]नेन वर्षत्रयं 15 गतम् । पश्चाद्राज्यं सले जातम् ॥ ॥ इति कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः ॥

२५. राणक अंवडप्रवन्धः (P.)

\$८१) अन्यदा कुङ्कणे जालपतनं श्रुत्वा महिरावणाधिपति मिल्लिकार्जुनं प्रति द्तं प्राहिणीत्—तथा विधेयं यथा जालं न पतित तव देशे । तेन च वलमानं विज्ञापितम्—यदावयोरेप पणः। कुङ्कणाधिपो गूर्ज्रेशस्य विगि(१)कायां पत्राणि पूर्यति, तत्करोमि अन्यदिधंकं न जाने । अत्र जना मत्स्यमांसरताः प्रायश्चान्नदौरथ्यात् । श्रीकुमार-20 पालेन कथापितम्—यदनं तथा प्रेपिय्ये यथा पत्त(१)नार्थो भवति । तेनोक्तम्—सर्वथा नैतत् । इतः श्रीकुमारपालः कुद्धः सन् प्राह—राजा (ज्ये) कोऽपि वीटकं मिल्लिकार्जुनोपि ग्रहीप्यति । इतः श्रीवाहडदेवश्चात्रा अम्यदेन वीटकं गृहीतम् । प्रौढकटकेन चिल्लिम् । तेन मार्गे घाटी रुद्धा । तत्र कटकं हतप्रहतं जातम् । अम्यदे निष्टृत्तः । कुष्ण-शृह्वारः कृष्णाश्चः कृष्णगुप्तोदरः पत्तनवाद्धे स्थितः । नृपं नन्तुं न याति । नृपेणोपिरिस्थितेन गुप्तोदरं दृष्टं पृष्टं च—रे किमेतत् १ । तैर्निवेदितम्—सामिन् ! अम्यदोत्तारकोऽसौ । इतः सूर्यास्तेऽम्यदो द्वारिकया प्रवित्रय नृपं २५ पाश्चात्येन [न]त्वा पृष्टो स्थितः । अग्रे एहीति नृपोक्ते, देव ! मया स्यसामिनः कालिमानीता । अतो रात्रो समेतः । यद्युक्वलो भवामि, तदा दिने समेप्यामि । इतो नृपो वीटकमादाय उक्तवान्—पृक्षीत । कोऽपि न गृह्णाति तदा भट्टेनोक्तम्—यदा रासभः प्रचण्डस्तदा तुरगेन समं कथम्रपुप्मीयेत । तथा वणिक् नृपप्रसादेऽपि क्षत्रि-यपौरुपान्वितः स्थात् । इत्युक्तेऽम्यदेनागत्य वीटकं गृहीतम् । सभ्येरुक्तम्—अग्रेऽपि कटकं हतप्रहतं कृतम् । शेप-मिप तथा करिप्यति । ततोऽम्यदो समीपमेत्य अश्ववारपञ्चति याचितवान् । स तां गृहीत्वोपिर पथेन हेरकं ३० कृत्वा मिल्लिकार्जुनं वेडायां स्थितमश्चान् वाहयन्तं प्राह—भो ! शक्तं कुरु । अम्यदक्तमङ्गाङ्गेन युष्वा शिरः पात-यत् । इतथारणेनोक्तम्—

(११९) अंव[ड] हुंतु वाणीउ महिकार्जुन हूंत राउ । पाडी माथउं वाढीउं उअडिहिं देविणु पाउ ॥

शिरिक्छत्वा वाहीआलीिकसोरसप्तशती, शेपतुरगाश्वभाण्डागारम्, कोष्ठागारम्, सेङ्यकं दन्तिनम्, नव धडी हिरण्यस, चतुरसं कलशम्, मूटक ९ मौक्तिकानाम्, माणिकउ पछेडउ, शृङ्गारकोडि साडी, सहस्रकिरणता-डङ्क २, पापक्षयो हारः, संयोगसिद्धिः शिप्रा-एवंविधं सर्वमादाय अम्बडः पत्तन् गतः। नृपः सम्मुखमाययौ। मिछिकार्जुनिशिरसा नृपपादावपूजयत् । नृपस्तुष्टः, अम्बडस्य लाडदेशमुद्रां ददौ । हस्ती दत्तः, कलशस्य(अ) 5 मिल्लिकार्जुनजयस्रचकः । खगुप्तोदरादयः । इतो हिस्तिनमादायाम्बडः खगृहं गतः । वाग्भटदेवो नमस्कृतः । वत्स ! देवं नमस्कुरु । तथा कृते सति पुनरप्युक्तं वाहडदेवेन मित्रणा-इयन्ति दिनानि राजपुत्रस्त्वमभूः । अधुना व्यापारी जातः। अतः श्रीहेमसूरीन् कुलगुरून्नमस्कुरु। पौपधागारे गतः। तैस्तु धर्मलाभो न दत्तः। आशीर्वादो-Sस्तु । गृहे गत्वा प्रोक्तम्-अहं पौपधागारे गतः । तत्र गुरूणां धर्म्मलाभस्यापि सन्देहः । मित्रणा वाग्भटदेवेन गुरव उक्ताः-यद्भवद्भिर्धर्मलाभो न दत्तः । गुरुभिरुक्तम्-यदि असाभिर्नोक्तिस्तर्हि किं भृगुकच्छेन गतः । प्रासादं 10 कथं श्रीमुनिसुत्रतस्वामिन उद्धरिष्यति । अनेकानन्यायान् करिष्यति । मन्त्रिणा वाग्भटदेवेनाम्बडस्याग्रे उक्तम् । तेनोक्तम्-मम गुरव उद्धृतेः । प्रासादे हृष्टाः । द्विवेलग्रुव्धृते भोक्ष्ये, परं भूर्जं (१) विना युष्माभिः किमपि न वर्क्त-व्यम् । ततश्रिल्वा भृगुपुरे गतः । प्रवेशे जाते मश्चमुपविष्टः । इतो देवीपूजिका योगिनीभिरन्विता समेत्यानभ्यु-त्थिता समीपे समीपे समेत्य विवेश । अम्बडेन कूर्पराहता मश्रकाद्धहिः पपात । मृता । कर्म्मस्थायः प्रारव्धः । वर्षेण सम्पूर्णः। शिलाकोटिघटितः प्रासादो जातः, राणकोदयनस्य मनोरथश्च। अम्बडेन श्रीपत्तने एका विज्ञप्तिः 15 श्रीकुमारपालदेवस्य १, एका गुरूणां २, एका वाग्भटदेवस्य, ३ एका श्रीसङ्घसः एवं ४ प्रहिताः । वाग्भटेन श्रीगुरूणां पुरो विज्ञप्तिर्धक्ता। इदं किम् १। एपा अम्बडस्य विज्ञप्तिः। वर्षमेकं गतस्यासीत्। अद्य का विज्ञप्तिः १ । विलोकयत । प्रतिष्ठोपर्याकारणमागतम् । मन्त्रिन् ! एतत् सत्यम् १। अहं किं जाने, विज्ञप्तिः कथयति । तर्हि चल्यताम् । नृपो गुरुभिः सह प्राचालीत् । इतोऽर्द्धमार्गे जनः सम्मुखमाययौ । यदम्बडो न शक्नोति । गुरवः सङ्घं विग्रुच्य भृगुपुरे गताः । इतः प्रक्षीणधातुरम्बडो दृष्टः । देवीप्रासादं गत्वा ध्यानेन निविष्टाः । 20इतो मुख्यपूजिकोदरे उदरवाढिर्जाता । सा कोक्यते । परिचारिका एत्य प्रभुमुचुः । असाकं खामिनी मुच्यताम्। तर्हि अम्बडोऽपि मुच्यताम् । स सकलो जग्धः पीतश्च । तर्हीपाऽपि म्रियताम् । जीवन्ती किं करोति । एक एव सार्थोऽस्तु । सा अत्यर्थं पीडिता प्रभूनेत्यावदत्-प्रसादं कृत्वा मां मुश्चत । अम्बडमूपि मुश्च । तरु(?)वृष्टितं कृत्वा भृतकुम्भ्यां प्रक्षिप्ते यदिति वक्ति, म मारिति मां करीति । ततः कृष्ट्वा स्नानं कार्यः । यदि जल्पिप्यते स तदा त्वमपि सञ्जा भविष्यसि । दिनत्रयान्ते अम्बद्धः सञ्जो जातः । साऽपि च । इतः श्रीसङ्घान्वितो नृपः प्राप्तः । 25 गुरुभिः साकमम्बद्धः सम्मुखो ययौ । अम्बद्धेन दत्तकरा गुरवः प्रदक्षिणां यच्छन्ति । प्रासादं तुङ्गमालोक्य गुरुभिरुक्तम्-मया देवं गुरुं विना कोऽपि न स्तुतः। तव कीर्त्तनेन किश्चिद्दक्ष्यामः। आदिशत।

(१२०) किं कृतेन न यत्र त्वं यत्र त्वं किमसौ किलः। कलौ चेद्भवतो जन्म किलरस्तु कृतेन किम्॥

प्रतिष्ठा जाता । आरात्रिकोत्तारणाय नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तम्-त्वमेवोत्तारय । वाग्भटेनाप्यनुमतः । 30 कर्त्तमुद्यतः । नृपेण शृङ्खं कनकमयं खकण्ठादुत्तार्याम्बडगले क्षिप्तम् । तेन च याचकानां पठतां गृहसारं दत्तम् । द्वारभट्टस्य तिसन् शृङ्खले दत्ते नृपेणोक्तमवतारय । तथा कृतेऽम्बडेन पृष्टम्-देव ! किम्रुत्सुका जाताः । मया ज्ञातं जीवमिप दाखसि । मम त्वया वहुकार्यमिति । सङ्घार्चीदिषु जातेषु पुनः सङ्घः पत्तनं प्राप्तः । तत्र चैत्यवलानके ९ धडी सुवर्णस्य चतुरसं कलशं ददौ ।

६८२) अथैकदा नृपः सेवायातं मिल्लकार्जुनसुतं प्राह-पापक्षयादिरत्नपश्चकस्यौत्पत्यं वद । देव ! मिल्लकार्जु-35 नादेकविंशः पूर्वजो धवलार्जुनस्तस्य पश्चदश प्रिया आसन् । एका नरेन्द्रसुता खङ्गेन परिणीता। आनीय वन्दीवास्थापि । नृपत्तां वेत्तीव न । शेपा मान्यतमाः । सा तु दैवमेवोपालभते सा । अन्यदा पुरे काचित् परिव्राजिका आगता । सा चेटीभिः राज्ञीसकाशमानीता । तयोक्तम्-किं वेत्सि १ । साऽऽह--

(१२१) दंसेमि तं पि ससिणं वसुहावइन्नं थंभे वि तस्स वि रविस्स रहं नहदे। आणिमि सबसुरसिद्धगणं गणाओं तं नित्थ भूमिवलये महू जं न सिद्धं॥

प्रसीद, मम पति वज्ञीकुरु । तया करे सर्पपा जपित्वा ऽपिताः । यथा तथा नृपस्य [मोजन]मध्ये देयाः । 5 तया शाकं कृत्वा शियां भृत्वा चेट्युक्ता-भोजनावसरोऽस्ति देवस्य परिवेषय । सा शृङ्गारं कर्त्तुं गता । देच्या चिन्तितम् न ज्ञायते कदाचिदेपा वैरिणा प्रहिता स्थात्तदा मे पतिमारिकायाः का गतिः स्थादिति मत्वा गवाक्षस्याधः समुद्रस्तत्र शित्रां ढालयामास । चेटी उक्ता-शाकं सम्प्रति तिष्टतु । कथम् १ । तत् करात्पपात । इतस्तेन वशीकृतः समुद्रो नृपरूपं कृत्वा रात्रावायातः । स तु देव्या नृपवदुपचरितो नित्यमेति । इतो देवी सगर्भाऽभूत् । चेटीं प्राहिणोत्-देव ! सीमन्तोन्नयनाय मुहूर्तमसत्स्वामिन्या गणापयत । नृप आह-का त्वम् ?, 10 का तव स्वामिनी ?। अहं तस्वा नामापि न जाने । कस्य सुता णीता । तथा यदकृत्यं कृतं तन्मम किमुच्यते । साऽऽगत्य देवीं प्राह-इत्थं निवेदयति । तयोक्तं समये ज्ञास्यते । इतः पुत्रो जातः । स्तकग्रुद्धेरनन्तरं वा.....य प्रतोलीमेत्य उपविष्टा । मम शुद्धि यच्छत । जातायां वालः स्तनं गृहीप्यति । नृपेणोक्तम्-मम साराऽपि न।अधुना खड्नेन परिणीता थुता, परं दृष्ट्वापि न।पुत्रस्य का......प्रधानान् प्रैपीत् । एन्मम दृपणं तत्र न मया सोढव्यम् । सा न मन्यते । पद्धराज्ञी प्रहिता । स्त्री स्त्रीभणितेन मन्यते । सा एत्यावादीत्-िकिमिद्मार-15 व्धम् ?। तयोक्तम् तव कुले इदंमम् तु न। नृपः खयमेत्य तां प्राह-तव ममाधुना दर्शनम् , पुत्रस्य तु का कथा १ । उत्थीयताम् । देव । सर्वथापि वार्ता दिव्यं विना न वाच्या । प्रधानैर्दिव्यं दत्तम् । राज्ञी सुत बहिर्ययौ । पौरसहितो नृपथ । तत्र लोहमयी नौस्तस्यां समिधरोप्य, दिव्यकर्त्ता क्षिप्यते । शुद्धे तरत्यशुद्धे ब्रुडति । सा राज्ञीति कामा श्रावणामकरि.....त्यवद्राव इत्युक्तवा नावमधिरुरोह । सपुत्रापि ब्रुडिता । लोकः कोलाहलं यावत्करोति तावन्नावमधिरूढा देवी सश्कारा शृङ्गारकोटिशाटीपरिधाना, सहस्रकिरणताड-20 ङ्काभ्यामलङ्कतकपोला, पापक्षयेण हारेण विराजितवक्षःखला, माणिक्यपटेनाच्छादितवाला, संयोगसिद्धिश्रिप्रा-करा सर्वेरिप दृष्टा शुद्धताला पपात । नृपेण नगरमध्ये प्रवेशिता । नृपो निशि तद्देश्मनि इयाय । तयोपचरितः पृष्टवान्-अहं सर्वथा न ज़ाने त्वं तु सत्येव या समुद्रेण शोधिता। इतः समुद्रदेवेन, प्रत्यक्षीभृयादितोऽपि सरूपमुक्तम्-नासापराधः । नृपेण सुतस्य वालधवल इति अभिधा चक्रे । सा राज्ञी पद्दराज्ञी कृता । एतानि तानि रतानि तसैव समर्पितानि ॥ इति राणकाम्बडप्रवन्धः ॥

२६. कुमारपालकारितामारिप्रवन्धः (B.P.)

§८३) अथैकदा श्रीकुमारपालदेवेन अमारौ प्रारच्यायामाश्विनशुदिपक्ष आयातः । कण्टेश्वरीप्रभृतीनामवोटिकैर्नुपो विज्ञप्तः—देव! सप्तम्यां पग्न्नां सप्त शतानि सप्त महिपाः, अष्टम्यामष्टौ शतानि अष्टौ महिपाः, नवम्यां नव
शतानि छागानां नव महिपाश्च देच्ये नृपेण देयाः । पूर्वराज्ञामयं क्रमः । नृपः प्रभूणां पार्श्वे गतः । कथिता
वार्ता । कर्णे उक्तं नृपः श्रुत्वोत्थितः । भाषितास्ते देयं दास्यामः । विह्वकाप्रमाणेन पश्चो देवीसदने निश्चिप्ताः । १३०
तद्वारे तालकं दत्त्वा नृपः स्वसौधं गतः । प्रातरायातो नृपः । उद्धाटितानि द्वाराणि । मध्ये दृष्टाः पश्चः रोमन्थायमानाः । राज्ञा अवोटिकां अभिहिताः—यद्यमूभ्यो देवीभ्योऽरोचिष्यन्त तदा ग्रसिष्यन्त । †परं न ग्रसाः ।

¹ B प्रमृतिपूजकैः । 2 B पूजकाः । 3 B नास्ति । \dagger एतदुन्तर्गता पंक्तिः पतिता P आद्शें । प्र॰ प्र॰ स॰ 6

25

तसादम्भ्यो मांसं नेष्टं किन्तु भवतामेवेष्टम् । तसादहं जीववधं न करिष्ये । ते विलक्षाः स्थिताः । छागमूल्य-समेन धनेन नैवेद्यानि कारितानि । अथाश्विनश्चक्रदशम्यां कृतोपवासः हमापो निशि चन्द्रशालायां स्थितः । ध्यानेन पञ्चपरमेष्ठिपदं जपन्नात्ति । विहर्द्याः सन्ति । गता बह्वी निशा । एका दिव्या स्नी प्रत्यक्षीभूय जगाद—राजन्नहं तव कुलदेवी कण्टेश्वरी । त्वयाऽसाकं देयं च न दत्तम् । नृपेणोक्तम्—दयालुरहम्, अतःपरं पिपीलिका-कृषी न हिन्म, का कथा पश्चनाम् । कण्टेश्वरी इति श्वत्वा कुद्धा नृपं शिरासि त्रिश्चलेन हत्वा गता । नृपस्तत्क्षणा-त्कृष्ठी जातः । विखिना भृत्येन उदयनतन् जं वाग्भटमाकार्य पत्रच्छ—मन्त्रिन् ! देवी पश्चन् याचते, दीयन्ते न वा । मन्त्रिणा दाक्षिण्यादुक्तम्—देव ! दीयते । मन्त्रिन् ! वणिगसि, यदेवं ब्रूपे तिर्हि ममातः परं जीवितव्येनालम् । राज्यं प्राप्तम्, धम्मों लव्धः संसारतारकः, शत्रवो हताः । त्वरितं काष्टसञ्जतां कुरु । येनेद्दशं मां दृष्टा जनो धर्मसोङ्घाहं विधास्यति । गुरून् गत्वा ग्रत्कलापय । राज्ञा विसृष्टो गतो गुरूणां पार्श्वे । स्वरूपं निवेदितम् । विगुरुभिर्नीरमानाय्य कलापनीय(अकलापानीय)मिर्पतम् । तेन पूर्व देहाभ्यङ्गः कृतः पश्चात्पीतं च । नृपस्तत्क्षणं सुवर्णवर्णो जातो वपुपि । प्रातर्गुरूणां नन्तुं गतः । ततो गुरुभिर्देशना चके । पश्चादमारिविपये विशेपो-द्यमः कृतः । एवममारिविपये कुमारपालप्रवन्धः ।।

२७. कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रबन्धः (B.)

§८४) एकदा गुरुभिरुपदेशो दत्त:-

एकदा प्रश्विभिरतस्य चिक्रणः साधिमैंकवात्सल्यकथा कथिता । नृपस्तां श्रुत्वा प्रतिग्रामं प्रतिपुरं साध-20 भिंकवात्सल्यमारेभे । तदृष्ट्वा कविः श्रीपालपुत्रः सिद्धपालोऽपाठीत्—

> (१२३) क्षिप्त्वा वारिनिधिस्तले मणिगणं रत्नोत्करं रोहणो रेण्वावृत्त्यसुवर्ण्णमात्मिन दृढं बद्धा सुवर्ण्णाचलः । क्ष्मामध्ये च धनं निधाय धनदो विभ्यत् परेभ्यः स्थितः किं स्यात्तैः कृपणैः समोऽयमखिलाऽर्थिभ्यः स्वमर्थे ददन् ॥

> > द्रम्मलक्ष १ दानम् । पं० श्रीधरेणोक्तम्-

(१२४) पूर्व वीरिजनेश्वरे भगवति प्रख्याति धर्म खयं
प्रज्ञावल्यभयेऽपि मित्रिणि न यां कर्तुं क्षमः श्रेणिकः।
अक्केरोन कुमारपालन्यपितस्तां जीवरक्षां व्यधात्
यस्यासाय वचस्सुधांशुपरमः श्रीहेमचन्द्रो ग्रहः॥

अत्रापि लक्षदानम् । अन्येद्यः कथाप्रसङ्गे प्रभवः प्राहुः-पूर्वं भरतो राजा श्रीमालपुरे श्रीशत्रुञ्जये सोपारकेऽप्टापदे च जीवित-स्वामिप्रतिमाश्रकार । श्रीसङ्बस्त्रचक्रोच्छलितरजःपुञ्जध्यामलितदिक्चकवालः सङ्घपतिर्भृत्वा ववन्दे । तदाकर्ण्य श्रीकुमारपालनृपतिः स्वयं कारिते देवालयेऽईद्विम्बमारोप्य ससैन्यः शत्रुञ्जयोज्ञयन्तादियात्राये चचाल । सङ्घेन सह—उदयनसुतो वाग्भटश्रतुर्विशितिमहाप्रासादकारापकः, नागराजश्रेष्टिभुः श्रीमानाभडः, पह्भापाचक्रवर्ती प्राग्वाटश्रीपालः, तत्त्त्वयः सिद्धपालः कवीनां दावणां धुर्यः, भाण्डागारिकः कपदीं, परमारवंश्यः प्रह्वादनपुर-निवेशकारकः प्रह्वादनः, राजेन्द्रदौहित्रः प्रतापमछः, नवनवित्रक्षस्वर्णस्वामी ठकरछाडाकः; तथा श्राविका देवी श्रीभोपलदे, नृपपुत्री लील्, राणाअंवडमाता, वसाह आभडपुत्री वाई चांपलदे—इत्यादिकोटीश्वरो लोकः । स्रयः—श्रीदेवाचार्याः, श्रीअभयदेवस्रिरिश्विष्याः श्रीजिनचन्द्रस्रपत्तेषां गुरुवान्यवाः श्रीजिनवछभ- क्सरयः, श्रीचैत्रगच्छीयाः श्रीधर्मस्रयः, श्रीवीराचार्याः—हत्यादिस्रिरवर्गः । श्रीदेवस्ररीणां भगिनी प्रवर्तिनी सरस्त्रती, श्रीहेमचन्द्रस्ररीणां महत्तरापुण्पचूलाद्याः साध्व्यः । लक्षसंख्या मानवाः । एवंविधेन सङ्घेन सह स्थाने स्थाने प्रभावनां कुर्वन् चैत्यपरिपाटीं च कुर्वन् याचकेभ्य इच्छानुरूपं भोजनं यच्छन् श्रीवर्द्धमानमार्गेण रैवतकाद्री गतः । सांकलिआलीपद्यातले श्रीसङ्घः स्थितः । राज्ञोक्तम्—प्रभो ! पादमवधारयत, यथोपरि गम्यते । गुरुभिरुक्तम्—हे कुमारपालराजन् ! यूयं गच्छत, वयं पश्चादेष्यामः । नृपेणोक्तम्—गुरूविन्वनोपरि कयं यामि ? । गुरु-10 भिरुक्तम्—अत्रेदशो जनप्रवादः, यत् यदोत्तमनरिद्धकं छत्रशिलाध्यो यास्यति तदाऽनर्थः । अतो यूयं पूर्वं वजत । नृपस्तु धौतवासांसि परिधायोपरि गतस्तदनु गुरवः । सर्वं तीर्थकार्यं कृत्वा नृपो वाग्भरदेवेन नृतनपद्यया मित्र-णाऽऽन्नेण कारितयोत्तारितः । तदनु तलहद्दिकायां जीर्णादुर्गे सङ्घवात्सल्यं सङ्घपूजां च कृत्वा देवपत्तने ससङ्घो नृपो गतः । तत्र श्रीचन्द्रप्रभादितीर्थान्त्रमस्कृत्य वलमानः श्रीश्रचुङ्कयमधिरूढवान् । चैत्यपरिपाव्यां जायमानायां भाण्डारिकः कपदीं प्राह्म

(१२५) श्रीचौलुक्य! स दक्षिणस्तव करः पूर्व समासूत्रित-प्राणिप्राणविधातपातकसत्तवः शुद्धो जिनेन्द्रार्चनात्। वामोऽप्येष तथैव पातकसत्तवः शुद्धिं कथं प्राप्तुया-न्न स्पृश्येत करेण चेयतिपतेः श्रीहेमचन्द्रप्रभोः॥

\$८५) मेरुमहाध्वजा-महापूजा-अमारिकादिसवं प्रवित्तम् । मालोद्घट्टनसमये राज्ञि सङ्घे चोपविष्टे मन्नी 20 वाग्सटदेवो द्रम्मलक्षचतुष्कमवदत् । केनापि च्छन्नेनाष्टौ लक्षाः कृताः । एवं क्रमेण वर्द्धमानेषु कश्चित्सपादकोटी-श्वकार । नरेन्द्रश्वमत्कृतोऽवादीदुत्थाप्यताम् । स उत्थितः । याचदृत्र्यते मिलनवसनो वणिक् । राज्ञा मन्नी उक्तः — द्रम्मसौस्थ्यं कृत्वा मालां प्रयच्छ । मन्नी तेन सह पादुकान्तिके गत्वा द्रम्मसौस्थ्यं पप्रच्छ । तेन सपादकोटि-मूल्यं माणिक्यं दिश्तिम् । मन्निणा पृष्टम्-इदं ते कृतः ? । तेनोक्तम्-महुआवाक्तव्यो मम पिता हंसो नाम सौरा-पृक्षः प्राग्वाटः । तत्पुन्नोऽहं जगडः । माता मे धारु । मम पित्रा मरणसमयेऽहं भाषितः न्वत्स ! मया प्रवहण-25 यात्राश्चिरं कृताः, फिलताश्च । मेलितं धनम् । तेन क्रीतं सपादकोटिमूल्यं रत्नमेकेकम् । एवमधुना मम श्रीयुगादिन्चरणः शरणम् । अन्नानं प्रतिपन्नम् । उक्तं च-एकं श्रीनेमिने, एकं श्रीचन्द्रप्रभाय, द्रयमात्मनोऽन्तर्थनं द्ष्याः । वाह्यधनमपि तव प्रचुरमस्ति । इदानीं यात्राये मया माता सहानीताऽस्ति । क्षपित्रम् मुक्ताऽस्ति । तां जरन्तीं मातरं सर्वतीर्थाधिकतया पुराणपुरुपैनिवेदितां मालां परिधापयिष्यामि । श्रुत्वा मन्नी हृष्टः सङ्घं च सम्मुखं नीत्वा महोत्सवेनानीय सङ्घसमक्षं मालापरिधानं कारितम् । तन्माणिक्यं खण्णजिटितं कृत्वा कण्ठाभरणे ३० मध्यमणिख्याने निवेदय श्रीयुगादिदेवाय दत्तम् । देवं ग्रुत्कलाप्य खयमारात्रिकमाधाय सङ्घः समुत्तीर्य क्रमेण चिलतः । प्राप्तः श्रीपत्तने । प्रवित्तं सङ्घात्सल्यम् । प्रतिलाभिताश्च [साधवः] । अमारिस्तु शाश्चते ॥

।। इति श्रीकुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रवन्धः ।।

२८. कुमारपालपूर्वभवप्रबन्धः (B.)

§८६) एकदा श्रीकुमारपालेन श्रीहेमसूरयः पूर्वभवखरूपं पृष्टाः। ततः सूरयः सिद्धपुरे गताः। प्राचीमाधवाग्रे इमशानभूमी चतुरः श्रावकान् कृतोपवासान् चतुर्दिक्षु तपोधनांश्रत्वारो विदिक्षु स्थाप्य खयं त्रिभ्रवनस्वामिनीं विद्यां स्मृतवन्तः । देव्याह-सरणकारणं वदत । तैस्तु नृपभवः पृष्टः । देव्याह-मेदपाटदेशे चित्रक्टप्रत्यासन्ने 5 ऊपरमालपर्वते परमारवंशीयो जैत्रः पछीपतिरासीत् । सोऽन्यदा धाराया गगनधूलेर्नायकस्य दशसहस्रवलीवर्दमितं सार्थं जगृहे। नायको नंष्ट्रा मालवेशमाह। राज्ञोक्तम्-मया तस्य किमपि कर्त्तं न शक्यते। तेनोक्तम्-मया शक्यते। कटकमादायाज्ञातवृत्त्या पह्यां गतः । जैत्रो नष्टः । तेन कीटमारिं कृत्वा जयतापत्याः सगर्भाया उदरं विदार्थ वालं भूमावास्फोट्य वलित्वा च तं नृपं प्रति खदृत्तमुक्तम् । नृपेणादृ एव्योऽयिमिति तिरस्कृतो जनैनिन्द्यमानस्ताप-साश्रमे गत्वा शुद्धिकृते तपस्वी जातः । अथ जैत्रः स्थानश्रंशाचोरवृत्त्या जीवन्नेकसिन् सार्थे मिलितः । सार्थे 10 स्थिते श्राद्धा देवपूजां विधाय सरसः पालौ वजन्तो वीक्ष्य तैः सार्द्धं गतः । ते तपोधनान् नमस्कृत्य धर्मोपदेशं श्चत्वा क्षमाश्रमणपूर्वं तपोधनानादाय गताः । स तथैव स्थितस्तपोधनाः समायाताः । स न उत्तिष्ठति । मयि बुभ्रक्षिते कथं भोक्ष्यन्ति म्रनयः। श्राद्धानाहूय भोजितः। तदनु गुरुभिरुक्तम् –त्वं चौर्यस्यादत्तस्य नियमं गृहाण्। तेनोक्तम्-यद्यदरपूरणं भवति तदा नाहं करोमि । तैः श्राद्धपार्श्वीच्छम्वलं दापितम् । स क्रमेण सार्थाचलितो गुरुभिर्नियमं सारितः । उरंगलपत्तने गतः । तत्र ओंढरनायकाट्टे उपविष्टः । तेनागतेन पृष्टम्–क यास्यसि ? । 15 तेनोक्तम्-यत्रोदरपूर्त्तिर्भविष्यति । नायकेन स्थापितः । शुद्धश्रत्या सश्चरन् विश्वासपात्रं जातः । एकदा चतुष्पदे विसाधनहेतौ प्रहितः । इतो हट्टान् दीयमानान् दृष्टा पृष्टम् । तैरुक्तम्-स्रर्यः समायाताः । सम्मुखैर्गम्यते । तेन चिन्तितम्-अहमपि यामि । यदि ते मे गुरवो भवन्ति । इति मत्वा स्ररीज्ञपलक्ष्य नमस्कृतवान् । गुरुभिः क्वश्रलं पृष्टम् । सं क्रमेण विसाधनमादाय गतः । नायकेन पृष्टम् । तेन वृत्तमुक्तम् । नायकः सुभद्रकत्वात्तत्र तेन सह गतः । ''न कयं दीणुद्धरणं'' इत्यादिच्याख्यानान्ते सुंबुद्धो धर्ममङ्गीकृतवान् । गुरूनाह–दक्षिणां याचत । 20 तैरुक्तम्-अत्र जिनाल्यो नास्ति तं कारय । तथाकृते प्रासादप्रतिष्ठा जाता । एकदा पर्वदिने नायको वस्ताणि निर्मलानि परिधाय जैत्रेण सह प्रासादं गतः । तेन पूजा कृता । जैत्रायोक्तम्-त्वम्पि पूजां क्रुरु । तेन किमपि द्रव्यमासीत्तेन पुष्पाण्यादाय पूजा कृता । पौपधागारे नायकेनोपवासः कृतो जैत्रेणापि । पश्चाद् गृहे गतो धौतवस्त्राणि मुक्तानि । जैत्रो भोजनायोपविष्टः । परिवेष्य यावत् स्थितस्तावत्पारणार्थी मुनिराययौ । कालेनान-शनमादाय खर्ग्यभूत् । जैत्रोऽप्यनशनमादाय् त्रिभ्रवनपालदेवसुतो जज्ञे । नायकजीवस्तु जयसिंघदेवी जातः । 25 पूर्वभवपातकादनपत्थी जातः । ततो गुरुमिर्नृपाय निवेदितम् । नृपो हृष्टः ॥ इति क्रमारपालदेवपूर्वभवप्रवन्धः ॥

२९. द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रवन्धः (Br.)

§ ८७) एकदा श्रीपत्तने द्वात्रिंशद्विहाराणां प्रतिष्ठां महदुत्सवेन प्रारम्थां श्रुत्वा वटपद्रपुरनिवासी वसाह कान्हाकः स्वयं कारितप्रासादिवम्बमादाय श्रीपत्तने प्रतिष्ठार्थमाययौ । हेमाचार्याः प्रतिष्ठार्थेऽभ्यथिताः । तैर्मानितम् । इत-स्तिसन् दिने जनसम्मदीं जातः । रात्रौ घटी मण्डिता । इतो वसाहस्य भोगाद्यपस्कारो विस्मृतः । तेन तमानीतुं अगते लग्नघटी असमये वादिता । स आगतः । मध्ये प्रवेशं अलब्ध्वा लग्नघटीं श्रुत्वा विपण्णः । प्रतिष्ठापश्राज्ञनो विरलो जातः । कान्हाकोऽप्यन्तः प्रविक्य गुरूणां चरणयोर्लगित्वा वाढं रुरोद् । मदीयं विम्वं प्रभो ! स्थितम् । गुरुभिरूर्द्वमवलोकितम् । लगं तदा वहमानं विलोक्योक्तम्-भो ! त्वं पुण्यवान् , लग्नमधुनास्ति, परिच्छेदं ग्रुरु विम्वप्रतिष्ठायाम् । स न मन्यते । गुरुभिः प्रतिष्ठां विधायोक्तम्-यदि न मन्यसे तथा देवं पृच्छ-एतत्तथ्यं न

वा । विम्वेनोक्तम्—तथ्यं भो ! तव विम्वं वर्पशतत्रयायुः । एतानि वर्पत्रयायुंपि भविष्यन्ति । इतः कश्चित् व्यवहारी स्तम्भतीर्थं वाणिज्याय गतः । तत्र तेन श्रीदेवाचार्या नमस्कृताः । प्रश्म्—िक्तमद्य कल्ये नृपः पुण्यकम्मं
तनोति ? । तेनोक्तम्—द्वात्रिंशद्विहाराणां प्रतिष्ठा जाता । तस्य उत्सवस्य किं वर्ण्यते । लग्नं वेत्सि ? । अमुकमनुमानम् । इदं लग्नं हेमाचार्येनिक्रिपतं न वा ? । यदि निक्रिपतं तदा महत् श्रुण्णं जातम् । स पुनः पत्तनमाययौ ।
हेमाचार्येः पृथम्—श्रीदेवस्तरयो नमस्कृताः ? । सक्रपमुक्तम् । त्वया कारणं किमपि न पृथम् ? । मया ज्ञातं यदुन्नतिमसहमानाः कथयन्ति । इतः श्रीदेवाचार्याः पत्तनमागताः । श्रीहेमाचार्यान्तमस्करणायाऽऽगच्छतो विलोक्योकम्—तपोधनाः ! नृपगुरूणामर्थे उपवेशनमानयत । श्रीहेमाचार्या विस्तिताः । यावद्वन्दन्ते तावदुक्तम्—हे
नृपगुरवः ! इहास्यताम् । हेमाचार्थेक्तम्—प्रभो ! ममोपि कथमप्रसादः ? । प्रश्निभरहं दर्शनविरुद्धे पथि सञ्चरन्
दृष्टः श्रुतो वा ? । कथयत—प्रतिष्ठालयं भवद्भिनिक्षितं न वा ? । निक्रिपतम् । तत्र क्रूरकर्त्तरीयोगोऽस्ति । एतल्लगं
पूर्वकृतानामि प्रासादानामनर्थहेतुः । भगवन् ! किं क्रियते ? । गुरुभिरुक्तम्—स्तोकदोपं वहुगुणं कार्यं कार्यं 10
विचक्षणौरिति विचिन्त्य यदमी प्रासादा मूलतोऽप्यपाकृत्य नृतनास्तदा सर्वेऽपि प्रासादाः स्थिराः स्युः । प्रभो !
एतन्न युज्यते । तर्हि भवितव्यतेव वलवती भवतां कोऽपराधः ॥ इति द्वात्रिंशदिहारप्रतिष्ठाप्रवन्थः ॥

(G.) सङ्ग्रहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्।

§८८) श्रीकुमारपालः भावस्थितौ भ्रमन् श्रीसिद्धपुरे गतः। तत्र शक्कनान्वेपणे तेन कोऽपि मारवोऽभ्यर्थितः— किं मे भविता?। अत्रार्थे गतौ विहः। ततो देव्याह्वाने कृते देवी श्रीम्रानिसुत्रतचैत्ये आमलसारके खरद्वयं कृत्वा, 15 ततः कलशे त्रयं, ततोऽपि दण्डे खरचतुष्टयं च विधाय स्थिता। ततः स शाकुनिकः श्राह—तव जिनभक्तस्य सतो राज्यप्राप्त्यादि अधिकाधिकं पदं भवितेति।।

§८९) अन्यदा श्रीक्रमारपालस्य कस्यापि कोड्डिम्बिकस्य गृहे हालिकत्वेन वर्त्तमानस्य सकणश्रकणांवाभारस्रद्र-हतः शिरस उपरि दुर्गयोपविश्य खरोऽकारि । ततः शाक्तिकः पृष्टः । तेनोक्तम्-तव राज्यं भविष्यति । परं तव सन्तितिन भविता । यतो युगन्धरीधान्यं सर्वधान्योत्कृष्टम्, तेन राज्यम् । यतः प्रभोहेंतोर्भारकः, तेन न 20 सन्तितिस्तव ॥

§ ९०) तपोधनवृत्त्या वर्तमानस्य श्रीकुमारपालस्य राज्यावसरे श्रीप[त्तनो]परि गच्छतः पथि [दुर्गा] पूर्वं वव्बूल-वृक्षे निवित्रय स्वरश्रके तदनु राफमध्यान्निःसृतफणिः फणोपरि....सार्थे वहमानः मारुयकः एष्टः । तेनोक्तम्-दिनत्रयेण तव राज्यं भविष्यति । परं प्रहरत्रयेण विद्यं विद्यते । तदनु सार्थे तृतीये यामे मेघवृष्टौ... ...मध्यान्त्रिःसृते कुमारपाले द्वादशजनोपरि विद्युत्पातः समजनि । ततस्तृतीये दिने राज्यं जातम् ॥ 2

§९१) अन्यदा श्रीजयसिंहदेवो दिवं गतः । तद्नु अष्टाद्यदिनानि यावत्पादुकया राज्यं कृतम् । ततः श्रीहेमस्रिक्षथितदिनोपिर कुमारपालः समागच्छन् निश्चि कडीग्रामपाद्रप्रासादे स्रप्तः । तत्रारक्षकः परिश्रमन् आगतः ।
चौरच्छलेन कुट्टियत्वा प्रावरणकम्बलादि गृहीत्वा स मुक्तः । प्रातः समुत्थाय पत्तने नडुलाकान्हडदेवस्य निजभावुकस्य गृहं गतः । ततो भिगन्या दुक्लानि दच्चा राजभवनं प्रेपितः । तत्राप्रे त्रयो राजप्रतिपन्नपुत्रा राज्यं
दच्चोत्थापिताः । कुलक्षणैरेभिः । तत एकेनोक्तम्—अहं सर्वं मारियण्यामि । द्वितीयेनोक्तम्—यत् पृयं भणिण्यथ ३०
तदहं करिण्यामि । ततीयो दुक्लाञ्चले रुलमानैरुपविष्टः । अत्रान्तरे कुमारपालः समागतः । कान्हडेनोक्तम्—भन्यं
कृतं यद्युना समागतः । राज्ये भवानेव । इत्यं वारितेनापि कृष्णदेवेन राज्यं दत्तम् । ततश्चिद्वंशराज्यस्थानमहाधर, ४ राउल, ७२ मंडलीक, ८४ राणा, ३६० सामन्तपरिवारः प्राकारविहिन्गित्य स्थितः । ततो नित्यं
कथापयन्ति कृष्णदेवस्य ते प्रधानाः—त्वया किं कृतं यदसै राज्यं दत्तम् १ । तेन कथितमहं न मारियण्यामि,

यूयं मारयथ । मया राजा समग्रपरिवारो राजपाटिकोपायेन वाह्ये निःकासितोऽस्ति । ततो राजा दृष्टिकलया विनष्टं वीक्ष्य पश्चाद्वलितः । प्राकारासत्रं कान्हडदेवं विस्त्रयित्वा ततो निश्चि सप्तशतमितगढसंखराजपुत्रहस्ते दीपिका अपीयत्वा राजगोध्रईयाकं सुप्तं विधृत्य एकरात्रिमध्ये समग्रमपि राजचकं वशीकृत्य राज्ये निविष्टः ॥

- § ९२) श्रीकुमारपालेन राज्ये प्राप्ते तत्थ्वणं कडीतलारक्षस्थाकारणे सुखासनेन समं लेखः प्रहितः। स च विस
 5 यापन्नमनाः समागतो राज्ञा सन्मानितः। ततो विशेपविस्तयोऽजिन । अत्रान्तरे युगपत् स्नानद्रोणी.....तेन

 पृष्टिर्द्शिता......सकशाप्रहारां वीक्ष्य विपण्णेन चिन्तितं यदसौ मां मारियण्यिति विपं दच्चा। ततो

 भोजनावसरे राज्ञा बहुमानेन निजरसवतीं भोजियत्वा राणकपदं दत्तम्। इत्थं विपि(प)ण्णः क्षीणतेजा जातः।

 राजा तु पुनः पुनः चरान् परिपृच्छिति। स चाद्यापि जीविति। स इत्थं चतुःपथानितक्रम्य प्रतोलीद्वारे गतो

 मृतः। राज्ञोक्तम्-[आ! बाढं] ढाढिसिकः। सर्वैः पृष्टं-राजन्! किमेतद्वयं न विद्यः। अतो राज्ञापि सर्वो वृत्तान्तो

 10 निगदितः। अतो मया मारणार्थमस्य प्रौढिर्दत्ता। यथा मम महत्त्वं स्थात्॥
 - §९३) एकदा क्रमारपालदेवः सप्तदिनानि यावत् बुभ्रक्षितः कस्यापि गोधूमक्षेत्रे कलिङ्गानि गृहीत्वा अरघट्ट-घटिकया वाफयित्वा रात्रौ यावद्भक्षितुं लग्नः, तावद् हालिको दण्डमुद्यम्य धावितः। परं क्षेत्रपतिना रक्षितः। राज्ये प्राप्ते कालिङ्गीयको नाम्ना ग्रामो दत्त आघाटे तसै ॥
- §९४) अन्यदा श्रीकुमारपालो दिनत्रयं श्लाधितः परिश्रमन् कस्यापि व्यवहारिणो गृहे प्रविश्य निविष्टः । 15 गृहाधिपतेर्लेखकं विद्धतो मध्यरात्रिरजिन । ततस्तेन चिन्तितं—यद्यसौ न श्रक्तोऽस्ति, तदा भोजयिष्यामि । ततः पृष्टे स व्रह्मकलत्रगृहे प्रेपितः । तया तस्तै भोजनं न दत्तम् । द्वितीयया हर्पितया दत्तम् । प्राप्ते राज्ञे स्थालं गृहीत्वा चौरेस्तस्य श्रेष्टिनो हट्टे व्ययितम् । ततो राज्ञा आकारितो व्यवहारी । उपलक्षितः । राज्ञोक्तम्—तव कलत्रद्वयमास्ते । तेनोक्तम्—एवमेव । राज्ञोक्तम्—आकारय तत् द्वितयम् । यथा तव सक्चद्वम्वस्य निग्रहं करोमि । कुदुम्वे समेते पूर्वोपकारीति भणित्वा राज्ञा तस्य प्रसादो दत्तः ॥
- 20. §९५) पुरा श्रीक्रुमारपालेन क्षयाहे पिण्डदानसमये उधियमाणे द्वारमहेन मयणसाहारेण पितामहिपण्डे प्रोक्त-मिति—राजन्! राजपितामहं मिल्लकार्जनं पितृणां मेलय तदन्त पिण्डं उद्धर। इति श्रुत्वा राज्ञा पिण्डः पथानमुक्तः। राज्ञा वीटके दीयमाने सकलेऽपि राजमण्डलेऽघो विलोकयित वाहडवारितेनापि आम्बडेन वीटकं जगृहे। राज्ञा कटकं राजिगिरं च समर्प्य प्रेपितः। संप्रहारे सकलमपि वलं भग्रम्। तत आम्बडः कृष्णगुरूदरोदरान्तः कृष्ण-वासाः कस्तूरिकानुलेपनः पत्रपुटमोजी कस्थापि निश्चि दिने निजवदनं न दर्शयित। राज्ञा तदिज्ञाय स्वयमागत्थ 25 सन्मानं दन्त्वेति प्रोक्तम्—मम मिल्लकार्जनविग्रहे त्वमेव सेनापितः। पुनिर्द्वितीये वर्षेऽश्वसहस्र ४४, पत्तिलक्ष ३ मितं कटकं दत्तम्। तेन मिल्लकार्जनं विग्रच्य नान्यस्य मे प्रहार इति प्रतिज्ञातम्। सत्वरं गत्वावेष्टितः। युद्धे जायमाने निजो चरणौ परदन्तिदन्ते दत्त्वा तत्राधिरुद्ध कोङ्कणस्वामी व्यापादितः। कोङ्कणं गृहीतम्। मूटक १८ मौक्तिक। संयोगसिद्धि सिप्रा। सहस्रकिरण ताडंक २। अग्निपखालु पछेवडउ। ग्रङ्कारकोडी साडी। सेडउ पट्ट-हस्ती। अष्टोत्तरसहस्रमौक्तिकहारः त्रिसरकः। चतुश्रत्वारिश्चरङ्गलप्रमाणं मरकतिलङ्गं नीलकण्ठस्य। एतदानीय ३० राज्ञः पादौ शिरसा सह पुजितौ। अत्रान्तरे द्वारमहेनोक्तम्—

"कीडी रक्ख करंतु चडिउ रणि मइगल मारइ०॥"

- §९६) श्रीआम्बडोपि रणांगणपतितो जगादिति-देवबुद्धा जिनेन्द्र एवास्ति । गुरुः श्रीहेमसूरिरेव । खामी श्रीकुमारपाल एव । ततः केनापि कविना इति जगाद-"वरं भट्टैभीव्यं०॥"
- §९७) अन्यदा श्रीकुमारपालेन पृथिवीमनृणां कर्त्तुं गुरवः सुवर्णसिद्धिं पृष्टाः। गुरुभिरुक्तम्-मम गुरवो 35 जानते, नाहमिति प्रवन्धो ज्ञेयः॥

- १९८) एकदा श्रीकुमारपालेनात्मनः श्रीजयसिंहस्थान्तरं पृष्टम् । सम्येरुक्तम्-श्रीसिद्धराजसाष्टीनवति गुणाः, दोपद्दयं देहे । भवति अप्टनवति दोपाः, गुणद्धयम् । भवान् विक्रमी, कृतज्ञश्च । श्रीसिद्धराजस्तु मत्सरी, दीर्घरोपी च ॥
- ६९९) श्रीसङ्घयात्रायां जायमानायां रैवतिगरौ छत्रशिलाकम्पे जायमाने राज्ञा पृष्टैर्गुरुभिरूचे हात्रिंश-छक्षणोपेतं पुरुपद्वयं यदि शिलाधो यास्पति तदा शिला पतिप्यति । अतो नन्यपद्यया देवनमस्करणं विधास्यामः । ⁵ इत्सुक्ते आम्वाकेन नन्या पद्या कारिता ॥
- § १००) अथ महापूजायां महाभोगे विधीयमाने धृपधृमान्तरिते गर्भगृहान्तरे प्रभुभिः श्रीसोमेश्वरः प्रत्यक्षी-कृतः । देवादेशेन ततः प्रभृति मज्जाजैनः कुमारपालोऽभृत् ॥
- \$१०१) अथ श्रीदेवेन्द्रस्रिभः श्रीसेरीसके तीर्थे निर्मिते कान्तीत आकृष्टिविद्यया महाविम्यानि समानी-तानि । मनसीति चिन्ता जाता-श्रीपत्तनं सेरीसकं च एकमेव विधास्यामि । अत्रान्तरे गाजणपतिनृपतेरुपरि 10 कटकं विधाय श्रीकुमारपालदेवः श्रीप्रभुभिः सह तत्रागतः । श्रीदेवपादात्रमस्कृत्य श्रीदेवचन्द्रस्रयो नमस्कृताः । श्रीस्रयः कथितवन्तः—राजन् । वर्षासु कथं कटकवन्धः । राज्ञोक्तम्—साम्प्रतं छलं विना गाजणपतिर्न विनश्यति । स्रिरिभिरुक्तम्—कथं भवद्वरूणां एतावत्यापे शक्तिनीति । राजा मौनेन स्थितः । ततत्तिरुक्तम्—अत्राद्य कटकं स्थापय । अहं गाजणपतिमानेप्यामि । निशि स्रिरिभराकृष्टिविद्यया देवतावसरं कुर्वद्विगीजणपतिरानीतः । परस्परं मैत्री जाता । अक्षरैः पाङ्गलां (१) पत्राणि जातानि ॥
- § १०२) श्रीहेमाचार्येरवसानसमये सगद्भदं राजानं समीक्ष्योक्तम्-मम तव च पण्मासान्तरमेवास्ति । ततः प्रभोरवसानानन्तरं रामचन्द्रेण श्रीसङ्ख पुरः पठितमिति—"महि वीढह सचराचरह०॥"
- § १०३) अथ पण्मासान्तरे श्रीकुमारपालेन भूमौ मुक्तेन श्रीवीतरागविम्बद्दीने उक्तमिति—"सावय-घरंमि०॥" अत्रान्तरे मिल्लकार्जुनभांडागारनीतसंयोगसिद्धिसित्रा जलपानार्थं याचिता। अजयपालदेवोक्तैश्वार-क्षकैर्नार्पिता। तदा चारणेनोक्तम्—"कुयरड कुमरविहार०॥"

३०. अजयपालप्रवन्धः (P.)

§ १०४) अथाजयपालेन प्रासादेषु पाल्यमानेषु, यमकरणं तारणदुर्गोपिर सम्नद्धं प्रातः प्रयास्यतीति श्रुत्वा वसाह-आभडमुख्यः समग्रोऽपि सङ्घः पर्यालोचितवान्—विलोकयत श्रीकुमारपालदेवेन प्रासादाः कारिताः, अनेन दुरात्मना पातिताः। कोऽपि इदं न वेत्स्यति यम्नुपः श्रावकोऽभूत्र वा। तारणदुर्गप्रासादो रक्षितुं शक्यते तदा भव्यम्। सीलणाग क्रुतिगिया विनाऽन्योपायो नास्ति। तस्य गृहे चलत। ते तत्र गताः। सङ्क्ष्तेनाम्युत्थितः। 25 करो संयोज्य उक्तम्—मिय विषये महान् प्रसादः। किं कार्यम् । भोस्तं वेत्ति पूर्वनृपेण प्रासादाः कारिता अनेन पातिताः। एकस्तारणदुर्गस्यावशेपोऽस्ति, सोऽपि प्रातः पतिष्यति। यदि त्वया रक्ष्यते। अन्यः कोऽप्युपायो नास्ति। तेनोक्तम्—एप भवतां प्रमादः। पूर्वं ज्ञापितोऽभूवं तदैकोऽपि नापतिष्यत्। यज्ञातं तज्ञातम्। त्वयाऽमुं रक्षता सर्वेऽपि रक्षिताः। सङ्घः सत्कृत्य विसुष्टः। स नृपसमीपं गतः। देव । मुत्कलाप्य यामि। भोः क यासि । देव वयमुत्पन्नभक्षकाः। सर्वं मिष्ठितम्। कापि रायने गत्वा त्वनाम्ना द्रविणमादाय पुनरेष्यामः। नृपेणोक्तम्—यदि 30 पत्तनं विहाय यूयमन्यत्र यात तदाऽहं लज्जे। अवसरं दास्थामि। देव । अवसरो भवति वा यामि ? तिर्हे सज्जतां कृत्वा सन्ध्योपर्यहि। नृपेण सर्वः कोऽप्याहृतः। प्रारब्धं प्रेक्षणम्। इतः सीलणेन इष्टिकाः समानीय पातिताः मृत्तिकारसभानि रङ्गान्तः समाजग्यः। पानीयं च। कटिकस्त्वाकारितः। प्रासादं कुरु। तेन कृतः। मध्ये

एकस्य देवस्य स्थानं कुरु | तेन कृतम् | ध्वजाऽऽरोपं कृत्वोक्तम्—देव ! गजान्ता लक्ष्मीः, ध्वजान्तो धर्मः | अथाहमग्रं निर्माय कृतकृत्यो जातः | शयनं विधास्ये इति शुकटीं (ग्रुखे पटीं ?) कृत्वा सुप्तः । इतः पुत्रेणागत्य देवकुलिका
पातिता | सीलणः पटीं त्यक्त्वोत्थितः सन् प्राह—रे ! केनेदं पातितम् । भवतो ज्येष्टपुत्रेण । सीलणेन स चपेटया
हतः । रे ! त्वमस्थापि सदशो नः एतस्थापि नृपतेहींनः । अनेन नृपति[ना पित]रि मृते तस्य कीर्त्तनानि पातितानि,
जत्वया तु मम जीवतोऽपि पातितम् । मम मृत्युरिप न प्रेक्षितः । इति श्रुत्वा नृपस्य नेत्रयोनीरं पपात । सीलण !
किं कथयसि ? । देव ! विमृश्च तथ्यमिद्मतथ्यं वा । गृहस्थः कीर्त्तनं कारयति यावन्मम कोऽपि भविष्यति तावदस्य सारा भविष्यति । ये पतितास्ते पतिताः, शेषाः सन्तु । एक एवावशेपोऽस्ति यः स तव नाम्ना । यमकरणं
ज्यावर्त्यताम् । इत्थं कृते प्रासादाश्चत्वार उद्गरिताः ॥ इति तारणगढप्रासादरक्षणप्रवन्धः ॥

§ १०५) अथ राज्यानृतीये वर्षे पर्यूपणापर्वणि थारापद्रीये प्रासादे आवका मिलिताः । आभडवसाहेनोक्तम्-10 समयं विलोकयत ! । यत्र तपोधनानां सहस्रा आसन् तत्राद्य स कोऽपि न दृश्यते यस्य ग्रुखात्प्रत्याख्यानमपि क्रियते । कापि केन[पत्त]नमध्ये श्रुतो वा दृष्टो वा । एकेन कर्णे प्रविश्योक्तम् यद्राजपुत्रवाटके धरणिगः श्रेष्ठ्यस्ति । तेन जङ्घावलपरिश्लीणाः स्वगुरवः स्थापिताः सन्ति च्छन्नम् । तदनु वसाहस्तस्य गृहे गतः । तेनाभ्युत्थितः, पादमवधार्यताम् । अद्य सांवत्सरिकपर्वणि तपोधन क तपोधनाः सन्ति ? । तेन भूमिगृहे नीत्वा गुरवो दर्शिताः । वसाहस्तु चरणयोर्निपत्य रोदितुं प्रवृत्तः-भगवन्! स कोऽपि नास्ति यो.....दुरात्मानं 15 नृपं शिक्षयति । गुरुभिरुक्तम्-शक्तिरस्ति परं सान्निध्यकर्त्ता कोऽपि विलोक्यते । वसाहस्तु तस्यैव श्रेष्टिनः शिक्षां दुन्ता ययौ । गुरवो जप्तुं प्रवृत्ताः । इतस्तृतीयदिने.....र्जाता । यतो मदीयौ धांगा-वइजलियाख्यौ पदाती स्तः । तयोर्माता सुहागदेवी । सा स्वैरिण्यस्ति । सा नृपेणानीयान्धकारे स्थापिताऽस्ति ।..... वइजलिकः पीत्वा समायातः । नृपेण हास्ये प्रारव्ये उक्तम्-रे! याचस्य स्वैरम् । तेनोक्तम्-देव ! अधुनाऽवसर-योग्यं दीयताम् । नृपेणोक्तम्-उपवरिकायां वज । परं वदनं नावलोकनीयम् । स तत्र गतः । इतः पृष्ठे दीपकरः 20 समाययौ । तेनाम्बा दृष्टा, सवित्र्या पुत्रो दृष्टः । परस्परं लिखतौ । वर्डजलेन धांगाऽग्रे उक्तम्-नृपेणैवंविधं हास्यमकारि । तदहं मरिष्ये । तेन साक्षेपमुक्तम्-मारियष्ये न वदिस, मरिष्ये वदिस । अम्रं मारियष्यायः । इति निश्चित्य स्थितौ । नृपस्तु राजपाट्यां निर्ययौ । वलमानः सन्ध्यायां सुखासनासीनोऽन्धकारे प्रतोल्यां प्रविशन्, वइजलेन कपाटपार्श्वात्रिर्गत्य धांगाकेन सह स्थितेनोभाभ्यां नृपो हतः। कलकले जाते वहजलो नष्टः, धांगाको हतः । राजा तु तत्रैव पपात । जनो दिशो दिशं गतः । इतो लब्धसंज्ञस्तृपितो राजा रिखन प्रतोलीप्रत्यासन्ने 25 तन्तुवायगृहे प्रविष्टः । गर्तायां मुखे वाहिते, तन्तुवायेन लक्कटः क्षिप्तः, खानं मत्वा । तेन दीर्णशिरा पपाठ-

> (१२६) धांगा दोसु न वइजला न वि सामंतह भेउ। जं मुणिवर संताविया तह कम्मह फलु एहु॥

इति वदन् पीडया मृत्वा श्वभ्रं ययौ ॥ इत्यजयपालप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्गहगतं अजयपालवृत्तम्।

³⁰ ६१०६) श्रीअजयपालेन श्रीकपर्दिमन्त्री अमात्यताहेतोरुपरुद्धः । मन्त्रिणोक्तम्-मनसा समालोच्य देवादेशं विधास्त्रामि । इति भणित्वा गृहं प्रति गच्छत ईशानदिशि वृपभस्तरपञ्चकं वामभागेऽजनि । तन्मारुयकस्य मन्त्रिणा कथितम् । तेनोक्तम्-न भव्यम् । यदयं वृपः शिववाहनम् । अतः परं शिवशासनं विजयि भविता । ततश्र न गृहीतं अमात्यत्वम् । राज्ञा धृतः । तत्रस्थरामचन्द्रेणोक्तम्-"जो करिवराण कुम्भे०॥"

§१०७) श्रीहेमस्रिरिशिष्यौ रामचन्द्र-वालचन्द्रौ । गुरुभिः सुशिष्यं भिणत्वा रामचन्द्रस्य विशेपविद्याः दत्ताः । मानं च दत्तम् । तत्कोपेन वालचन्द्रो निःसृतः । तस्याजयपालेन सह मित्रत्वं जातम् । राज्ये प्राप्तेऽजयपालेन रामचन्द्रस्थोक्तम्—श्रीहेमचन्द्रस्रिणां सकला विद्या मम मित्राय वालचन्द्राय देहि । तेनोक्तम्—गुरूणां विद्याः कुपात्राय न दीयन्ते । राज्ञोक्तम्—तिर्हे अग्निःतत्र जिह्वां खण्डियत्वा उपविश्वता तेन दोधक्ष पश्च श्र ती कृता ।।

३१. धर्मस्थैयें सज्जनदण्डपतिप्रबन्धः (B.)

§ १०८) अथ दण्डपितसञ्जनप्रवन्धः—श्रीपत्तने प्रथिलभीमदेवो राज्यं करोति स । तेन सहस्रकला वेश्याऽन्तःपुरे क्षिप्ता । सा राज्यचिन्तां सकलां करोति । दण्डपितः सञ्जनः श्रीमालज्ञातीयो मञ्जाजेनो राज्याधिकारं करोति
सा । स देवपूजां विना न शुक्के, प्रतिक्रमणं विना न शेते । अथैकदा पत्तनोपिर तुरुष्काणां सैन्यमाययौ ।
दण्डनायकसञ्जनेन वनासनदीतीरे गांडरो नामाऽरघट्टस्तत्र रणक्षेत्रं सजीकृतम् । देवी सहस्रकला स्वयं सञ्जनदण्ड-10
[नाय-]केन सह सैन्यमादाय सम्मुखमागता । अश्यसहस्र २४ मनुष्यसहस्र २२ सार्धम् । तत्र प्रात्यग्रद्धिमिति निश्चिकाय । रात्रौ शस्त्रजागरणं कृतम् । वीराणां सम्नाहाः समिष्पताः । गजा १८ गुडिताः । अश्वाः सर्वेऽपि सज्जिताः ।
प्रक्षरां ग्राहिताः । इतो देव्या सज्जनो दण्डपितः सैनान्येऽभिषिक्तः । स सन्नाहमादाय यामिन्याः पाश्चात्यप्रहरे
गजमिष्ठस्तः । चतुर्दिश्च सन्नद्धैवीरिर्द्धतः । इतो मित्रणा गजस्कन्ये खापनाचार्यं निवेश्य प्रतिक्रमणं कृतम् । पार्श्वस्थिश्चिन्तितम्—असार्तिक युद्धं भविष्यति । तेन सामायिकं पारितम् । रणरसोत्सुका वीरा उभयोः पश्चयोमिलिताः । 15
महान् रणः समजिन । सजनदण्डेशेन स्वयम्रत्य दुक्तुलाञ्चलेन सजनगात्रं प्रमाद्यं स्वरोदरे निनाय । इतः पार्थस्थरक्तम्—देवि ! दण्डनायकस्य काऽप्यपूर्व वार्ता । पाश्चात्ययामिन्यां 'एकेन्द्रिया [द्वीन्द्रिया]' इत्यक्तम् । प्रातर्युद्धं
तथा कृतं यथा केनापि न क्रियते । देव्या पृष्टम्—दण्डेश ! किमेतत् १ । देवि ! रात्रौ स्वकार्यं कृतम् , प्रातस्तव ।
यत् पिण्डस्त्वदीयस्तेन यत्कृतं तत्तव कार्यम् । मम सायत्तमम । एवं च तुरुष्कान्वित्य देवी पत्तनं 20
प्राप्ता । मत्री सजाङ्गो जातः ।। इति धर्मस्थेरें सजनदण्डपतिप्रवन्धः ।।

३२. मन्त्रियशोवीरप्रवन्धः (P.)

§ १०९) श्रीजावालिपुरे श्रीसमरसिंहन्पाङ्गजः श्रीउदयसिंहस्तस्य मन्नी दुसाजस्तत्पुत्रो यशोवीरस्तस्य मार्या सुहागदेवी, सुतः कर्म्मसिंहः। एकदा सण्डेरगच्छोद्भवैः श्रीईश्वरस्वरिभिरुक्तम्—हे मन्निन् । तव पुरे धारागिरिवा-टिकाऽस्ति । तत्र अद्यदिनात् पोडशमे दिने तव वाटिकामध्ये स्थितस्य द्विप्रहरवेलायां यो द्विजः समभ्येति, 25 त्वया तसिन् दृष्टमात्रे 'पादमवधार्यताम्, अधुना प्राप्तकालं श्रीतोदनं कियताम्'। तत्र क्र्रकरम्त्रो दृशा कृतः, शाके लिम्बुकं च भोजनीयम् । तदनु द्रम्मसहस्र (३०००) वासणे प्रक्षिप्य एका त्रिपट्टदुक्ला मिह्निर्या । भव्यरीत्या चिन्तनीयम् । मन्नी तां सामग्रीं कृत्वा वाटिकायां गतस्तत्र कीडितुं प्रवृत्तः । इतो नागडनामा भट्टपुत्रसिदिन-लङ्घनावसाने—अद्य यशोवीरं वन्दी करिष्ये वा मे चिन्तितं भोजनं प्रयच्छिति—इति विचिन्त्य मित्रणं वाटिकायां मत्वा विवेश । मन्त्रिणा दृष्टमात्र एव उक्तः—सत्वरमेत्य भुज्यताम् । भोजने दिशिते सुस्थीभूतः । मुलं प्रक्षाल्य 30 भोक्तमुपविष्टः।अनन्तरं मन्त्रिणा वस्नाणि द्रम्माश्र दिश्तिः।तेनोक्तम्—मन्तिन् । मनाभिप्रायः त्वया कयं ज्ञातः । अद्य मे मनसि इत्यासीत्—यदेवं ददाति वा मारयामि । मन्त्रिणोक्तम्—किमत्र ज्ञानम् । नागडेनोक्तम्—मन्तिन् । मया तवोपकारः कथं कर्तु शक्यः। परं तथापि मे दैवः किमपि ददाति, त्वयाऽऽत्मानं ज्ञाप्यम् । एवमाख्याय प्रवृत्त स्वरं

गतः। क्रमेण नागडस्य श्रीपत्तने श्रीकरणं जातं राज्ञः श्रीवीसरुदेवस्य। पश्चात् राउल-उदयसिंहराजादेशे समायाते मृं(वी १) सलदेवस्य किंकिकमप्पय। नागडाग्रे त्रा(झ १) गर्डं च कथयति। राज्ञा रुप्टेन ससैन्यो मन्त्री नागडः प्रहितः। सुन्दरसरोपकण्ठे कटकं स्थितम्। विग्रहः प्रारव्धः। टङ्कशाला पतितुमारव्धा। पण्मासान्ते दण्डेन भव्यं विधाय म.....स्थाने गतः। उदयसिंहस्तु तथैव जल्पति। नागडो नृपाग्रे प्रतिज्ञामाधाय जावालिपुरग्रहणे प्रौढकटकेन विश्वतः। क्रमेण स्वर्णगिरि[दुर्ग]पृष्टौ वाघरा.....कटकमावासितम्। राउलेनोपरि स्थितेन सर्वं दृष्ट्याऽवलोक्य, यशोवीरं प्रत्युक्तम्-मन्त्रिन् । सर्वस्वमपि दत्त्वा नागडं पश्चा.....वर्त्तय। जीवतां सर्वं भविष्यति। मन्त्री मध्या-ह्ववेलायां भव्यार्थे चलितः। इतः प्रतोल्यग्रे खेजडीतरोस्तले गोगामठे एकश्चारणश्चिटतोऽस्ति तेन.....मन्त्रणं प्रति.....

(१२७) [दूसा]...जग्र (१) वीर जड आव्यां दल वाघराइं। मोटी हूंती हीर देसह वासेवा तणी।।

गि मित्रणा चिन्तितम्—वलमानोऽस्य कर्णावपाकरिष्ये.....गतः। राणकः प्रतीहारेण विज्ञप्तः—देव! मारुकस्य प्रधानः समागतोऽस्ति। मध्ये निवेश्यत। ततः प्रणम्य मत्री आसीनः। राणकेनोक्तम्—भो मित्रिन्! तव ठकुरः एतावन्ति दिनानि विरूपवक्ता आसीत्। अधुना मय्यागते किं करोति १। देव! प्राघूर्णकार्थे सज्जीभूय स्थितो-ऽस्ति। सत्वरमागच्छत। मित्रिन्! अहं नागडः। यदि दुर्गं पृथग् पृथग् मङ्क्त्वा न क्षमामि। मित्रिणोक्तम्—सत्वरमागन्तव्यम्। इत्युक्त्वा मन्त्री निःसृत्य गतः। राणकेनोक्तम्—रे! क एप मन्त्री १। देव! यशोवीरः। तिर्हं सत्वर
गामन्तव्यम्। इत्युक्त्वा मन्त्री निःसृत्य गतः। राणकेनोक्तम्—मित्रन्! माम्रुपलक्षयसि १। देव! त्वां को न वेत्ति १। राणक-स्त्वाह—यस्त्वया अम्रुकवर्षे वाटिकान्तः क्रुक्तरम्वं मोजितस्तम् पलक्षयसि १। देव! क्यं नोपलक्षे। मित्रिन्! स अहम्। तस्योपगा(का)रस्थैकवेलं भव्यं त्वया लभ्यम्। लोहटिकं विना यामि। इदं तव मानम्, परं स्वसामी विरूपाणि वदिनवार्यः। मन्त्री परिधापितः। मन्त्रिणोक्तम्—यद्येवं तिर्हं अधुनैव प्रयाणं कुरु। यथा मे स्वामी प्रत्येति। तदैव प्रयाणं कृत्वा कटकं पश्चाद्रतम्। मन्त्री ईप्या विहरम् चारणे, यावक्तत्रवायातः, तावक्तेनैव तत्रस्थेनोक्तम्—

(१२८) जिम केतू हरि आज तिम जइ लंकां हुत दुसाजुत्र । नांऊं बूडत राज राणाही[व] रावण तणउं॥

मन्त्री परिधापनिकां तसौ दत्त्वा पुरे प्रविष्टः। राउलेन सम्भूपितः।

(१३०) यत्त्वयोपार्जितं वित्तं यद्गोवीर! प्रतिष्ठया । तिल्लक्षग्रणितां नीतं यद्गो वीरप्रतिष्ठया ॥ तदनु आलङ्कारिकैः श्रीमाणिक्यस्रिभिः—

(१३२) सुन्दरसरि असुरांह [दलि] जलु पीघउं वयणेहिं। उदयनरिंदिहिं कड्डिउं तह नारीनयणेहिं॥

तदनु परिभवमसहमानः श्रीजलालदीनसुरत्राणः सं० १३१० वर्षे माघमासस्य पश्चम्यां खयमागत्य पर्वतस्य स्वर्णागरेः शृङ्गे आवासान् दत्त्वा स्थितः । प्रत्यहं ढोये (१) जायमाने सुरङ्गाखानकैः खण्डिः पातयितुमारन्धा ।

20

25

पतिता कर्करकोष्ठके । स्थानान्तरस्थैः पत्तिभिधीन्यं रन्धमानैः स्थाल्युच्छलात् परिज्ञाता । प्रभोरग्रे निवेदितम् । राउलेन वापडो राजपुत्रो भव्यं कर्त्तुं नियुक्तः । तेन सुरत्राणं नत्वा उक्तम्—देव ! दण्डं कुरु । सुरत्राणेन लक्ष ३६ द्रम्माणां याचिता । वापडेनोक्तम्—वयं द्रम्मान् न जानीमः । पाइ(रू)थकान् दास्यामः । पार्श्वस्थिरुक्तम्—देव ! मान्यताम् । एकसिन् पारूथकेऽष्टौ द्रम्मा भवन्ति । सुरत्राणेन मानितम् । तेनोक्तम्—देव ! प्रसीदस्य, करं देहि । करो दत्तः । इतश्च वर्द्धापनिकेनोक्तम्—देव ! सुरङ्गा पातिता । वापडेनोक्तम्—देव ! त्वं महाराजस्तव जिह्वा 5 अन्यथा न स्यात् करश्च [दत्तः] । सुरत्राणेनोक्तम्—तव बुद्धिश्रेष्ठाय मास्मै (१) भैपीत् । दण्डमानय । तदन्तु राउलेन्नोक्तम्—सुताः पश्च मे । कं गृहाण १ । सुरत्राणेनोक्तम्—यशोवीरसुतमर्पय । राउलेन मत्रिपती अभ्यर्थिता । तया स्यसुतस्त्वेकोऽपि समर्पितः । कटकमुत्थितम् । तदन्तु देवद्विजादीनां सर्वस्वमात्तम् । दण्डादुद्धरितवित्तेन तेन श्रीस्वर्णगिरौ दुर्गः कारितः । राउलेन यशोवीरपुत्रस्य कर्मसिंहस्य गृहागतस्य रामशयनं प्रसादे दत्तम् ॥ इति राउलउदयसीह-मत्रियशोवीरप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे यशोवीरस्योल्लेखो यथा-

(१३३) ओ आगिलड जु होइ पइं जसवीर न सिक्लियड । महि मंडलि सहु कोइ बावन्नइ बृझइ बहु ॥

चारणदानमदातुर्मित्रिणः पुरश्चारणेन पठितम् । तसौ घोटको दत्तः ।

(१३४) संतः समंतादिष तावकीनं यशो यशोवीर ! तव स्तुवंति । जाने जगत्सज्जनलज्जमानः प्रविश्य कोणे त्वमतः स्थितोऽसि ॥ इति पठिताय भट्टाय मित्रयशोवीरेण कोणाग्रामस्योद्घाहितं दत्तम् ॥

३३. विमलवसतिकाप्रबन्धः (B.)

§ ११२) अथ विमलवसतिकाप्रवन्धः—

- (१३५) श्रीविक्रमादिखन्दपाद्व्यतीतेऽष्टाशीतियाते शरदां सहस्रे। श्रीआदिदेवं शिखरेऽर्वुदस्य निवेशितं श्रीविमलेन वन्दे॥
- (१३६) भीमदेवस्य रूपस्य सेवाममन्यमानः स तु व(घ)न्धुराजः । धाराधिपं भोजरूपं प्रपेदे स्ववंद्यसेवा हि रूणां विपत्सु ॥
- (१३७) विद्याधिच्याधिसंहर्जी मातेव प्रणताङ्गिषु । श्रीपुञ्जराजतनया श्रीमाता साऽस्तु वः श्रिये ॥
- (१३८) मेरणा मनुजदुर्लभेन किं किं हिमैकनिधिना हिमाद्रिणा । साहिना मलयपर्वतेन किं नन्दिवर्द्धनसमो न भूधरः॥
- (१३९) भूभृतां निजगृहेषु तिष्ठतां वाञ्छितं यदचिरान्न सिद्ध्यति । नन्दिवर्द्धनविटङ्कवासिनो हेलयैव शवरीजनस्य तत् ॥

§ ११३) अथ श्रीमातादेच्या अम्बाया दैवयोगान्मैत्री जाता । अम्बा गिरनाराधिष्ठात्री । अन्तरान्तरा श्रीत्या- ३० ऽर्बुदे समस्येति । श्रीमाता तु तत्र न याति जैनच्यन्तरभयेन । एकदा श्रीमातयोक्तम्-भगिनि ! अत्रैव यदि स्थासि तदावयोः श्रीतिर्निरन्तरा स्थात् । अम्बयोक्तम्-जिनभ्रवनं विना स्थानं न । तदत्र नास्ति । श्रीमातयो-

क्तम्-द्रव्ययुतां भूमिमप्पियिष्यामि । तत्र जिनायतनं कार्यम् । इह वक्कलचम्पकौ स्तः । तयोस्तले द्रम्मलक्ष २७ सहितं निधानमस्ति । अम्बयाऽचिन्ति-कः प्रासादं कारयिष्यति । इतश्चन्द्रावतीं परित्यज्य धंधूपरमारः श्रीमीम-देवेन समं विरोधात धारापुरीं गतः । पश्चान्नृपेणाश्वसहस्रेद्वीदश्मिर्युतो विमलदण्डनायकश्छेत्रं दत्त्वा प्रहित-अन्द्रावत्याम् ।

प्राग्वाटवंशाभरणं वभूव रतं प्रधानं विमलाभिधानम्। यत्तेजसा दुस्समयान्धकारमग्नोऽपि धर्मः सहसाऽऽविरासीत्॥

अथ देच्यम्वा प्रासादार्थे प्रत्यक्षीभूय विमलदण्डपतिं जगाद-

अथैकदा तं निशि दण्डनायकं समादिदेश प्रयता किलाम्बिका। इहाचछे त्वं कुरु सद्म सुन्दरं युगादिभर्त्तुर्निरुपाधिसंश्रयः॥

10 दण्डपतिना उक्तम्-भूमिः क १। देव्याह-श्रीमातयाऽर्पितमस्ति । दण्डपेनोपरि गत्वा स्थानं निरूपितम् । कुङ्कम-गोमय.....दिन्यपुष्पदर्शनेन च । पूर्वं धारायां धंधूपरमारपार्श्वे मनुजमप्रैपीत् । भवतामनुमतिर्भवति तदा जैनं प्रासादं कारयामि । भवतां भव्यं करिष्यामि । पुनरत्रानयिष्यामि । तेन कथापितम्-वयमत्र गोष्टिकाः । इतो देवी स्थानं दर्शियत्वा रैवतं गता। कर्मस्थायो यावान् दिने भवति तावान् रात्रौ पति । कर्मस्थायः स्थितः। तत्र प्रासादः ग्रुभग्रहूर्ते प्रारव्धः। पण्मासान्ते देवी समाययौ । प्रासादं स्थितं दृष्टा देवी जगौ-िकमिद्मु १। 25 तेनोक्तम्-देवी पादमन्यत्रावधारिता। कथं निष्पद्यते १। देव्या उक्तम्-इह देवकुल्यां वालीनाहोऽस्ति। तस्य भूरियम्। अतः स पातयति। प्रातरुपवासं कृत्वा प्जोपचारमादाय तं ध्यायन्, वालीनाहाग्रे उपविश । स श्रकटीभविष्यति । मद्यं मांसं याचियष्यति । भवता नैवेद्यं माननीयम् । यदि न मन्यते तदा खङ्गं कर्पयित्वा चाच्यम्-याहि नो वा मारयिष्यामि । अहं खङ्गेऽवतरिष्यामि।तथाकृते स आराटिं कृत्वा प्रणष्टः।तत्र देवक्कल्यां क्षेत्रपालः स्थापितः । तत्पार्श्वेऽम्बाया देवकुलिका कारिता । दण्डपतिदेवतावसरे श्रीआदिनाथविम्वमस्ति । अतो 20 युगादिदेवप्रासादः कारितः। चतुर्ग्गच्छोद्भवैश्रतुर्भिराचार्यैः प्रतिष्ठा कृता। आदौ शैलमयं विम्वम्। तदनु पित्त-लमयं भारा १३ तुलामाश्रित्य । पूर्वं ठक्करनीतस्तत्सुतो लहरस्तत्सुतो मन्त्रीनेह(ढ)स्तेन दीक्षा गृहीता । विमलः श्रीभीमेन गजं छत्रं च दत्त्वा नृपतिः कृतः। तत्स्रतेन चाहिलेन रङ्गमण्डपः कारितः। एवं प्रासादे निष्पन्ने केनापि चारणेनोक्तम्-

(१४२) मंडी मुरकी रइ करउ छंडउ मंसह ग्गाह। विमलडि खंडुं कहिअउं नष्टउ वालीनाहु॥ 25

।। इति विमलवसहीप्रबन्धः ॥

३४. अथ स्त्रणिगवसही-प्रबन्धः (P. Br.)

§ ११४) घवलकपुरे मत्री आसराजः । सहचरी क्रमारदेवी । पुत्र ४–मन्त्रि ॡणिग १, मालदे २, वस्तुपाल ३, तेजपालाख्याः ४। परं निर्द्रच्याः । एकदा ऌिणगो मन्दो जातः । अन्त्यावस्थायां वस्तुपालेनोक्तम्-वन्धो ! किमपि द्रव्यव्ययं याचख । तेनोक्तम्-नवकारलक्षाः ३ गुणनीयाः । अपरं किमपि दृश्यते तर्हि याच्यते । तथापि 30 किश्चिद्याचख । ऌणिगेनोक्तम्-अत्र काचिदाबाधा न । परमहमर्बुदाद्रौ देवान्नन्तुं गतः । ममेति मनोरथ आसीत् । यद्यत्र विमलवसद्यां आलकेऽपि विम्वं लघ्यपि करिष्यामि । यदि काऽपि शक्तिर्भवति तदा कार्यम् । अत्र न काऽप्य-चष्टिंभनी । इति वदन्ननश्चनाद्दिवं ययौ । पश्चाद् व्यापारे जातेऽर्बुदे श्रीमाताऽचोटीपार्श्वाद्विमलवसहिकोपरि मूल्येन भूर्गृहीता द्रम्मैराच्छाद्य । एवं द्रम्ममूडा ३६ तीरिताः । तैरुक्तम्-अतः परं पूर्णम् । तव द्रव्यसामग्री वह्वी ।

त्वं पर्वतमि गृह्णासि । १२८६ वर्षे शोभनदेवद्वत्रधारमाहूय प्रासादं प्रारेर्मे । १२९२ ध्वजारोपो जातः । तत्र इन्यकोटीद्वादश, लक्ष ५३ एवं द्रव्यसंख्या । छाणिगवसहीति नाम कृतम् । श्रीनेमिनाथप्रतिमा स्थापिता ।

(१४३) विमलदण्डपतिर्विमलाचलाधिपजिनालयमारचयत्पुरा । इह गिरावसकौ तु स कौतुकी व्यधत्त रैवतदेवतमन्दिरम्॥

तत्र प्रासादे मित्रणा यशोवीरेण त्रयोदश दोपा उक्ताः । आदौ विलासमण्डपो न युक्तः १, परं स्तम्मेषु 5 विम्त्रानि २, सिंहमध्ये २, हरिणगवेक्षण ४, द्वारे गजशालापरं पाश्रात्ये ५, तपोधना आकाशे ६, सोपानानि हस्त्रानि ७, स्त्रधारमातुञ्छत्रं ८, सुख्यद्वारं पुरवाह्ये ९, तथा घण्टा महत्तरा १०; त्रयं तन्त्रलोकान्ज्ञातन्त्रम् ॥

॥ इति छणिगवसहीप्रवन्धः*॥

३५. अथ वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः (B. Br. P. Ps.)

(१४४) म्श्रीमत्प्राग्वादवंदोऽणहिलपुरभुवश्चण्डपस्याङ्गजन्मा जज्ञे चण्डप्रसादः सदनमुरुधियामङ्गभूस्तस्य सोमः। आद्याराजोऽस्य सूनुः किल नवममृतं कालक्क्टोपभुक्ति-च्छेकश्रीकण्ठकण्ठस्थलविपजमलच्छेदकं यद्यद्योऽभूत्॥

· § ११५) आसराजप्रवन्धाद् वस्तुपाल-तेजःपालोत्पत्तिर्ज्ञेया ।.....[अत्र सूचित आसराजप्रवन्धः B सञ्ज्ञ-कसङ्ग्रहस्य खण्डितत्वात् तत्र न लब्धः परं BR सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे स उपलभ्यते । तत एवात्र समवतार्यते । यथा-]15

\$ ११६) अथ आसराजप्रवन्धो यथा—्रीअणिहिल्लपत्तने मलधारिश्रीदेवप्रम (Ps. हेमप्रम) स्र्रिच्याख्याने गादीयां १४ शत उपविष्टेषु, तस्मिन् च्याख्याने साधुमदनपालपुत्री (Ps. 'आभूनिन्दिनी'; तथा अत्रैवादर्शेऽन्यत्र- 'तिहुअणपालपुत्री' इति लिखितम् ।) कुमारदेवी वालविधवा च्याख्याने उपविष्टासीत्। नियोगी अश्वराजस्तत्रोप- विष्टोऽभूत् । यावद्वाचको वाचयित तावदाचार्यदृष्टिस्तत्र कुमारदेव्यां विश्राम्यति । विद्रथेनाश्वराजेन कारणं

* P सङ्क्षेत्र पुस्तके एप एव प्रवन्धः निम्नलिखितस्वरूपेण प्राप्यते-

'एकदा ल्लिगेऽन्दानं गृह्णति धर्मोब्ययो याचितः—यद्हं अर्धुदाद्दी देवं नन्तुं गतः। तन्नेति मनोरथ आसीत्। यधन्नालके एकं विन्धं स्थापयामि तदा भव्यम्। अतो यदा भवतां पाहति......तदा तत्र किञ्चित्कीर्त्तनं काराप्यम्। पश्चाद्ध्यापारे जाते विमलवसतेरुपरि सूर्पू- ल्येन गृहीता, द्रम्मेराच्छाय। एवं द्राममूडा ३६ ती.......रुक्तम्-अ[तः] परं पूर्णम्। तव द्रव्यसामग्री बह्दी। त्वं पर्वतमिप गृह्णासि। तत्र १२८६ वर्षे द्रोभनदेवं सुत्रधारमाकार्यं प्रासादं प्रारेमे.....सं० १२९२ ध्वजारोपः कृतः।

सङ्कीर्णसोपानमपाच्यगाध्वपृष्ठेऽत्रशाला मुनयश्च घर्मे । स्तम्भेषु विस्वानि च दीर्घपृष्टाः सिंहाग्रगेणा रतिमण्डपाश्च ॥ छत्रं च शीर्पे स्थपतेर्जनन्या गजाधिरूढा निजपूर्वजाश्च । स्तम्भा अतुल्या तनुरक्षरश्च ते द्वादशामी कथिताः कलङ्काः ॥ —मजियशोवीरेणेतानि दूपणानि श्रीअर्श्वद्वासादे कथितानि ।

 \dagger एतत्पद्यं P सङ्ग्रहे नोपलभ्यते ।

‡ पतत्प्रयन्धगतवर्णनं P सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे निम्नगतेन प्रकारेण लिखितं लभ्यते-

'एकदा मलधारिगणाधीशाः श्रीहेमप्रभस्रयो धवलकापुरे चतुर्मासकं स्थिताः। तत्र व्याख्याने सर्वः कोऽप्येति। तत्र दक्करतिहुण-पालपुत्री कुमारादेवी मात्रा सह व्याख्याने आगता। परं विधवा। अथ गुरूणां व्याख्यानान्तरे तरूण्यां विश्रामो दृष्टेः स्थितः। मन्त्री आश-राजो देशनान्ते गुरूनाह—भगवन्! चन्द्रमसोऽङ्गारवृष्टिनं स्थात्, परं प्र्यानां दृष्टिः कुमारादेव्यां किमासीत्?। निर्वन्धेन पृष्टा अवदन्— [Ps. यदेपा विधवा] अस्याः कुक्षावेकादशरलानि सन्ति। पुत्र ४, पुत्री ७; पुत्रद्वयं लोकोत्तरम्—इति श्रुत्वा तिहुणपालसोलगा प्रारव्धा। तेन आवासलेखकवही दत्ता। आसः कृतः। आसंघे जाते तथा पुत्र्या सह प्रीतिरभूत्। मात्रा ज्ञातवृत्त्या वाहिनीमपंथित्वा सपुत्रीकः प्रहितः। समभतेटे गतः। तत्र पुत्रा जाताः। स्त्रिणा—मह्यदेव—वस्तुपाल—तेजपालाः। पुत्र्यः सप्तः।

धर्माविधाने भूवनच्छिद्रपिधाने विभिन्नसन्धाने । सृष्टिकृता नहि सृष्टः प्रतिमृह्यो मृहदेवस्य ॥'

पृष्टम् । पूज्यैरिति भणितम्-अस्याः कुक्षौ पुत्ररत्नद्वयमितशायि विद्यते, यिजनशासनप्रभावकं [स्यात्]। अन्यदाश्व-राजे साधुमदनपालसमीपे उपविष्टे सित तस्य लेखकं न मिलति । व्यवहारिणो लेखकं मेलियत्वा समर्पितमश्व-राजेन । ततस्तस्य द्रम्मौ द्वौ दिनं प्रति ग्रासे कृत्वाऽऽत्मपार्श्वे स्थापितः । पुत्री गृहव्यापारे मुख्या । कदाचिदु-भयोः स्नेहो जातः । मात्रा दृत्तान्तं ज्ञात्वा द्रव्यदश्रसहस्नाणि समर्प्य प्रेपितौ सोहालकनाम नगरम् (Ps. 'मंड-गृलीनगर्या गतः ।' पुनरस्मिन्नेव सङ्ग्रहेऽन्यत्र 'स्तम्भतीर्थे गतः' एतिङ्किखतं लभ्यते)।

आसराजस्य चत्वारः पुत्राः-मन्त्री ॡिणगो १, मछदेवोऽपरः २, वस्तुपालस्तृतीयः ३, चतुर्थस्तेजपालः ४। पुत्र्यः सप्त-साऊ १, भाऊ २, माऊ ३, धनदेवी ४, सोहगा ५, वयज्ञ्का (तेज्ञ्का P_s .) ६, पद्मलदेवी ७। (१४५) श्रीवस्तुलस्य पत्नी लिलतादेवीति विश्चता जगति।

तेजःपालस्य तथाऽनुपमदेवीति सत्कान्ता ॥

10 ॡिणग-मछदेवौ अल्पायुपौ जातौ । क्रमेण आसराजः पुत्राभ्यां सह धवलकमागतः । तत्रावासः कृतः । सताब्रभाविप व्यवसायं कुरुतः । इति आसराजप्रवन्धः ॥

§११७) इतो व्याघपछीयो राणक आनाको भीमेनापमानितो देशसीमिन गतः । परिग्रहेणाकारितो नायाति । राज्यं विनष्टम्, आगत्य किं करोमि । परं पदातिमात्रः सन् ऑलगां करिष्यामि-इति पत्तने समायातः। तत्सुतो ल्णपसानामा मस्रकथरोऽस्ति । *तस्य द्वे कान्ते । वीरम-वीरथवलौ सुतौ । इतो लवणप्रसादेन विरममाता सपुत्रापि त्यक्ता । सा मेहतावास्तव्येन त्रिश्चनसिंहकौडुम्बिकेन धता । लवणप्रसादस्तन्मारणाय तस्य गृहे सन्ध्यायां प्रविष्टः । इतः कौडुम्बिकः कान्तया वैकालिकायोपविश्चितः । तेनोक्तम्-वीरमः कः १ । तया प्रोक्तम्-कापि रन्तुं गतः । तेनोक्तम्-आकारयत, तं विना नाहं भोक्ष्ये । तया निर्वन्धादुक्तोऽपि न विश्चिति । इतो लवणप्रसादेन चिन्तितम्-अनेन मम कान्ता धता, परं मे पुत्रेण सह वाढं स्नेहवानसौ । अतः कथं हन्यते । इति विचिन्त्य प्रकटो जातः । तेनाभ्यर्थितः कस्त्वम् । सभावे उक्ते तथोर्मिथः प्रीतिर्जाता । स लवणप्रसादस्तेन विश्वितः । वसादि दन्ता प्रहितः । इतः स क्रमेण भीमदेवेन राणकः कृतः (B. Ps. प्रधानः कृतः राणिमा दत्ता) स राज्यचिन्तां कर्तुं प्रवृत्तः । [B. Ps. नृपस्तु स्वयं विकलः । अथ लवणप्रसादेन] राज्य-मात्मायत्तं कृतम् । इतो राज्ञि दिवं गते स एवाधिपो जातः । वीरमः स्वसमीपमानीतः । वीरधवलस्य कुमारश्चतौ धवलकं दत्तम् । तस्य प्रिया जइतलदेवी । [Ps. पुत्रसेहेन लवणप्रसादो धवलकपुरे धनं तिष्ठति । पत्तने अमात्याः कर्णवारां कुर्वन्ति ।]

25 § ११८) ंइतो वस्तुपाल—तेजःपाली हट्टं मण्डयतः। तेजःपालस्य राणकेन सह प्रीतिर्जाता। राजकुले वस्नाणि प्रयति । अथ एकदा देवपत्तने ठ० धरणिगस्तेजःपालस्य श्वश्चरोऽनुपमदेवीजनकः। तेन स्वपुत्री अनुपमदेवी श्वश्चरकुले प्रहिता। तया गृहमागतया सर्वं वस्तु ज्येष्ठप्रभृतिकुटुम्बस्य दर्शितम्। तत्र कपूरस्य सर्वोऽपि शृङ्गारः। वस्तुपालस्तेजःपालमाह—आवां वणिङ्मात्रौ। एप ईश्वराणां स्वामिनां वा योग्यः शृङ्गारः। यदि वध्विचारे आयाति वदा राणकपत्यै दीयते । अअनुपमयोक्तम्—स्वीतनुर्भत्रीयत्ता, आभरणानां तु का कथा। ततो राणकं निमच्य

^{*} एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदर्शे नास्ति । ‡ एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदर्शे परित्यक्तम् । 1 B तदा देव्ये जयतलदेव्ये उपायनीकियते । क्ष एतदन्तर्गतपाठस्थाने B आदर्शे एतादशः पाठः प्राप्यते—"अनुपमदेव्योक्तम्-स्रीणां शरीरं भर्नुरायक्तमाभरणानां तु का कथा ।
विशेषतो यच्छध्वम् । वस्तुपालः प्राह—यदाणकं भोजनाय सपत्नीकं निमंत्र्य भोजय । तथा कर्तुं गते वस्तुपालो हृष्टे गतः । राणकः प्राप्तः ।
भोजितश्च । आभरणे दर्शिते देवी प्राह—स्वामिन् ! इदमाभरणं अद्ययावत् न दृष्टं न श्रुतम् । तदा गृह्णामि यदि मुद्रां तेजःपाले गृह्णाति । भवत्वेवं मुमापीप्टमिदम् । तेजःपालेनोक्तम्—वृद्धआतरं पृच्छामि । प्रष्टुं गतोऽद्दे । आत्रोक्तम्—किं मुद्रया । यदि ददात्येव तदेति वक्तव्यम्—
यद्दिप्पां कारयत । यत्तत्र भवति तद्र्पयित्वा शेपमादाय वयं मोच्याः । एवमस्तु । इत्युक्त्वा मुद्रा समर्पिता । व्यापारो जातः । तद्नु कूर्चालसरस्वतीत्येवंविधानि विरुद्गनि प्रथमानैर्वाह्यणेर्मक्षिकाजालमिव विष्टतः । अनन्तवन्धनं कृतम् । एकदा कुलगुरवः श्रीविजयसेनस्र्यो वन्दा-

भोजयित्वा तहत्तम् । देव्ये दातुं राणो लग्नः । तयोक्तम्-एतयोः खग्रुद्रा देया । ततो वृद्धश्रातरं पृष्ट्वा गृहटीपां दर्शयित्वा ग्रुद्रा गृहीता ।

§११९) तदनु वस्तुपालो [Ps. क्र्चालसरस्वती-इत्येवविधानि विरुदानि पठमानै:] व्राह्मणैर्न्याप्तः । [Ps. अनन्तवन्धनं कृतम् ।] एकदा कुलगुरुश्रीविजयसेनस्त्रयो वन्दापयितुमागताः । कुमारदेन्या नमस्कृताः । मन्त्री नागतः । मन्त्रिणं वन्दापयितुं गृहे गताः । मन्त्री द्विजावृतो गवाक्षस्थो दृष्टः । तेन नाभ्युत्थिताः, ते व्याघुटिताः । मात्रा प्रोक्तम्-मन्त्रिन् । ते अतीव ईदृशी विग्रता यत्कुलगुरवोऽपि आगता न ज्ञाताः । ततो मन्त्री धावितः । अभ्यर्थ्य नीताः । तत्र तेरुक्तम्-आश्रराजतन्त्रस्य गेहं न किन्तु मद्यपगृहम् । किमिति [Ps. B. गुरुभिरुक्तम्-वयं ठक्कुरचण्डप्रसाद-सोम-आसराज-तन्द्रवयस कुमारदेवीक्रुक्षीसरोजराजहंसस्य श्रीवस्तु-पालस्य गृहं मत्वा समायाताः । परमग्रे मद्यपगृहं दृष्टम् । मन्त्रिणोक्तम्-एकवेलं मध्ये पादाववधारयत । स्वकरे-णासने दत्ते उपवेशिताः । सप्रश्रयमुक्तम्-प्रभो । मे गृहे श्रीमद्गुरुभिः किमयुक्तं दृष्टम् । एतच्छृणुत-] 10

(१४६) जीवादिशेति पुनरुक्तमुदीरयन्तः क्वर्वन्ति दास्यमपि वण्ठजनोचितं ये । तेष्वेव यद्गुरुधियं गुरवोः विदध्युः सोऽयं विभूतिमदपानभवो विकारः ॥

भगवन् ! एवं भवति यदि सारा न क्रियते । शिक्षां यच्छत । [Ps. आदावनन्तमपाक्क । तिसन् दूरीकृते, तव कुले कोऽपि माहेश्वरो न जातः । अतः श्रावकत्वमङ्गीक्करः] आदावनन्तोऽपाकृतः । ततः श्रावकत्वं जातम् । पूजानिश्रयमकार्पात् ।

- (१४७) *सोऽयं कुमारदेवीकुक्षिसरःसरसिजं श्रियः सदनम्। श्रीवस्तुपसचिवोऽजनि तनयस्तस्य जनितनयः॥
- (१४८) विश्वेता-विकेम-विद्या-विद्रंधता-वित्तं-वितर्रण-विवेकैः । यः सप्तभिविकारेः कलितोऽपि वभार न विकारम्॥

§१२०) अथ देशस्तोको वीरधवलस व्ययो वहुः। इति मत्वा तेजःपालः पत्तनोपिर गन्तुकामं राणकं 20 निपिध्य खयं गतः। ॥तत्र सभायां श्रीत्रणप्रसादेन कुशलं पृष्टम्—कुमारः किमिति नागतः १। देव । श्रीवीरध- वलेन देवगिरेरुपिर वीटकं याचितमस्ति। कथम् १—व्ययो वहुः। अतो देवगिरेरुपिर कटकार्थी। तं विना व्ययो न सम्पद्यते। राणकेनोक्तम्—यदि तत्र गतः [हतः] स, तिहं व्ययं कः कर्ता १। केन दत्तेन तिष्ठति १—देव ! स्तम्भतीर्थेन। व्यापारिणः पृष्टाः—तस्य किमायपदम् १। तैरुक्तम्—द्रम्माणां सहस्र ३०, वाहण (७ शत १) ३२। राणकेनोक्तम्—यदि तेन पुरेण दत्तेन धनी भवति तिहं दत्तम् +। महाप्रसादमुक्त्वा तेजःपालो धवलकमागतः। 25 राज्ञा पृष्टम्—किश्चिद्धव्यम् १। सम्भतीर्थम्। किं तेन १—मया तव लङ्का दत्ता, परं न लाद्यते न पीयते। सर्व भवष्यति—इत्युक्त्वा मिश्चणं वस्तुपालमश्चवारैः पश्चाशद्भिः (५०), पत्तिभिः शतद्वयेन (२००) स्तम्भ-

पितृतायाताः। मं० कुमारदेव्या नमस्कृताः। उक्तम्-मन्नी नाययो १। मन्निणं वन्दापितितुं गृहे पाद्मवधारयत। गुरवस्त्वावासं प्राप्ताः। उपिरतनभूमो गताः। तत्र गवाक्षस्थो मन्नी द्विजैवेष्टितो दृष्टः। तेनाप्यनम्युत्थिताः। पश्चाद्वित्ताः। अय मान्नोपर्यागत्य प्राह्—मन्निन् ! भव्यमिदम्। एवं तेऽञ्जनं यद् गुरूनप्यागतान्नोपलक्षयसि। मन्निणा जनं प्रहित्य स्थापिताः। गवाक्षादुत्तीर्यं गतो नत्वावादीत्-प्रभो! कथं पद्मवधारिताः, व्यावृत्ताश्च। गुरुमिरुक्तम्-वयं उक्तुर चंडप-चंडप्रसाद-सोम-आशराजतन्द्ववस्य कुमारदेवीकुक्षिसरोराजहंसस्य श्रीवस्तुपालस्यावासं मत्वा समायाताः। परमग्ने मद्यपगृहं दृष्टम्। मन्निणोक्तम्-एकवेलं मध्ये पाद्मवधारयत। स्वकरेणासने दत्ते उपवेशिताः। सप्रश्र-यमुक्तम्-मद्गृहे श्रीमद्गुरुभिः किमयुक्तं दृष्टम् । एतच्लृणुत—"जीवादिशेति०।"

 $^{1\} B$ पतिनो । $2\ B$ अपराधः । $3\ B$ आदौ देवपूजानिश्चयमकार्पीत् । $4\ B$ तदनु क्रमेण वतमूलो धर्मश्च । B *आदशैं _ _ पूप छोको नास्ति । \P एतत्समात्रं \S १२०) प्रकरणं Ps. आदशैं परित्यक्तमस्ति । \P B राजसभायां गतेन राणको नमस्कृतः । राणकेन कुशलप्रश्नपूर्वकमुक्तम्—वीरधवलः किमिति नाययौ ? । # B यदि स्तम्भतीर्थेन ऋदिमान् भवति तदा तदस्तु ।

तीर्थं [प्रति] प्राहिणोत् । मन्नी तत्र गतः । नियोगिभिरुक्तम्-आदौ सईदगृहे गम्यते, तदनु उत्तारके । मन्नी अनाकर्ण्य स्वोत्तारके गतः । तदनु सईदोऽपि मिलितुमागतः । मन्त्रिणं न[त्वो]पविष्टः । मन्त्रिणा तादक् सम्भापणं न कृतं [परं] स्तोकं गौरवं कृतम् । यतः-

(१४९) *नयणिहिं रोसु निवारि वयणिहिं वरिसइ अमिअ रसु। तिल दोरच संचारि करि कांई जन वीसरइ॥

इतो द्वितीयदिने मन्त्रिणा सईदो व्याहृतः । जलमण्डपिका द्रम्माणां लक्षेस्त्रिभिर्याच्यते । सईदेनोक्तम्-अर्पय-तान्यस मया त्यक्ता । द्वितीयदिने उक्तम्-स्थलमण्डिपका द्रम्माणां लक्षपश्चकेन याच्यते । तेनोक्तम्-ददत । साऽपि त्यक्ता । अपरेष्वपि व्यापारेषु खमनुष्यान् मुमोच । इतः सईदेन खमित्रं भृगुपुराधिपतिः सण्डेराजः शङ्खल (B खंडेराजः सांखलज) आकारितः। स जलमार्गेणाश्वसहस्र २, मनुष्यसहस्र ५ समानीय समुद्रतटे 10 समुत्तीर्णः । इतः सईदेन मन्त्री च्याहृतः । शङ्काः समायातोऽस्ति, किश्चिद्त्त्वा प्रेष्यते । मन्त्रिणोक्तम्-असाकं द्रव्यं न हि । त्वद्वहेऽस्तिः, त्वं देहि । मदीये युद्धमेव । तर्हि चलत, यथा युध्यते । मत्रिणोक्तम्-त्वं स्वपरिकरेण वर्ज, वयं तु स्वपरिकरेण यास्यामः । मन्त्री अश्ववार ५० मनुष्यज्ञतद्वयेन वहिर्निर्गतः । वलद्वयं वहिर्निर्गतम् । इतो मित्रणा राजपुत्रा व्याहृताः । कः पूर्वमुत्थापनिकां विधास्यति ? । तदनु चालुक्येन (B चौलुक्यवंशजेन) भ्रवन-पालेन वीटकं याचितम्। मया शङ्को इतः। केनाप्युक्तम्-मृतस्य किं प्रासादं करिष्यति मन्त्री १। स किश्चि-15 तक्षुव्धः । मन्त्रिणोक्तम्-यदि ते विरूपं भवति, तदा तव मानुपाणि निर्वाहियण्ये प्रासादं च कारियण्ये । ततस्ते-नाश्चीत्थापितः-रे! यः शङ्काः स मे पुरो भवतु । तदनु एकेनाश्ववारेणोक्तम्-अहं शङ्काः । स भक्लेन हत्वा पातितः । अपरेणोक्तम्-सोऽपि पातितः । एवं पण्मारिताः । इतः शङ्खशरीरे गत्वोक्तम्-अहो मया ज्ञातम् । भृगुपुराधिपः शङ्ख एक एवं । परं समुद्रस्य तीरभावाद्वहवः । अहं हत्वा हत्वा श्रान्तोऽस्मि । ततः पत्तिभिस्तुरङ्गं हत्वा पातितः । शङ्खेन चिन्तितम्-मम पण्मारिताः, अस्य त्वेकः । फलं न किमपि विमृश्य निष्टतः । सईदेनोक्तम्-यदपि तदपि 20 दत्त्वा प्रहीयते । मित्रणोक्तम्-त्वयाऽऽनीतस्त्वमेव देहि । इत्युक्ते स प्रहितः खस्थानम् । मित्रणा भ्रवनपालस ऊर्द्वदेहिकं कृत्वा, भ्रवनपालेश्वरप्रासादस्तिनिर्मणं कारितः। इतो मित्रणा तेजःपालपार्श्वात् अश्वशतद्वयम्, पदातिशतपश्चकम्, सौख्यासनमेकं चानायितम्। मित्रणा पुरान्तर्वार्ता कृता—यद्राणकः श्रीवीरधवल एति। इति सम्मुखो निःसृतः। सईदोऽपि वहुना परिवारेण निःसृतः। आच्छादितं सुखासनम्, परं राणको न दृष्टः। उत्तारके गतो दर्शनं दास्पति । तत्रापि दर्शनं न लब्धम् । ततः सईदेन भीतेन पुनः शङ्कः समाहृतः । यद् युद्ध-25 सर्जिर्भृत्वा समागम्यम् । अश्व सहस्र २, मनुष्यसहस्र १० दशकेन समाययौ । समुद्रादुत्तीर्थ तटे स्थितः । मन्त्री खपरिकरेण चहिनिःसृतः । मन्त्रिणा शङ्खस्य कथापितम् –यत्त्रं चलवानसि, क्षत्रियोऽसि, अहं चिणग्मात्रम् । तृत आवयोर्द्ध-द्रयुद्धमस्तु। सोऽत्यर्थं वलवान् ^{ने}हृष्टः सन् काहले मित्रणा सह प्रहर २ अयाचत् । सैन्ययोस्तटस्थयोर्युद्धं भवति । एवं दिन ३, चतुर्थदिने प्रहरैकसमये मित्रिणा पाश्चात्यस्थेन जानुना लत्तादानात् राह्वः पातितः । तत्कालं शिरक्छेद्मकरोत् । ततः शङ्क्षसैन्यं हतप्रहतं नष्टं लग्नम् । अश्वाद्यादाय मित्रणा मुक्तम् । तसिन् हते सईदो नंष्ट्रा 30 समुद्रमध्ये गतः। मित्रणोक्तम्-त्वां कोऽपि न मारयति। मया शङ्को हतः, त्वं व्यवहारी कथं नष्टः १ तेनोक्तम्-यदि मे जीवेऽभयं ददासि तदाऽऽगच्छामि । मित्रणा तथेति आहूतः। भोजनार्थं गृहे आकारितः। अङ्गमईकैरङ्गानि टालितानि । [तैनोक्तम्-मित्रन् ! किमिदम् ! । मयोक्तम्-न मारियव्यामि जीवन्तं मोक्ष्यामि । ततस्त्वं जीव-न्निस] जीवन्युक्तः खयमेव व्यथया मृतः । इतस्तस्य गृहे मनुष्याणि ग्रुक्तानि । धवलके कथापितम्-यत्सईदो हतस्तस्य सर्वस्यं राजकुले [नीतम्]। परं महान् व्यवहारी तस्य गृहधूलिर्ममास्त । मित्रणोऽग्रे केनाप्युक्तम्-

 $^{^*}$ P आदर्शे एतत्पद्यं नास्ति । † एतदन्तर्गता पंक्तिः P आदर्शे पतिता । † एतदन्तर्गतः पाठः परित्यक्तः P आदर्शे ।

20

25

30

यत्सईदस्य वाहनानि एकदा दोलायितुं प्रवृत्तानि । वस्तुवापनि (१) कृता अग्रे घू (धू १)नि भणित्वा रेणुः किप्ता । गृहगतेषु पृष्टम्-किमायातम् १ । वही लक्ष्मीः । तेनोक्तम्-समुद्रस्य रेणुरिप श्रेष्ठा । वलारिर्भृता । एकदा दीपो रूमझर्या लग्नतस्य तापेन रेणुः खर्णीभृता । स वृत्तान्तो मित्रणा श्रुतः । अतो याचिता । राणकेन दत्ता । गृहे टीपिः कृता । द्रव्यं खर्णं च दुक्लमौक्तिकादि प्रहितं राणकपार्श्वे । मत्री गतः । तत्र कविभिरुक्तम्-

(१५०) मिलिते तद्दलयुगे तिसान् शङ्खे च चूर्णतां याते । श्रीवस्तुपालमन्त्रिन् ! महीमुखे कोऽपि नवरङ्गः॥

§ १२१) एकदा आतरी आलोचे उपविष्टी । द्रव्यं क सात्यते १-एवं विमृध्यतोः मध्यं दिनं जातम् । इतोऽनुपमदेव्या चेटी प्रहिता-उत्सरं जातं देवताऽवसरस्य । तया अलव्धप्रत्युत्तरया स्वयमेत्य जगाद-अद्य कोऽयमालोचः १ । यदि कथनयोग्यो भवति तदा कथयत । इतस्तेजःपाले ईर्ष्यापरे मित्रणोक्तम्-वत्स ! मा क्रुप! इयमित दक्षाऽस्ति, बुद्धिः पृच्छचते ।

(१५१) असकृनमूर्खमण्यन्यं एच्छेत् कार्ये समु[त्न]ते। चपला मनसो वृत्तिवृद्धानिप हि मुद्यति॥

पृष्टम्-असाकं श्रीन्यियेनान्यायेन वा जाता । असाः स्थानमवलोकयावः । भूगता क्रियते जनवेश्मसु वा सुच्यते । िकमिप गृहे नायाति । तया व्याहतम्-यदि मे बुद्धिः क्रियते तदाऽक्षया स्थात् । सर्वः कोऽपि प्रकटां च पश्यति कोऽप्यातुं न पारयति । कथम् १ । प्रासादाः कार्यन्ते । उपि स्थर्णकलशान् दच्या, प्रशस्तौ द्रव्यं 15 सङ्घयते । सर्वः कोऽपि वाचयति, अत्र इयद् द्रव्यं लग्नम्, परं काणवराटकमिप गृहीतुं न पारयति । ज्येष्टेनोक्तम्- इदं वध्याक्यमेवास्तु । भाग्यक्षये आत्मीयाप्यन्या भवति । तद्नु स्नात्वा देवताऽवसरमाधाय, भ्रक्तोत्तरं पौप- धागारे गतौ । यद्वरवो वक्ष्यन्ति सैवोपश्चतिर्नः प्रमाणम् । गुरवो नमस्कृताः । तैर्भणितम् ।

(१५२) कोशं विकाशय क्षशेशयसंख्तालिं प्रीतिं कुरुष्व यदयं दिवसस्तवास्ते । दोषोदये निविडराजकरप्रपातध्वान्ते समेष्यति पुनस्तव कः समीपम् ॥

नमस्कृत्योत्थितौ विहिर्निर्गतौ । विमृष्टम्-आवयोरुत्तरकालो न भन्यः । अतो द्रव्यं व्यिषतुं लग्नौ । [Ps. स्थाने स्थाने सत्रागार-प्रासाद-पौपधशालां प्रारेभाते । वर्षमध्ये वार ३ संघार्चा । यति १५०० विहरणम् ।

§ १२२) एकदा मन्त्री सुप्तोत्थितः पाश्चात्ययामिन्यां चिन्तयति-

(१५३) आशाराज इहाजनिष्ट जनको यस्य प्रशस्याविष-र्य.....कुमारदेव्यथ कृती श्रीम.....जः। तेजःपाल इति प्रधाननिवहेष्वेकश्च मन्नीश्वर-

स्तजायानुपमा गुणैरनुपमा प्रतक्षिलक्ष्मीरभूत्॥

(१५४) तेजःपालोऽनुशास्ति प्रवरतरमतिर्वीरराजस्य राज्यं सामग्रीयं समग्रा खजनपरिजनोत्साहसम्पत्तिभिश्च । एवं पुण्यैर्दिनं मे पुनरसमयतः खेदमग्नो जनोऽयं तद्भवीदेशमाप्य स्फ्रारितमतिरसावद्धतं कम्मे कर्त्तम् ॥

इति विचिन्त्य यावद्वारशालायामागत्योपविष्टः, तावद्वारपालेनोक्तम्-मन्त्रिन्! श्रीपत्तनाद्वर्वाशीर्वादकरो नरो दर्शनम[भिलपति] । प्रवेशय । स नरः समेत्य प्रणामपूर्वमाशीर्वादं करेणोद्दे ।
प्रवेशय । स नरः समेत्य प्रणामपूर्वमाशीर्वादं करेणोद्दे ।

(१५५) मन्त्रीश! गुरवस्तुभ्यं खस्ति विस्तारयन्तु ते । योग्यं त्वामेव विज्ञाय यैरिह प्रेषितोऽसम्यहम् ॥

मित्रणा ससम्अमग्रत्थानपूर्वकं करावायोज्य पत्रकं जगृहे । शिरिस निवेश्यावाचयत् । तत्र कुशलप्रश्नपूर्विमिद-

माशीर्वादमवाचयत्-

्राअमुब्मिन् यः काले किञ्चलयति कम्मीद्धततरं०॥

तथा- (१५६) मुनीनां को हेतुर्जरठकठिनत्वब्यपगमे

भवेद्भूषा येषां खजनपरिहारव्यतिकरः।

परं धन्यास्तेषामपि वितन्तते केऽपि मृदुतां

श्चितां शीतांशुर्यो जनयति यतश्चन्द्रद्दयम् ॥

10 महामात्य ११७६ एप संवत्सरोऽतिनीतः (Ps. तीवः)। समयवशेन वर्ष २८ श्रीशत्रुद्धय-गिरनारयोर्वर्त्म केनापि न वाहितम्। [Ps. मत्त्रिपदं विना मण्डलीं वारमेकं गतः नापरः।] तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति। श्रीशत्रुद्धयमाहात्म्यं चैवम्*—

(१५७) अत्रास्ति खस्ति दास्तः क्षितितलतिलको रम्यताजनमभूमि-

र्देशः सम्पन्निवेशस्त्रिभुवनमहितः श्रीसुराष्ट्राभिधानः।

यस्योचैः पश्चिमाम्भोनिधिरपहरते लोलक्लूोलेपाणिः

प्रस्फूर्जेत्फालफेनोल्वणलवणसम्रतारणैर्दछिदोषान् ॥

तत्र तीर्थानि-

15

20

25

(१५८) श्रीशाञ्जलय-रैवताभिधगिरिद्धन्द्वेऽत्र यात्रोत्सवं दानब्रह्मतपःकृपाकृतरितयः सन्मितः सेवते । तीर्थत्वातिशयेन नारकगितं तिर्थग्गतिं च ध्रवं नो कसिन्नपि जन्मिन स्पृशति स प्रध्वस्तद्वुष्कम्मितः ॥

(१५९) फणिपति-मघवाचा यत्र देवाः समेयुर्भरत-सगरमुख्याश्चित्रणः क्षोणिशकाः । निम-विनमिमुखास्ते सर्वविद्याधरेशा दशरथसुत-कुन्तीनन्दनाद्याश्च भूपाः ॥

(१६०) एषु श्रीजयसिंहदेवचूपतिस्तीर्थेषु यात्रां व्यधात्

सिद्धः प्रोद्धरधर्मभूधरशिरःकोटीररलांकुरः।

राजर्षिस्तु कुमारपालविपुलापालः कृपालुः कलौ

कृत्वा सङ्घमिहोपदेशवचसा श्रीहेमसूरिप्रभोः॥

(१६१) सङ्घो वाग्भटदेवेन तथा चक्रेऽत्र मन्त्रिणा । भविष्यतामतीतानामुपमानं यथाऽभवत् ॥

30 तेषु तीर्थेषु दुष्कालवशात्—

(१६२) स्नायूद्धद्वतरङ्गक्कद्वनरता मादिङ्गिकाः स्युर्वेका घूका घर्घरघोरघोषविषमं गायन्ति नीडस्थिताः । सभ्य(द्यः ?)व्याघवितीर्णमांसविघसा स्ट्यन्ति नित्यं शिवाः फेरूणामिह वन्दिनां कलकलः प्रेक्ष्योत्सवः स्यादिति ॥

[‡] एतदन्तर्गताः पंक्तयः Ps आदर्शे न विद्यन्ते । * Ps तीर्थयोर्माहात्म्यं ऋणु ।

15

20

(१६३) ंनियउयरपूरणासा जणणी पुत्तं चएइ विलवंतं । मणुयाणि माणुसेहिं निसायरेहिं व खर्जाति ॥

(१६४) । पल्योपमसहस्रैकं ध्यानास्रक्षमिग्रहात्। दुष्कम्मे क्षीयते मार्गे सागरोपमसंज्ञके ॥ (१६५) । शात्रुक्षये जिने दृष्टे दुर्गतिद्वितयं क्षिपेत्। पल्योपमसहस्रं तु पूजा स्नात्रविधानतः ॥ अत एवंविधानि तीर्थान्यपूजानि यात्रायै यतनीयम् ।

§१२३) तदनु मित्रणाऽभाणि-गुरूणामाकारणं प्रेप्यते । आनायिताः । शुमे मुहूर्ते देवालयः प्रारव्धः । सर्वदेशेषु कुङ्कमपत्र्यः प्रहिताः ।

(१६६) वाहनौषधिपाथेयसहायवृपभादिकम् । यद्यस्य नास्ति तत्तसौ सर्व देयं मया मुदा ॥

[Ps. इति श्रुत्वा महर्द्धयो] लोका यात्राय मिलिताः । इतः कलिर्गूलगर्जितमकरोत्-

(१६७) रे रे वातू छलोकास्यजत निजनिजं सर्वथा धम्मकूलं

कार्य चेजीवितव्यैरिह कलिसुभटः कुद्ध एवासि यसात्।'

-'नित्यं श्रीसङ्घलोकाः कुरुत नवनवं निर्भया धर्ममेष प्राप्तोऽहं वस्तुपालः कलिन्नपहृदये निर्दयं न्यस्य पादम्॥'

(१६८) 'किमिह कलिनरेन्द्रं नैव जानाति सोऽयं यदनुचितमिवोचैर्धर्मकृत्यं तनोति ।' 'अमुमनुपमसत्यं धम्मेकम्मैंककृत्यं कलिकवलनकालं वेत्ति नो वस्तुपालम् ॥'

(१६९) गुरवः परःशतास्ते परःसहस्रश्च साधवः सुधियः । गृहिणस्तु परोलक्षाः सङ्घे श्रीवस्तुपालस्य ॥

जने मिलिते शुभे लग्ने प्रस्थाने जायमाने......कश्चिदाह-

(१७०) कान्ते कान्ते शीव्रमागच्छ शीव्रम्. आएसं मे देहि इत्थिन्हि णाह । कीदग्र रम्यं पश्य देवालयं त्वम् १. धन्नो मंती कारियं जेण एयं ॥

[Ps. इतः सङ्घपूजार्थं पूर्वं देवालयो रथे स्थापितः । उपिर च छत्रत्रयं घृतम् । चामराणां च्यजनमियवाभिः कृतशृङ्काराभिः प्रारच्धम् । कृतशृङ्कारौ घुर्घरमालादिना कौसुम्भवस्थ घृतौ वृपभौ । मार्गणजनैः
प्रारच्धः कीर्तिकोलाहलः । मिलिता मित्रणामनु अश्ववाराणां सहस्राः । प्रारच्धं स्नीजनेन गीतम् । वादितानि
मेर्यादीनि मङ्गलतूर्याणि ।] एवं चलित देवालये दक्षिणदिग्मागे दुर्गा जाता । मित्रणोक्तम्-स्थिरीभवत । 25
तत्रैको मारवः क्षत्रियो मित्रणा पृष्टः—भो एपा किं वक्ति । देव । इयं नृतनगृहे निष्पद्यमाने द्वारशासोपिर
स्थिता मुदिता स्वरं विधने । तत्र सार्द्ध वार घर (Ps. द्वादश घरेण) उपविष्टास्ति । भवतामित्थं १२ ॥ यात्रा
भविष्यन्ति [Ps. एपा प्रथमा तासां मध्ये ।] तदनु वहुस्ररीणामनुमतं सप्तशतानि देवालयानामग्रे चलन्ति ।
[Ps. कुहाडीया ५००, कुदालीया ५०० मार्गसारणाय । शकट ४०००, सुसासन ७००, श्रीकरी १९००,
स्रिणां ३३३, त्रतिनां २२००, क्षपणक ११००, भट्ट ३३००, देवालां ६४, वाहिनी १८०, जैनयाचक ३०
४५०, तुरंगम ४०००, मनुष्य एवं कारह ७०००० एवं सामय्या चचाल ।] परतीर्थिकान् कन्दलं कुर्वाणान्
वारयन्ति । एवं श्रीसङ्घः शत्रञ्जयायो वर्द्वापनिकानि कृत्वोपर्यारुदः । तत्र—

(१७१) ण्हाणं कुंकुमकदमेहि विहिधं कत्थूरिआहिं कयं चंगं अंगविछेवणं विरइआ पुष्केहिं पूआ वरा।

[‡] एपा गाथा Ps. आदर्शे एव उपलभ्यते । † इदं पद्यद्वयं Ps. आदर्शे नास्ति । 1 Ps. ईदरो दुःकाले तीर्या॰ ।

10

रंभाविन्ममलालसेहिं ललनालोएहिं नदं कयं देवेसस्स महाधया सुहमया पदंसुएहिं कया ॥

§तत्र देवविज्ञप्तिः-

(१७२) आस्यं कस्य न वीक्षितं क न कृता सेवा न के वा [स्तु]तास्तृष्णापूरपराहतेन विहिता केषां च नाभ्यर्थना।
तत् त्रातर्विमलाद्रिनन्दनवनीकल्पैककल्पट्टम!
त्वामासाय कदा कदर्थनमिदं भूयोऽपि नाहं सहे॥

मुत्कलापनकाव्यम्-

(१७३) श्रीगर्वोष्मभिरुष्मछेषु धनिनामीष्यानलज्वालया जिह्नालेषु मृगीदशामनुशयाद्भगयितेषु द्विषाम् । वक्षेषु ग्लपितामिमां त्रिजगतीं निस्तन्द्रचन्द्रोदये देव! श्रीविमलादिकेतन! कदा दास्ये त्वदास्ये दशम् ॥

[Ps. एवमारात्रिकं कृत्वा श्रीजिनं मुत्कलाप्य] तले साधर्मिकवात्सल्यं सङ्घपूजादिकं च विधाय रैवतो-परि ततश्रचाल ।

15 §१२४) [Ps. इतः केनापि चरटकेन दुर्गवलात् सङ्घमध्ये चौरिकी कृता। मत्रिणा स प्राकारो रुद्धः। उक्तं च-(१७४) मह वयरियस्स ठाणं विऔं त्ति अवराहकारणं एयं। पायारं परिच्नन्निय संघं संचारहस्सामि॥

इत्यभिधाय दुर्गं चूर्णियत्वाग्रे प्रस्थितः ।] कियद्भिः प्रयाणकैर्जार्णदुर्गं प्राप । जीर्णदुर्गेऽप्टाद्शप्रासादेषु चैत्य-परिपाटीं कृत्वा (Ps. जीर्णदुर्गोपकण्ठे स्वयं वासिते तेजलपुरे आवासान् दन्वा क्रमारदेवीसरिस सात्वा स्वयं 20 कारितश्रीपार्थनाथचैत्ये महिमां विधाय) यावत्पर्वतोपिर चिल्रंतुं सन्नद्धस्तावदेकािकनो वितनः प्रोक्ताः—अत्र वस्त्रपथितींथे पद्याप्रत्यासन्ते मुण्डिके जनं २ प्रति द्रम्माः पश्च २ याचन्ते । तान् भवतां कः प्रदास्ति ? । यथा जानीथ तथा कुरुष्वम् । तैरुक्तम्—मित्रन् ! तवाज्ञा भवति तदा वयं वार्यामः । मित्रणा प्रोक्तम्—मुण्डे केशाः सन्ति । तेऽग्रेऽपि दत्ताः । भवतां किं दबाः ? । तैः सह कल्हो जातः । कुट्टित्वा व्रतिभिः पातिताः । मित्र-25 णोऽग्रे रावां कर्तुमागताः । मित्रणा व्रतिनो हिकताः—कथमेवं कृतम् ? । मित्रन् ! इयतीं भूमिं यावदितिकम्यागताः । देवनमस्कृतिं विना कथं भुज्यते—इति सित्र्वन्त्य चिल्ताः । एभिनिपद्धाः । देवदर्शनोत्कण्ठया कल्येऽपि न भुक्ताः । अत उत्किण्ठताः । परं वुभुक्षिताः । एतेपां किं दबाः । मुन्दरं न कृतम्—यत्प्रथमतोऽप्यमी रुद्धाः । ममाग्रेऽपि वार्ता न कृता । तैरुक्तम्—मित्रन् ! देवस्य एप लागः केनाप्यपाकर्त्तं न शक्यते । मित्रणा प्रोक्तम्—मम भोजनदानावसरो न पुनर्द्रव्यस्य । भट्टान् द्विज्ञान् सर्वानिपि पृथक् पृथक् याचध्वम् । तैरुक्तम्—असाभिः ३० कथं गृहत्वे । त्वयवानुमता यच्छन्ति । मित्रणा वतो व्याहृतम्—सर्वः कोऽपि यच्छत्तु, नाहं वेधि । भट्टाचा छन्तुः—कोऽस्यान् ग्रहीप्यति स कर्ज्वांमवतु । मित्रणा ततो व्याहृतम्—यदि मम भणितं कुरुत, तदा वः कंदलं निर्वाह्यामि । [२ऽ. एकेन ग्रामेण यदि रतिं कुरुत ।] ततस्तेभ्यो जीर्णदुर्गप्रत्यासन्तं ग्रामं वितीर्य पट्टको विदारितः । सर्वः कोऽप्युपरि गत्वा समाधिना देवं वन्दितं लग्नः । तत्र—

[§] एतदन्तर्गतः पाठः Ps. आद्शें त्यक्तः ।

30 ;

- (१७) गम्भीरगेयभरगज्ञिरवो सुवन्नालंकारताररुहविज्ञुलयावयासो।
 दूराउ उन्नययरो सुवि तावहारी संघो घणु व घणदाणमिसेण बुट्टो॥
 मुत्कलापनं काव्यम्-
 - (१७६) स्वामिन्! समुद्रविजयात्मज! विश्वनाथ! न प्रार्थयेऽन्यदिह किन्तु तव प्रसादात्। एते मनोरथमयास्तरवो मदीयास्त्वदर्शनामृतरसैः सफलीभवन्तु॥

तत्र पूजारात्रिकादि कृत्वा मत्री सङ्घेन सह देवपत्तनं गतः । तत्र चन्द्रप्रभ-प्रभासादिषु तीर्थेषु महिमां कृत्वा सोमेश्वराभोगं विधाय धवलकं प्राप्तो मत्री ।

- (१७७) [†]लिखतु लिखतु धाता दुर्लिपिं भालभित्तौ भजतु भजतु सर्वोऽप्युग्रभावं ग्रहो वा। परमयमिह यावद्वस्तुपालः कृपालुर्ने भवति खलु कप्टं विष्टपस्यास्य तावत्॥
- (१७८) [†]या श्रीः खयं जिनपतेः पदपद्मसद्मा भालस्थले सपिद सङ्गमिते समेता। 10 श्रीवस्तुपाल! तव भालनिभालनेन सा सेवकेषु सुखमुन्मुखतामुपैति॥
- (१७९) [†]पाणिप्रभापिहितकल्पतरुप्रवालश्चौछुक्यभूपतिसभानिलनीमरालः । दिक्चक्रवालविनिवेशितकीर्त्तिमालः श्रीमानयं विजयतां सुवि वस्तुपालः ॥
- (१८०) [†]सौरभ्यमालगुणमालतमालका…व्योमान्तरालकृतफालयद्योमरालः । जीमूतकालरिपुकीर्त्तिमृणालिनीनां श्रीवस्तुपाल विजयी चिरकालमेधि ॥

-एवं कवीनां तत्र वाक्यानि ।

§१२५) इती [Ps. सङ्घं सम्भोज्य, वस्तादिना सत्कृत्य च] वसाह आभडतन्तुं सा० आसपालं आह्योवाच-भोः! त्वं वसाहपुत्रः (P वसाहमुख्यः) सङ्घमुख्यस्तव शत्रुञ्जये किं लग्नम् । द्रम्म चत्वारिंशत्सहसाणि
(४००००), रैवतके त्रिंशत्सहसाणि (२००००)। देवपत्तने किं १। तेनोक्तम्-तत्रासाकं तीर्थेऽधिकतरम् १।
मित्रणा व्यतिकरः श्रुतः । यद्धरुणा त्राह्मणेनोक्तम्-प्रियमेलके स्नानं तदा स्थात्, यदा पूर्वतीर्थव्ययप्रायश्चित्ते 20
लक्षं द्विजेम्यो दुग्धेन प्रक्षाल्य ददासि । तेन स्थीकृतम् । मित्रणा प्रोक्तम्-शत्रुञ्जय-रैवतकस्य प्रायश्चित्तप्राहके मित्र
सिति द्विज्ञानां कथं वितीर्णम् १। यदि दण्डियप्यामि तदा जनापवादः । परं त्वमदृष्टव्यमुखः । तव पित्रा एका
कोटीः, ८ लक्षाः (Ps. पोड्य लक्षाः) धर्म्मव्यये कृताः । त्वमेवं कुरुपे । त्वमपाङ्केयोऽतःपरं सङ्घ्वाह्यश्च ।
इत्यभिधाय विसृष्टो जनः । [Ps. स मित्रचरणयोः पितत्वा लक्षद्वयं तीर्थेषु वितीर्थ सङ्घमध्येऽभूत् । विप्राणां
नामानि न गृह्णाति । मित्रिणा अन्येऽपि सङ्घलोकाः सम्भूष्य सम्भूष्य प्रहिताः ।]

§ १२६) [१एकदा देवपत्तनात्पतितान्वया ईयुः । मित्रणोक्तम्-देवो भव्यरीत्या पूज्यमानोऽस्ति १ । तैरु-क्तम्-न । कथम् १-

(१८१) नादत्ते भितं सितं सचिव! ते कर्पूरपूरं सारन् कौपीनेऽपि च कुप्यति प्रभुरसौ शंसन् दुक्त्लादिके। दिग्धो दुग्धरसैर्जलेषु विमुखः श्रीवस्तुपाल! त्वया कर्पूरागरुमोदितः पशुपतिनों गुग्गुलं जिघति॥

तेपां सहस्रा दश दत्ताः।

[†] एतानि पद्यानि Ps. आदर्शे त्यक्तानि । § एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदर्शे एवोपलभ्यम् ।

15

20

25

30

§ १२७) एकदा मत्री तेजःपालो भृगुपुरमायातः । तत्र श्रीम्रुनिसुत्रतचैत्याचार्यैः श्रीरासिल्लस्रिसिरुक्तम्─
मित्रिन्! सन्देशकमेकं शृणुत । आदिक्यताम् । अद्य पाश्चात्ययामिन्यां दृद्धा युवत्येका समेत्य प्राह─

(१८२) तेजःपाल! कृपालुधुर्य! विमलप्राग्वाटवंशध्वज! श्रीमन्नम्बडकीर्तिरच वदति त्वत्सम्मुखं मन्मुखात्। आजन्मावधि वंशयष्टिकलिता श्रान्ताऽहमेकाकिनी वृद्धा सम्प्रति पुण्यपुञ्ज! भवते सौवर्णदण्डस्पृहा॥

इत्युक्ते मित्रणा देवकुले देवकुलिका ७२ सिहते दण्ड-कल्याः सुवर्णमयाश्रकार । तसिन्कारिते तैरेव उक्तम्-

(१८३) कं कं देशमहं न गतः कौतुकलोभाविष्टः। त्यागी तेजः पालादपरः कोऽपि न दृष्टः॥

10 § १२८) अथैकदा एकोदिनियोगी गले सरावं वद्धा मित्रणमायातः। पृष्टम् । देव! द्वात्रिंशत्सहस्राः श्रीपत्तने नृपवेदमित देयाः। त्वां संस्मृत्यायातः । मित्रिणा सहस्र १० दापिताः। श्रीस्तम्मे भृगौ गत्वा अन्यान् द्वादशसहस्रानानीय चिन्तितम्-याञ्चयान्ये न भविष्यन्ति ।.....अग्रेऽपि गृहीत्वा पुनरिप याचन् न लजसे १। तेनोक्तम्-देव!

(१८४) हृदि त्रीडोदरे वहिः खाभावादुत्थितः शिखी। इति मे दग्धलजस्य देही देहीति का त्रपा॥

मित्रणा श्रुत्वोक्तम्-कियन्तोऽविशिष्यते?। देव! दश सहसाः; द्वादश मिलिताः। त्वां विना शेपेभ्यः को विमोचयित । मित्रणा दश दापिताः। पुनरुक्तम्-निर्वाहं कथं करिष्यसि?। देव! काष्ट्रतणान्यादाय वर्तिष्ये। मित्रणा सहसाएकं निर्वाहाय वितीर्थ प्रहितः।

§ १२९) कोऽपि विप्रो मित्रसभायामागतः । मित्रणा उपवेशित इतस्ततो विलोक्य ऊचे-(१८५) अन्नदानैः पयः पानैईर्मस्थानैश्च भूतलम् ।

अन्नद्दानः पयः पानद्दमस्यानश्च स्तलम् । यशसा वस्तुपालेन रुद्दमाकाशमण्डलम् ॥

कुत्रोपविश्यते ? । पुनर्वदेति सभ्येरुक्तं नववारमुक्तं खिन्नः । नव सहस्रा दत्ताः § !]

§ १३०) अथैकदा वामनस्थलीवास्तव्येन यशोधरेणोक्तम्-

(१८६) श्रीवस्तुपाल तव भालतले जिनाज्ञा वाणी मुखे हृदि कृपा करपङ्कजे श्रीः। देहे श्रुतिर्विलसतीति रुपेव कीर्तिः पैतामहं सपदि धाम जगाम नाम॥

सहस्र १० दत्तिः । पं० माधवोक्तिः-सरस्वतीसङ्गतकान्तमूर्ति.....॥

द्रम्मसहस्र ४० दत्तिः।

§ १३१) द्वितीययात्रारम्भे श्रीनरचन्द्राचार्येरुक्तम्-

(१८७) लिह्म! प्रेयसि! केयमास्यितिता वैकुण्ठ कुण्ठोऽसि किं १ नो जानासि पितुर्विनाशमसमं सङ्घोत्थितैः पांशुभिः । मा भीर्भीक्! गभीर एव भविताऽम्भोधिश्चिरं नन्दतात् सङ्घेशो ललितापतिर्जिनपतेः सात्राम्बुक्कल्यां सृजन् ॥

10

(१८८) गौरी रागवती त्विय त्विय वृपो बद्धादरस्त्वं पुनभूत्या त्वं च समुद्धसद्ग्रणगणः किंवा वहु ब्रूमहे।
श्रीमन्त्रीश्वर! नूनमीश्वरकलायुक्तं च ते युज्यते
वालेन्द्वं चिरमुचकै रचियतुं त्वत्तोऽपरः कः क्षमः॥

तदनु मन्त्रिणा पदोपवेशनं कारितम्।

पातालात्र समुद्धतो वत वलि० । इदं कङ्कणकाव्यम् ।

§ १३२) अथ पादलिप्तपुरे ललितादेवीश्रेयसे सरोऽकारयत् ।

(१८९) *पुण्डरीकनिवहैर्विराजितं पुण्डरीकगिरिराजसन्निघौ । वस्तुपालसचिवेन कारितं भाति यत्र ललिताभिषं सरः॥

(१९०) [†]दहनेन विनाशितं पुरा सचिवौ सचरितव्रताविमौ । अच्छेश्वरनालिमण्डपं रचयामासतुरेनमर्बुदे ॥

(१९१) [†]वस्तुपालसचिवेन कारितं हैमदण्डकलद्यौः [सुद्योभितम्]। [अर्बुदाद्रि]द्याखरे मनोरमं नेमिमन्दिरमिदं विराजते॥

\$ १३३) एकसिन्नवसरे सुराष्ट्रायां सङ्घे वजित सित अग्रेसरैरेकािकिभिर्वितिभिर्वािटकासु मार्गस्योपद्रवे कते 15 तपोधिनिकेरेल्य मित्रणोऽग्रे रावा कता । मित्रणोत्तारके कते अनुपमदेन्यग्रे कथािपतम्—यद्य एकािकनां विहरणं न विधेयम् । अपरे सर्वेऽिप विहल्य गताः ।अनायाते अनुपमदेन्या नगोदरं वन्धोः समर्विवच(ह्⁹)रणं तेषां कािरतम् । स्वयमवेलं भोजनार्थसपिवृष्टा । मित्रणोक्तम्—यो गृहे लघुः स विह्वितिन नीयते । असािभः केनािप हेतुना वािरतम् । इत्यं कियन्ति दिनािन निर्वाहं यास्यति । तया तत्कालं स्थालं त्यक्तोक्तम्—यद्भवतां वालत्वे जातं तिल्कं विस्मृतम् १ । किं तत् १ । धवलकके वसतामेकदा अवेलं तपोधनौ मार्गश्रान्तौ भवतां गृहे 20 समेत्य धर्म्मलाभोक्तिपूर्वं स्थितौ । तदा करुणभक्तािन.....समायान्ति । नापरं किमिप गृहे । सर्वः कोऽपि सुक्तोत्थितः । अतः श्वगुरेण नेत्रमीलनं कृतम् । श्वश्रुनींचैरवलोक्य स्थिता । युवामघोऽवनौ जातौ । ज्येष्टपत्ती-सिहता अहं किटकापाश्चात्ये उपविष्टा । तपोधनौ अलब्धोत्तरौ गतौ । तदा युवाम्यां यदुक्तं तिक्तं न सरतः १—विगसाकं जीवितम् । भृदङ्ग (Ps. मातङ्ग) स्थापि गृहे सक्तोत्तरं प्राप्यते । वयं तेपामिप निकृष्टाः सः । यद्यवितिकां दत्ते तदा पाताले विद्यामः । अवेलमायातौ यती इत्यं न्याद्यत्य गतौ । स कोऽपि क्षणो भिवता 25 यत्र वयमिप किमिप कर्तुं क्षमा भविष्यामः । नृतं तद्भतत्तां विस्मृतम् । यद्य ऋद्धि प्राप्य ईद्यां विमृशत । भवतां ददतामेव श्रेयः । इति श्रुत्वा मन्त्री हृष्टः । इत्युक्तम्—ममाग्रे तपोधनरावा केनािप न कार्या। ततो दर्शनिभिः सर्वेः 'पद्द दर्शनमाता' इति उक्तम् । तस्याः कङ्गणकान्यमिदम्—

(१९२) पश्चाइत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा नवा खलु । खहस्तेनैव यद्तं तद्त्तमुपलभ्यते ॥

§ १३४) तया विमलाद्रौ नन्दीश्वरोद्यापने नर्न्दीश्वरप्रासादः कारितः । तत्रोद्यापनं कृतम् । अत्रैव विमला-३० चलेऽनुपमसरः कारितम् । तसिन् भरिते केनापि चारणेनोक्तम्-

(१९३) भाऊ भरहिं काई सेत्तुंजि सर न काराविडं। जाणिउं ईणईं ठाइ आगइ अणुपमडी किउं॥

^{*} Ps. आदर्शे एवेदं पद्यं प्राप्यते । † एतत्पद्यद्वयं Ps. आदर्शे परित्यक्तम् ।

15

एकवीसवारभणनेनैकविंशतिसहसा दापिता मित्रणा।

§ १३५) एकदा वटक्पपुरेऽलङ्कारिणः श्रीमाणिक्यसूरयः सन्ति । ते मित्रणा आकारिता अपि नागताः । मित्रणा स्वरूपेण कथापितम्-

(१९४) उत्रष्ठत्योत्ष्ठत्य गतिं कुर्वन् गर्वादखर्वजडवुद्धिः । वटकूपकूपमध्ये निवसति माणिक्यमण्डूकः ॥

पुनराचार्यैः प्रतिखरूपं प्रहितम्-

(१९५) गुणालीजन्महेतूनां तन्तूनां हृद्विपाटयन् । वंद्याद्वाद्विपरिस्फूर्त्या रे पिञ्जन ! विजृम्भसे ॥

मन्त्री किञ्चिद्विपितः स्तम्भतीर्थपौपधागारं छण्टाप्यैकत्र वस्तु दृष्ट्रे । आचार्यास्तदनु समायाता मिलिताः 10 मन्त्रिणः । उक्तं च-मन्त्रिन् ! सङ्घभारोद्धारधुरीणे त्विय कथमसाकं पौपधागारे उपद्रवः । मन्त्रिणोक्तम्-पूज्या-नामनागमनमेव हेतुर्नान्यत् । पुनः सर्वमिष्पितम् । संघाचीसमये तैर्व्याहृतम्-

(१९६) एकं वासः सुरेद्योः कृतसुकृतदातैर्जन्मकाले जिनानां दत्तं दीक्षाक्षणे वा ध्वजवसनमथो एकमेवाम्वरं च । सूर्यादीनां ग्रहाणां पुनरिप विधिना दत्तमस्मिन् क्षणेऽसौ सत्पात्रेभूरि यञ्छन्नधरितसुरपो नन्दताद् वस्तुपालः ॥

तदनु ते पुस्तकादि दन्त्रा क्षमित्वा च प्रहिताः।

§ १३६) तथा यत्र यत्र प्रासादं कारयति तत्र तत्र निधिः प्रकटीभवति । एकदा श्रीश्च द्वात्रे शृङ्गोपि कपिई-यक्षप्रासादः प्रारव्धः । पापाणान् विदार्थ मण्डयध्यम् । चिन्तितम्—कथमत्र निधिः प्रकटीभविष्यति । मूलादिष टङ्किकाभिविंदार्थ पापाणे द्विधाकृते सवैंरप्यन्तः सप्पे दृष्टः । तदा मन्त्री तत्रासीत् । खयमायातस्तदाश्चर्यविलोक-20 नाय । यावत्पत्रयति तावदेकावली हारः । करेण गृहीतः । सवैंरिष दृष्टः । तत्र पपाठ कपिईस्तुतिम्—

(१९७) चिन्तामणिं न गणयामि न कल्पयामि कल्पट्टमं मनसि कामगर्चीं न वीक्ष्ये। ध्यायामि नो निधिमधीनगुणातिरेकमेकं कपिईनमहर्निश्चमेव सेवे॥ तदन्र प्रासादः कारितः।

§१३७) एकदा मिला चिन्तितम्-यं श्रीशत्रुद्धये कर्म्मस्थाये ग्रुच्यते स देवद्रच्यं विनाशयति । एवं 25 विचिन्त्य पौपधागारे श्रीविजयसेनस्रिपार्थे समेतः । गुरवो वन्दिताः । लघ्याचार्याः श्रीउद्यप्रभस्र-योऽपि । ते तु मिल्रणा सप्तशतयोजनानामन्तर्यः कोऽपि विद्वान् तमानीय पाठिताः सन्ति । तपोधनानामपि पश्चविद्यतिनम्थकार । तपोधनमेकं वृद्धं शान्तं नमस्कारपरावर्त्तनपरं दृष्टाऽऽह-भगवन् ! देवद्रच्येण रिक्षतेनोपेक्षितेन वा श्रेयः ! । यदि रिक्षतेन तर्धमुं वृद्धं यति प्रसादीकुरुत । यं शत्रुद्धये नयामि । अपरे तत्र भक्षकाः । गुरुभिरुक्तम्-न युक्तमेतत् । वलादिष मानिता गुरुवः । तैस्तपोधनाग्रे प्रोक्तम्-यनमन्त्री विक्त तत्का- 30 र्यम् । तेनोक्तम्-भगवन् ! दीक्षा मया निस्तारार्थं जगृहे । तत्र द्रच्याश्चनेन कथं मिलन्यामि ! मित्रणा प्रोक्तम्- एतन्मालिन्यं न किन्तु भूपणम्, चैत्यद्रच्यरक्षणेन । आग्रहं कृत्वा प्रहितः । स खदर्शनमार्गस्थो देवलेखकं विलोन्कयति । एकदा आदेशवर्त्तिभः खादकैरुक्तम्-भगवन् ! यूयं तीर्थमठपाः । भवतां पार्थे देवनमस्यागताष्टकुरा च्यवहारिणश्चोपविश्चन्ति । एभिर्मिलनैर्जाणेश्चीवरैर्भच्यं न । वस्नमध्ये किं दूपणम् श । मनोहराणि वस[ना]नि परि-

¹ B दीक्षा नमस्कारपरावर्तनार्थे गृहीता। 2 B दुर्शनाचारस्तः।

द्यत । तानि ग्राहितः । तथाकृते पुनरुक्तम्-अनेके जना भवतां सह पर्यालोचं कुर्वन्ति, तत्कथमुद्गीते वदने भव्यम् १ । पश्चात्ताम्वृतं ग्राहितः । उक्तम्-अत्र भवतां भिक्षावेला तया कम्मीस्थायान्तरायं स्थात्, रसवतीमा-स्थादयतां किं दूपणम् १ । तल्लोलुपः कृतः । भगवन् । विलोकयत-पादेन चङ्कमणं भव्यं वा सुसासनेन १ । तमिष कारितः । एकदा सुस्थासनस्थः पालीताणके जनैः पश्चदश्यभिः सह गन्तुं प्रवृत्तः । मन्त्री कृतधौतवसनः कृतमु-स्कोशः पादचारेण सम्मुखो जातः । मन्त्रिणा पृष्टम्-केऽमी १ । अग्रेसरेरुक्तम्-असौ भवत्प्रहितो मठपः । कम्त्रिणा सुस्थासनं स्थापयित्वा वन्दितः । उक्तम्-तले कार्यं कृत्वा वेगेन पादमवधारणीयम् । स लज्जितः । तत्रानश्चनमादाय स्थितः । उपर्याकारितोऽपि नायाति । उक्तश्च-मयाऽनशनं जगृहे । इयतां यतीनां मध्यादहं मन्त्रिणा प्रेपितः । ममाप्ययमाचारः । गुरूणां भवतां चाऽऽस्थं कथं दर्शयामि १ । अन्योऽत्र कार्यकर्ता वीक्ष्यः । उपरि गत्वाऽनशनं परिपाल्य दिवंगतः । मन्त्री तु यात्रां कृत्वा पुरमेत्य गुरूणां सकलं तद्वृत्तमाचल्यौ । [Ps. गुरुभिः शोक्तम्-माऽतः परं कोऽपि साधुश्चैत्यद्रव्यचिन्तां करोतु । एपोऽपि ईदृशो जातः ।]

§१३८) अथ महं० अनुपमदेच्या १२९२ वर्षे पश्चमी-उद्यापनं कृतम् । तत्र समवसरणानि २५, श्रीशत्रुझय-तले वाटिका ३२, रैवते १६, तेजलपुरे पौपधागार-क्रुमरसरःसहितं देवकुलम् । झीझरीआग्रामे प्रासादः, सरोवरम्, वापी च । ल्णिगवसहीग्रासकृते डाक-डमाणीग्रामद्वयं दत्तम् । तपोधनोपकरणानि नाम्ना पात्राणि दोरु-झोली-डांडाप्र० ग्रामाणि । कोऽपि यात्राः १३ वक्ति ।

(अत्र B आद्र्शें एतद्वर्णनं विशेषविस्तरेण लिखितं लभ्यते; यथा-)

5

§ १३९) {तथा महं० अनुपमदेच्या १२९२ पंचमी-उद्यापनं कृतम् । तत्र २५ समवसरणानि पञ्चवर्णानि कारियत्वा श्रीस्रिस्यः प्रदत्तानि । एवं २५ महं० कुमारदेच्याः पञ्चिविञ्ञति महं० ललतादेच्या । तथा महं० आसराजवसही कारिता मा(पि?)तुः श्रेयसे च । महं० मछदेवश्रेयसे मं० ऌिणाश्रेयसेऽर्छुदे । तथा सप्तभिन्यस्तासां श्रेयसे
सप्त प्रासादाः । तासां सखीनां श्रेयसे सप्त देवकुलिकाः कारिताः । श्रीश्चञ्जञ्चयतले वाटिका ३२ जगन्नाथपूजायै
कारिताः । रैवते पोड्या । तथा श्रीतेजलपुरं प्रासाद-पोपधागार-कुमरसरःसहितम् । तथा झींझरिआग्रामे प्रासादो २०
वापी सर्श्व । अर्श्चदे ॡिणगवसद्यां श्रीनेमिपूजायै डाक-डमाणी इति ग्रामद्वयं ददौ । तथा तपोधनोपकरण १४ तेपां
नाम्ना दोरउ-झोली-डांडाप्रमृतीनि प्रतिग्रामाण्यस्थापयत् । एवं सर्वकीर्तनानि १२५००० विम्यानि शैल-पित्तलमयानि । १८ कोटि, ९६ लक्ष श्चञ्जञ्चपदे । १२ कोटि, ८० लक्ष गिरिनारपदे । १२ कोटि, ५३ लक्ष अर्चुदपदे ।
९८४ पोसाल, ५०० सिंहासन दान्त-काष्टमय, ५०५ समवसरणानि पद्चस्त्रमयानि । तीर्थयात्रा १२; कोऽपि
१३॥: वक्ति । ७०० त्रह्मशाला । ७०० सत्राकार । ७०० तपस्विनो मठाः । मसीति ८४, गढ ३२, सरोवर २५
६४, वावि ७०० । माहेश्वरेषु प्रासादेषु, ३ सहस्र विडोत्तर नृतन जीर्णोद्धार, १३०४ जैन प्रासाद शिखरवद्ध,
२३०० जीर्णोद्धार, २१ आचार्यपद । सरस्रतीभांडागार ३-भृगुपुरे स्तंभतीर्थे पत्तने च । १८ कोडि द्राम दण्डकलश-पुस्तकपदे । १५०० तपोधन दिनं प्रति विहरणउं । ५०० त्राह्मणभोजनम् । १०० कार्पटिकभोजनम् ।
दक्षिणसां श्रीपर्वत, पश्चिमायां प्रभास, उत्तरसां केदारु, पूर्वसां वाणारसी इति भूमिमध्ये । एवं सर्वाङ्क ३
कोटिश्चत, ३२ कोडि, ८४ लक्ष, ७ सहस्र, ४ श्चत, १४ लोहिडआ अथवा इका आगला द्राम भीमप्री० । } । ३०

§ १४०) अथ भीमे [राज्ञि] दिवंगते राणकलवणप्रसादः पुत्रयोवीरम-वीरधवलयोर्मध्यादेकमपि राज्ये उपवेशियतुं न शशाक । आद्यः पत्तनपरिग्रहस्य प्रियः, द्वितीयस्तु दानी योद्धा । अधैकदा राणकवीरधवलेन ताम्यूलो [वं]ठायापितः । तेन विलोक्य तटे [क्षिप्तः] एवं द्वित्रिवेलम् । राज्ञा पृष्टम्-किमरे । त्यजिसे १ । स्वामिन् । मध्ये कृमयः कृष्णवर्णाः । राणकेन मत्रिणोऽग्रे उक्तम्-यदहमराजापि छ्त्या नृपः कृतः ।

¹ B कथमुद्गानसत्यं (?) वदने भन्यम् । पु॰ प्र॰ स॰ 9

§ १४१) तदनु विश्वमल्ले किञ्चिद् यौवनाभिग्रुखे सित धवलककात् सर्वमाप्टच्छ्यं, मित्रणं पाश्चात्ये विग्रुच्य, तेजःपालं सहादाय पत्तने गत्वा राणकं वीरमं च ग्रुत्कलाप्य महता परिकरेण गङ्गां प्रति चचाल । ततो मतोडा-र्वार्थे दानादि दत्त्वा कुण्ड्यन्तिविद्या । सा द्विजैवेल्यमानापि न ब्रुडित । तेजःपालेनोक्तम्—कापि हृदि आर्त्तः ? । राणकेनोक्तम्—राज्यं वीरमस्य भविष्यित वीसिलको रुलिप्यति । मम करे जलं क्षिप-वीसलस्य राज्यं मया विध्यम् । मित्रणा तथा हस्ते जलं क्षिप्तम् —एपा चिन्ता न विध्यम । तदनु कुण्डी मयां । तेजःपालः सुकृत्यं विधाय क्रमेण पत्तनमायातः । इतो राणकस्तेजःपालमागतं श्रुत्वा सशोकः समायाग्रुपविष्टः । तावता तेजः-पालेन विश्वमल्लस्योत्तारके राणकपद्व्यास्तिलकं कृतम् । चादित्रवादनं श्रुत्वा राणकेन पृष्टम्—िकिमिदं विश्वमल्लस्योत्तारके । इतस्तेजःपालो नृपगृहे प्राप्तः । राणकेनोक्तम् —तेजलः । वादित्रवादने को हेतः ? । देव! विश्वमल्लः स्वामिनः पट्टे अभिपिक्तः । इतो गोधियकेनोक्तम्—राज्ञाऽभिपिक्तो भवति त्वया वा ?, मया न कथं । दवं तु 10 पट्टस्य पदातिरसि । अद्य स्वसामिग्रतो राणकः कृतोऽस्ति । कल्ये राजानं करिष्यामि । एवं गोधिय-तेजपालौ विवदानौ राणकेन निपिद्यौ । वार्ताः पृष्टा सुतस्यौर्द्धदेहिकं कृतम् ।

श्रीवीरधवले दिवंगते मिश्रणा वस्तुपालेनोक्तम्-

(१९८) आयान्ति यान्ति च परे ऋतवः क्रमेण जातं तदेतदतुयुग्ममगत्वरं तु । वीरेण वीरधवछेन विना जनानां वर्षा विलोचनयुगे हृदये निदाघः ॥

> अत्र भे अः अः अः अत्र मोजदीनमातुः सम्वन्धः।

[एप सम्बन्धः ${f P}$ सङ्क्षके आदर्शे लिखितो नास्ति; परं ${f B}$ सङ्क्षके आदर्शे उपलभ्यते । तत् प्वात्रावतार्यते । यथा-]

§१४२) {इतथ सुरत्राणमाजेदीनमाता कादिकथ हजयात्रां कर्तुं पत्तनमायातौ | मिल्रिणा प्रवेशोत्सवपूर्वकं प्राप्तुणकं विधाय सम्प्रेपणपूर्वकं स्थाने स्थाने, मिल्रिवचसा गौरवमनुभवन्तौ हजयात्रां कृत्वा प्रत्यावृत्तौ । प्रवेशपूर्वकं भोजितौ | मात्रोक्तम्—त्वं मत्सुतः सुरत्राणाद्प्यधिकः | किमिष याचस्व | मातः! नागपुरप्रत्यासन्ने मकर्षाणा 20 श्रामे पापाणस्य स्वनिरस्ति | तस्याः प्रस्तरत्रयं स्वमातुः सकाशाद्याचे | तयोक्तम्—तथा करोमि, यथा मे सनुः समर्पयिष्यति | तथा उपायने तेजी ५०० प्रहितानि सार्द्धम् । इतः सुरत्राणः जनन्याः सम्मुखमाययौ | गुरुरुक्तः सुखेन यात्रा कृता । वस्तुपालप्रसादेन | हिंदुकं किं प्रशंसयिष । तेनोक्तम्—तस्य मिक्तः सा या एक्या जिह्वया वक्तं न पार्यते | इदमुपायनम् । तदवलोक्याह—स किं याचते । प्रस्तरत्रयम् । एवं त्वं कथयम् हरामं जनयि । किं करोमि !—तस्य सा मिक्तर्ययाहं वलादिष कथाप्ये । सुरत्राणेन फलहीत्रयमित्म् । मार्गे 25 रहकलानि भज्यन्ते । मिल्रिणा कथापितम्—यद् रहकलेपु उभयोरिष पक्षयोरखण्डधारा घृतस्य देया । एवं महोत्सवे जायमाने फलहिकाः श्रीशत्रञ्जये प्राप्ताः । मत्री संयं संमील्य यात्रार्थमुपि गतः । तत्र संवस्वाङ्गलिपूर्वं विज्ञप्तिनां चक्रे—संवस्तववधारयतु । एप मे मनोरथः कदापि सिद्धं मा प्रयातु । यतः पूर्वतीर्थस्थानर्थे जाते एतिद्वम्यमुपिवशति । एतद्युगान्तेऽपि मा भूयात् । परं न ज्ञायते । कदाचित्कालयोगेनानर्थः स्वात्तदिदं विम्यं श्रीसंघेन प्रसादं विधाय स्थापनीयम् । संघराङ्के क्षिप्तमित्ति । एवम्रक्त्वा एकां युगादिदेवस्य फलहिकाम्, एकां 30 पुंडरीकस्य, एकां कपर्देः—एवमभिधाय भूमिगृहे व्यधात् । }

¹ B मुक्कलाप्य । 2 B मागतोडा । 3 एतद्वाक्यस्थाने B 'कृतं एतत् ।' 4 B बुडिता । 5 B शोकचान् । 6 B नृपसमन्यायातः । 7 B पृष्टम् । 8 B तेजःपाल । 9 P भविष्यति । 10 P 'क्यं' अम्रे 'त्वया' शब्दोऽधिकः । 11 B वार्ता पृष्टा । 12 B विद्धे ।

ई१४३) एवं पुण्यानि राजकार्याणि कुर्वतोरेकदा राणक लूणप्रसादेन तेजल उक्तः—मित्रन्! को राजा कार्यः १ विरधवलः खर्गामी जातः । तत्पुत्रः शिशुः । यदि तव विचारे एति तदा वीरमस्य राज्यं दीयते । मित्रणा उक्तम् —स्वामिन्! मया खस्वामिस्नोर्वासलसाङ्गीकृतमस्ति । राणकः प्राह—यद्यप्येवं तथापि मद्राक्यं मन्यस्य । मित्रणा मानिते, रात्रौ वीरमः समेत्य राणकं लक्त्या प्रहृत्य, प्राह—भो डोकर धवापि राज्याशां न मुश्रिसि , किं दितीयमपि च्रियमाणं अपेक्षसे १ । एवमुक्त्रा गतः । राणकेन चिन्तितम्—अनेन कीलिकाभङ्गो न प्रतिक्षितः । स कोऽप्यस्ति यः प्रातःप्रहरमध्ये वीसलमानयित । नागडेन भट्टपुत्रेणोक्तम्—अहं धवलके रात्रिपाश्चान्यप्रहरे यास्यामि । वत् करमीमाल् समेष्यति । स लेखं दत्त्वा प्रहितः । वीसलं सुप्तमुत्थाप्य प्राह—यदि त्वं राजा तदा मे किं १ । श्रीकरणम् । तिर्हं चल । करमीमाल्ह्यायात् । प्रातः राणकः सकलपरिग्रहं सम्मील्य सहस्रलिङ्गोपकण्ठे उत्तारकं दत्त्वा स्थितः । वीसलेन राणकस्त्रतेत्व नमस्कृतः ।

ततो राणकेन तिलकं कृत्वा वृर्यनादपूर्व धवलगृहे नीतः, सिंहासने उपवेशितश्र । वीरमः –िकं १ किं १ याव-10 द्वक्ति त्वाविस्वानिस्वनपूर्वकं श्रीवीसलदेवाज्ञा श्रुता । अश्वसहस्वेद्वाद्याभः समं ध्वय भूत्वा स्थितः । इतस्तेजः पालबुद्ध्या राज्ञाऽचिन्ति – युद्धस्य वीरमोपरि मोहोऽस्ति, मा कदाचिदेतद्विघटयतु – इति विमृत्य बहुके विपं श्विस्वा सन्ध्यायां राणकपार्थे गन्तुं प्रयुत्तः । राणकेन तु चिन्तितमस्ति – मया विरुपं कृतम् । अद्यापि राज्यं प्रात्वीरमस्य दासे । उक्तम् – द्वारे कोऽपि विशन् रक्ष्यः । इतो राजा द्वारस्थैनिपिध्यमानोऽपि मध्ये प्रवित्य राणकं प्राह—तात । अमृतमिदं सत्वरं पिवत वित्ते । वत्स । तव विचारे आयातम् १ । आयातं त्वांनीतम् । राणकेन उक्तम् – त्वया राज्य-15 निर्वाहो भावी ध्वस्त्वा पीतम् । तत्कालं दिवंगतः । तेजःपालस्य "राजस्थापनाचार्यः" इति विरुदं जातम् ।

§१४४) इतो मित्रद्वा श्रीवीसलदेवेन तृतीये दिने वीरमो भाणितः—यन्मे वीरमस्तातसमः। अतो यदि यक्तिः तदा राज्यं मुश्चामि, सेवां करोमिः । तद्वु प्रधानैर्महाथरेश्वोक्तं वीरमं प्रति—देव! राजा मान्यः । यस्त्वेवं विक्तः । वीरमः प्राह—यदि मे नगरपञ्चकं नृपो ददाति—एकं प्रह्लादनपुरं, द्वितीयं विद्यापुरं, तृतीयं वर्द्धमानपुरं, चतुर्थं धवलकं, पश्चमं पेटलाउद्रपुरं। एतानि पश्च पुराणिः, तथा वर्षं प्रति द्रम्म लक्ष ३। एवं 20 यदि नृपो मन्यते तदा प्रणामं करोमि। नृपेण मानितम्। मित्रणा तत्कालं कत्रगरपरिसरे पश्च प्रामाणि तन्नामा वासितानि। वीरमो मिलितः। नृपं प्रणम्य वीरमो वाटके स्थितः। वीसलदेवस्य राज्यं निष्कण्टकं जातम्। नागडस्य श्रीकरणं जातम् । मित्रणो ज्यापारो निष्टतः। नृपेण "वृद्धामात्या" इति दत्तमानाः सेवां क्वर्याणाः सन्ति।

(१९९) सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्गसिंहेनापि मनीषिणा। विस्त्त्रेऽपि कृता तेषां वस्तुपालेन मन्त्रिणा॥*

एकदा वीरमेन नगरपश्चकं याचितम् । राज्ञा ग्रामपश्चकं दर्शितम् । तेनोक्तम्-नगराणि याचे । राज्ञोक्तम्-25 एषु दत्तेषु किमविशिष्यते ? । तिर्हे न खास्ये । त्रज । स सपरिच्छदो मालवं प्रति त्रजन्, राज्ञा जावालिपुरीयस्य चाचिगदेवस्य पार्थात् सहंवाडीघाटसमीपे मारितः ।

§ १४५) इतश्र-अर्बुदचैत्ये गजशालां वीक्ष्य यशोवीरेण मित्रणा पृष्टम्³-भवतां पूर्वजः कः श्रीकरणः १ । पृष्टम्-कथम् १ । श्रीकरणं विना गजशाला सत्या न भवति³² । तद्तनु तेजःपालेन गजः समानायितः । तं

[ा] P 'राणक' नास्ति । 2 B तेजःपालो न्याहृतः । 3 राज्यं कस्य दीयते । 4 B सुतस्तु । 5 B समेति । 6 B नास्तीदं वाक्यम् । 7 B मम वाक्याद् वीरमस्यास्तु । 8 B होल्लकर । 9 B मियन्तं । 10 B 'रात्रि' नास्ति । 1 एतद्न्तर्गतपंक्तिस्थाने B आद्दों "तद्गु करभीमधिरुद्य चिलतः ।" इत्येव पाठो विद्यते । 11 B चतुरकं । 12 B वीसलः समायातः । राणकं नमस्कृत्य यावदास्ते तावद् । 13 B विधाय । 14 B 0 पुरस्सरं । 15 विधत्ते । 16 B सह । 17 B 'अस्ति' नास्ति । 18 B रक्षणीयः । 19 B कुरुत । 20 B समायातं । 21 B आयातेनानीतं । 22 B ब्याहृतं । 23 B मविष्यित । 24 B कथयिति । 25 नास्तीदं पदं 26 B मानयोग्यः । 27 B अभिद्धाति । 28 B अपरं । 29 B नगराणां परि । 20 B नाम्तीदं वाक्यं । 20 B नार्दों एप स्त्रोको नास्ति । 20 B उक्तं । 20 B गजदाला न घटने ।

नृपस्योपायने कृत्वा, एककोटि १६ लक्ष, वर्षं यावत् चडावके कृत्वा गृहीतम् । व्ययस्ताद्दगेव । केनापि कविना नृपं प्रति प्रोक्तम्-

(२००) एतावतैव वीसल ! पदय प्राग्वाट-लाटयो भेंदम् । एक इभानुपनिन्ये प्रथमश्चरमस्तु खरमेकम् ॥

5 तेजःपालेन स हस्ती ढौकने कृतः । लाटेन समराकेन वेसरश्रेकः । द्रम्म लक्ष ३६ त्रुटौ, द्वितीयवर्षे श्रीकरणं मुक्तम् ।

(२०१) बौद्धैबाँद्धो वैष्णवैर्विष्णुभक्तः, शैवैः शैवो योगिभियाँगरङ्गः। जैनैस्तावज्ञैन एवेति कृत्वा सत्त्वाधारः स्तृयते वस्तुपालः॥

११४६) सं० १२९८ वर्षे मन्त्री नृपं मुत्कलाप्य चिलतः । नागडस्तु राणकसार्थे मण्डलीं गतः। तत्र 10 तपोधनसाराविषये शिक्षां दत्त्वा अङ्केवालीआग्रामे०......प्रासादः। सरः। सत्रशालात्रयं च कारितम्। (ॎ सङ्ग्रहे अत्र एतदेव वर्णनं किञ्चिद्विस्तारेण लिखितं लभ्यते। यथा-)

{संवत् १२९८ वर्षे जातकेनायुपोऽन्तं परिज्ञाय नृपं ग्रुत्कलापयामास-देव! क्षम्यताम्, यत्स्वामिन ऊणं खूणं वा कृतः । राजा-हे मिन्नन्! कथमेतत् १ । देवसेवाय यास्वामि । मिन्निन्! त्वं मदीय[तात]वीरधवलसमोऽतस्त्वां कथं प्रेपये । कदाचिदेयद्रम्माणां शङ्का भवतिः तदा न कार्यम् । मदीयं शरीरं तवायत्तम्, द्रव्यः किम्, 15 द्रम्माणां पत्रं विदारिषण्यामि । परं मा त्रज । मन्नी प्राह-देव! द्रम्माणां किम् १, द्रम्मा वाह्याः । देहं तु तव पिण्डैः पोपितम् । परमवसाने प्रत्यासन्ने देव! तीर्थसेवा युक्ता । अश्रुपातपूर्वं राज्ञा वीटकं दत्तम् । मन्निजनान् क्षमियत्वा श्रीवस्तुपालो महता परिच्छदेन सह श्रीशत्तुञ्जयोपि चचाल । इतो राणकनागडो मन्निप्रयाणं श्रुत्वा सम्प्रेपितुं चचाल । मंडल्यां गतेन मन्निणाभिहितम्-राणक! राजकार्याणि सीदन्ति । यूयं प्रसादं कृत्वा वलत । तेनोक्तम्-तव गृहे वहुरस् । तवोपजीवनेन इयतीं ऋद्भि । करणीयं किमप्यादिश्च । मन्निणोक्तम्-

20 (२०२) न कृतं सुकृतं किश्चित्सतां संस्मरणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥
राणकः प्राह-परं किश्चन मनसि दुष्यति, ममाग्रे किं नोच्यते । देव । मिय गते सित एते व्रतिनो दुःखिनो
भविष्यन्ति । मित्रिन् ! इत्थं कथमुच्यते । यद्भवतां पार्थात् सुखिनः करिष्यामि । परिमयं चिन्ता न विधेया ।
इति राणको मुत्कलाप्य वलितः । मन्त्री अंकेवालिआग्रामे गतः । गुरवस्तत्रोक्ताः-भगवन् ! मेऽनशनं प्रयच्छत ।
तत्र तेजःपालानुमत्या गुरुभिरनशनं प्रदत्तम् । मन्त्री क्षमित-क्षामणापूर्वं पश्च परमेष्टिनः स्परन् खर्गं गतः । संस्का25 रादनु तेजःपालेनास्थीनि श्रीशत्रञ्जस्ये प्रहितानि । तत्र खर्गारोहणप्रासादः कारितः । अंकेवालिआग्रामे प्रासादः
कारितः । सरोवरं च सत्रशाला च । तत्र धर्मस्थानत्रयं कारितम् । तेजःपालो यात्रां विधाय पत्तने समायातः । }

§ १४७) व्यापारे वर्ष १८ तदनु वइठा ऊठि । तथा १३०८ वर्षे महं० तेजःपालेन खर्गमनाय राजा [Ps. वीसलदेवः] मुत्कलापितः । तदा द्रम्मा लक्ष २७ देया आसन् । राज्ञा मुक्ताः । [तथा राज्ञा द्रम्मा लक्षत्रयं धर्मव्ययाय वितीर्य*] तेजःपालः प्रहितः । श्रीसङ्घं क्षमयित्वा श्रीशङ्खेश्वरोपिर चलितः । चन्द्रोमाणा- 30 ग्रामे गतः । †जातकमवलोकितम्-यचन्द्रोमाणाग्रामे पाश्चात्यप्रहरे व्ययः । मन्त्री अनशनमादाय दिवमगमत् । तत्र कीर्त्तनत्रयम् ।

§ १४८) ई अथ मित्रिणि दिवं गते श्रीवर्द्धमानसूरयो वैराग्यादाम्विठवर्द्धमानं तपः कर्त्तुं प्रारेभिरे । श्रीशङ्केश्वर-पार्श्वनाथाभिग्रहं च जगृहुः । यत्तपिस सम्पूर्णे देवं नमस्कृत्य पारणकं करिष्यामः । सम्पूर्णे जाते देवं नन्तुं

 $^{1\} B$ द्रम्मान् विमुच्य । * P_S आदर्शे एवेतद्वाक्यं लभ्यते । † एतत्पंक्तिस्थाने P 'पाश्चात्यिंदने दिवंगतः' इत्येव संक्षिप्तः पाठः । $\ 1\ B$ आदर्शे एतत्प्रकरणं प्राप्यते ।

प्रस्थिताः । मार्गे श्रान्तास्तृषिता एकस्य तरोस्तले देवं नमस्कृत्यानशनाद्विनष्टाः । शङ्केश्वरेऽधिष्टायको जातः । ज्ञानेन मित्रणो गतिमन्वेष्टं प्रवृत्तः । अजानानो महाविदेहे श्रीसीमन्धरं नमस्कृत्य पप्रच्छ-भगवन् ! वस्तुपाल-जीनः क गतः । खामी आह-अत्रैव पुष्कलावतीविजये पुण्डरीकिण्यां कुरुचन्द्रो नाम नृपो जातः । स तृतीयभवे सेत्सिति । अनुपमदेवीजीवः श्रेष्टिनः सुता अत्रैव विजये जाता । साप्टवापिकाऽसामिर्दाक्षिता, देशोनां पूर्वकोटिं तपस्ताः सेत्स्यति । इति तेन व्यन्तरेणात्र भरते वस्तुपालानुपमदेव्योर्गतिः प्रकटीकृता । ॥ इति वस्तपाल-तेजःपालप्रवन्धः ॥ (पतत्प्रवन्धप्रान्ते P सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे निम्नगतं विशेपवर्णनं लिखितं लभ्यते-) § १४९) अत्राग्रेतनः प्रवन्धः कथनीयः । वीरधवलेन वामनस्यल्यां जयतलदेविश्रातरौ साङ्गण-चाम्रुण्डराजौ मारितौ । युद्धे जाते १४ शततुरङ्ग स० ५ जजी (१) (२०३) जीतं छहि जणेहिं सांभिल समहरि वाजीइ। 10 विहं भुजि वीरतणेहिं चिहुं पगि ऊपरवटतणे ॥-इति चारणोक्तिः। §१५०) गोधाधिपो घृघलमण्डलीकातेजःपालेन वद्धः धवलकपुरसभायामानीतः । तदा सोमेश्वरोक्तिः-(२०४) मार्गे कईमद्रस्तरे जलभृते गर्चाशतैराकुछे खिन्ने शाकटिके भरेतिविषमे दूरे गते रोधसि। शब्देनैतदहं ब्रवीमि महता कृत्वोच्छितां तर्जनी-15 मीदक्षे गहने विहाय धवलं वोढ़ं भरं कः क्षमः॥ § १५१) एकदा मन्त्री स्तम्भने आगतः । तत्राचार्येरुक्तम्-(२०५) असिन्नसारसंसारे सारं सारङ्गलोचना। मन्त्री रुष्टः । श्रङ्गारिण एते । अष्टमे दिने-यत्कुक्षिप्रभवा एते वस्तुपालभवाददाः॥ 20 दशसहस्रदीनारा दत्ताः । न गृहीताः । भृगुपुरे लेप्यप्रतिमास्थाने अन्या कारिता तद्रव्येण । § १५२) एकदा मित्रिभिः पिलतं दृष्टा चिन्तितम्-(२०६) अधीता न कला काचित् न च किञ्चित्तपः कृतम्। दत्तं न किञ्चित्पात्रेभ्यो गतं च मधुरं वयः॥ (२०७) आयुर्योवनवित्तेषु स्मृतिशेषेषु या मितः। सैव चेजायते पूर्वं न दूरे परमं पद्म्॥ **१९५३) सङ्घ्यारम्मे नरचन्द्रस्ररिभिरुक्तम्**-25 (२०८) चौलुक्यः परमाईतो सपदातस्वामी जिनेन्द्राज्ञया निर्ग्रन्थाय जनाय दानमनघं न प्राप जानन्नपि। सम्प्राप्तिखिदिवं खचारुचरितैः सत्पात्रदानेच्छया त्वद्रपोऽवततार ग्र्जरस्वि श्रीवस्तुपालो ध्रुवम् ॥ मन्त्री यात्रायां दृपमं प्रति पपाठ-''आसं कस्य न वीक्षितं ।।" 30 (२०९) यहाये चूतकारस्य यत् प्रियायां वियोगिनः । यद्राधावेधिनो लक्ष्ये तद्ध्यानं मेऽस्तु ते मते।। रैवते नेमिं प्रति-कल्पट्टमस्तरुरसौ तरवस्तथाऽन्ये चिन्तामणिर्मणिरसौ मणयस्तथाऽन्ये। (२१०) धिग जातिमेव दहरो वत पत्र नेमिः श्रीरैवते स दिवसो दिवसास्तथाऽन्ये॥

15

25

30

§ १५४) एकदा मोजनी(दी)नसैन्यं ढिछीतश्रिलिस् । प्रयाणक ४ जातानि । राणकस सुद्धिर्जाता । वस्तुपाली वीटकं गृहीत्वाऽश्वलक्ष १ सुतोऽर्द्धदिगरी गत्वा हतवान् । भग्नम् । राणकेन परिधापितः । उक्तम्-"त्वमेव मे गुणवान् ।।"

पूनडसा नागपुरीयो मित्रसङ्घे मिलितः । तत्र—"अद्य मे फलवती पितुराञ्चा०" । श्रीयुगादिफलही, कपिई-5 पुण्डरीक-चक्रेश्वरी-तेजपुरविम्बपार्श्वमूर्त्ति-फलही ५ खानित आनीताः ।......िढ्छीत आगतस्य मित्रणो हेमलक्ष १० राणकेन दत्ताः । तेन तत्क्षणमेव ब्राह्मणेभ्यो दत्ताः । तदा काव्यानि—

- (२११) निरीक्ष्य मन्त्रिन् ! द्विजराजमेकं पद्मानि सङ्कोचमहो भजन्ति । समागतेऽपि द्विजराजलक्षे सदा विकासी तव पाणिपद्मः ॥
- (२१२) उचादने विद्यिषतां रमाणामाकर्षणे खामिहृदश्च वर्षे । एकोऽपि मन्त्रीश्वरवस्तुपालः सिद्धस्तव स्फूर्त्तिमियर्त्ति तन्त्रः ॥

नानाकेनाप्युक्तं नागरेण-

(२१३) एकस्त्वं भुवनोपकारक इति श्रुत्वा सतां जिल्पतं लज्जानम्रशिराः स्थिरातलमिदं यद्वीक्षसे वेद्मि तत्। वाग्देवीवदनारविन्दतिलकः! श्रीवस्तुपाल ध्रुवं! पातालाद्दलिम्रद्दिधीर्षुरसकृन्मार्गं भवान्मार्गति॥

अत्रापि पोडशसहस्रद्तिः ।

§ १५५) एकदा अनुपमा अर्चुदचैत्ये आगता सूत्रधारान् कर्म्मस्थायमन्दादरानाह-

(२१४) भूपभ्रूपल्लवप्रान्तिनरालम्बिलिम्बिनीम् । स्थेयसीं वत मन्यन्ते सेवकाः स्वामिप श्रियम् ॥ तया पृ०-शिव्रं निष्पद्यते स उपायः कः । तैः स्०ं निवेदितम्-प्रासः द्विम(ग्र)णी क्रियताम् । कृतः । 20 पश्चानिष्पनः ।

(२१५) इतोऽव्धिः परितो मृत्युरितो व्याधिरितो जरा। जन्तवो हन्त पीड्यन्ते चतुर्भिरपि सन्ततम्॥

§ १५६) यशोवीरः प्रथमसङ्गमे श्रीअर्चुदे श्रीवस्तुपालं प्रति प्राह-

(२१६) श्रीमत्कर्णपरम्परागतभवत्कल्याणकीर्त्तिश्चतेः प्रीतानां भवदीयदर्ज्ञनविधौ नास्माकमुत्कं मनः। श्चत्वा प्रत्ययिनी सदा ऋजतया खालोकविस्रम्भणी दाक्षिण्यैकविधानकेवलिमयं दृष्टिः समुत्कण्ठते॥

§ १५७) मन्त्री राजानं मुत्कलाप्य अङ्केवालीआग्रा० गतः सपरिजनः।

(२१७) गुरुभिषक् युगादीकाः प्रणिधानं रसायनम् । सर्वभूतदयापथ्यं सन्तु मे भवरुग्भिद् ॥

(२१८) लब्धाः श्रियः सुखं स्पृष्टं मुखं दृष्टं तनूरुहोम्। पूजितं दर्शनं जैनं न मृत्योर्भयमस्ति मे॥

(२१९) सुकृतं न कृतं किञ्चित् सतां संसारणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥ (२२०) यन्मयोपार्जितं वित्तं जिनशासनसेवया । जिनशासनसेवैव तेन मेऽस्तु भवे भवे ॥ इति वदन् मत्री वस्तुपा० दिवं ययौ । ततस्तेजःपाले दिवंगते लोकोक्तिः-

तत्रानशने मन्त्रिचिन्ता-

(२२१	?) किं कुम्में: किमुपालभेमहि किमु ध्यायाम किं वा स्तुमः	
	कस्याये समुखं सदुःसमितिलं सन्दर्शयामोऽधुना ।	
	शुष्कः कल्पतर्र्यदङ्गणगतश्चिन्तामणिश्चाजरत्	
	क्षीणा कामगर्वा च कामकलको भग्नो हहा दैवतः॥	
[सं०] १३	०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।	5
	A A A A	
(B)	सञ्ज्ञके आदर्शे पुनरेतत्प्रवन्धान्ते निस्नगतानि वस्तुपालसम्बन्धिकाव्यानि प्राप्यन्ते-)	
(२२२)	सेजवालकसहस्रचतुष्कं साधिकं पत्रशतैश्च।	
	पञ्चकं च द्यातपञ्चकमिश्रं स्यन्दनाभवरपिह्यिकिकानाम् ॥ १ ॥	
(२२३)	शतानि चाष्ट्रादशवाहिनीनां सुखासनानां प्रमितिस्तयैव।	
	तपोधनानां द्विदातीसहस्रे दातं सहस्रं च दिगम्बराणाम् ॥ २॥	10
(२२४)	त्रिंशद्विमिश्रा त्रिशती चराणां रहासनानां दृषशोभितानाम्।	
	श्वतानि च त्रीणि तु मागधानां चतुःसहस्राश्च तुरंगमाणाम् ॥ ३॥	
(२२५)	अष्टौ महाङ्गाश्च चतुःशतानि लक्षास्तथा सप्तति मानवानाम्।	
	श्रीवस्तुपालस्य कृताऽऽद्ययात्रासंख्येयमानन्दकरी जनानाम् ॥ ४ ॥	
(२२६)	स्वस्ति श्रीब्रह्मलोकात्कविजनजननी भारती ब्रह्मपुत्री	15
	धान्यां श्रीवस्तुपालं कुदालयति यथा कार्यमेतन्निवेद्यम् ।	
	योऽभृत्कलपटुकलपः सकलसुमनसां नाधुना सोऽपि भोज-	
	स्तस्मात्सीदन्त एते जगित सुकृतिना रक्षणीयास्त्वयैव ॥ ५ ॥	
(२२७)	खस्ति श्रीभूमिवासाद्विपिनपरिसरात्क्षीरनीराधिनाथः	
	पृथ्व्यां श्रीवस्तुपालं क्षितिधवसचिवं वोधयत्यादरेण ।	20
	अस्या आस्माकपुत्र्याः क्रपुरुवजनितः कोऽपि चापत्यदोपो	
	निःशेषः शेपलोकम्ष्टणग्रुणभवता मूलतो मार्जनीयः ॥ ६॥	
(२२८)		
	श्रीवस्तुपाल ! भवतो वदान्य ! तद्दितयमुन्मुद्रम् ॥ ७ ॥	
(२२९)	कीर्त्तिः कन्दलितेन्दुकान्तिविभवा धत्ते प्रतापः पुनः	25
	प्रौढिं कामि तिग्मरिक्ममह्सां बुद्धिर्बुधाराधिनी।	
	प्रत्युजीवयतीह दानमसमं कर्णादिभूमीसज-	
	स्तत्किञ्चिन्न तवास्ति यन्न जगतः श्रीवस्तुपाल ! प्रियम् ॥ ८ ॥	
	महं० यशोवीरेण	
(२३०)	लक्ष्मीं नन्दयता रतिं कलयता विश्वं वर्शीकुर्वता	30
·	त्र्यक्षं तोषयता मुनीन्मुदयता चित्ते सतां जाग्रता ।	
	सङ्खेऽसङ्ख्यदारावलीं विकिरता रूपश्रियं पुष्णता	
	नैकट्यं मकरध्वजस्य विहितो येनेह दर्प्पव्ययः ॥ ९ ॥	
	·	

- (२३१) हंसैर्लव्धप्रशंसैस्तरितकमलप्रत्तरङ्गैस्तरङ्गैनीरैरन्तर्गभीरैर्वकचडुलकुलग्रास[लीनै]श्च मीनैः।
 पालीरूढद्रुमालीतलसुखवायितस्त्रीप्रणीतैश्च गीतैभीति प्रकीडदातिस्तव सचिव! चलचक्रवाकस्तटाकः॥ १०॥
- ⁵ अत्र पं० सोमेश्वरेण पोडशयमकव्यये पोडशसहस्रा द्रम्माणां प्राप्ताः । [पुनः] पं० सोमेश्वरेण-
 - (२३२) दिग्वासाश्चन्द्रमौलिविंहरति रविरयं वाहवैषम्यकष्टं राहोः सातङ्कमिन्दुर्विचरति गरुडान्नागवग्गों विभेति। रत्नानां घाम सिन्धुस्त्रिदशगिरिपतौ खण्णमद्यापि यसा-तिंक दत्तं रक्षितं वा किम्र किम्रुत जगत्यर्जितं येन गर्वः॥ ११॥
- 10(२३३) कलिकवलनजाग्रत्पाणिखेलत्कृपाणः द्युतिलहरिनिपीतप्रत्यनीक्प्पतापः । जयति समरसत्त्वारम्भनिर्दम्भकेलिप्रसुदितजयलक्ष्मीकासुको वस्तुपालः ॥ १२॥
 - (२३४) यदि विदितचरित्रैरस्ति साम्यस्तुतिस्ते कृतयुगकृतिभिस्तैरस्तु तद्वस्तुपालः । चतुरचतुरुदन्वद्वन्धुरायां घरायां त्विमव पुनरिदानीं कोविदः कोऽविदग्धः ॥ १३ ॥
 - (२३५) मुञ्ज-भोजमुखाम्भोजवियोगविधुरं मनः।श्रीवस्तुपालवक्त्रेन्दौ विनोदयति भारती॥१४॥
- 15 (२३६) त्वं जानीहि मयास्ति चेतसि घृतः सर्वोपकारव्रती किं नामा सविता न शीतकिरणो न खर्गवृक्षो नहि । पर्जन्यो नहि चन्दनो नहि ननु श्रीवस्तुपालस्त्वया ज्ञातं सम्प्रति शैलपुत्रिशिवयोरित्युक्तयः पान्तु वः ॥ १५ ॥
- (२३७) गाम्भीयें जलिधविलिवितरणे पूषा प्रतापे सारः

 योन्दर्ये पुरुषव्रते रष्डपतिर्वाचस्पतिर्वाञ्जये ।
 लोकेऽस्मिन्नपमानता[मु]पगताः सर्वे पुनः सम्प्रति
 प्राप्तास्तेऽप्युपमेयतां तद्धिके श्रीवस्तुपाछे सति ॥ १६ ॥
 - (२३८) श्रीवस्तुपालः श्रियमेष केषां हृदि स्थितो हार इवातनोति । विश्राणयन्त्यक्षिगतापरागकणा इवार्त्ति तु नियोगिनोऽन्ये ॥ १७ ॥
- 25 (२३९) दीपः स्फूर्जिति सज्जकज्ञलमलः खेहं मुहुः संहर-न्निन्दुर्भण्डलवृत्तखण्डनपरः प्रद्रेषि मित्रोदयम् । सूरः कूरतरः परस्य सहते तेजो न तेजिखन-स्तन्केन प्रतिमं द्र(व्र?)वीमहि महः श्रीवस्तुपालाभिधम् ॥ १८॥
- (२४०) आयाताः कित नैव यान्ति कित नो यास्यन्ति नो वा कित श्यानस्थाननिवासिनो भवपथे पान्थीभवन्तो जनाः । अस्मिन्विस्मयनीयबुद्धिजलिधविध्वस्य दस्यून्करे कुर्वन्युण्यनिधिधिनोति वसुधां श्रीवस्तुपालः परम् ॥ १९ ॥

10

15

(२४१)	समुद्रत्वं श्लाघेमहि महिमधाम्लोऽस्य वहुधा
	यतो भीष्मग्रीष्मोपमविषमकालेऽप्यजनि यः।
	क्षणेन क्षीणायामितरजनदानोदकतनौ
	दयावेलाहेला द्विग्रणितगुणलागलहरिः॥ २०॥

(२४२) यः सप्ताननसप्तिसोदरयञ्जाः सप्ताव्धिगमभीरिमा सप्तार्चिःपरितसकाञ्चनरुचिः सप्तर्पसर्गावधिः। सप्तद्वीपधरानरालिमुकुट[ः]पुण्याय सप्त व्यधात् यात्राः सप्तजगचमत्कृतकृती सप्त क्षिपन्द्रगीतीः ॥ २१ ॥

(२४३) किमस्तु वस्तुपालस्य मन्त्रीन्दोः साम्यमिन्दुना । यद्ते व[सु]धामेष सुधामेवापरः पुनः ॥

नाभीपङ्कजमङ्कजन्मविधिना वृद्धेन रुद्धं हरे-(२४४) स्तापव्यापदमापदुष्णमहस्रो लीलासरोजं पुनः। किञ्चैतज्ञलजं जलप्रकृतिकं तेन श्रिया शिश्रिये यत्पाणिर्निहि चेदमुष्य पुरतस्तस्यौ न दौस्थ्यं कथम् ॥ २२ ॥

(२४५) मुक्त्वापि पुण्डरीकाक्षं श्रीरिमं शिश्रिये किल। देहार्धनव(?)वन्धेन विरूपाक्षः प्रियां भिया ॥ २३॥

अन्वयेन विनयेन विचया विक्रमेण सुकृतक्रमेण च। (२४६) कापि कोऽपि न पुमानुपैति मे वस्तुपालसद्दशो दशोः पथि॥ २४॥

॥ इति वस्तुपालसम्बन्धिकाच्यानि ॥

(G.) सङ्ग्रहगतं वस्तुपाल-तेजःपालसम्बन्धिवृत्तम् ।

§ १५८) अथ न्यापारे प्राप्ते महं० श्रीतेजःपालः श्रीसम्भतीर्थन्यापाराय प्रहितः । तत्र नोडासईदस्यामिलितं 20 वीक्ष्य तस्य कोऽपि न भेटयति । अमात्योऽपि तद्विज्ञाय तं भेटयामास । अन्यदा तेन एकांते चिट्टडकवाचन-च्छलेन तस्य शिरक्छेदितम् । तस्य भांडागारोऽपि धृतः । सर्वमापि टीपयित्वा गृहीतम् । उपवरिकात्रये मृत्तिकां बीक्ष्य सा खयं गृहीता । सईद्भागिनेयेन राज्ञो मिलित्वा सर्वं कथितम् । राजा म० तेजःपालस्य क्वपितः । मित्रणोऽग्रेऽकथयत्-भवता रम्यं न कृतम् । अकथियत्वा त्वया कथं मारितः । तेनोक्तम्-राजन् ! आज्ञोछंघन्-कारकमन्यमपि न सहामि । राज्ञोक्तम्-तर्हि उलिपतिविषये दिव्यं देहि, घटसपैमाकर्पय । इति प्रतिपन्ने घटसर्पा-25 कर्पणसमये महं० श्रीतेजःपालेन सर्वसमक्षमित्युक्तम्-यन्मया सर्वमापि सईदस्य सत्कं राज्ञे दत्तम् । यदि कदापि सईदस्य धृलिर्मम गृहे तिष्टति तदोत्स्पृखलः(१)मिति भणित्वा सईदभागिनेयस पर्यङ्के घटात्सर्पे आकृष्य क्षिप्तः। स च मृतः । सा च धृलिस्तयस्त्रिंशत्कोटिप्रमाणा गृहे स्थिता ।

§ १५९) एकदा कटकस्थेन राणकेन मन्त्रीशो लेखकं याचितः । मन्त्रिणोक्तम्-अत्र नास्ति । राज्ञोक्तम्-कस्ये समानेतव्यमेव । एवं स्थिते मित्रिणा तुरगारूढो देपाकः प्रेपितः । तेन पुरान्तश्रतुष्पथे गच्छता भक्त्या श्रीवीत-३० रागो नमस्कृतः । पश्चाल्लेखकं गृहादानीय दत्तं खामिनोऽग्रे । अत्रान्तरे तत्रैव पुरे कश्चिद्विजो व्यापारी वर्त्तते । तस पुत्रसुगं विनष्टम् । तृतीयोऽङ्गजो प्रथिलो जातः । पश्चाद्वर्त्तायां पण्मासं यावत् क्षिप्तः । ततो व्यन्तरेणो-क्तम्-च्यापारिन् ! कथं निजपुत्रसारां न कुरुपे । तेनोक्तम्-किं करोमि ? । मम देपाकपार्थात् पुण्यं दापय । ततो प्र॰ प्र॰ सं॰ 10

20

25

देपाकस्य राजादेशः प्रहितः । ततो मित्रश्रीवस्तुपालस्य महदुपरोधेन देपाकः सदने समागतोऽपि भयेन व्यन्तरपार्थे नाभ्युपैति । नृपरोधेनानीतः । व्यन्तरेण सन्मानितः । इत्युक्तं च-यत् त्वया तुरगाधिरूढेन श्रीवीतरागो
नमस्कृतः, तत्पुण्यं मे देहि । तेनोक्तम्-कथमस्य लग्नोऽसि । व्यन्तरेणोक्तम्-अनेन.....ना मया वारितेनापि
मम वलीवईयुगं प्रभ्रतयेव गृहीतम् । तद्विरहेणाहं मृतः । ततो मयास्य पुत्रयुगं मारितम् । अस्य पातकं कथं
- 5 गृह्णामि, अतो मोक्ष्यामि । ततस्तेन पुण्यं दत्तम् ।

§ १६०) श्रीभृगुपुरात् खंडेरायसांखुलाकः श्रीस्तंभतीर्थे श्रीवस्तुपालोपरि कटकं गृहीत्वा समागतः। तदा निर्णीतदिने संग्रामे जायमाने भूणपालेन विंशतिः शंखपत्तयः शंखं भणित्वा मारिताः। तदा मन्त्रिणोक्तम्-रे! शंखमातुः शंखाः कियन्तो जाता विद्यन्ते । तदाकर्ण्य शंखः खयम्रत्थितः। सोऽपि श्रीमन्त्रि-भूणपालाभ्यां पातितः। तदा श्रीसोमेश्वरदेवेनोक्तम्-

(२४७) श्रीवस्तुपाल ! प्रतिपक्षकाल ! त्वया प्रपेदे पुरुषोत्तमत्वम् । तीरेऽपि वार्द्धेरक्रतेऽपि मात्स्ये दूरं पराजीयत येन शंखः ॥

§ १६१) अन्यदा पं० सोमेश्वरदेवेनोक्तम्-

(२४८) वाणे गीर्वाणगोष्टीं भजित मघवति ब्रह्मभूयं प्रपन्ने
व्यासे विद्यानिवासे कलयित च कलां कैशवीं कालिदासे।
माघे मोघां मघोनः सफलयित दशं चाद्य वाग्देवतायाः
सोऽयं धात्रा धरित्र्यां निवसनसद्दं प्रस्तुतो वस्तुपालः॥
काव्यसैतस्य दशसहस्रा मित्रणा दत्ताः।

तेनैव एकदा सभायां मन्त्रिकान्यमिदमपाठि-

(२४९) पाणिप्रभापिहितकल्पतरुप्रवालश्चौलिक्यभूपतिसभानलिनीमरालः। दिग्चक्रवालविनिवेद्यित.....शीमानयं विजयतां भुवि वस्तुपालः॥

इति श्रुत्वा मित्रिणि अधोविलोकयति तेन पुनरिदं प्रोक्तम्-

(२५०) एकस्त्वं भुवनोपकारक इति श्चत्वा सतां जिल्पतं लज्जानम्रशिरा धरातलमिदं यद्वीक्ष्यसे वेद्वि तत्। वाग्देवीवदनारविंदतिलक ! श्रीवस्तुपाल ! ध्रुवं पातालाद्वलिमुद्दिधीर्षुरसकृन्मार्गं भवान् मार्गति॥

[एतच्छुत्वा] द्रव्यसहस्राणि चतुश्रत्वारिंशत्संख्यानि मन्त्री ददौ ।

§ १६२) एकदा श्रीशञ्जुङ्मयतलहिंद्दिकायां श्रीसङ्घपूजायां जायमानायां [चस्रपोटली-] वंधनं कस्यापि पंडित-स्यापितं मित्रणा । ततस्तेनोक्तम्—तद्वीक्ष्य वस्तं मित्रीशाभिम्रखं "किचित्तृलं किचित्सूत्रं०" इति भणिते सहस्रा दश दत्ताः ।

BO §१६३) एकदा केनापि खलेन बहुदानं दीयमानं विलोक्य राणश्रीवीरधवलस्य विज्ञप्तम्-स्रामिन्! तव भाण्डागारो यथेच्छं व्ययमानोऽस्ति । तद्वचनाद्विलोकनार्थं तत्रागतः । तद्दिने ब्राह्मणश्रमणवनीपकदेशांतरिणां विशेपतो दानं दीयमानं दृष्ट्वा मनसि दूमितो राणकः । राणकेनोक्तम्-मन्त्रिन् ! ईदृशेन व्ययेन कथं पूजयिष्यति । मन्त्रिणोक्तम्-यावान् आदेशो भवति, तावान् विधीयते । राज्ञोक्तम्-इयन्ति दिनानि कथं ममादेशो न कृतः ? । यावता पुण्येन राजकुले कार्ये ताविद्वधीयते । राज्ञोक्तम्-तंव व्ययेन मम किं पुण्यम् ? । मित्रणोक्तम्-राजन् ! केवलमहं भाण्डागारिक इवासि, सकलद्रव्यव्ययफलं तवैव । इत्युक्ते राणको जगाद-मित्रन् ! यद्येवं तदा दिगुणं दानं देयम् ।

§ १६४) श्रीवस्तुपालः प्रथमयात्रायां पिशुनप्रवेशभयान्मित्रतेजःपालं तत्र विमुच्य प्रस्थितः । ततो मित्रि-तेजःपालस्य महाविपादः संजातः—यदहं श्रीशत्रुञ्जययात्रायां न चालितो मित्रिणा । तदत्त राणकेन तदवलोक्य 5 गाढाग्रहेण प्रेपितः । ततस्तेजःपालेन महं० देपाक आत्मस्थाने स्थापितः । ततस्तेजःपालं समेतं वीक्ष्य मित्रणो-क्तम्—त्वया न कृतं रम्यम् । यतः प्रश्चरात्मीयो न भवित । तावता द्विज्ञवामनेनेति राज्ञोऽग्रे निवेदितम्—राजन्! मन्त्री यात्राये न गतः, किं तु निधाननिक्षेपाय गतः । यदि राजादेशो भवित, तदा द्रव्यमानयामि । राज्ञोक्तम्—मध्याहे स्थारयेथाः । यथा कटकमर्ण्यामि । तावता तद्विज्ञाय महं० देपाकेन मित्रणः संदियकः प्रहितः । स्थात्रान्वसरे संदियकमुत्सुकं समागच्छन्तं वीक्ष्य मित्रणा तेजःपालस्थोक्तम्—इदं तव चरितमायाति । संदियकेन सर्व-10 मिप निवेदितम् । मित्रणा संघस्याग्रे प्रसादः समेत इति विज्ञप्तम् । निश्चि श्राहद्वयेन मन्त्रं विधाय निधाननिक्षेपाय मानवा अरण्ये प्रहिताः । तत्र तेपां स्वनतां नवं निधानमुन्मीलितं वीक्ष्य मित्रणोक्तम्—नैवात्मनां राजभयम् । तावता द्वितीयसंदियकेनाभ्येत्य स्वरूपं कथितमिति—वामनोऽन्यायकारी राज्ञा विध्वः । पुनः प्रसादो भवतां प्रहितः । ततः कुशलेन यात्रा विदिता ।

§१६५) अनुपमया गुरवो नंदीश्वरतपःकरणोद्यापनं पृष्टाः । गुरुभिरुक्तम्—वत्से ! भवत्या न प्रष्टव्यम् । तयो-15 क्तम्—कथम् ! भवती पृच्छका, अहं कथकः । यदि न विधीयते तदा किम् । पुनरुक्तम्—भगवन् ! कथ्यताम् । गुरुभिरुक्तम्—वत्से ! जयन्यं वावनी ढोक्यते, मध्यमं वावन-वावनी, उत्तमं नंदीश्वरप्रासादः । ५२ आचार्यपद—५२ सिंहासन—५२ पाट एवं सर्वं विधीयते । देव्या प्रतिज्ञा विहिता—द्वितीयवेलायां तदा भोक्ष्ये, यदा प्रासादं कारियप्यामि । गुरुभिरिप ततोऽभिग्रहो गृहीतः—वयमाचाम्लान् तदा मोक्ष्यामः, यदा भवदभिग्रहः सेत्सिति । भोजनवेलायां देव्या मित्रणो भाजने शालिभक्तं प्राञ्जकलं च मुक्तम् । मित्रणा कारणं पृष्टम् । तयोक्तम्—20 भवतामभिग्रहोऽस्ति—यत् गुरुद्त्तशेपं भोक्तव्यम् । गुरवः पृष्टाः सर्वं जगदुः । ततो वामदेवस्य सूत्रधारस्य पटं दर्शियत्वा प्रासादः कारितः ।

§ १६६) एकदा तीर्थयात्रायां श्रीशत्रञ्जयं सङ्घपतिना अवारितं सत्रागारा विहिताः। ततः सङ्घात्सन्ये विधी-यमाने घृतं चुटितम् । सङ्घपतिचित्ते विपादो जात इति यद्विरंगो भविष्यति । स्वरिभिः श्रीयशोभद्राख्येर्ज्ञातम् । आकृष्टिविद्यया श्रीपत्तनात् कर्स्यापि गृहात् घृतमानीतम् । वात्सन्यं पूर्णमजिन । ततो गुर्वजुज्ञया तेन तावन्तो 25 द्रम्मास्तर्सापिताः। तेनोक्तममी कीदशा द्रम्माः १। तेन समग्रोऽपि चृत्तान्तो निवेदितः। तेनोक्तम्—यदि ममाज्यं श्रीशत्रञ्जयस्योपिर साथिमिकवात्सन्ये व्ययितं तदाहं न ग्रहीष्ये । ततस्तेन घृतवसतिका श्रीपत्तने निष्यना ।

§ १६७) एकदा घवलकके कलशप्रतिष्ठायां मिलितेषु वहुषु स्रिषु हो वक्तारो पिप्पलाचायों मिलितो । तत्र ताभ्यामनुपमदेन्ये उपदेश इति दत्तः । यतः—पात्रदानमल्पं विनोददानं वहुतरम् । अनुपमदेन्योक्तम्~नैवम् । वचः स्मृत्वा स्थितो । ततस्ताभ्यां रात्रौ वेपपरावर्तेन मित्रमिन्दिरे गत्वा मित्रदेवीपुरतो महासतीचन्दनाचरितं ३० गातुमारन्थम् । चतुर्विशतिसहस्रद्रम्मा लन्थाः । प्रातरनुपमदेन्यै दर्शितं सर्वम् । सत्यं मानितम् ।

§ १६८) अन्यदा तीर्थयात्रायां गच्छन्तो देशान्तरादागताः श्रीसङ्घा निमित्रताः श्रीवस्तुपालेन । तदा मत्री चरणप्रक्षालनं कुर्वाणः सेवकैर्निपिद्धः । तदा मत्रिणोक्तय्—"अद्य मे फलवती०" ॥

§ १६९) अन्यदा निश्चि पद्दशालास्थितश्रीविजयसेनस्रीन्नमस्कृत्य मन्नी अपवरकस्थितश्रीउदयप्रभस्रीणां वन्दनाय गतः । तन्नैते न विद्यन्ते । एवं दिनत्रयं समेत्य विलोकितम् । चतुर्थदिने विनयपूर्वं वृद्धगुरवः पृष्टाः । तरुक्तम्—मन्त्रिन् ! अद्य कल्ये नगरेऽत्र चाचरीयाक एको महाविद्वानुपागतोऽस्ति । तस्य वचनविशेषश्रवणाय नित्यं स्ररयो वेपपरावर्त्तेन यान्ति । तद्विज्ञाय मन्त्रिवस्तुपालस्तत्र गतः । स्रयः प्रच्छना वीक्षिताः । प्रातः मन्त्रिणा ज्ञाकारितस्य चाचरीयाकस्य सहस्रद्वयी न्यासे कृता । इत्युक्तं च—यत् त्वया पौपधशालाद्वारे चचरे चचरो मण्ड-नीयः । एवं पण्मासं मण्डितः । ततः सत्कृत्य प्रहितः ।

§ १७०) मित्रणा श्रीउदयप्रभद्धरयः पृष्टाः-कथं चतुर्विंशतिजिनेन्द्रध्यानदेव एक एव भवति । तत् कथं चतुर्विंशतिमध्ये को ध्येयः १ । गुरुभिरुक्तम्-महानयं सन्देहः । श्रीसरखतीं विना सन्देहिनर्णयो न भविष्यति । गुरुभिर्निंशि देव्याराधनं विहितम् । श्रीभारत्या उच्छीर्पके श्लोकोऽयं समर्पितः-

10(२५१) अहं सारामि तादातम्यात्तं रूढ्या परमेश्वरम्। स्थितं वाग्व्रह्मणः पारे परं ब्रह्मेति यं विदुः॥ मन्त्रिणोक्तम्-अत्रापि सन्देहः। परब्रह्मेति वाक्यं सर्वाण्यपि दर्शनानि निजनिजदेवस्य कथयन्ति। गुरुभिः पुनः सरस्रत्याराथनं विहितम्। देव्या पुनर्निशि कथितम्-

(२५२) सुवर्ण......ग्रीवामण्डनेऽन्त्यमणिद्वये । प्रभोर्यस्याङ्कितं नाम स्तुमहे परमेश्वरम् ॥ अर्हिमिति सिद्धम् ।

15 § १७१) श्रीभृगुकच्छे श्रीम्रिनसुत्रतनाथाधिष्ठायकाः श्रीवालहंससूरयो विद्वांसः । तेपां मठे घोटकसप्तशती-राज्यम् । एकदा मन्त्री सङ्घं विधाय तत्रायातः । सर्वः स्नात्रपूजादिविधिविहितः । श्रीसूरयो नमस्कृताः । स्न्रिमिः समस्तश्रीसङ्घसमक्षमाञ्जीविदो दत्तः ।

(२५३) असिन्नसारसंसारे सारं सारंगलोचनाः।

-इति वारसप्तकं पठितम्, व्याख्यातं च । ततो मित्रणा चिन्तितम्-यत् स्ररयोऽतिविपयिणः । तदनु गुरु20 भिरुत्तरार्द्धमुक्तम्-

यत्कुक्षिप्रभवा मन्ये वस्तुपाल! भवाददााः॥

ततो मन्त्रिणा हपितेन ग्रामद्वादशकं श्रीदेवपादानां दत्तम् ।

§ १७२) एकदा वह्याग्रामे श्रीमाणिक्यस्रीणां श्रीवस्तुपालेनाकारणं प्रहितम् । परं नागताः । तदनु मंत्रिणा मह(०त्य १)वदातवती विज्ञप्तिका निमंत्रणार्थं प्रहिता । तत्रेदं काच्यम्─

(२५४) इदं ज्योतिर्जालं जटिलतिवहायः स्थलमलं

सखे मा माणिक्य प्रथय परितः सर्वहरितः। अयं ग्रंजापुंजाभरणस्त्रभगंभावुकवपुः

पुलिंद्राणा(०दाना?)मिंद्रस्तव नहि परीक्षाक्षममितिः॥

तथापि सरयो नायाताः । तदा द्वितीयविज्ञप्तिकायां श्लोकोऽयं प्रहितः । तद्यथा ''जडसंगमे प्रहपीं(१) द्विजिह्य 30 जनवल्लभोऽति तुच्छपदः । वटकूप० ।'' अनेन श्लोकेन सरयो रुष्टाः । तत आशीर्वादे विशेपावदाते श्लोकोऽयं प्रहितः-

> (२५५) वंशार्द्धार्द्धपरिस्फूत्त्यो रे पिंजन! विजृंभसे। गुणालीजन्महेतृनां तूलानां हृद्विपाटयन्॥

25

अनेन मर्मणा मंत्रिमनिस महान् विपादोऽजिन । तद्तु तत्रत्यमंत्रिणापार्थान्तविष्णिद्दितित्रपिष्टिश्रला-कापुरुपचरितमंडारो रात्रौ चौरवृत्त्या निःकाशितः । प्रातः स्रयो विपादिताः । चित्तनिर्वृत्त्यर्थं वाहरा विहिता । ततो मंत्रिणा दिनेषु सप्तसु गतेषु कस्यापि पथिकस्य हस्ते उपलेखपत्रे श्रीस्रीणां विज्ञप्तिका प्रहितेति—यदत्र तत्र-भवतां भवतां श्रीस्रीणां पुस्तकभांडागारो विल्तोऽिस्त । यदि कार्यं भवति तदाऽऽगंतव्यम् । श्रीस्र्यस्तद्विज्ञाय प्रस्थिताः । मंत्रिणा महाप्रवेशोत्सवो विहितः तद्न मध्याहे श्रीसंघपूजायां श्रीस्रिरिभः काव्यमिदं श्रोक्तम्—

- (२५६) देव! खर्नाथ! कष्टं क इह ननु भवान्नन्दनोद्यानपालः खेदस्तत्कोऽच केनाप्यहह हृत इतः काननात्कलपृष्टक्षः। हुं मा वादीः किमेतत्किमि करुणया मानवानां मयैव प्रीत्या दिष्टोऽयमुर्च्यास्तिलकयति तलं वस्तुपालच्छलेन॥
- (२५७) वैरोचने रचितवलमरेशमैत्रीमेकत्र नाकनगरं च गते द्वितीये। दीनाननं भुवनमृद्धमध्यापश्यदाश्वासितं पुनक्दारकरेण येन॥

ततः श्रीसूरयो मंत्रिणा विज्ञप्ताः । किमेतदधुनागमनकारणम् १ । गुरुभिरुक्तम् – चयं सरस्रतीपुत्रकाः, भवांश्र सरस्रतीकंठाभरणमिति । यत्र सा तत्र वयम् । इति हर्पितः ।

§ १७३) श्रीवस्तुपालसभायां हरिहर-मदननामानौ पंडितौ महाकवीश्वरौ परस्परं निरंतरं विजय(विवद्य ?)मानौ स्तः।तो द्वाविप परस्परं मत्सरं कुर्वतौ न तिष्ठतः। ततो मंत्रिणा दौवारिकस्योक्तम्—यत् त्वया एकसिन् पंडितेऽन्तः- 15 स्थिते द्वितीयपंडितप्रवेशो न देयः। एकदा हरिहरे सदिस विद्याविनोदं वितन्यति मदनोऽपि समेतः। तेनोक्तम्—

(२५८) हरिहर! परिहर गर्व कविराजगजांकुको मदनः।

द्वितीयेनोक्तम्-

मदन ! विमुद्रय वदनं हरिहरचरितं सारातीतम्॥

ततो मंत्रिणा प्रोक्तम्-यः पणे काव्यशतं प्रथमं विधासति, स महाकविः । एवं सित मदनेन नालिकेरवर्णाने 20 काव्यशतं त्वरितं विहितम्। अथ हरिहरेण काव्यपिः। ततो मंत्रिणोक्तम्-हरिहर! त्वया हारितम् । तेनोक्तम्-

(२५९) रे रे ग्रामकुविंद कंदलयता वस्त्राण्यमूनि त्वया गोणीविश्रमभाजनानि वहुद्याः स्नात्मा किमायास्यते । अप्येकं रुचिरं चिरादभिनवं वासस्तदासूत्र्यतां यन्नोज्झन्ति कुचस्थलात् क्षणमपि क्षोणीभृतां वहुभाः॥

ततो मन्त्रिणा हर्षितेन द्वाविष मानितौ ।

§१७४) एकदा व्यापारे व्यतीते नागडमंत्रिणि व्याप्रियमाणे श्रीवीसलदेवस्य मातुलो मूलराजः प्रातः श्रीवस्तुपालगुरुपोपधशालाप्रत्यासन्ते पथि व्रजन् लघुक्षुल्लकत्यक्तपुंजकेन खरंदितः । तदनु मंत्रिणा क्षुल्लकपरा-भवत्वात्तस्य करः छेदापितः । वंवारवो जातः । ततो रुप्टेन राज्ञा वस्तुपालवधाय सैनिकाः प्रेपिताः । मंत्रीशोऽपि राज्ञानमागत्येति जगाद−िकं मया कृतम् १ राज्ञोक्तम्-प्रत्यक्षमिदम् । मंत्रिणोक्तम्-अहं तवायशः सोढं नालम् । ३० दर्शनपराभवोद्भवमयशो अपरराजमंडले याति । इति वचः श्रुत्वा विचार्य च राजापि हर्षितः । प्रसादं ददौ ।

§ १७५) अंत्ययात्रायां महं वस्तुपालस्य आकेवालीयसरसःपाल्यां आकली समेता। तत्र स्थितो मंत्री। भूमौ मुक्तः। श्रीसंघे तत्रागते उत्सवे विधीयमाने च मंत्रिणोऽश्रुपातः समजनि। कारणं पृष्टः। तदा मंत्रिणोक्तम् न में संसारविषये चिंता वर्तते, परम्-

सुकृतं न कृतं किंचित्०॥१॥

⁵ (२६०) तृपव्यापारपापेभ्यः सुकृतं स्वीकृतं न यैः।तान् धृलिधावकेभ्योऽपि मन्ये मूढतरान्नरान्॥

(G.) सङ्ग्रहगतं वीरधवलवृत्तम्।

§ १७६) अथ श्रीवीरधवलवारके नांदउद्रीपालितः, अढारहीउ वह् उहरदेवः वह्याचाचरीयाकस्य शिष्यः । अन्यदा आश्वापह्यां समेतः । ततो दिवससप्तके जाते तत्परिवार इति कथयति—शंवलं नास्ति किंचित् । चाचरं क्षिपत । स भणति—स्थिरीभवत । अहं नित्यं नगरमनुष्यमनोऽभिप्रायं विलोकयन्नस्मि । इतश्च महाराष्ट्रीयो गोविद10 चाचरीयाकः समाययौ । यस्पाष्टादशपुराणानि अष्टौ च्याकरणानि चउपईवंधेन मुखपाठेनागच्छंति । तेन चचरः क्षिप्तः । पारूथाद्रम्माश्चतुर्विद्यातिसहस्रसंख्यका मिलितास्तस्य । ततो हरदेवचाचरीयाको विशेपतः परिच्छदेन प्रोत्साहितो लवदोसिकहड्डे सायमुपविष्टः । ततस्तेन सहजतो वार्त्यां कुर्वाणेन सीतारामप्रवंधः कथितुमारेभे । प्रथमं दश्च द्वादश जना मिलिताः । क्रमेण बहवः । मध्यरात्रौ सुलासनाधिरूढा अमात्याद्याः शृण्वंतः संति । इतश्चोत्थितः यथा श्रोदृणां विघातो न भवेत्तथा भणन् बिद्यः साअमतीनदीतीरं गतः । ततो गानं विस्रप्टम् । वित्रः शितभीता लोका इति वदंति—यचं तथा क्ररुष्य यथा सुखेन नगरे गम्यते । ततस्तेन पुनरुत्तररामचरित्र-गानमारच्धम् । तदन्त सर्वोऽपि जनः परमरसमप्रश्चतुष्पथे समानीतः । ततो लोकेन मुद्रिका-पट्टक्र्लादि-दानेन द्वामलक्षत्रयी दत्ता ।

(G.) सङ्गहगतं वीसलदेववृत्तम् ।

§ १७७) श्रीजिनदत्तस्रिरिशिष्येण पं० अमरनाम्ना कोऽपि देशांतरी निरामयो विहितः । तेन श्रीसारस्रतमंत्रो 20 दत्तः । तत्प्रभावान्महाकविरभूत् । ततः पं० सोमेश्वरदेवसान्निष्यात् प्रथमं गद्यभारतम्, तदन्त च्छेकभारतं च चकार । ततः सोमेश्वरदेवेन श्रीवीसलदेव इति विज्ञप्तः-राजन्! कविः कर्त्ता एव, परं राजा ग्रंथं वर्त्तापयति । इत्युक्ते ग्रंथविलोकनहेतोः पूजा विहिता । शलाकया श्लोको विलोकितः । तद्यथा-

द्धिमथनविलोल्ह्योल्ह्याचेणिदंभा०॥१॥

ततो वेणीकृपाण इति विरुदं जातम्। ग्रंथो विदितो जातः। श्रीवालभारते समग्रेऽपि निष्पन्ने निशि व्यासेन 25 चोरितं पुस्तकम्। प्रातर्यावद्विलोकयित तावता पुस्तकं नास्ति। महाविपादोऽजिन। तावता व्यासेनोक्तम्—कथं विपादं क्रुरुपे १। त्वया मम सपादलक्षग्रंथस्य चौर्यवृत्तिविद्विता। अन्यत् मम नामापि न गृह्णासि। तव ग्रंथः कथं वित्तिष्यते १। एवम्रुक्त्वा पुस्तकमित्तम् । त्वद्विचारे यत्समायाति तद्विधेयम्। ततः प्रातश्रतुश्रत्वारिंशत्सर्ग्यपुरि एकेकं नवं काव्यं चकार। अन्यदा श्रीवालभारते जगद्विदिते जाते वायडज्ञातीयमञ्जाजनवाणउटीपद्मनाम्ना पं० अमरस्येति गदितम्—पंडित! तव चेत् सरस्वत्यिप प्रसन्ना जाता। तिर्हे कथं मिथ्यात्वं स्वीकृतम् १। कथमा- 30 त्मीये चरित्राण्यिप न विद्यंते १—इति प्रतिवुद्धेन पंडितेन त्रिपष्टिशलाकापुरुपचरितं पद्मानंद मामा ग्रंथः कृतः।

[&]quot; एतच्छव्दोपरि पृष्ठस्याधोभागे एवंरूपा टिप्पणी लिखिता लभ्यते—''तत्रारम्भः—मद्गोर्मिथ्यापथभ्रान्ता स्नाति श्रानितमलच्छिदे । चतुर्विद्यतितीर्थेद्यचरित्रामृतसागरे ॥''

§ १७८) श्रीवीसलदेवसाग्रेऽवसरे जायमाने रागानिभन्नस्य राज्ञो रागसंकेताः कृताः संति श्रीनागलदेव्या । श्रीरागस्य शरीरं, वसंतस्य कुसुमं, भैरवस्य भेरीरवः, पंचमस्यांगुलिपंचकं, भेघरागस्याकाशः, नद्दनारायणस्य चकं, कानडा कर्णः, धनासी धान्यं, नाटसारि पासकः, सोरठी पश्चिमा, गूर्जरी सिंहासनं, देवशाखायां द्वारशाखा-दर्शनस्—एवम् । एकदा कोऽपि वहकारः समागतो देवशाखायामवलगां करोति । राजा रागं न वेति । राज्ञी तु वारं वारं द्वारशाखां दर्शयति । एवं वहकारेणोक्तम्—राज्ञि । भवती चेत् द्वारशाखां विदारयति, ततोऽपि राजा 5 न वेति । इत्युक्ते राजा हसितः ।

§१७९) एकदा श्रीवीसलदेवेन नागलदेव्यग्रे न्यगादि—यन्मां रागपद्धतिं शिक्षय । एवम्रक्ते दिनपंचसप्तका-नंतरं यवनिकांतरितया देव्या वहुदासिकाभिः प्रत्येकं तदेव कार्यं निजगदे । राज्ञोक्तम्—देवि ! किमेतत् सर्वा अपि दासिकास्तदेव कार्यं निगदंति ! देव्योक्तम्—देव ! काः कियंत्योऽभ्वन् ! राज्ञा सर्वा अपि नामग्राहं कथिताः । देव्यूचे—राजन् ! रागपद्धतिरेवमेव ज्ञायते । ततो देव्या वीणामादाय राजा रागान् सर्वानपि शिक्षितः ।

§१८०) अन्यदा मध्यरात्रौ नागलदेवी राज्ञश्वरणसंवाहनं कुर्वाणा श्रांता। ततस्तयोक्तं द्वद्वमहिलीवउलीपुरःयत् त्वं चरणसंवाहनं कुरु । अहं श्रांतासि । ततो मयणसाहारेणोक्तम्-यत् त्वं आत्मानं पखाउजीपुत्रीत्वं न
वेत्सि । पखाउजसत्कं भोजनं कुसणाती निर्विण्णा न । अधुना खिन्ना । ततो रुपितया (रुप्टया १) तया मयणसाहारस्य नासाच्छेदः कारितः । ततो देविगरौ गतः । राज्ञा सिंहणदेवेन पृष्टः । तेनेत्युक्तम्-अत्र स आगच्छिति
यस्य नासा न स्थात् । इति श्रुतेन नूतना नासा कुर्तोऽप्यानीय तत्क्षणमारोपिता । लगा । अन्यदा पुनः 15
श्रीपत्तने समागतः । राज्ञा पृष्टः स वक्ति-अन्यस्य समीपे नासा याति । परं सिंहणदेवसमीपे गतापि समागच्छिति । इति हृपेन प्रसादो दत्तः ।

§१८१) श्रीवीसलदेवस्य द्वारमहेन नीराजनावतरणसमये प्रचुराकारणैरागताया नागलदेव्याः कथितमिति— कथं आत्मानं न जानासि? । इयतीं वेलां विलंबसे । इति कथिते कुपिता[ऽत्यर्थ] तद्वचनेन । मारणे गाढाप्रहां मत्या राज्ञा न मारितः, किं तु मयणसाहारस्य नेत्राकर्पणं कृतम् । तेनापमानेन स मालवपतिनरवर्म्मसमीपं 20 गतः । तेनाविजतेन ग्रास्थासनादि समप्पितम् । एकवेलं राज्ञा कथितम्—मदन ! वीसलेन राज्ञा तव नेत्रे कथं किंपते ? । गाढाप्रहं पृष्टेन तेनोक्तम्—विवेकनारायण ! गूर्जरधराधिपतिरस्तत्स्वामी विवेकच्रहस्पतिः । यथा रणभग्नस्य नृपाधमस्य सुखमसाकीनानि पात्राणि द्वारमहादीनि न पत्रयंति । अत एवं विहितम् । स नरवर्म्मराज्ञा वीसलेन वारत्रयं भग्नोऽस्ति । श्रुत्वैव स्थितः । [ज्ञातं] चरपरंपरया श्रीवीसलदेवेन । मयणसाहारः समाकारितः । अतीव मानं दत्तम् । एकदा पृष्टम्—कथमीद्वग्वाक्येन नरवर्म्मराज्ञो विपादो न जातः ? । 25 तेनोक्तम्—स उभयवंशविशुद्धः, न भवाद्यः । यतः—भवान् (भवत्?) पितृपक्षे त्र्णसीदः स पदातिमात्रः । मातृपक्षे महिपीभक्षका जेठेया इति । राज्ञा किमपि न कथितम् ।

- ११८२) एकदा श्रीवीसलदेवस दक्षिणे चक्षुपि अंजनीरोगो जातः। तद्यथा दिनत्रयस्य मध्ये यहुभिरुपचारैरपि नोपश्चमित । ततोऽरिसिंहराजवैद्यस्याकारणं प्रहितम् । तेन समेतेन गदितं इति—अहो प्रधाना! विहिते भेपजे राज्ञो घटिकाचतुष्टयं यावन्महती व्यथा भविष्यति । तदाहं मार्यमाणो रक्षणीयो भवद्भिः। तैरुक्तम्—भवतु । ३० इत्युक्ते भेपजं दत्तं वैद्येन । ततो विशेपेण वेदना जाता । ततो राज्ञोक्तम्—अम्रुं मारयत । परं स रिक्षतः। अथ घटिकाचतुष्कादनंतरं निरामयेन राज्ञा वैद्यसामंत्रणं प्रेपितम् । प्रधानरुक्तम्—स मारितः। राजातीव दुःखितोऽभृत् । तदनु समानीतो वैद्यः। तत्पुरो राज्ञोक्तम्—मम भेपजं कथय, अन्यथा मारियण्ये। व्यथा

सर्वसाधारणा । त्वं तु कुत्रापि यास्यसि । अतोऽहं सर्वविदितं औपधं विधास्ये । तेन पीॡकुलीयकः कथितः । ततो राज्ञा सन्मानितः । वहुद्रव्यं दत्तम् । औपधं सर्वत्र विदितं कृतम् ।

- § १८३) अन्यदा आञ्चापल्यां राजीमतीछिपिकया गुरुपार्श्वे आगमोक्ततपांसि द्वात्रिंशन्मितानि कृतानि । तत आंविलवर्द्धमानतपोऽभिग्रहे गुरुभिरुक्तम्—यत्तपिस कोघो न विधीयते । कोघेन तपःक्षयो भवति । इति क्रोधसाभिग्रहो गृहीतः । एवं राजश्रीवीसलदेवस्य सदिस महं० सातूकस्य व्यासस्य च होडा जाता । यनमनुष्यः सकोघो भवत्येव । मंत्रिणोक्तम्—अहमकोघिनं दर्शयिष्यामि । ततो वंठपार्श्वान्तरगखुरै रंगभांडभंगे कृते तस्याः, तया तु तुरगचरणानां शीतलजलेन क्षालनं विहितम् । राज्ञा तदवगत्य तस्याः पंचांगप्रसादः, सर्वांगाभर-णानि दत्तानि । ततस्तया तेन द्रव्येण प्रासादः कारितः ।
- § १८४) मंत्रिणि श्री[वस्तुपाले] दिवंगते पं० सोमेश्वरदेवेन व्यासिवद्यासमर्थिता(०र्थना १) त्यक्ता । ततः 10 श्रीवीसलदेवेन महानप्युपरोधो विहितः । विशेषग्रासलाभोऽपि दर्शितः । परं [तेनोक्तम्-मंत्रीश्री]वस्तुपालस्याग्रे व्यासिवद्यां विधाय नान्यस्य पुरो विद्धामि । ततो राज्ञा गणपतिनामा व्यासः कृतः ।
 - § १८५) पुरा मुद्रलवंदीकृतवसाहजगङ्ग श्रीवीसलदेवेन दुर्गादागत्य निशि (अत्रार्द्धप्राया पंक्ति-निष्टा) द्रव्यमादाय नष्टः । भद्रेश्वरे व्यवहारी जातः ।
- § १८६) अथ भद्रेश्वरे वसाहजगडूनामा वसित । अन्यदा राजकीयप्रवहणे वाजिपंचकराशिविहितः । आग15 च्छमानं यानं तटे एव भग्नम् । राजा समुद्रोपकंठे विलोकनाय गतः । तत्र समेतेन मनुष्वेणैकेन प्रवहणमध्यस्वरूपं समग्रमपीति कथितम् । याने १४४ घोटका आसन् । तेषां मध्यात् प्रधानाश्वपंचकं वसाहजगडूकस्य ।
 तेषां मध्ये करडाकनामा सर्वोत्तमस्तुरगो विद्यते । ततो वसाहेनोक्तम्-मदीया अश्वाः समेष्यंत्येव । राज्ञोक्तम्कथमसाकं तुरगा यास्यंति, कथं तवोद्गरिष्यंति । वसाहेनोक्तम्-तवापि ममापि च भाग्यं सद्दशं नेति वार्तां
 कुर्वतोर्द्दयोः समुद्रान्तश्रतुर्भिस्तुरगैः सह करडाकः प्रकटीवभृव । समागतश्च सकलोऽपि लोकश्चमत्कृतः ।
- 20 § १८७) अन्यदा सं० १३१५ वर्षे दुर्भिक्षकाले श्रीवीसलेन चणकत्रुटौ भद्रेश्वरव्यापारिणो नागडस्य लेखः प्रहितः । जगङ्कोऽत्र धृत्वा समानेतव्यः । तेन तस्य लेखं दर्शयित्वा श्रीपत्तने तेन सह गतः नागडः । सर्वा-ण्यिप रंककुटुंवानि तत्रागतानि । तेपां दानं दातुमारव्धम् । ततः स्थालैः ३६००००० तटा कृता । विशुद्धवे-पाणां विणक्षपुत्राणां मध्ये तं सामान्यवेपस्यं वीक्ष्य राजा नोपलक्षयित । ततो मंत्रिणा दर्शितः । राज्ञोक्तम्-कथ-मीद्दश्च एव वेपः । तेनोक्तम्-राजन् !
- ²⁵ (२६१) तन्वंति डंवरभरैर्महिमा न मन्ये श्लाघ्यो जनस्तु गुणगौरवसंपदैव । शोभाविभूषणगणैरितरांगुलीनां ज्येष्टत्वमेव रुचिरं खलु मध्यमायाः॥

इति अष्टादशसंडैः सिंगिणिर्विदेशराज्ञा प्रहिता तस्यापिता । उक्तं च-राजन्! किमर्थमहमाकारितः । राज्ञोक्तम्-चणकहेतोः । तेनोक्तम्-मयानंतगुणं लाभं विचार्य कणकोष्टागाराः सर्वेऽपि रंकहेतोर्दत्ताः । राज्ञो-क्तम्-तर्हि मया वडरंकेन भाव्यम् । एवं हपितेन मूढकशत १८ चणकसमर्पणं विहितम् ।

[†] अत्र पृष्टसोपरितनभागे एतादशी टिप्पणी-

अट्ट य मूडसहसा वीसलदेवस्स सोल इम्मीरा । एकवीसा सुलताणा पर्यादेन्ना जगडु दुकाले ॥ नवकरवाली मणिअडा तिहिं अगगला वियारि । दानसाल जगडूतणी कित्ती कलिहि मझारि ॥ निर्यातदानदाता हरिकांताहृदयहारऋंगारः । दुर्भिक्षसंनिपासे त्रिजगहू जगडू चिरं जीयात् ॥

३६. विश्वासघातकविषये नन्दपुत्रप्रवन्धः (B.)

§ १८८) एकदा पाटलीपुरे नन्दो नृपत्तस्य भानुमती देवी । एकदा नृपस्त्वाखेटकं गतः । तत्र भोजनवेला जाता । नृपो देवीदर्शनं विना न धनिक्त । इतो वररुचिना देवीभारतीयसादाहेवीरूपं कृतम् । गुहादेशे विनदुः पपात । एकवेलमपाकृतः । पुनस्तथैव । तेन चिन्तितमत्रास्ते । राजा देवीं निर्वर्ण्य हृष्टो सक्तश्र । विन्दुं दृष्ट्वा कुपितो नूनमसावन्तः पुरे विनष्टः । राजा रक्षकेण च्छन्नं वररुचिर्मारितः । आरक्षकेण भूमिगृहे स्थापितस्तस्य पुत्रान् 5 पाठयति । इतो नृपस तनयो राजपाट्यां गतोऽश्वापहृतो वनं ययौ । अश्वस्तु मुक्तमात्रो मृतः । कुमारोऽपि फला-स्रादं कृत्वा वासार्थं वृक्षं प्राप्तः । तत्र उपरि रिंछोऽस्ति । इतो नरगन्धाद् व्याघः समायातः । कुमारः प्राणभया-हुक्षमारूढः । रिछेनोक्तम्-एहि एहि त्वं ममातिथिः । च्याघ्रस्तु वृक्षमृत्रे स्थितः । रिछेनोक्तम्-च्याघ्रस्य मम वैरमित । त्वया तु न भेतन्यम् । कुमारस्तस्य समीपं गतः । रिछेनोक्तम् स्थिभूय निद्रां कुरु । स रिछांके शिरो दत्त्वा सुप्तः । न्याघ्रेणोक्तम्-भो! रिंछामुं नरं यद्यर्णयसि तदाऽऽवयोः प्रीतिः सात् । आवां स्वजनावेकत्र 10 वनवासिनौ । तेनोक्तम्-नाहं विश्वस्थनः । अम्रं ग्रुगान्तेऽपि नार्ण्यामि । इतः कुमारो जागरितः । रिछेनोक्तम्-त्वं जागृहि, शयनमहं करोमि। परमसौ मां याचियप्यति। असौ कपटवानिस्ति। त्वया तु मिलनता न कार्या। एवम्रुक्त्वा सकेशान् शासायां बद्धा सप्तः । इतो व्याव्रेणोक्तम्-भो राजपुत्राम्नं ममार्पय । यथा त्वां जीवन्तं मुश्चामि । अन्यथा वनात्कथं यासिसि। असौ मिलनोऽस्ति प्रातस्त्वां हत्वा खाद्यिप्यति । क्रमारेण रिङस्तद्वचसा क्षिप्तः । स केशैर्वद्धैः स्थितः, न पतितः । तेन कुमार उक्तः-रे किमिदम् १ अधुना किम् १ । स चरणयोर्निप-15 त्याह-अहं अलः । तेनोक्तम्-त्वं वचनाद्धष्टः । अतस्ते तत् यातु । तेन सदैन्यमुक्तः-अनुग्रहं देहि । तेनोक्तम्-'विसेमिरा' एवं जल्पसि । यदि कोऽप्यमुं व्याख्यानयिप्यति तदा ते वचः पटुतरं स्यात् । इतः प्रभाते तुरगपदैः सैन्यमायातम् । व्याघ्रस्तु वनं गतः । रिंछोऽपि गतः । कुमारः पुरमायया । परं 'विसेमिरा' एतदेव वक्ति । मात्रिकैर्जरप्यमानोऽपि तदेव वक्ति । पण्डितेन आरक्षकः पृष्टः-नृपसभायां का वार्ता १। खरूपं श्रुत्वोक्तम्-मां तत्र नयसि तदा सर्जं करोमि । तेनोक्तम्-चल ।...कथमाकारणं विना गम्यते १ । आरक्षकेण नृपः पृष्टः-देव 120 मम गृहे युवत्येकाऽऽयातास्ति सा सज्जीकरिप्यति । नृपेणाहता । पण्डितः स्त्रीवेपो नृपसभां गतः । यवनिकान्त-रितः स्थितः । क्रमारो जल्पितस्तेन-

> (२६२) विश्वासप्रतिपन्नानां वश्चने का विदग्धता। अङ्कमारुह्य सुप्तस्य हन्तुः किं नाम पौरुषम्॥ इत्युक्ते आद्याक्षरो मुक्तः ।

25

(२६३) सेतुं गत्वा समुद्रस्य महानदाश्च सङ्गमे । ब्रह्महा मुच्यते पापान्मित्रद्रोही न मुच्यते ॥ इति द्वितीयाक्षरः ।

30

(२६४) मित्रद्रोही कृतग्नश्च यो वै विश्वासघातकः । तावत्ते नरकं यान्ति याववेन्द्राश्चतुर्दश ॥

(२६५) राजँस्त्वं राजपुत्रस्य यदि कल्याणमिच्छसि । देहि दानं द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो ग्रुरः ॥

[इति चतुर्थाक्षरः ।]

[इति तृतीयाक्षरः ।]

(२६६) नगरे वससि हे बालेऽटव्यां नैव यास्यसि । सिंहव्याघमनुष्याणां कथं जानासि भाषितम् ।। (२६७) देव! द्विजप्रसादेन जिह्वाग्रे मम भारती। तेनाहं नन्द! जानामि भानुमतीतिलकं यथा॥

नृपेणोपलक्ष्य पण्डितो मानितः । आरक्षकस्य प्रसादो दत्तः ।

।। इति विश्वासघातकविषये नन्दपुत्रप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्घहे नन्दनृपोछेखः।

§ १८९) पाटलीपुरे नंदनामा नृपोऽजिन । महाकृपणः कस्यापि किमिप न दत्ते । ततः सर्वेपां द्वेष्योऽजिन । अत्रांन्तरे कालदोपेण स मृतः । तदनु परकायप्रवेशविद्यासिद्धद्विजेन राज्ञः शवे स्वात्मा निवेशितः । ततः शवं 10 सम्रित्थितम् । सकलराजलोकस्य महानंदोऽजिन । सर्वेपां राज्ञा प्रसादो दत्तः । मंत्रिणः सर्वेऽपि तदौदार्थं विलोक्य पुरे द्विजदेहसंस्कारं कारितवंतः । स एव राजा कृतः ।

३७. वलभीभङ्गप्रबन्धः (P.)

- § १९०) मरुमंडले पछीग्रामे काक्-पाताकौ आतरौ। तयोर्लघुर्धनवान् । ज्यायांस्त तद्वहे वृत्त्या वर्तते। एकदा प्राव्टकाले लघुक्तिः-केदारास्ते स्फुटिताः। खकर्म निन्दन् कुदालस्कन्धो यावद्याति तावत्कर्मकराः सेतृन् 15 बन्धयन्ति । के यूयम् १ । तैः प्रोचे-भवज्रातुः कर्मकराः । मदीयाः क सन्ति १ । वलभ्याम् । गतस्तत्र सः, गोपुरस-मीपे आभीराणां संनिधो तार्णगृहे स्थितः । अत्यंतं कुश्चतया तै रंक इति नाम कृतम् । इतः कोऽपि कार्पटिको कल्प-प्रमाणेन रैवतशैलादलावुना सिद्धरसङ्क्पात् तुंविका भृता । तामादाय कावडिमध्ये गुप्तीकृता मध्ये मार्गस्य याति । तंवकमध्यादशरीरिणी 'काकुइ त्ंबडी' इति वाणीमाकर्ण्य जातविस्यभीर्वेलभ्यां तस्य च्छिबनो विणजः समिन समागतः । तत्र स रंक इति ज्ञात्वा पूर्वनामभीतः सरसमलाचु तत्र स्थापयांचके । स्वयं सोमेश्वरयात्रायां गतः । 20 गलद्धिन्दुनाऽधस्तापिका खर्णमयी । सिद्धरसं मत्वा सर्वं कृष्ट्वा गृहज्वालनं कृतम् । सर्वजनस्य समक्षं रोदित । स्वच्छत्र प्रकटीकरणम् । लोकैः पर्यवसापितस्तथैव प्रज्वलितं गृहं ग्रुक्तवाऽन्ये गोपुरे गृहं कृतम् । तत्र मोगाः संति । तसिन् साहसादुवास स निर्भयः । क्षेत्रे रात्री वसति । पत्नीं प्रति गृहे वक्ति पतामि ३ । प्रातः कथितम् । सा क्षेत्रे खर्य गृहे । पुनः शब्दे पतेति प्रोक्तः । खर्णपौरुपसिद्धिप्रदः । सत्त्वैक-अगण्यपुण्यप्रभावात् खर्णपुरुप-सिद्धिः । तत्र प्राज्याज्यक्रयः । अन्यदा घृतभांडमक्षीणं प्रेक्ष्य सुस्थके चित्रकवल्ली दृष्टा । स्त्रियाः कैतवेन 25 गृहीता । कार्पण्यनिधिः । अथ खसुताया रत्नखिनतकांचनकंकतिकायां राज्ञा खसुताकृते प्रसभमपहतायां तद्विरोधो जातः। "काके शौचं०॥" सोऽपि म्लेच्छान् वलभीभंगाय। यद्वच्छाखर्णदानम् । तदनुपकृत एकश्छत्र-धरो निशि राज्ञि सुप्तजाग्रदवस्थे पूर्वसंकेतितनरसमालापः। असिन् खार्मिनो नास्ति विचारलेशोऽपि, न परमपि पृच्छति । रंकवणिजा प्रेरितः सूर्यपुत्रं शिलादित्यं प्रति याति । प्रातः प्रयाणविलम्बं दृष्ट्वा तस्य स्वर्णदानम् । प्रनिर्द्धितीयदिने पुनः ''सिंहस्यैकपदं० ॥ कः स्थास्यति मे स्वामिनः० ।'' प्रयाणम् ।
 - 80 ६९९) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता बालविधवाऽर्कसंम्रुखावलोके सौरं मंत्रं जपित । तेनैव भ्रुक्ता । गर्भः । लज्जमानेन पित्रा वलभ्यां प्रस्थापिता । पुत्रजन्म । सोऽष्टाव्दः । लेखशालापराभ्रुतो पितृनामानवगम्य मर्तुकामो-ऽर्केण करे कर्करोऽर्पितः । सापराधे शिलाऽन्यथा तवैव सा इत्युक्तः । ततः शिलादित्यः । तत्पुरनृपेण परीक्षायै

तथाकृते मृते राज्ञि स एव राजा । अर्कदत्ताश्वारूढो नमश्रर इवेच्छाविहारी । जैनः । शत्रुङ्जयोद्धारकः । कदा-चित् सौगतैस्तमिष्ठितम् । तद्भागिनेयो मछनामा क्षुष्ठः वेषपरावर्तेन वौद्धपार्थे । खे भारत्योक्तम् –के मिष्टाः १ । चछाः । पण्मासान्ते –केन सह १ । घृतगुडाभ्याम् । इत्युक्ते तुष्टा भारती । जिताः सौगता निष्कासिताः । शिला-दित्येनाचार्यपदं कारितम् । श्रीमछवादिद्धरिः ।

· § १९२) इतो वलभ्याः श्रीचन्द्रप्रभविम्वं सांवाक्षेत्रपालादि अधिष्ठातुर्वलेन व्योम्नि शिवपत्तने गतम् । अश्विनीपू- 5 र्णिमास्यां रथाधिरूढा श्रीवीरप्रतिमा श्रीमालपुरे । ततः पूर्देवतया श्रीवर्द्धमानस्रीणां वहिर्भुमौ रोदनेन ज्ञापनम् ।

(२६८) का त्वं सुंदरि जल्प देविसदृशे किं कारणं रोदिषि
भंगं श्रीवलभीपुरस्य भगवन् पश्याम्ययं प्रत्यः।
भिक्षायां रुधिरं भविष्यति पयो लब्धं भवत्साधुभिः
स्थातव्यं सुनिभिस्तदेव रुधिरं यस्मिन् पयो जायते॥

10

पुरीसमागताः श्रावकाणां पुरः प्रोच्याशिवं चिलताः । तैश्र समं शकटसहस्र १८ चिलताः । मोद्देरपुरे रुधिरं पतद्भहे पयो जातम् । पुरीपरिसरे म्लेच्छाः । रंकेण पंचशव्दवादकान् वहुस्वर्णेन विभेद्य तस्य तुरगसारोहण-काले एव कियमाणे पंचशव्दसाराविणे तार्क्ष्यवदुङ्घीय स दिवमुत्पतितः । किंकर्तव्यतामूदः शिलादित्यसौर्निजन्ने । "भवंत्युपा० ॥" "तावचंद्र० ॥"

(२६९) पणसइरी वासाइं तित्रिसयाईं अइक्समें अणं। विक्रमकालाउ तओ वलही भंगो समुप्पन्नो॥

॥ इति वलभीभङ्गप्रवंधः॥

(G.) सङ्ग्रहे वलभीभङ्गवृत्तम्।

§ १९३) अथ पातसाहिकटके चिलते यवनव्यंतर एको वलभ्यामुपागतः । क्रुत्रापि प्रवेशं न लभते । कियद्भिदिनैः किपिशीर्पमेकं रिक्तं वीक्ष्य स्थितः । ततस्तत्र किथहिरिद्री द्विजो नित्यमिशहोत्रहेतोः किपिलगोष्टतमादातुं स्वां भार्यो 20 प्रहिणोति । तया विपण्णतया तद्ध्यंतरावेशेन खरमूत्रमानीयार्पितम् । तेन होमो दत्तः । प्रातर्यावता विलोकयित तावता सुवर्णं दृष्टम् । नित्यमेवं विधत्ते । त्राह्मण्या तु निजसख्या अग्रे कथितम् । एवं परंपरया पुरे सर्वत्र खर[मूत्र]होमोऽजनि । तेन पुरं निर्देवतं जातम् । यवनव्यंतराः प्रसृताः सर्वत्र । ततो यवनकटकमागतम् ।

§ १९४) वलभ्यां श्रीदेवचन्द्रसूरयो रात्रौ सुप्ताः कांचन देवतां प्रत्यक्षां द्वादशवर्परूपां पश्यंति सा। पृष्टं च-"का त्वं सुंदरि० ॥" तत्स्वरूपं परिज्ञाय गुरुभिः श्रीसंघस्य राज्ञश्च निवेदितम् । ततः कियानपि श्रीसंघो निःसृतः । 25

§ १९५) अथ राज्ञोक्तम्-भगवन्! निजन्यंतरैः शुद्धिः कार्या। ततः स्रिभिर्निजन्यंतरद्वयं प्रहितम्। तत् द्वयं वलमानं यवनन्यंतरैर्धतं, कुद्धितं च। दिनत्रयं स्थापितं च। तावता गुरूणां उसेरिर्जाता। दिनत्रयं यावत् कटके चिलते मुक्तम्। ततस्ताभ्यां समग्रमि स्वरूपं श्रीपूज्यानां निवेदितम्। गुरवो गताः। राजा स्थितः। अधिनी-पूर्णिमादिने रथयात्रायां श्रीमालपुरे श्रीमहावीरः, कासद्रहे श्रीयुगादिदेवः, हारीजे श्रीपार्धनाथः, श्रीशत्रुंजये वलभीनाथश्राययौ। तद्तु रंकेण सर्वेऽपि यवना रणे क्षिप्ता मारिताः।

15

३८. श्रीमाताप्रबन्धः (B.P.)

े १९६) पूर्वसां लखणावतीपुरी। राजा लखणसेनः। तस्यान्वये राजा रत्नपुद्धः। तस्य राजपाव्यां व्रजतः काचित् स्त्री सगर्भा अक्षतपात्रकरा सम्मुखा जाता। नृपेणाक्षतपात्रनालिकेरोपरि दुर्गा निविष्टा दृष्टा। नृपेण शाकुनिकः पृष्टः। तेनोक्तम्—अस्याः मुतोऽत्र नृपो भावी। राज्ञा आरक्षक आदिष्टः—यदेनां व्रछनं पुराद्विहिनींत्वा गर्जायां जिस्प। सा तलारेण नृपादेशाद्विहिनींता। तयोक्तम्—क्ष मां नयसि १। तेनोक्तम्—मारियण्यामि। तया भयमीतयो-क्तम्—अहं वहिर्भूमौ यास्यामि। सा गता। भयाद्वर्भः पपात। सा चीवरेणावेष्ट्याययौ। तैर्मारिता सा। स वालो एकया हरिण्या दृष्टः। कृपया स्तन्यं पायितः। सा प्रतिदिनं तं पालयति। छुव्धकेन एकेन वालं स्तन्यं पाययन्ती मृगी दृष्टा। नृपाय निवेदितं वालस्वरूपम्। राज्ञा तलारः पृष्टः। तेनोक्तम्—सा मृत्युवेलायां विहर्भूमौ गता। नृपेण वालस्ततः समानीय पुरपरिसरे मुक्तः। यथा धेनोश्चरणपातेन मरित। इतस्तस्य वालस्य 10 क्षुधितस्य वाक्यमुत्पन्नम्।

(२७०) यो मे गर्भस्थितस्यापि वृत्तिं कल्पितवान् पयः। दोषवृत्तिविधानाय स किं सुप्तोऽथवा मृतः॥

काचिद्धेतुर्नवप्रस्ता तत्रागत्य पाययति । नृपेण चिन्तितं न म्रियते । स धवलगृहे आनीतः । श्रीपुञ्जेति नाम कृतम्। कालेन नृपतिना राज्यं दत्तम् । श्रीपुञ्जस्य राज्यं पालयतः ऋमेण पुत्री जाता । तस्याः शरीरं 15 दिव्यम्, मुखं वानर्याः । ऋमेण प्रौढा जाता । कोऽपि न याचते । तस्याः खेदपराया जातिसारणमुत्पेदे । पाश्रात्य-भवो इष्टः । तया नगरमध्ये शब्दः पातितः । यः कोऽपि मरुखल्याः समायातः सोऽभ्येतु । एकः पुरोऽभृत् । कुमार्या पृष्टः-अर्द्धदं वेत्सि ? । सर्वं वेद्यि । तत्र कामिकतीर्थाग्रे कुण्डमस्ति, तस्य तटे वंदाजाल्यस्ति । तत्र जाल्यां वानरीशिरो लग्नमित । इतो मत्सकाशाद्रव्यमादाय तत्र गत्वा तच्छिरो जलान्तः क्षिप्त्वा समागच्छ । स तत्र गत्वा यावजले क्षिपति तच्छिरस्तावदेव कुमार्याः श्रीमाताया मुखं दर्शनीयं जातम् । नृपेण पृष्टा-वत्से ! किमि-20 दम् १ । तयोक्तम् - देव! मरुखल्यामप्टादश [शती]देशमध्ये निन्दिवर्द्धनो नाम पर्वतस्तत्र कामिकतीर्थमस्ति । तस्य तीरे वंशजाली। तत्राहं पूर्वभवे वानरीरूपाऽधिरूढा। फालच्युता वंशकीलेन विद्धा मृता। मम शरीरं गलित्वोदके पतितम् । तत्त्रभावादहं तव पुत्री जाता । शिरस्तत्र स्थितम् । अतो मे ईदृशं मुखम् । अधुना जनः प्रेपितः । तेन शिरिस जले थिप्ते वदनं स्वभावे जातम् । इतस्तसिन्नरे समायाते परिणयनपराख्नुखी जाता । अतिनिर्व-न्धेन पितरावाप्टच्छच, बहुपरिकरेण अर्चुदाद्रावाययौ । तत्र तपः कर्त्तुं प्रारेभे । इतस्तत्र रसीअउ तपस्वी तपः 25 करोति । स तां दृष्टा क्षुव्धः । पाणिग्रहणार्थं ययाचे । तयोक्तम्-यदि सूर्योदयाद् अर्वाक् द्वादश पाजा अत्र पर्वते करोपि, तदा त्वां परिणये । तेन तपः शक्त्या शीघ्रं चकार । इति कियत्यपि रात्रिशेषे श्रीमातया तपःप्रभावा-रकुकुटः खरः कृतः । स तं श्रुत्वा विभातिमिति कृत्वा क्षुच्यः । हृद्यस्फोटान्मृतो व्यन्तरो जातः । साऽपि सपश्चात्तापा वैश्वदेवे प्रवेशं कृत्वा देवी श्रीमाता जाता ।

॥ इति तपसि श्रीमाताप्रवन्धः॥

30(G.) सङ्ग्रहगतं श्रीमातावृत्तम् ।

[§] १९७) पुरा रत्नपुरे रत्नशेखरो राजाऽऽसीत्। तेन दिग्विजयव्यावृत्तेन प्रवेशमहोत्सव.....तीति पृष्टः। ताभिः संतानाभावान्नेति कथितम्। ततः संतानहेतोर्नवांतःपुरचिकी राजा शाक्किनकेन वहिर्निष्कांतः। ततः शाक्किनकेनापन्नसत्त्वां कामपि कामिनीं काष्टभारवाहिनीमुद्रीक्ष्यास्याः सुतस्तव राज्ये भविता एवं जगाद।

ततो विपिण्ण(०पण्ण)मनसा राज्ञा सा गर्चायां क्षेपिता । तया प्रस्य वालो सक्तः । नवप्रस्ता हरिणी तं निज-स्तन्येन जीवयति । अथ टंकज्ञालायां हरिण्यंकिता द्रम्माः पतंति । राजा तथा विज्ञायानीय च गोपुरद्वारि सायं मुक्तः । तत्रस्थो वालः संडेन रक्षितः । ततो राज्ञा समानीय स वालो लालितः श्रीपुंजराजा वभृव ।

श्रीप्रंजराज्ञः पुत्री श्रीमाता मर्कटमुखी जाता । तस्या जातिसरणं जातिमिति-पुरा अर्चुदाचले मर्कटी फालां ददाना शाख्या विद्धा । कुंडोपरि गलित्वा देहं पतितम् । शिरो शाखायां विलग्नमेव स्थितम् । ततो देहं 5 मानवाकारं कुंडपतनप्रभावादजिन । ततस्तत्रागत्य शिरोऽपि तया तत्र क्षिप्तं कुंडे । ततोऽर्बदे तपस्यंतीं तां तत्र रसीयाकनामा योगी ददर्श । प्रार्थितं तेनेति-यन्मम पत्नी भव । तयोक्तम्-द्वादशपद्या विधेहि एकरात्रि मध्ये । तेन तथाकृते श्रीमात्रा कृत्रिमकुर्कुटा वासिताः । कृत्रिमश्चनश्वरणयोर्विलग्नाः । ततो हृदयस्फोटनेन स ख्यं विनष्टः ।

३९. जगहेवप्रवन्धः (G.)

§ १९८) मुद्रलपातसाहिसमीपात्समागतो जगदेवः श्रीसिद्धराजभूपतिना नवलक्षकंकणं परिधापितः । अत्रांतरे 10 केनापि कविना काव्यमिदं न्यगादि-

(२७१) उन्मीलन्मणिरिइमजालजिटलश्चायं रणे कङ्कणं विभ्राणस्तव वैरिवीरकदनकीडाकठोरः करः। हित्वा संयति जीवितानि रिपवो ये खर्गमार्ग गता-स्तानाक्रप्टमिवाविवेश सहसा चण्डस्तोममण्डलम्॥

इति पठिते तसै तत्कङ्कणं दत्तम्।

एकदा सभायां अधो विलोक्यमानस्य चिंताप्रपत्रस्य कस्यापि कवेः पार्श्वे जगद्देवेन पृष्टम्-कवे ! महत्ती चिन्ता !। तेनोक्तम्-विमर्शनाऽस्ति । शृणु !

(२७२) द्रिहान् सृजतो धातुः कृतार्थान् कुर्व्वतस्तव।जगदेव!न जानीमः कः श्रमेण विरंस्यति॥ इति पठिते जगदेवेन सुवर्णलक्षो दत्तः।

जगहेवेन समागतस्य कस्यापि कवेः पार्थे नविवेशेषं देशस्त्ररूपं पृष्टे तेनोक्तम्-देव ! चित्रमस्ति । असत्सार्थे पान्थस्यैकस्य पार्थे सरसः सम्रुत्थितेन चक्रवाकेनैकेनेति पृष्टम्-

चक्रः पप्रच्छ पान्यं कथय जनपदः कोऽपि संपत्स्यते मे वस्तुं नो यत्र रात्रिभवति स च विचिंखेति तं प्रत्युवाच। नीते मेरी समाप्तिं कनकवितरणैः श्रीजगद्देवनाम्ना सूर्येऽनन्तर्हिते स्यात्कतिपयदिवसैर्वासराद्वेतसृष्टिः॥

25

15

इत्युक्ते जगदेवेन सुवर्णसहस्रा दश दत्ताः।

कसिन्निप पण्डिते समागते श्रीजगद्देवेन वारं वारं पृष्टे सित जीवेति वारं वारं जल्पति पंडितः, नान्यत । तेनोक्तम्-कथमेतत् जीवेति वचः ? । कविनोक्तम्-"त्विय जीवित जीवेति० ॥"

(२०४) स्रस्ति क्षत्रियदेवाय जगदेवाय भूभुजे । यद्यशःपुंडरीकान्तर्गगनं भ्रमरायते ॥ 30 इति गदिते लक्षदानम् ।

25

. ४०. पृथ्वीराजप्रबन्धः (B.P.)

§ १०९) यथा—शाकंभरीपूर्यां चाहमानान्वये श्रीसोमेश्वरो नृपलख तन्जः पृथ्वीराजः, तद्वाता यशोराजः। तस्य शल्यहलः श्रीमालज्ञातीयः प्रतापसिंहः, मन्नी कइंवासः। तयोरुभयोः परस्परं विरोधः। स राजा पृथ्वीराजो योगिनीपुरे राज्यं करोति। तस्य धवलगृहद्वारे न्यायघण्टाऽलि। [†]स महावलवान्, धनुर्भृतां धुरीणो नृपः। यशोराजस्तु 5 आशीनगरे कुमारभ्रक्तावित्तं । तस्य वाराणस्याधिपतिना श्रीजयचन्देन सह वैरम्। एकदा गर्जनकात् तुरष्का-धिपतिः पृथ्वीराजेन सह वैरं वहन् योगिनीपुरोपिर चचाल । पृथ्वीराजस्यामात्यो दाहिमाज्ञातीयः कईवासनामा मन्नीश्वरोऽित । तस्यानुमत्या नृपस्तुरङ्गमलश्रद्धयमादाय, गजानां पश्चशत्या सम्मुखश्चलितः। तुरष्कसैन्येन सह युद्धं जातम्। भग्नं शाकसैन्यम् । सुरत्राणो जीवन् गृहीतः। स्वर्णनिगडे श्विष्ट्वा योगिनीपुरे समानीय मातुर्वचसा मुक्तः। एवं वार ७ वद्धा बद्धा मुक्तःं, करदश्च कृतः। प्रतापसिंहः करमुद्याहियतुं याति गर्जनके। एकदा 10 मशीतिं विलोकितुं गतस्तत्र स्वर्णटङ्ककलश्चं दुर्वेसादीनां ददौ। मन्त्रिणा नृपायाभिद्ये—देव! गर्जनकद्रव्येण निर्वाहः स्यात्। स तु इत्यं विद्रविति। राज्ञा पृष्टम्। तेनोक्तम्—देवस्य तदा ग्रहवैपम्यं मत्वा मया धम्मव्ययः कृतः। ज्योतिर्विदः पृष्टाः। तैस्तु कप्रमुक्तम्। इतः शल्यहस्तो नृपस्य कर्णे विलग्नः—यदेप मन्नी वारं २ तुरुष्कानान्यति। नृपो रुष्टः। तद्वस्या मन्त्रिणं इन्तुं बुद्धिमकरोत्। इतः रात्रौ सर्वावसरादृत्थिते मन्त्रिण प्रतोलीद्वारा-वित्रदे राज्ञा दीपिकाभिज्ञानेन वाणं मुक्तम्। तन्मित्रणः कक्षान्तरे भूत्वा दीपधरस्य करे लग्नम् वीपिका वितर्वः क्राच्यता । कलकले जाते नृपेण पृष्टम्—रे किमिदम् १। देव! मन्त्रिणः घातकेन वाणमुक्तम्। रे! मन्नी जीवति देव! क्रुशलम्। इतः पाश्चात्ययामिन्यां चन्दवलिद्दिको द्वारमहो नृयं ग्राह—

(२७५) इक्कु वाणु पहुवीसु जु पइं कइंबासह मुक्कओं, उर भिंतरि खडहडिउ धीर कक्खंतरि चुक्कड । बीअं करि संधीउं भंमइ सूमेसरनंदण! एहु सु गडि दाहिमओं खणइ खुदइ सइंभरिवणु। फुड छंडि न जाइ इहु छुन्भिड वारइ पलकड खल गुलह, नं जाणउं चंदवलदिउ किं न वि छुटइ इह फलह॥

(२७६) अगह म गहि दाहिमओं रिपुरायखयंकर, क्रुड मंत्र मम ठवओं एह जं वूय मिलि जग्गर । सह नामा सिक्खवं जइ सिक्खिविं वुज्झई, जंपइ चंदवलिंदु मज्झ परमक्खर सुज्झइ । पहु पहुविराय सईभरिघणी सयंभरि सउणइ संभरिसि, कईबास विआस विसट्टविणु मिन्छवंधिवद्धओं मरिसि ॥

नृपेण भेदभयात् अन्धार्या क्षेपितः । आद्यौ प्रहरिकसमये मं (१) सर्वावसरे मन्त्री समायातः । विस्त्रितः । 30 भद्दो निष्कासितः । तेनोक्तम्-देव ! पुनर्भवतः कल्याणमतः परं न करोमि । सिद्धसारखतोऽहं । तव म्लेच्छैर्वद्ध-साचिरान्मरणं भविष्यति । स निर्गत्य वाराणस्यां गतः । राज्ञा श्रीजयचन्देनोक्तम्-मया त्वमाहृतः परं नायातः । देव ! तवापि मृत्युरासचोऽतोऽत्रापि न स्थास्थे ।

 $^{1\} B$ श्रीगोलवालज्ञा $_{f e}$ । † पुतद्न्तर्गता पंक्तिः B आदर्शे नोपलभ्यते । 2 B नास्ति पदामिदम् ।

§२००) इतः कर्ड्वासे विद्यत्रिते नृतनो मन्त्री जातः। नृपः प्रतापसिंहस्य आतृन्यमतिविहिनं मत्वा कारायां चिक्षेप। मित्रिणि विद्यत्रितेऽपि न त्यजति। स सुरत्राणाय मिलितः। तेन कटकं शकानामहतम्। आयातं श्रुत्वा पृथ्वीराजः सम्मुखो निःसतः । तुरङ्गलक्ष ३, गज सहस्र १०, मनुष्य लक्ष १५: एवं.....आशीमतिक्रम्याग्रे कटकं गतम्। इतः सुरत्राणस्य मित्रणो वार्ता जाता। तेन कथा-पितम्-प्रस्ताचे आकारियप्यामि । अथ पृथ्वीराजः प्रसुप्तः दिनानि १० परं कोऽपि न जागरयति । यो 5 जागरयति तं मारयति । इतः प्रधानेन सुरत्राण आकारितः । राजा न जागर्ति । मन्दं मन्दं केऽपि सामन्ता युध्वा मृताः । केऽपि प्रणष्टाः । अश्वसहस्रविश्यमाने [भगिन्या] नृपो जागरितः । खङ्गमाकृष्य धावतः भगिन्योक्तम्-सं जनं मारयसि । कटकं सर्वं तव निद्राणस्य मारितम् । नृपस्त्वाह-अहमञ्चि-.....तिसन विनष्टे नृपः शार्कभरीं मनिस कृत्य नाटारम्भार्थे आरुख प्रणष्टः । भ्रात्रा सह पृष्टि-धावितैस्तुरकैर्न गृह्यते । इत आज्ञी......देशे पर्वतिकाद्वयस्य मध्ये भट्टोऽस्ति । तव (तत्रः) नृपं प्रेष्य जस-10 राजः स्थितः । तेन किञ्चित्कटकं खलहितम् । स तत्र मारितः । सुरत्राणसाहवदीनेन स मंत्री पुच्छरहितः सर्पवत्कृतः । स्थाने गतः केन गृहीतुं शक्यः १ । तेनोक्तम्-छन्देन । वाद्यान् वादयतः, यथा तुरगो नृत्यति । तथा कृते तुरगो नर्त्तितुं प्रवृत्तो न चलति । नृपस्य कण्ठे शृङ्गिण्यः पेतुः । राजा गृहीतः सुरत्राणे [न] । खर्णनिगडे प्रक्षिप्य योगिनीपुरे समानीतो भाषितश्र-राजन् ! यदि जीवन्तं मुश्रामि ततः किं कुरुपे ? । नृपतिः प्राह-मया त्वं सप्तवारान् मुक्तस्त्वं मामेकवेलमपि न मुश्रसि ? । इतो नृपोत्तारकसम्मुखं सुरत्राणः सभायामुपवि-15 शति । नृपः खिद्यते । स प्रधानः समभ्येति-देव ! किं क्रियते, दैवादिदं जातम् । नृपेणोक्तम्-यदि मे शृक्षिणीं वाणांश्चार्पयसि, तदाऽमुं मारयामि । तेनोक्तम्-तथा करिष्ये । पुनर्गत्वा सुरत्राणाय निवेदितम्-यदत्र त्वया नोपविश्वनीयम् । सुरत्राणेन तत्रायः पुत्तलकः खस्थाने निवेशितः । राज्ञः शृङ्गिणी समर्पिता । राज्ञा वाणं सक्तम् । अयः पुत्तलको द्विधा कृतः । नृपेण शृङ्किणी त्यक्ता । न मे कार्यं सरितमन्यः कोऽपि मारितः । तदनु सुरत्राणेन गर्तायां प्रक्षिप्य लोप्टेर्हतः । सुरत्राणेनोक्तम्-अस्य रुधिरे भूमौ पतिते शिवं स्यात् । तथैव मारितः । संवत् 20 १२४६ वर्षे दिवं ययौ । योगिनीपुरं परावृत्त्य सुरत्राणस्तत्र स्थितः ।

॥ इति पृथ्वीराजप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्घहे पृथ्वीराजविषयकवृत्तम् ।

§२०१) श्रीयोगिनीपुरे श्रीप्रथिमराज्ञ उपिर अष्टादश्विमर्कक्षेरश्वानां पातसाहिरागतः। तदा एकादशिपारणं विधाय निद्राग्रथिलो राजा प्रसुप्तोऽस्ति। तदा महाविग्रहे जायमाने प्राकारे खंिंडः पतिता। राजानं कोऽपि भीत्या 25 न जागरयित । कुल्लिकयांगुष्टमोटनेन जागरितः। तावता तां मारियत्वा पुनः सुप्तः। द्वितीयदिने वीरचतुष्टयेन जागरितः। स्ररूपं ज्ञात्वा यावता स्वयं प्राकारवातायने निविष्टस्तावताऽरिभिविशेपविग्रहो मंडितः। अत्याक्तिन राज्ञा तारादेवी स्मृता। प्रत्यक्षीभूता। तया निश्चि श्रीपातसाहिसमीपे सुक्तः सः। यावता तन्मारणाय प्रहारं संचित, तावता चतुर्भुजो दृष्टः, सुक्तः। द्वितीयवेलायां जटाधारी दृष्टः, सुक्तः। तृतीयवेलायां व्रह्मा दृष्टः। देव्या भणितोऽपि न मारयति। वस्त-प्रहरणादि यृहीत्वा समागतः। प्रातस्तत्सर्व पातसाहेर्दशितम्। इति 30 कथापितं च—यथा वस्ताण्यानीतानि तथा मारियप्ये। पातसाहिना सर्वाणि वस्ताणि याचितानि। राज्ञोक्तम्—प्रयाणसप्तके प्रेपयिप्ये। तथा विहिते कटकं तथैव चलितम्। राजा जीवग्राहं यृहीतः। वंदीकृतस्य तसान्यदा भोजनं स्वानेनात्तम्। तदवलोक्य विपण्णः। आः किमेतत् । मदीया रसवती संदिसप्तशत्या समागतवती। सांप्रतिमयमवस्था। ततो मृतो युद्धेन।

४१. जयचन्द्प्रबन्धः (P.)

§ २०२) कान्यकुळादेशे वाराणसी पुरी नवयोजनिक्तीणी द्वादशयोजनायामा । तत्र श्रीविजयचन्द्रांगजो राष्ट्रक्टीयो जैत्रचन्द्रो राज्यं करोति । तस्य कर्प्रदेवी परमप्रीतिपात्रम् । अथ नगरवास्तव्य[स्य] कस्यापि शालापतेः पुत्री सहागदेवी पुरीप्रत्यासन्ने प्रामे परिणीतार्जस्त । सा एकदा भर्ता अपमानिता रुटा पितृगृहं प्रति चचाल । 5 मार्गे यान्त्या गोमयोपरि फणी कृतफणस्तव्छीपें खळारीटस्तं दृष्ट्वा चिन्तितवती—यदि कोऽपि दृक्षो मिलति तदा प्रच्छामि । इतः पुराद्विद्याथरो नामा द्विजस्तद्यामे भिक्षार्थं त्रजन्मार्गे मिलितः । तया पृष्टं शकुनं वेत्सि ? । तेन ओमित्युक्ते, तयाऽभिहितम्—अस्य किं फलम् ? । तेनोक्तम्—इदमतीव सुन्दरम् । इतः सप्तमे दिने त्वं नृपतेः सर्वे-धरी भविष्यति । परं मम किम् ? । तयोक्तम्—यदि मे त्वयोक्तम्, तदा ते श्रीकरणम् । तेनोक्तम्—ममाभिज्ञानं नाम च शृण्य—अहं द्विजपाटके उत्तराश्रिते देवधरद्विजभागिनेयो विद्याधरो नाम । सा 'एवं' प्रतिश्रुत्य गता पितृगृहम् । सप्तमे दिने राजपाद्यां नृपेण त्रजता गृहद्वारे वनदेवीव दृष्टा । सानुरागो धवलगृहं गत्वा शालाप-तिमाहूय पुत्रीं ययाच । तेन दत्ता, धवलगृहं नीता । तया नृपो द्विजाय प्रतिपन्नं निवेदितः । राज्ञा विद्याधरा आहृताः । श्रतसप्तकं मिलितम् । देवी सौभाग्यदेवी प्राह—स विद्याधरो वामनेत्रे काणोऽस्ति । तेपामिष शतत्रय-मायातम् । उत्तरसां द्विजपाटके देवधरस्य भागिनेयः ममानीयताम् । अधवाराः प्रहिताः । स सळीभूय स्थितोऽस्ति । अधवारैव्यत्तिम्—मो विद्याधर! राजा आकारयति । तस्य मातुलपह्योक्तम्—रे क स , क राजकुलं; क्रथं श्रीकरणं लभ्यसे ? । तेनोक्तम्—यद्विव्यति तद्वप्रच्यम् । स राजकुले गतः । सर्वमुद्राधिकारी कृतश्च । स महात्यागी नित्यं नाक्षणानामप्टादशसहस्रमग्रासने मोजयति ।

§ २०३) अथैकदा राजा जैत्रचन्द्रः कथान्तरे इत्यशृणोत्-यद्धङ्गालदेशे लखणावतीपुरी तत्र लखणसेनो राजा । तस्य दुर्गो दुर्गाद्योऽस्ति । तदनु नृपः प्रतिज्ञामकरोत्-यत् गतमात्र एव दुर्गं गृह्णामि वा यावन्तो दिनास्तत्र लगन्ते ता०...........कुमारमित्रवाक्यम्-

20(२७७) उपकारसमर्थस्य तिष्टन् कार्यार्दितः पुरः । मूर्त्या यामर्त्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥
नृपेण लखणसेनमाहूय सगौरवं परिधाय दण्डं मुक्तवा खराज्ये प्राहिणोत् । श्रीजैत्रचन्द्रोऽपि पश्चाद्वलितः
स्वनगरीमायातः । इति लखम्(ण)सेनपराजयप्रवन्थः ।

तदनु चन्दबलिइभट्टेन श्रीजैत्रचन्द्रं प्रत्युक्तम्-

(२७८) त्रिण्हि लक्ष तुषार सवल पाषरीअइं जसु हय, चऊदसइं मयमत्त दंति गजंति महामय।

वीस लक्ख पायक सफर फारक धणुद्धर,
ल्ह्सडु अरु बलुयान संख कु जाणइ तांह पर।
छत्तीस लक्ष नराहिवइ विहिविनडिओं हो किस भयउ,
जइचंद न जाणउ जल्हुकइ गयउ कि सूउ कि धरि गयड॥
पतनागतं वर्षद्वयेनोक्तम् । तेनैव पूर्वमुक्तम्-

(२७९) जइतचंदु चक्कवइ देव तुह दुसह पयाणउ, धरणि धसवि उद्धसइ पडइ रायह भंगाणओं ।

30

25

सेसु मणिहिं संकियउ मुक्क हयखरि सिरि खंडिओं, तुदृओं सो हरधवलु घृष्ठि जसु चिय तिण मंडिओं। उच्छलीउ रेणु जसिंग गय सुकवि व(ज)ल्हु सचडं चवइ, वग्ग इंदु विंदु सुयजुअलि सहस नयण किण परि मिलड्॥

§२०५) अथैकदा सुहागदेच्या नृपो व्याहतः—देव! राज्यं कस्य दास्यथ १। नृपेणोक्तम्-कर्पूरदेव्यात्मजस्य। 15 मम पुत्रस्य कथं न १। त्वं सङ्ग्रहणी, अतस्ते पुत्रोऽयोग्यः। सा त्वर्द्धराज्यस्यामिनी। धनेन परिपूर्णा। तया तदैव मनिस विधाय गर्जनके स्वपुरुपान् प्रहित्य सुरत्राणः सहावदीन आनीतः। योऽन्तरा पृथ्वीराजं विगृह्य योगिनीपुरे स्थितः। तया कथापितम्—मया आहूतः समागच्छेथाः।

इतः पृथ्वीराजे दिवं गतौ श्रीजैत्रचन्द्रेण चर्दापनकान्यारव्धानि । गृहे गृहे गृतेनोद्दन्यरक्षालनमारव्धम् । त्र्यंसः प्रवृत्ते । मन्नी राजकुले न याति । केनाण्युक्तम्—देव ! पृथ्वीराजमरणं मन्निणो विचारे नायातम् । 20 एवं चतुर्थिदिने मन्नी राजकुलं प्राप्तः । राज्ञोक्तम्—मन्निन् ! चिराद् दृष्टोऽसि । देव ! राजकार्यव्यग्नतया नायातं मया । देव ! केयं खडखडा श । राज्ञोक्तम्—किं न वेत्ति पृथ्वीराजमरणम् श एवं विधे वैरिणि मृते वर्द्वापनकानि किं न विधीयन्ते । मन्निणोक्तम्—तिसन् हते विपादं कर्तुं युज्यते हर्षो वा श । राज्ञोक्तम्—कथम् श । देव ! प्रतोली भवति, तस्यामयोमयानि कपाटानि, अर्गला च अयोमया । यदा सा भज्यते, कपाटौ च पृथ्वग्नवतः, तदा दुर्गस्य किं स्थात् श । तथा देव ! स पृथ्वीराजस्व अर्गलासम आसीत् । तस्मिन् विनष्टे गृहसूत्रं कर्तुं 25 युक्तं वा वर्द्वापनकम् श । तिष्ठतु वर्द्वापनकम् । देव ! यद्य पृथ्वीराजस्व तत्कल्ये आत्मनो ज्ञेयम् । मन्निणा मेलापकः प्रार्त्वाः । तया सुरत्राणस्य कथापितम्—यद्त्रेव स्थेयं परत्र न गन्तव्यम् । देव्या नृपो विज्ञप्तः—देव ! मेलापकः किं कुरते श । तुरुष्कः प्रत्यासन्नस्यस्यम्भौ विद्यते तव नामापि न गृह्यति । कोशव्ययं मन्नी पृथेव कुरते । राज्ञा मन्नी उक्तः—सर्वः कोऽपि विसीद्ति मेलापकं विसर्जय । मन्निणोक्तम्—अस्तु । अनेन कार्यमस्ति । पुनरेकदा तया नृपो व्याहृतः । मन्निणोक्तम्—देव ! वर्षद्वयं अहं व्ययं करिष्ये । नृपेणोक्तम्—सोऽपि 30 मदीयम् । मन्निणा सामन्तान् प्रेप्य नृपो व्याहृतः -देव ! वीटकस्य प्रसादं कुरु यथा तपोवने वामि । नृपेण देव्या वचसा विस्पृः। वर्षद्वयात् त्रा सुरत्राणः समाकारितः। स भारं विमुच्य जरीदकेन घावितः(१) । नृपस्य कटकेन सह युद्धे जाते सुरत्राणो भग्नः प्रणष्टः । इतः सुरत्राणपत्या पर्ति चिन्ततुरं विलोक्य उक्तम्—देवास्ये स्थामता कथम् श प्रत्राणोनोक्तम्—युवत्या वार्तया समागताः परं पश्चाहृतम्वं दुर्वटम् । देव ! मम स्वमं जातं वत्—अह- प्रत्याणेनोक्तम्—युवत्या वार्तया समागताः परं पश्चाहृतम् दुर्वटम् । देव ! मम स्वमं जातं वत् —अह- प्रत्याणेनोक्तम्—युवत्या वार्तया समागताः परं पश्चाहमनं दुर्वटम् । देव ! मम स्वमं जातं वत् —अह- प्रत्याणेनोक्तम् —व्यवत्या वार्तया समागताः परं पश्चाहमनं दुर्वटम् । देव ! मम स्वमं ज्ञातं वत्यास्ताः ।

म्मद्पुत्रमहमदं यदि सेनान्यं करोपि तदा ते जयः सात् । तदा ते आकारिताः । तेपां पश्चराती मिलिता । देव्योक्तम्—स वामनेत्रे काणोऽस्ति। स आकारितः दलपतिश्व कृतः। इतः शेपमपि कटकमानीतम्। इतः सुहाग्-देव्योक्तम्—देव ! राज्यं कस्य ? । कर्प्रदेव्यास्तनयस्य । यदि मत्स्नोर्ददाति भवान् तदाऽद्यापि परचकं चलति । राज्ञोक्तम्—त्वयाऽऽनीतम् ? । तया श्रोक्तम्—अन्येन केन ? । तदा स्त्रीचरितं नीतिं च स्मृत्वा—ज्येष्ठपुत्रमिभिष्च्य, कतामदृष्टव्यमुखाऽऽसीरित्युक्तवा दृष्टा (व्येष्ठा)याः सुतं राज्ये निवेश्य, पतिमारिकायास्तस्याः सुतं वृद्धि (व्हं ?) सहादाय नृपो युद्धाय निस्तसार । महति संयुगे जायमाने नृपेणोक्तम्—रे गलितकंतस्य ६४ जोटकानि निःथानानां किं स्फुटितानि ? । [क्यं]न श्रूयन्ते । देव ! वाद्यमानानि सन्ति परं शृङ्किणीगुणैरुपलप्ता-(१रुद्धा)नि । नृपस्तत् श्रुत्वा उदरे शिक्षकां क्षिष्टा पुत्रं चाग्रे करिण्यधिरोप्य यम्रनायां करिणमक्षेप्सीत् । स पश्चत्वमाप । ज्येष्ठपुत्रोऽपि निःसृत्य युद्धे विनष्टः । संवत् १२४८ वर्षे चैत्र श्रुदि १० दिने वाराणसीमा-10 दाय सुरत्राणः प्रवेशं कर्तुं प्रवृत्तः । कर्प्रदेवी यमगृहं प्रविष्टा । द्वितीया सुहागदेवी लघुपुत्रमादाय प्रतोल्यां स्थिता । सुरत्राणेनोक्तम्—केयम् ? । देव ! यया त्विमहानीतः । सुरत्राणेन वदने निष्ठीवनं कृत्वा एकस्मै धगडाय, या पत्युन् जाता सा मे भविष्यति इति वदता, प्रदत्ता । पुत्रस्तु तुरुष्कः कृतः ।

॥ इति श्रीजैत्रचन्द्रनृपतेः प्रवन्धः॥

(G.) सङ्गहे जयचन्द्रनृपवृत्तम् ।

15 § २०६) अन्यदा कोपकालाग्निरुद्र १, अवंध्यकोपप्रसाद २, रायद्रह्वोलादि विरुदानि श्रीपरमिद्दनः श्रुत्वा श्रीजयचन्दोऽसहमानस्तदुपिर ससैन्यश्रचाल । तहेशभंगं छुर्वाणः कल्याणकटकनाम्नीं राजधानीमाजगाम स क्रमेण । परं कोऽपि विज्ञप्तिकां कर्तुं न शकोति यत्कटकमागतम् । परं खयं परमिद्दराजा परसैन्यं दृष्टा दुर्गान्तः । ततो राजा सैन्येन रुद्धः । वर्षमेकं जातम् । पश्चात्परमिद्दिना राज्ञा मछदेवमहामात्येन सह मंत्रं विधाय तत उमापितधरं मंत्रिराजमाकार्य इत्युक्तम् –यत् मंत्रिविद्याधरसमीपं गत्वा तस्य किंचित्कथित्वा त्वं 20 सैन्यम्रत्थापय । ततः स 'आदेशः प्रमाण'मित्युक्त्वा सायं प्रतीहारमुक्तः सन् मंत्रिविद्याधरसमीपमगमत् । उमापितधरमंत्रिणा एकं सुभापितं पत्रे विलिख्य मंत्रिराज्ञो विद्याधरस्याग्रे मुक्तम् । तदिदम् –

(२८०) उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यातुरः पुरः । मूत्त्यी यामित्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥

एतदर्थमवधार्य निशीथे एव पल्यंकिथितो राजा समुद्धत्य क्रोशपंचके मुक्तः । प्रातः राजा दुर्गा न
पश्यति । ततः पृष्टम् । मंत्रिणा विद्याधरेणोचे सर्वं खरूपम् । राजा कुद्धः । ततो विद्याधरः प्राह-राजन् ! कथं
25 ममोपिर कोपं कुरुपे । कणदृत्तः कापि न गताऽस्ति । ततो राजाह-अतोऽहं कुद्धः, यतस्त्वया मम लीला
विनाशिता । अनेन सुभापितेन मम राज्यमि कथं नार्पितम् । एतद्भणने विरुदानि मुक्तानि । मानं राज्यं च सर्व
मुक्तम् । इति भणित्वा जयचन्द्रः खस्थानमगमत् ।

४२. वराहमिहिरवृत्तम् (G.)

§ २०७) पुरा वराहिमिहिरो विद्यार्था ज्योतिःशास्त्रं पठन् उपाध्यायगोरक्षणां करोति। तत्र नित्यं लग्नं मण्डियत्वा 30 पठिताभ्यासं करोति । एकदा सिंहलग्नं मण्डितम् । प्रमादाद्विसर्जनं विस्मृतम् । गृहगतेन तेन भोजनसमये स्मृतम् । तत्र गतः । शिलोपि निविष्टः सिंहो दृष्टः । निर्भयेन सता सिंहोदराधो लग्नं विसर्जितम् । सूर्यस्तुष्टः । पण्मासं विमानस्थितेन नक्षत्रग्रहतारागणं विलोक्य समागतेन 'वाराहीसंहिता'ग्रमुखज्योतिःशास्त्राणि निर्ममे ।

अथ वराहिमिहिरस पुत्रो जातः । ततः पित्रा जातके चतुरशीतिवर्षाणि आयुर्वित्तम् । तदन्त जिनदीक्षा-दीक्षितश्रीभद्रवाहुपार्थे वद्धीपनिकाकृते मनुष्यः प्रहितः । तद्रचः श्रुत्वा स्रिरिमरुक्तम्—जातस्य सप्तदिनानि आयु-रिक्ता । सप्तदिनान्तेऽस्य मार्जारिकया मरणं भविष्यति । तेन सर्वत्र मार्जारिका रिक्षता । निण्णीतवेलायां अर्ग-लिकामार्जारिकया मरणमजिन । ततो विषण्णेन तेन पुस्तकैः सह काष्ट्रभक्षणं प्रारव्धं यावता तावता तत्रागतेन श्रीभद्रवाहुना कथितम्—कथं काष्ट्रसाधनं कुरुपे । शास्त्राणि न वितथानि । परं या दोरिका भवताऽभिज्ञाने विहि-ताऽभृत् सा कुव्जिकया महाकप्टेन प्राप्ता। तदा वेलाव्यतिक्रमोऽज्ञानि । तया तु सप्तदिनान्येवायुस्ततो मानितम् ॥

४३. नागार्जुनप्रवन्धः (Br.)

§२०८) ढंकपर्वते श्रीशञ्जुङ्गयित्तरेकदेशे राजपुत्ररणसिंहस्य भोपलानामीं सुतां जातानुरागो वासुिकनींगराजः सिपेवे । पुत्रो जातः । नागार्जन इति नाम कृतम् । स च वासुिकना सुत्तसेहात् सर्वासामीपधानां पत्राणि फलानि भोजितः । तत्प्रभावेन सर्वसिद्धिभरलङ्कृतः सिद्धपुरुप इति ख्यातः । एथिवीं विचरन् एथिवीस्थान-10 पत्तने सातवाहननृपस्य कलागुरुर्जातः । स च विद्याध्ययनार्थं पादिलप्तकपुरे पादिलप्ताचार्यं विद्यार्थी सेवते । स गुरुः पादतललेपवलेन तपोधनेषु विहरितुं गतेषु श्रीशञ्जुङ्गयादिषु देवान्तत्वा स्थानमायाति । आगतानां नागार्जनश्ररणक्षालनं कृत्वा स्वाद-वर्ण-गन्धादिभिः सप्तोत्तरं शतमोपधानाममीलयत् । तेनोपदेशं विनाऽपि जलेन चरणलेपे कृते कुर्जुटोत्पातमुत्पत्य पतितो व्रणजर्जिताङ्गो गुरुभिः पृष्टः—िकमेतत् १। पृज्यपाद-प्रसादः । कथम् १ । यथास्थिते उक्ते गुरवस्तस्य कौशल्येन रिज्ञताः । गुरुभिरुक्तम्—गुरुन् विना कलाः कथं 15 फलदाः स्युः । प्रसादमाधातु गुरवः । भवतो मिथ्यात्ववासितस्य कलां न दिश्व । श्रावकत्वमङ्गीकृरु । तेन तथा कृते, तन्दलजलेन लेपं कृत्वा गगने स्थैरं वजित स ।

• ६०९) एकदा स्रेरं विचरता गुरुमुखात् श्रुतम्—यत् रससिद्धिं विना दानेच्छा न पूर्यते । तदन्त रसं परिकर्मयितुं प्रयुत्तः । खेदन-मर्दन-जारण-मारणानि चके । परं स्थैयं न वधाति । गुरवः पृष्टास्तेरुक्तम्—दुष्ट-निर्दलनसमर्थश्रीपार्थनाथस्य दृष्टों साध्यमानः सर्वलक्षणोपलक्षितया महासत्या मृद्यमानो रसः स्थिरीस्य 20 कोटिवेधी भवति । तत् श्रुत्वा स श्रीपार्थनाथप्रतिमामन्वेष्टमारेमे । इतश्च नागार्ज्जनेन स्विपता वासुिकध्यतिः । प्रकटीभृतः । पृष्टं च—श्रीपार्श्वस्य काश्चिद्दिच्यां प्रतिमां कथय । तेनोक्तम्—पुरा द्वारावत्यां श्रीसमुद्रविजयेन श्रीनेमिनाथमुखात् श्रीपार्थप्रतिमा ग्रासादे स्थापयित्वा पृजिता । पूर्वाहानन्तरं समुद्रेण ष्ट्राविता । प्रतिमा तथैव समुद्रमध्ये स्थिता । कालेन कान्तीपुरीवासिनो धनपतिनामकस्य सांयात्रिकस्य यानपात्रं देवतातिशयात् स्विलतम् । अत्र जिनविन्यं तिष्टतीति दिन्यवाचा निश्चित्य, तत्र नाविकान् निक्षिप्य आमतन्तुभिः सप्तिर्वद्धो-25 द्वता श्रितमा । खपुरे नीत्वा श्रासादे स्थापिता । चिन्तातीतो लाभो जातः । स नित्यं नित्यं पूजां करोति । ततः सर्वातिशयसम्पन्नं तद्विम्यं ज्ञात्वा नागार्जुनो रसिसिद्ध्ये सेर्डानदीतटेऽपह्त्यानीतवान् । तस्य पुरतः श्रीशातवाहनस्य नृपस्य चन्द्रलेखां देवीं महासतीं व्यन्तरीसान्निध्यादानीय श्रतिनिशं रसमर्दनं कारयति । एवं तत्र भूयो भूयो गतागतेन देव्या वांघव इति श्रतिपन्नः । तया तेपामोपधानां मर्दने कारणं पृष्टम्—कोटिवेधी रसोऽसी । अन्यदा देव्या खपुत्रयोरुक्तम्—यत्सेदीनदीतटे नागार्जुनस्य रसिद्धिभविष्यति । तौ रसलुच्धौ ३० नागार्जुनतिन्तकमागतौ । कपटेन रसं जिष्टक्षु छनं श्रमन्तौ यसा रन्धनीगृहे नागार्जुनो भ्रनक्ति तामालपतः । त्वं नागार्जुनरस्वतीं लगासन्ते क्षारेत्युक्तया

र्ग जैनानां सते देवानां सनुजेन सह सम्बन्धो न युज्यते-टिप्पनी ।

10

तयोक्तम् । ताभ्यां रसिरिदिनिश्चिता । तस्य वधोपायं पृच्छन्तौ अमतः । केनाप्युक्तम्-अस्य दर्भाङ्करान् मृत्युः । नागार्जनेन द्वौ क्वतपौ भृतौ ढंकपर्वतस्य गुहायां क्षिप्तौ । पृष्ठचराभ्यां ताभ्यां ज्ञातौः वलमानो दर्भाङ्करेण ज्ञने मृतः । क्वतपौ देवतया हतौ ।

> (२८१) अजाते चित्रलिखिते मृते च मधुसूदन!। क्षत्रेषु त्रिषु विश्वासश्चतुर्थी नोपलभ्यते॥

देवतया क्रिपतया, द्वाविप पश्चात्तापपरौ-आवाभ्यां किमकारि यः खिटकासिद्धः कलावान् स हतः; तं हत्वाऽऽवाभ्यां किं साधितमिति-चिन्तयन्तौ मारितौ ।

॥ इति नागार्जनप्रवन्धः ॥

४४. श्रीपाद्छिप्तसूरिप्रवन्धः (B.)

(२८२) जयन्ति पाद्षिप्तस्य प्रभोश्चरणरेणवः। श्रियः संवनने वश्यवूर्णतः प्रणताङ्किनाम्॥

§ २१०) तत्र कोशला नाम नगरी । विजयत्रक्षा भ्राः । तत्र प्रसिद्धः प्रफुछः श्रेष्ठी । रूपेणाप्रतिमा [प्रतिमाणा नाम] भार्या परं वन्ध्या । अनेकौपधदेवपूजोपयाचितैरिप नापत्यमाप । अन्यदा विखिन्ना श्रीपार्थनाथचैत्ये
वैरोद्धादेवीं कर्पूरागुरुभिः सम्पूज्योपवासाष्टाहिकां चके । ततो देवी प्रकटीभूय पुत्रवरं ददौ, इत्याख्यातवती च—
15 पुरा निमविद्याधरान्वये श्रीकालिकाचार्यसन्ताने विद्याधरगच्छे श्रुतसम्रद्भपारगश्रीआचार्यनागहित्तगुरूणामनेकलिधवतां पुत्रेच्छया पादप्रक्षालनजलं पित्र । ततः प्रातरुपाश्रये गत्वा तपोधनहत्त्वस्थितं पादोदकं पीतम् ।
प्रभुनेमस्कृतः । धर्मलाभपूर्वमित्यादिदेश—यतो दशहस्तान्तरे पयःपानेन तव पुत्रो दश्योजनान्तरे यम्रनापरतीरेऽनेकप्रभावनिधानं विद्विष्यते । तथान्ये तत्र पुत्रा नव भविष्यन्ति । तयाऽभाणि—प्रथमपुत्रो भवतां दत्तः ।
गुरुभिर्भणितम्—संघमुख्यो भविता । जातः पुत्रः । प्रभूणामिर्पतः । अष्टवार्षिको नीत्वा शुभलग्ने प्रवन्यां दत्त्वा
20 च मण्डननामगणिसमीपे मुक्तः पठनाय । वर्षमध्ये श्रुतपारगो जातः । अन्येद्यरारनालं गुर्वादेशेनानीयेर्यापथिकीं
प्रतिक्रम्य गुर्वग्ने गाथां पठितवान्—

(२८३) अंवं तंवच्छीए अपुष्फिअं पुष्फदंतपंतीए। नवसालिकंजीयं नववहृइ कुडूएण में दिन्नं॥

> (२८४) जह जह पएसिणिं जाणुअंमि पालित्तउ भमाडेइ। तह तह से सिरवयणा पणस्सए मुरंडरायस्स॥

अन्ये मंत्ररूपामिमां गाथां जपन्ति, ततः शिरोवेदना याति । प्रभावतो राजा नित्यं भाक्तं करोति । एकदो-पाश्रयागतेन राज्ञा पृष्टम्-एते तपोधना भवतां भणितं दानमानादि विना कुर्वन्ति ? । इति पृष्टे गंगा कुतो वहित । तपोधनेन गंगायां गत्वा दण्डकं तारियत्वा-पूर्वाभिम्रसी वहित-इति गुरोरग्रे कथितम् ।

(२८५) निवपुच्छिएण भणिओ गुरुणा गंगा कओसुही वहड् । संपाइअञ्वं सीसो जह तह सञ्वत्थ कायञ्वं ॥

इत्थं नृपो गुरुभिः समं तिष्टन् दिनानि गच्छन्ति न ज्ञातवान् । अन्यदा लाटदेशे ओंकाराख्यनगरे प्रभवो वालैः समं क्रीडन्ति । देशान्तराद्वन्दितुमायातश्रावकाणाम्रुत्तरं कृत्वा सिंहासनोपवेशे पुनरायातश्रावकोपलक्षणे वालः क्रीडतीति सत्यभापणे वालगुरोर्वचसा जहर्षः । अन्यदा गुरवी मार्गे गच्छत्सु शकटेषु तपोधनेषु विहर्तुं गतेषु क्रीडनसमेतवादिनो विप्रतार्ये पटीं प्रावृत्य सिंहासने सुप्ताः। वादिभिरागत्य पुनर्विभातकथकताप्रचृद्धस्रः (स्ररः) कृतः । प्रश्वभिविंडालखरे कृते वादिनो मानहीना जाताः । पथात्तैरुक्तं मध्ये कः १ गुरुभिरुक्तम्-देवः । तैरु-10 क्तम्-को देवः १ । गुरुभिरुक्तम्-अहम् । तैरुक्तम्-कोऽहम् । गुरुभिरुक्तम्-वा । तैरुक्तम्-कः था । गुरुभिरुक्तम्-त्वम् । तैरुक्तम्-कस्त्वम् । गुरुभिरुक्तम्-देवः । इति पुनराष्ट्रत्या निर्जिताः । तथापि गाथामेकां पत्रच्छः-

> (२८६) पालित्तय कहसु फुडं सयलं महिमंडलं भमंतेणं। दिहो सुओं व कत्यवि चंदणरससीअलो अग्गी॥

स्रयोऽविलम्बेनोत्तरं ददः-

15

अयसाभिओगमणदूमिअस्स पुरिसस्स सुद्धहिअयस्स । होइ वहुं तस्स फ़र्ड चंदणरससीअलोअग्गी॥

इति वादिजयः कृतः ।

§ २११) अन्यदा श्रीशञ्ज्जये तीर्थयात्रां कृत्वा कृष्णभूपरिक्षतं मानपे(खे)टपुरं श्रीपादिलप्तगुरवः प्राप्ताः । तदनु शतुज्जये रैवतके संमेतेऽप्टापदे च तीर्थयात्रां चिकीर्पवः सुराष्ट्रादेशमायाताः । तत्र ढंकानामपुरीं विहरन्तः समेतास्तत्र नागार्श्वनो योगी भावी गुरुशिष्यः । तद्वृत्तं चेदम्-संत्रामराजपुत्रः, प्रिया सुत्रता, शेपाहि-20 स्रमस्चितपुत्रस्य नागार्जुननामकरणम् । स वर्षत्रयदेश्यः क्रीडन्-सिंहार्भकं विदार्य तन्मांसं खादन् पितृवारितः । यत्क्षत्रक्कले नखी न भक्ष्यते । तदायातसिद्धपुरुपेणाख्यातम्-मा विपीद, तव पुत्रो रससिद्धो भावी । तदनु कलाविद्धिः कुर्वन् संगीतं रससिद्धो जातः । सूरिं तत्रायातं ज्ञात्वा पर्वतभूमौ स्थितः । स्वशिष्येण पादलेपेच्छुः तृणरत्नपात्रे सिद्धरसं दौकितवान् । गुरुणा सित्वा भित्तावास्फाल्य शतसंण्डे कृते शिष्यं विच्छायस्रसमावर्ज्य भोजनं दापियत्वा व्यावर्तमानस्य काचपात्रे निरोधं कृत्वा प्राभृतं प्रेपितम् । उद्घाट्य विलोकिते क्षारगन्धेन निरोधं 25 ज्ञात्वा कुम्पको भन्नः । दैवयोगाद्वहिसंयोगे सा समृत्रा मृत् सुवर्णं जाता । नागार्जनेन ज्ञातम् । तस्य प्रभोर्मलम्-त्रादिसंगेन पापाणादयोऽपि सुवर्ण्णीभवन्ति । अहमेतावन्ति दिनानि यावदनेकौपथोपक्रमं सुधा कृतवान् । अस्य प्रभावे का कथा । ततोऽसौ विनयनम्रो मदं त्यक्त्वा प्रभुपादसेवाचरणक्षालनादिकां देहग्रुश्रूपां करोति । श्रीस्तयः साधुपु विहर्तुं गतेष्वाकाशयानेन पूर्वोक्तपंचतीर्थेषु यात्रां कृत्वा नित्यमायान्ति । ततो नागार्जुनः पादलेपौपधानि जिज्ञासुश्ररणक्षालनोदके पीते खादेनौपधानि ज्ञात्वा पादलेपे च कृते ताम्रचूडवदुचै।प्रदेशादु-30 त्पतन् गुल्फे जानौ च पीडितो रक्तक्किन्नो गुरुभिर्देष्टः । उक्तश्र-अहो पाद्रुपे गुरुं विनापि सिद्धः । तेनौ-क्तम्-भगवन्! गुरुं विना कुतः सिद्धिः । गुरुणोक्तम्-अहं तव बुद्धा तुष्टो विद्यां ददामि । यदि मे जिनशासन-भक्ति गुरुदक्षिणां ददासि । यतः-

20

(२८८) दीहरफणिंदनाले महिहरकेसरिदसामुहदलिले । ऑपिअइ कालभमरो जणमयरंदं पुहइपउमे ॥

ततो विश्वहितं जिनधर्ममाद्रियस्व । तेनोक्तम्-पूज्यादेशः प्रमाणम् । ततो गुरुणोक्तम्-आरनालमिश्रतन्दुले-नेकेनौपधानि पिट्वा पादलेपे खगमनसिद्धिः । ततस्तेन कृतज्ञतया विमलाद्रिसमीपे महासमृद्धं श्रीवीरप्रतिमाधि-5 ष्ठितं गुरुमूर्त्तियुतचैत्यान्वितं श्रीपादलिप्ताभिधं पुरं चके । तत्र श्रीवीराग्रे श्रीगुरुभिः श्रीवीरस्तवश्वके । 'गाहाजु-अलेणे'त्यादि । अत्र सुवर्ण्णसिद्धिराकाश्यानं च गुप्तमित्ति । तथा गुरोः श्रीनेमिचरितं श्रुत्वा कौतुकाद्रैवतकाद्रे-रुधः स्वर्णसिद्ध्याकाश्यानवलेन सर्वं दशार्णमण्डपादि नागार्जनश्वके । अद्यापि लोकेस्तत्सर्वमप्यालोक्यते ।

> (२८९) जीणें भोजनमात्रेयः, कपिलः प्राणिनां दया । बृहस्पतिरविश्वासः, पंचालः स्त्रीषु माईवम् ॥

एवं तदुक्ते राज्ञा महादाने दत्ते भोगवती वाराङ्गना न स्तौति । केवलं पादिलप्तानेव स्तौति । तं मुक्तवांऽऽकाश्वामी विद्यासिद्धो महाकविः सर्वगुणनिधिरन्यो न हि । इति ज्ञाते राज्ञः सन्धिविग्रहकः शंकरो नाम मत्सरी
असहमानोऽवादीत् । ततो मानखेटपुरात् कृष्णभूपितं मुत्कलाप्य शातवाहनेन श्रीपादिलप्ता आनीताः । नगर15 द्वारे बृहस्पतिर्विद्धान् परीक्षार्थं रौप्यकचोलके घृतं विलीनं प्रहितवान् । प्रभुभिद्धीरिणीविद्यया तन्मध्ये सूत्रप्रोतां
सूचीं प्रक्षिप्य प्रहिता । इति जये भूपः प्रवेशं महोत्सवेन कारितवान् । उपाश्रये स्थिताः। नित्यं भूपश्ररणोपास्ति
कुरुते । तत्र नन्या 'तरङ्गमाला कथा' कृता, न्याख्याता च । पाश्चालकविः मत्सरेण न स्तौति । मद्भन्थाद्
उद्धत्यानेन कृता । अन्यदा कपटमृत्युना प्रभूणां तद्ग्यहद्वारे शिविकागमने पाश्चालेन शोकाद् उक्तम्-

(२९०) आकरः सर्वशास्त्राणां रत्नानामिव सागरः। गुणैर्न परितुष्यामो यस्य मत्सरिणो वयम्॥

तथा-

(२९१) सीसं कहव न फुटं जमस्स पालित्तयं हरंतस्स । जस्स मुहनिज्झराओ तरंगलोला नई वृढा ॥

पाश्चाल! तव वचनाद् अहं मृतोऽपि जीवित इति गुरोरुत्थाने महीश्रजा निष्काखमानो मित्रं भणित्वा 25 पाश्चालो गुरुभिर्दानमानाभ्यामावर्जितः। ततो गुरवो निर्वाणकलिकाम्, सामाचारीम्, प्रश्नप्रकाशज्योतिःशास्त्रं च कृत्वा आयुःक्षयं परिज्ञाय नागार्ज्जनेन समं श्रीशञ्जुद्धयं गताः। तत्र नाभेयं नत्वा द्वात्रिशहिनान्यनशनं कृत्वा देहं ग्रुक्त्वा द्वितीयकल्पे इन्द्रसामानिकः सुरो जातः।

।। इति श्रीपादलिप्तगुरूणां प्रवन्धः।।

ं(G.) सङ्ग्रहे पादलिप्तसूरिवृत्तम् ।

30 ६२१३) एकदा श्रीपादिलप्तसूरयो यात्रायां गगने गच्छन्तः पुरुपाकारच्छायया दृष्टाः । ततो नागार्ज्जनेन वन्दन-हेतोः प्रार्थिताः । तैरुक्तम्-यात्रां विधाय वलंतः समेष्यामः । तथाविहिते क्टबुद्धा जलेन खागतिमपाचरण-प्रक्षालनं कृतम् । तद्वर्ण्णगंधरसाखादतः सप्तोत्तरशतमौपर्धीनां परिज्ञातम् । ततस्ताः सर्वो अपि संमील्य चरण- रुपोऽकारि । तदनु स दर्दुरवदुत्सुत्य पतितः । एवं गुरुभिर्दृष्टः । गुरुभिरुक्तम्-िकमेतत् है। तेन निजक्टं प्रका-शितम् । गुरुभिः सुशिष्यं विज्ञाय तन्दुरुजरुन रुपः कथितः । ततो गगनगामिनी विद्याऽजनि ।

एकदा वर्षासु पौपथशालाद्वारि जले क्रीडमानं शिष्यशायं पृष्टाः कैरिप वादिभिः-श्रीपालित्तय स्रिवरा वसतौ संति १-इति पृष्टाः स्रियः तानन्यमार्ग्गेण वाहियत्वा खयं सिंहासने कपटिनद्रया स्रिप्ताः। तैः समागत्य क्रुईटखरो विहितः। श्रीस्रिमिम्मीर्जारखरोऽकारि। वचनेन मिक्षताः। ततः पृष्टमिति। तद्यथा-'पालित्तय क कहसु फुडं०॥' ततो गुरुभिरुक्तम्-'अयसाभिओगसंतावियस्स०॥' एतया नमस्यया पराजिताः। नमो विधाय गताः।

४५. श्रीअभयदेवसूरिप्रवन्धः (B. Br.)

§ २१४) श्रीचुद्धिसागरद्धरिभिः श्रीजिनेश्वरद्धरिभिश्च वसतिनिवासे कृतेऽन्यदा श्रीजिनेश्वरद्धरयो विहारेण धारापुरीं गताः। तत्र श्रेष्ठी महीधरः, भार्या धनदेवी, तत्पुत्रोऽभयकुमारनामा। अन्यदा श्रेष्ठी गुरुवन्दनाय गतः। 10 संसारमसारमाकण्यं वैराग्यवानभयः पितरमापृच्छ्य दीक्षाग्रहणे ग्रहणासेवनारूपशिक्षाद्वययुतः समग्रसिद्धान्त-पारगामी महाक्रियो जातः। गुरुभिराचार्यपदस्थापने श्रीअभयदेवद्धरिविंहरन् पर्वयपुरे श्रीवर्द्धमानद्दिषु दिवं गतेष्वभयदेवद्धरीणां तत्र स्थितानां महादुर्भिक्षे सिद्धान्तास्तृहृत्त्ययोऽपि त्रुटिताः। यदवस्थितं तदिप दुःखवोध-त्वात् खिलं जातम्। शासनदेवी रात्रौ प्रश्चं जगौ—यदङ्गद्धयं गुक्त्वा नवाङ्गानां वृत्तं कुरु। द्धिराह—श्रीसुधर्म-स्थामिकृतसिद्धान्तविवरणे मन्दमतित्वादुत्यत्रग्ररूपणादनन्तसंसारित्वम्। परं त्वामनुष्ठङ्क्ष्यां करिष्यामि। देव्यो-15 क्तम्—यत्र सन्देहस्त्रत्राहं सर्त्तव्या। यथा श्रीसीमन्धरस्थामिपार्थाद् सन्देहमङ्गं कुर्वे। प्रश्चिमर्गन्थपूर्णताविं यावदाचाम्लाभिग्रहोऽग्राहि। सम्पूर्णेषु ग्रन्थेषु शासनदेव्या पुस्तकलेखनाय रत्नखचिता स्वर्णमयी ऊतरी समव-सरणे ग्रुक्ता। सर्वत्र दिशेता कोपि मूल्यं न कुरुते। तथा राजमहाराजश्री[मी]मेन द्रम्मलक्षत्रयदाने पुस्तकानि लेखियत्वा समग्रदेशाचार्याणां दत्तानि।

§ २१५) अथ श्रीअभयदेवसूरयो धवलकके आगताः । आचाम्लतपसा रात्रिजागरणेन च प्रभूणां रक्तविकारो 20 जातः । तदा जनो वदति—यदुत्स्त्रप्ररूपणया शासनदेव्या रुष्ट्या देहं विनाशितम् । गुरुभिः शोकेनाऽनश-नार्थं रात्री धरणेन्द्रः स्मृतः । तेन सर्वरूपेण देहलिहने गुरुभिर्ज्ञातम्—कालेन दृष्टः । धरणेन्द्रेण स्वमे आदिष्टम्— यन्मयाऽयं तव रोगो ग्रस्तः । एकं जिनोद्धारं कृत्वा प्रभावनां कुरु । श्रीकान्तीपुरीयधनेन वणिजा समुद्रान्तरा यानपात्रस्तम्मे व्यन्तरोपदेशेन धनेन मूर्त्तित्रयमाकृष्टम् । एका चारूपग्रामे । द्वितीया श्रीपत्तने अविलीतले श्रीनेमिनः । तृतीया स्तंभनग्रामे सेडिकानदीतटे तरुजाल्यन्तरा भूमिमध्ये न्यस्ताऽस्ति तां प्रकाशय । अत्र 25 महातीर्थं भविष्यति ।

(२९२) पुरा नागार्जुनो योगी रससिद्धो धियां निधिः। रसमस्तम्भयद्भम्यन्तःश्यविम्वप्रभावतः॥

ततः स्तम्भनकाख्यो ग्रामस्तेन न्यस्तः । तदेपाऽपि तव कीिक्तः स्यात् शाश्वती पुण्यभूपणा । अन्यादृष्टा वृद्धा सुरी मार्गं कथयिष्यति । श्वेतश्वारूपः पुरः क्षेत्रपालोऽपि प्रातः संघस्य पुर आयातः । वाहनसहस्तेकयुताः ३ सरयो वृद्धा-श्वेतश्वानदार्शितमार्गाः सेडीतीरमायाताः । वृद्धा-श्वानौ तिरोहितौ । तत्र गोपालाः पृष्टाः—यत् किमपि पूज्यमस्तीह १ । तेपामेकेनोक्तम्—अत्र जाल्यां किमप्यस्ति । यतोऽत्र ग्रामे महिणस्त्रपट्टिलकस्य गौर्नित्यं चतुर्भिस्तनैः क्षीरं क्षरति । गृहे न दुद्धते । तत्र तैः क्षीरं दृष्ट्रोपविश्य श्रीमदाचार्यः 'जयतिहुअण०' इत्यादिवृत्त-

20

25

द्वात्रिंशता स्तवे कृते श्रीपार्थे प्रकटीभूते, समग्र [सङ्घ] सिहतैर्वन्दिते, देहरोगो गतः । तत्र स्नात्रपूजादं कृत्वा प्रासादार्थं द्रव्यं मीलियत्वा महिपपुरात् श्रीमल्लवादिशिष्य आग्नेश्वराभिधो नियुक्तः । कर्मान्तरं कारयामास । श्रुमे मुहूते श्रीअभयदेवसूरयो विम्यं स्थापयामासः । धरणेन्द्रादेशात् स्तोत्रमध्याद्वृत्तद्वयं मत्रगर्भितं निष्काशितम् । तस्मिन् प्रत्यक्षीभवने, त्रिंशद्वृत्ता स्तुतिर्जाता । सा पष्ट्यमाना क्षुद्रोपद्रविवनाशिनी । ततः प्रभृत्यदस्तीर्थं मनोवाञ्चितपूरणं जातम् । रोगशोकादिदुःखदावधनाधनः । अद्यापि कल्याणके प्रथमकलशो धवलकक्रीयस्य सङ्घस्य । विम्वासनस्य पश्चाद्भागेऽक्षरपंक्तिरतिह्यात् श्रुयते । पूर्वं कथैपा प्रथिता जने ।

(२९३) नमेस्तीर्थकृतस्तीर्थे वर्षे द्विकचतुष्टये । (२२२२) आषाढश्रावको गौडोऽकारयत् प्रतिमात्रयम् ॥

(२९४) श्रीमानभयदेवोऽपि शासनस्य प्रभावकः। पत्तने श्रीकर्णराज्ये धरणोपास्तिशोभितः॥

(२९५) विधाय योगनीरोधं धिक्कृतापरवासनः । परलोकमलंचक्रे धर्मध्यानैकधीनिधिः ॥

॥ श्रीअभयदेवसूरिप्रवन्धः ॥

४६. वाग्भटवैद्यवृत्तम् (G.)

15 ६२१६) पुरा मालवके वाग्भटनामायुर्वेदवेदी प्रथमं क्रपथ्येन निजदेहे रोगानुत्पादयित, औपधेन पुनर्नि-वारयित । एवमेकदा जलोदरम्रत्पादितम्, तदौपधं विहितम् । क्रुटुंवकस्येति उक्तं च-यन्मम चतुःप्रहरं यावत् जलं याचितमपि न देयम् । दैवयोगेन क्रुटुंवस्य तद्वचो विस्मृतौ गतम् । प्रहरचतुप्टयानन्तरं जलोदरे क्षीणेऽपि जलं न पायितः । पिपासापीडितो मृतश्च । अतः-

> (२९६) कचिदुष्णं कचिच्छीतं कचित् कथितशीतलम् । कचिद् भेषजसंयुक्तं कचिद्वारि न वारितम् ॥

§२१७) राज्ञः श्रीमोजस्य सिंहद्वारि वाग्भटवैद्यपरीक्षार्थमिश्वनीक्रमारौ पिक्षरूपं विधाय नित्यं नित्यं वारत्रयं 'कोऽभुक्' इति रवं विधाय गच्छतः । राज्ञा तदनवगत्य सर्वेऽपि विद्वांसः पृष्टाः । कोऽपि किमपि न कथयति । तदा वाग्भटेनोक्तम्-

(२९७) अञ्चाकभोजी घृतमत्ति योऽन्धसा पयोरसान् शीलति नातिपोऽम्भसाम् । अभुक् विरुट् वातकृतां विदाहिनां मलप्रमुक् जीण्णेभुगल्पशीररुक् ॥

ततोऽिश्वनीकुमाराभ्यां निजरूपमाविर्भूय वाग्भटोऽतिप्रशंसितः ।

§२१८) अथ वृद्धवाग्भटजामात्रा लघुवाग्भटेन कृष्णच्छायाप्रवेशदर्शनेन राज्ञः क्षयरोगोत्पत्तिर्निवेदिता । 30 राज्ञोक्तम्-ततो मम वर्पत्रयमेवायुरस्ति । तेनोक्तम्-नैवं राजन्!

(२९८) यावदुच्छुसति पाणी तावत् कुर्यात् प्रतिक्रियाम् । कदाचिद्दैवयोगेन दृष्टारिष्टोऽपि जीवति ॥ रसं विधाय देवं निरामयं विधासामि । रसे जाते रसं गृहीत्वा राजसदिस समागतः । तत्रागतेन रसक्रपको भगः । राज्ञोक्तम्-आः किमेतदिहितं भवता १ । तेनोक्तम्-राजन् ! किमौपधेन कार्यम् १ । देवो निरामयो जातः । रसगन्धदर्शनेन च कृष्णच्छायामिपात् क्षयरोगो निःसृत्य गतः ।

एकदा श्रीनृपस शिरास शिरोत्तिंरतीय जाता। ततो वाग्मटेनोक्तम्-राजन्! शिरास दर्दुरी जाताऽस्ति। तत-स्तेन शस्त्रकर्मणा तालु उत्तारितम्। दर्दुरी दृश्यते परं न निःसरति। धर्तुं न शक्यते। तद्गु जलमृतस्थालं ⁵ धृतम्। तत्रापि नायाति। ततो जामात्रा लघुवाग्मटेन तद्वलोक्य निजरुधिरभृतस्थालं दर्शितम्। तद्गन्धेन सा तत्रागता। राजा निरामयो जातः। ततः पृष्टेन लघुवाग्मटेनोक्तमिति-यदियं रक्तजा, रक्तं विना जले नायाति। ततः प्रमुदितो वृद्धवाग्मटः सकला अपि कलाः शिक्षयति।

४७. रैवततीर्थप्रवन्धः (P.)

§ २१९) अथ श्रीनेमे रैवतकाचलस्यस्थोत्पत्तिर्यथा-भारते क्षेत्रेऽतीतचतुर्विद्यतिकायां तृतीयतीर्थङ्करसागर-10 समये उज्जयिन्यां नरवाहनो नृपः । अन्यदा तिसन् पुरे सागरिजनः समवसृतः । स नन्तुं ययौ । व्याख्याया-मजु केवलिपर्पदं वीक्ष्य पृष्टम्-प्रभोऽहं केवली कदा ?। स्वामिनाऽऽदिष्टम्-आगामिचतुर्विज्ञतिकायां श्रीनेमिजिन-तीर्थे निर्वाणं ज्ञानं च भविष्यति । इति ज्ञात्वा ततस्तसिन् भवे श्रीसागरतीर्थेशपार्थे दीक्षां गृहीत्वा, तपः कृत्वा, पश्चमदेवलोके दशसागरोपमायुरिन्द्रो जातः । तेन तत्र स्थितेनावधिज्ञानेन पूर्वभवं ज्ञात्वा वज्रमयीं मृत्तिकामानीय श्रीअरिप्टनेमिपूजानिमित्तं विम्वं कारितम् । खर्गे दशसागरोपमं यावत्पूजितम् । आत्मनश्रायुःशान्तमविधना 15 विज्ञाय श्रीनेमेदीक्षा-ज्ञान-निर्वाणकल्याणकत्रयस्थानं विलोक्य श्रीरैवतकगह्वरे स्वर्गान्नेमिप्रतिमां गृहीत्वा समेतः । तत्र गह्वरमध्ये चैत्ये गर्भगृहत्रयं कृत्वा रत्न-मणि-खर्ण-मयविम्बत्रयं कृत्वा तत्र [स्थापितं]...... काश्चनवलानकं कृतम् । तत्र वज्रमृत्तिकामयविम्वं स्थापितम् । ततः स इन्द्रः स्वर्गान्युत्वा वहु संसारं आन्त्वा श्रीनेमितीर्थसमये महापल्लिदेशे क्षिति[पु]रनगरे.....शीनेमित्तत्र समवसृतः । पुण्यसारो वन्दितुं समागतः । श्रीनेमिना उपदेशो दत्तः । श्रीनेमिपार्श्वे धर्मावाप्तिः । पृष्टाः खामिनः पूर्वभववृत्तान्तः......... 20 रैवतके गत्वाऽऽत्मकृतं नेमिविम्वं पूजयित्वा नमस्कृत्य खनगरे समागत्य, सुतं राज्ये निवेश्य, नेमिपार्श्वे दीक्षां गृहीत्वा, तपसा कर्म्भक्षयं कृत्वा जिंतम् । मोक्षं गतः । श्रीनेमे रैवतकाचले कल्याणत्रिकं सम-जिन । पुण्यवद्भिस्तत्र लेप्यमयं विम्वं चैत्यं च कारितम् । लोके च पूज्यमानं जातं......कसीरदेशात् कल्प-प्रमाणेन रैवतकिगरी श्रीनेमिं नमस्कर्तुं समागतः। तत्र विम्त्रं स्नात्रजलेन गलितं दृष्टा मासद्वयक्षपणं कृतं.....खर्णामयं विम्वं समानीय खापितम्। यतः-25

> (२९९) नववाससएहिं नवुत्तरेहिं रयणेण रेवयगिरिम्मि । संठविअं मणिविंवं कंचणभवणाओं नेऊण ॥

तथा वामनावतारे वामनेन रैवते श्रीनेम्यग्रे वलिवन्धनसामध्यीर्थं तपः कृतम्।

४८. देव्यम्बाप्रबन्धः (B. Br.)

§२२०) सुराष्ट्रामण्डले कोडीनारपुरे सोमभद्दो द्विजः । स श्रावकस्य देवशर्मद्विजस्य पुत्रीमिन्वकानाम्नीं ³⁰ परिणीतवान् । पुत्रद्वयमस्ति । इत एकदा तस्य गृहे किञ्चित्पर्वास्ति । तत्र पाके निष्पने तपोधनौ विहर्तुमायातौ । श्वश्च गृहे नास्ति । अम्बया महाभक्त्या प्रतिलाभितौ । प्रातिवेश्मिकया श्वश्चग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽपूजिते पुरुष्ठ सुरुष्ठ । ३

द्विजेष्वभुक्तेषु श्र्द्राणामनं दत्तम् । एपा वध्ः न सामान्या । तयाऽऽराटिः कृता । सोमभद्दे समायाते उक्तम् । तेन तातादिना ताडियत्वा निष्कासिता । सा सुतद्वयमादाय, एकं कट्यां कृत्वा परमङ्गुल्यां, निःसृता । श्वश्र्वा पुत्रः पृष्ठे सानुतापया प्रहितः—त्विरतं गत्वा समानय । इतः शिश्चः सुतस्तृपितो नीरमयाचत । तया श्रीनेमिचरणौ स्मृत्वा मही पादेन दारिता । दीर्घिका प्रादुर्वभूव । सुतो नीरं पायितः । चृद्धेनोक्तम्—अहं क्षुधितः । तत्राम्रः प्रकटीवभूव । तत्र सहकारछम्वं गृहीत्वा पुत्रायार्णयत् । इतः पाश्वात्ये प्रियमायान्तं च्य्वा भीता श्रीनेमिपादौ स्मृत्वा कृषे पुत्रैः सह झम्पां ददौ । सोऽपि स्त्री-श्रूणघातिनं स्वं मन्यमानः पृष्टौ झम्पां ददौ । अम्वा रैवतके श्रीनेमिचैत्येऽिषष्टात्री जाता । सोमस्तस्या वाहने सिंहो जातः ।

॥ इति देव्यम्बाप्रवन्धः ॥

४९. उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवन्धः (P.)

10 १२२१) सुराष्ट्रायां गोमण्डलन[ग]रे सप्तश्तयोधैः सह सप्तपुत्राष्ट्रतस्त्रयोदश्यतस्त्रयोदशकोटीस्वामी धारानामा श्रावकः सङ्घं कृत्वा तीर्थ[न]मस्यै गतः । विमलाद्रौ युगादि नत्वा रैवततलहद्दिकायां स्थितः। तीर्थं दिग्वस्नैः पूर्वमिषिष्ठितमस्ति । तैरिप पश्चाशद्वर्पभोगात् पश्चाद्वौद्वान् वादे जित्वा आत्मायत्तं कृतम् । दिगम्बराणां द्वादशवर्पाणि जातानि । श्वेताम्बरीयधाराकेनोक्तं चतुरशीतिमण्डलाचार्याणां समीपे-यद्हं देवं नन्तुं समेतः । तैरुक्तम्-दिगम्बरीभृयागच्छ । तेनाचिन्ति-प्राणान्तेऽपि खगुरुलोपं न कुर्वे । अन्यदुञ्जयन्तनतिं 15 विना गृहे न यामि । चिन्तात्तों जातः । पुत्रैरूचे-किं कारणम् १ । हे पुत्रास्तीर्थं नन्तुं न लभ्यते । पुत्रैरुक्तम्-दिग्वस्नाधिष्ठिते तीर्थेऽपि किं कार्यम् १। तातेन कथितम्-पूर्वमात्मीयमेव, इदानीमेभिरधिष्ठितम्। एवं तिहं वला-द्पि यास्यामः, चिन्ता न कार्या । तत्पुत्रैर्मण्डलाचार्याणां क्थापितम्-यद्यं वलादपि तीर्थं वन्दिष्यामहे । तैर्निजभक्तखंगारस्य ज्ञापितम् । तेन किञ्चित्सैन्यं प्रहितम् । तैः पुत्रैस्तस्य सैन्येन साकं युद्धं प्रारव्धम् । सप्त पुत्राः सप्तश्चतयोधसहिता मारिताः। सङ्घपतिर्धाराको न भ्रङ्के । तृतीयोपवासेऽम्विकयाऽभाणि–वत्स ! कन्यकुङ्ज-20 देशे गोपालपुरे आमो राजा । स पूर्वभवे भूण्डपर्वते तपस्वी तपस्तावा नृपोऽभूत् । तस्य पार्श्वे वप्पभिद्विस्रयः सन्ति । तैरेते जीयन्ते नान्येन । एतेपां मत्रा व्यन्तराश्च सवलाः । इति ज्ञात्वा तत्र गच्छ । धाराकः सङ्घे मुत्तवाऽप्टश्रावकैः सह तत्र गतः । श्रीद्धरयस्तदा आमराजस्य सभायाश्राग्रे रसेन व्याख्यां कुर्वाणाः सन्ति । धारा-केन नत्वा सङ्घाज्ञा तेपां दत्ता । राज्ञा साक्षेपमैपिष्ट । आचार्यैस्तत्पार्श्वतो वृत्तान्तः पृष्टः । तेन समूछं वृत्तान्त-मुक्तम् । राज्ञा स्वभावश्रवणरैवतत्रभावाकर्णनहर्पपूरवशादभिग्रहो गृहीतः -श्रीनेमिनतिं विना न भोक्ष्ये । तद्भा-25 र्थया कमलादेव्या कथितम्-सोमेश्वरनमस्करणं विना न भोक्ष्ये । ततः सर्वेऽपि चलिताः । लक्ष १ पोठियां, उष्ट्रसहस्र २०, हस्ति ७००, घोटक लक्ष १, पदाति लक्ष ३, श्रावकसहस्र २०। राजा त्रिंशत्तमे दिने स्तम्भ-तीर्थे आगतः । रात्राविन्वकयाऽभाणि-राजन् । श्रीनेमिस्तव सत्त्वेनात्रैष्यति । प्रभाते पारणं कार्यम् । यत्र च गृहली पुष्पप्रकरश्रोपरि त्वया तत्र खनितव्यं हस्तेन नेमिः प्रग(क)टीभविष्यति । प्रभाते तदेव जातम् । नेमि नतः । राजपल्याऽभाणि-स्वामिन् । पारणं क्रियताम् । त्वां विना कथं करोमि । तत् क्षणात्सोमेश्वरलिङ्गः प्रादु-30 रभूत् । तिहने नदीस्थाने सोमनाथेन च्छिरा (१) नीतो अभिज्ञानाय । तत्रेभ्यानां देवकुलद्वयकृते द्रव्यमर्पितम् । एतसिनपुरे प्रासादद्वयं कारियतच्यम् । यथां वलमानाः पश्यामः । ततः प्रयाणकं जातम् । सङ्घसमीपे मानुपं प्रहितम् । स्रिरिभिर्मण्डलाचार्यपार्थे-यदि युध्यते तदा वहुजीवसंहारो भवतिः अतो वादे जय-पराजयौ ज्ञेयम् । सम्याः कृताः । मासं यावद्वादो जातः । श्रीनृपेण धाराकेन च प्रभूणामग्रे विज्ञप्तम्-बहवो दिना जाताः । प्रभुणाऽ-भाणि-अद्य निर्वाहियण्यामि । एकत्रिंशे दिने प्रभुणा भणितं मण्डलाचार्याग्रे-यद्य मण्डले कुमारी उपवेश्या ।

कुमारी यस तीर्थं दत्ते तस तीर्थं जातम् । तैर्भणितम्-एतत्त्रमाणम् । प्रथमं दिग्वस्त्रैर्मण्डले मण्डिता कुमारी । पात्रं नाप्रि तैः । ततः श्रीयप्पभद्धस्यो वसतौ ध्याने उपविष्टाः । सङ्घेशो वासान् दत्त्वा प्रहितः । तेन कन्या-शीर्पे वासाः क्षिप्ताः । ततः पात्रेणाभाणि-

- (३००) इक्कोवि नमुकारो जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स । संसारसागराओ तारेइ नरं व नारिं वा ॥
- (३०१) उर्जितसेलसिहरे दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स । तं धम्मचक्कविद्वं अरिट्ठनेमिं नमंसामि ॥

इति गाथाद्वयं तस्या मुखात्सर्वेरापि श्रुतम् । तिह्नादात्मीयं तीर्थं सञ्जातम् ।
॥ इति राज्यन्ततीर्थात्मकरणप्रवेन्धः ॥

५०. वज्रस्वामिकारितशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्धः (P.)

§ २२२) अथैकदा दश्चपूर्वधराः श्रीवज्रखामिगुरवो मधुमत्यां नगर्यां समायाताः । श्रीशञ्ज्ज्ञयदेवं नन्तुं गताः । देवं नमस्कुर्वद्भिभोजमेकमागतं दृष्टम् । देवार्चकः पृष्टः—रे ! किमिदम् । देव ! प्रत्ययान् प्रयित । चिन्तितम्—जिनशासनस्य मुख्यमिदं तीर्थम्, परं तत्र कपदीं मिथ्यात्वी जातःः एतन्न सुन्दरम्—इति विचिन्त्य मुहुयानगरे पुनरायातः । चिन्तितं ध्यानवलेन—अस्य तीर्थस्य क उद्धारः कर्त्ताः । अस्य नगरनिवासी सौराष्ट्रिकप्राग्वाटो भावडशेष्टिपुत्रो जावडः । तं मत्वा देशनामध्ये उक्तम् । तच्छुत्वा जने गते जावडस्तु स्थितः—प्रमो ! यदादिष्टं । अन्यः कोऽप्यहं वा ? । भवानेव । भगवन् ! ममाष्टादश प्रवहणानि कापि सन्ति न वा, तन ज्ञायते । वर्ष १२ जातानि । अधुना भोजनमपि कप्टेन भवति । स एवगृहे गतः । अङ्गशौचं कृत्वा यावदेवपूजायां प्रवृत्तः तावद्वर्थापनिकेनेत्युक्तम्—यत् प्रवहणान्यप्टादश क्षेमेणागतानि । श्रेष्टिना विम्वस्याग्रे जलं मुक्तम् ।

(२०२) ...डूगरवालिंग विलिण विलि कित्तीसु अन्भडमंज। अत्तागमणु न जाणिउं तुह पनरह मुह पंच।।

20

1

यत्तेषु द्रव्यमेष्यित तत्तीर्थार्थे । सत्त्वा वाहणवस्तृत्युत्तार्य गुरूणां [पार्थे] गतः । प्रभो ! योग्यता जाता । उद्धाराय यत्त्व्यम् । गुरुभिविंमृष्टम् –आदौ विम्यं पोतके (१) क्रियते । तत्राभागपुरप्रत्यासन्त्रमकंडाणाग्रामे सम्माणीनामसाणौ विम्यं निष्पसे मूले द्रामलक्ष एकं व्ययति । तत्राधानवीरिक्रियेण (१) क्रीत्वा विम्यमानीयताम् । जाविडस्तु द्रव्यमादाय तत्र गतः । विम्यं क्रीत्वा आनिनाय । कपर्देरनुभावाद्धिम्यं यावतीं भूमि
दिने च[दिते] तावतीं रात्रौ पश्चाद्याति । गुरुभिरुक्तम् –श्रेष्टिन् । उपवासं कृत्वा धौतवसनानि परिधायकस्य 25
चक्रस्य तले त्वया स्थेयम् , अपरस्य श्रेष्टिन्या । प्रीतौ द्रम्पती तथा स्थितौ । तयो.......िश्यतं स्कर्पेण ।
प्रातरुत्थायोपिर नीतम् । इतः श्रीवज्रस्यामी श्रीमरुदेव्याधिष्टायकं ध्यानवलाद्भोगवलाच स्वायत्तं चके ।
क्रमेण शेपा अपि स्वायत्तीकृताः । ते तु कपर्दिनमन्वेपयन्ति । स तं यातं वा । एवं पण्मासप्रान्ते कपर्दी
क्रीडायां गतः । श्रेपव्यन्तरैः स्थानं ग्रुन्यं मुक्तम् । इतो लेप्यविम्यं मण्डपे समानीतं शैलमयं मध्ये स्थापितम् ।

§ २२३) तत्र नृतनकपर्दी स्थापितः । स पूर्वं टीम्बाणाग्रामे-कोऽपि मधुमत्यां कथयति-कोलिक आसीत् । ३० तस्य द्वे भार्ये-एका हा[िंडः] अपरा कुहािंडः । स चीवरं प्रत्यहं वणयित । उभयतस्ताभ्यां प्रान्ताया.....करे मद्यसम्भल्यो वर्तेते । यदा यसाः समीपे स्याति सा तदा तं पाययित । इतश्र सुव्रताचार्यास्तनुगमनिकायां गताः । तैर्देष्ट्वा विमृष्टम् । एप अविरतः । असायुः कियत् । घटीद्रयं विमृश्य आहूय उक्तः-भोस्त्वया अनिच्छता

ग्रन्थिवन्धनं कार्यं तत्र गतेनोन्मोचनं कार्यम् । नमो अरिहंताणं इति कथनीयं मुखे। इत्युदित्वा स्रयो गताः । इतः शकुनिकागृहीतसर्पमुखाद्गरलं तन्मद्ये पपात । तेनाज्ञातेन पीतम् । स मृतः, अणपन्नी-पणपन्नीव्यन्तराणां मध्येऽवतीर्णः । इतः कलकलं कुर्वाणाः सर्वेऽपि राजभवनं ययुः । यदस्माकं कोलिको निरपराधो व्रतिभिर्मारितः । तेन अनार्येण स्रयो धृत्वा वधाय आदिष्टाः । स कोलिकस्तु नमस्कारप्रभावान्मृत्वा व्यन्तरो जातः । प्राग्भवं निरूप्य गुरूणां परिभवं दृष्ट्वा ग्रामोपरि शिलां चकार । राजप्रमुखः सर्वो जन आर्त्तो जातः । इतो व्यन्तरे-णोक्तं मारियण्यामि । कथम् १ । मम गुरून् शीवं मुश्चत यथा न मारयामि । एते ममोपकारिणः । एतेपां प्रसादान्मया देवत्वं ग्राप्तम् । ततः सर्वेर्गुरवः क्षामिता नृपप्रभृतिभिः । इति च लोकसमक्षं जगौ-

(३०३) मजासी मंसरओ इक्षेण वि चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओ सुसाहुवाओ सुरो जाओ॥

10 व्यन्तरस्तु नमस्कृत्य गतः । स यक्षः कपर्दीनाम दत्त्वा श्रीवज्रस्वामिभिस्तीर्थे स्थापितः । इतः पूर्वकपर्दी आयातः । विम्वपराष्ट्रतं दृष्ट्वा आरािं विधाय निस्तृतः । तदा पर्वतस्तु द्विधा जज्ञे । सदाफला वनस्पत्यिप तदा ज्वलिता । अतः कपर्दिना गुरव उक्ताः—प्रभो ! ममापराधं क्षान्त्वा इहैव मां स्थापयत । गुरुभिरुक्तम्—त्वमनहः । तव मिथ्यात्वं गच्छतो वारा न लगति । त्वयाऽत्र न कार्यम् । अहमन्यत्र गत उद्देगकारी भविष्यामि । गुरुभिरुक्तम्—त्वं याहि । ततः स देवपत्तने गतः । तत्र तैर्व्यन्तरैरपरद्वारे क्षेपितः । तत्र कपर्दिवारिका । ज्ञाता । इतः प्रतिष्ठा जाता । तथा महाध्वजवेलायां श्रेष्ठी सपत्नीक उपरि गत्वा नर्त्तितुं प्रवृत्तः । ततः पूर्वकप्विवारिका दिनाऽपहत्य क्षीरोदार्णवे क्षिप्तः । लोके इति ख्यातिर्जाता—भौतिकेनापि पिण्डेन स्वर्गं गतः । एवं द्रम्मलक्ष १९ व्ययेन श्रीयुगादिदेवविम्वं प्रतिष्ठाप्य स्थापितम् ।

।। इति श्रीशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्धः ॥

५१. कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्धः (Br.)

20 § २२४) मधुमत्यां नगर्यां कपिद्नामा कोलिकः । आिड-कुहािडनाम्यों कलत्रे अभक्ष्यापेयसक्तः । तत्प्रस्तावे योगन्धराचार्यास्समाजग्धः । अन्यदा तंगिणकायां गच्छिद्धः पूज्यभीर्यावचनेस्ताड्यमानः कोलिको दृष्टः । आचािर्व-भिणितम्—अहो कोलिक ! आगम्यतामस्त्रसमीपे । तेन चिन्तितम्—िकमिप याचिष्यन्ति वस्तादिकम् । आचा-र्थेण श्रुतेन विलोकितम्—िकयदायुरस्य । ततः पश्यन्ति घिटकाद्वयं यावत् । अहो कोलिक ! प्रत्याच्यानस्य प्रथमं पदं नमो अरिहंताणं इति त्वया भणनीयम् । मद्यं पिवताऽभक्ष्यं भक्षयता प्रन्थिश्छोटनीयः । नमो अरिहं-25 ताणमिति भिणित्वा भक्षणपानानन्तरं तथेव प्रन्थिन्धनीय इति प्रतिश्रुते, स्त्रिपु गतेषु शकुनिकागृहीतसर्पम्च-साद्गरलं मांसखंडमध्ये पपात । तद्धक्षणादसौ मृतः । अणपन्नी-पणपन्नीव्यन्तरमध्ये प्रवलो व्यन्तरो जातः । अवधिना दृष्टम्—गंठिसहितपसः प्रभावादहं देवो जातः । इतश्च तद्भार्याभ्यां राजकुले गत्वेति कथितम्—महाराज ! पास्तिष्डिभिरावयोर्भर्त्ता मारितः । किमिप कथितं तत्र जानीमः । मिथ्यादृष्टीनां च वचनात् राज्ञा ग्रुप्तो कृताः स्र्रयः । तेन व्यन्तरेणात्मश्ररीरमधिष्टाय राज्ञोऽग्रे भिषतम्—यन्महाराज ! क्षाम्यन्तां आचार्याः । अन्यथा ३० तव नगरोपरि शिलां पात्रिण्यामि । राज्ञा पाद्योविलम्य स्र्रयः क्षामिताः । शिला संहता । लोकविदिता गाथा भणति—

(३०४) मंसासी मज्जरओ इक्केणं चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओ सुसाहुवाओ सुरो जाओ॥ इति प्रभूणामग्रे नाटकं रचितम् । पथाद् ईद्दशं चोक्तम्-भगवन् ! मया किं कर्तव्यम् ? । प्रभुणोक्तम्-भो ! त्वया पाथात्यभवे वहूनि पातकानि कृतानि, तेपां शुद्धिहेतोः श्रीशत्रुक्कश्चमहितीर्थे सङ्घसाहाय्यकारी भव । तस्य कपर्दिनामा यक्षः सङ्घातः । अग्रीयकपर्दिना सह तस्य वर्ष १२ विग्रह्म-सङ्गादाः। अग्रीयकपर्दिना सह तस्य वर्ष १२ विग्रह्म-सङ्गादाः। अग्रीयकपर्दिना सह तस्य वर्ष १२ विग्रह्म-सङ्गादाः। ं इतश्र मधुमत्यां नगर्या प्राग्वाटज्ञातीयश्रेष्टी जाविडः, भार्या सीतादेवी, प्रवहण १८ पूरियत्वा समुद्रमध्ये प्रवहणसहितचित्रवछी (?) मध्येऽपतत् । क्रमेण वर्ष १८ सञ्जातानि । एकयाऽपि रीत्या निस्सरीतुं न शक्यते । 5 वहूनां देवानां आराधना कृता । पुनः कस्यापि साहाय्यं न जातम् । तदा चिन्तितम्-एकदा व्याख्यानमध्ये श्रेताम्बराचार्येरिति भणितम् । यतः-'कान्तार०' इत्यादि । नूतनकपर्दिना रात्रौ स्वमं प्रदत्तम्-यदहो जावड ! यसिन् पक्षेऽभ्रं दृश्यते तसिन्पक्षे प्रवहणानि चालनीयानि । अग्रे पुनः क्रयाणकं वापितं जावडेन । प्रवहणानि लघुत्वेन न सञ्चरन्ति । किसंश्रिद्वीपे समागत्य छगणकर्करैर्भृत्वा पञ्चमिद्वे समुद्रं निस्तीर्य मधुमत्यां नगर्यां समा-गतो जावडः । छगणानि सुवर्णीभृतानि, कर्करा रत्नानि सञ्जातानि । तदनन्तरं सङ्घं कृत्वा श्रीशत्रञ्जये श्रीऋप-10 भदेवनमस्करणाय गतो जावडः। यावत् स्नात्रं करोति तावद् अग्रीयलेप्यमयविम्वस्य नासिका गलिता। महाविपादो जातः । एतसिन् प्रस्तावे दशपूर्वधरेण श्रीवज्रसामिनाऽऽदिष्टो जावडः-अद्य रात्रौ कपर्दियक्षस्य भोगं कृत्वा कायोत्सर्गे स्थीयताम् । तत्करणानन्तरं रात्रौ कपर्दिना भणितम्-यदहो जावड! मम्माणाकरे मम्माणनगरे वाह्ये पूर्वदिशि या राइणिर्विद्यते तस्या अधः फलहिका मम्माणापापाणमयं विद्यते, तां कार-यित्वा इहानय । तस्या घटापने मूल्ये चानयने लक्ष ९ व्यये जाताः । पर्वतोपरि यावन्मात्रं दिनेऽध्यारोहयते 15 तावन्मात्रं रात्रौ वलति । श्रीवज्रस्याम्यादेशात् रथकलचकस्याथ एकत्र खयमन्यत्र श्रेष्टिनी स्थिता । तद्भाग्या-देवतासाहाय्याच न निवृत्तो रथकलः । उपरिगतं विम्वम् । वज्रस्यामिगणधरेण प्रतिष्टितम् । अग्रेतनं विम्वम्रुत्था-प्यते नोत्तिष्टति । पण्मासावधि भोगकरणेन श्रीवज्रस्वामिध्यानेन सर्वान् व्यन्तरान् आत्मायत्तीकृत्य पण्मासान्ते काप्याघे (!) कपिंति क्रीडार्थं गते, नूतनकपिंवचनेनाद्यविम्बमुत्थाप्य नूतने स्थापिते, तद्धिष्टायके नूतने कप-दिंनि कृते, आद्य आराटि मुक्तवान् । तद्नुभावात्पर्वतो द्विधा जातः । ध्वजारोपणप्रस्तावे जावडो भार्यासहितः 20 श्रासादोपरि नृत्यन् आद्यकपदिनोत्पाट्य वैताढ्यपर्वते उत्तरश्रेण्यां नीतः । एवं विम्यस्थापनम् ।

(३०५) श्रीविक्रमादिखन्नपस्य कालाद्धोत्तरे वर्पशते व्यतीते । शात्रुञ्जये शैलशिलामयस्य कारापिता जावडिना प्रतिष्ठा ॥ ॥ इति श्रीकपर्दियक्ष-जावडिप्रवन्धः॥

५२. लाखणराउलप्रवन्धः (B. P.)

25

§ २२५) शाकम्भरीपुर्यां चाहमानो लक्ष्मणः। स वर्त्तनाय भायीमादाय एकमन्त्यजं च सहायं कृत्वा देशान्तरं चिलतः। मार्गवशान्तद्वलपुरे सरःपरिसरे देवकुले दिनं विश्रान्तः। इतः सन्ध्यायां द्विजैरागत्योक्तम् –हे पान्थः। पुरस्य मध्ये समागच्छ। अत्र मेदानां प्रतिभयेन रात्रौ कोऽपिवहिनं तिष्ठति। लाखणेनोक्तम् –वयं पथिका मार्गस्याः। प्रतोल्यः सूर्योदये उद्घाट्यन्ते। अतोऽत्रैव स्थास्यामः। द्विजैरुक्तम् –अप्रमत्तैः स्थेयम्। तेषु गतेषु लाखणः सह सहायेन सज्जीभूय स्थितः। इतो रात्रौ मेदधाटी प्रसृता। लाखणेन सह सहायेन युद्धं कृतम्। जन २० पतिताः। 30 ताचुभावपि घातार्त्तो पतितौ। प्रातद्विजैरत्य पत्नी पृष्टा –कस्ते भर्ताः कः सखाः। तया दर्शिताचुत्पाव्य नीतौ। पालितौ। रुद्धवातेन तेन द्विजा मुत्कलापिताः। तरुक्तम् – क यास्यसिः। तेनोक्तम् –यत्र निर्वाहो भविष्यति। वयमत्रैव करिष्यामस्त्वयाऽसाकं पुरे मेदोपद्रवो रक्ष्यः। स स्थितः। द्विजैस्तु ग्रासः कृतः। तेन जनाः ५ अन्ये

¹ B ससखायः। 2 B मेदानामुपद्वो रक्षणीयः।

स्थापिताः । प्रतोलीं दातुं न यच्छति । मेदानां स्थानेषु गत्वा तेषु घाट्यां निर्गतेषु पात्रात्ये उपद्रवं करोति' । तैः कथापितम्—यद्वयं नङ्क्सीमायां नैष्यामः । त्वया नो' ग्रामेषु नागम्यम् । क्रमेण जनाः '२० स्थापिताः पार्थे । समीपग्रामेषु वला विहिताः । मेदानां कथापितम्—मम करदेषु ग्रामेषु नोपद्रवः कार्यः । एकदा घाटीमाद्राय मेदपाटे गतः । तत्र घाटी भग्ना । लाखणो घातजर्जरः कृतः पतितः । इतस्ते यावदुच्छ्वसितुं जनाः । प्रवृत्तास्तावदसिण देच्या गोत्रजया शकुन्तिकारूपं कृत्वोपिर निपत्य रिक्षतः । रात्रौ उत्थाय मन्दं मन्दं खपुरं गतः । एकदा देच्या च्याहृतम्—त्वां महान्तं विधास्ये चिन्ता न कार्या । प्रातमीलवेशमुकेरको वातप्रेरितो मुत्कलः समेष्यति । त्वया कुण्ड्यः कुङ्कमजलैर्भृत्वा प्रतोल्युपर्युपविश्य स्थेयम् । अग्रे गच्छतां हयानां छटा देयाः । येषां ता लिग्प्यन्ति तेषां वर्णपरावर्त्तो भविष्यति । मध्ये प्रवेशं च विधास्यन्ति । प्रातस्त्रथेव कृतम् । बहवोऽधाः प्रविष्टाः पुरान्तः । तथा महान्तमेकमश्चं दृष्टा स्थानपालेन गले लिग्वित्त । लाखणेनोक्तम्—मध्ये समेत्य पश्यतः । तैर-श्वसाधनं निरैक्षि हो हयो लच्यौ । तावादाय गताः । येषां छटा लग्नास्तेऽश्वाः शेषाः स्थिताः । एवमश्वसहस्व-१२ जाताः । महदाधिपत्यं जातम् ।

§ २२६) एकदा स्वर्गृहोपर्यपविष्टेन काचिद्विप्रवधः स्वान्ती दृष्टा । पश्चाद्विजानाहूय प्रोक्तम्—अहं भवतां पुरं त्यक्षामि । तरुक्तम्—कथम् १, तवेह गतस्य किं विनष्टम् १। यदि मे भूमिमप्पयत वास्रे गृहार्थे वासाय किं वा तदा 15 तिष्टामि । द्विजेः पुरस्य वास्रे वासाय भूरिपता । तत्र धवलगृहमारव्धम् । काष्टदले निष्पद्यमाने, भित्तयः पृथुला जाताः । पृष्टास्त हस्याः । स्त्रकारैरैचिन्ति—किमुत्तरं करिष्यामः । वेश्या एका पृष्टा—वयं केनोपायेन निस्तरिष्यामः । तयोक्तम्—न भेतव्यम् । सा वद्धीपनार्थं स्थालमादायाक्षतिर्भृत्वा राजकुलं गता । पृष्टा राज्ञा—किमिदम्यः । देव । लाखणगृहं वर्द्वितम् । कथम् १ । पश्यत, भित्तयः पृथुलाः पृष्टा न्यूनाः । स तदेव शक्कनं मत्वा तां सत्कृत्य प्राहिणोत् । तत्र राजकुलद्वारे गोत्रदेवीप्रासादो महान् कारितः । तथाऽष्टादश जैनाः प्रासादा विष्यत्वाः, प्राकारश्च । एवं क्रमेण नङ्कराज्यं जातम् ।

§ २२७) एकदा कस्यापि श्रेष्ठिनः पुत्री कुमारिका दृष्टा। सा पाणिग्रहार्थे याचिता। तया पिता व्याहृतः—मम् श्रावकत्वं प्रयाति, पुत्राश्चामिपमिक्षणः स्युः। अतो यदिति मन्यते—यन्मे पुत्रा मातृशाले वर्द्धनीयाः। इति मानिते सा परिणीता। स्रुते जाते मातृशाले प्रेष्वते । तत्र सर्वे पुत्रास्तस्या वर्द्धिताः । राउलेनोक्तम्—तव पुत्राणां किं ग्रासं ददामि । भाण्डागारे मुश्च, तथा वणिजां च पङ्कि दापय। राउलेन तथा कृतम् । वणिग्भः सह विवाहादि
किं सम्बन्धा जाताः । ते भाण्डागारिका जाताः। तस्य सुता आसल-राउलप्रभृतयः ३२ (द्वात्रिश्चत्) जाताः।

ते वलापर्वतस्य तीरे पृथक् २ स्थापिता दुर्गेपु तदा। तस्यान्वये राउलकेह्ण-केतृनाम्ना शाखाद्वये राज्यद्वयं जातम्। नङ्क्ते सुवर्णिगरौ च। लाखणपूर्वजाः—वासुदेव विकम वह्नभराज दुर्लभराज चन्दण गोऊ ।

अजयरा वीघरा सिंघरा। लाखण-विलराज सोही माहिन्द अणहिल जीन्दराज आसराज आह्नण कीत् समरसीह उद्यसीह चाचिगदेव सामतसीह काह्नुडदेव—इत्यादि।

।। इति लाखणराउलप्रबन्धः ॥

¹ B कुरुते । 2 B त्वसाकं । 3 B विंशतिः । 4 B जर्जरितः । 5 B असिणि । 6 B तुरगाणां । 7 B भवतु भवतु इत्युक्तं । 8 B वहारया समागतया । 9 B अवलोकयत । 10 B विलोकितं । 11 B एवं सहस्र १२ अथानां जाताः । 12 B वेश्मो । 13 B बाह्मणी । 14 B यातस्य । 15 B वासार्थे । 16 B सूत्रधारेः । 17 P 'गृहं 'नास्ति । 18 B सुत्रसुत्पचेत पितृगृहे प्रेपगति । 19 B ते तत्र वार्द्धिताः । 20 B ततो राउलेन पंक्तिर्दापिता । 21 B विणिग्भिः सह पाणित्रहः प्रत्राणां कारितः । */एतदन्तर्गता पंक्तिः B प्रती न लभ्यते । 22 B वासदेव । 23 B नास्ति । 24 B गार ।

५३. चित्रकूटोत्पत्तिप्रवन्धः (P.)

§ २२८) कान्यकुञ्जे काञ्यां शम्भलीशो नृपो राज्यं करोति । इतः शिवपुरे कतिचिद्रामाधीशिश्रत्राङ्गदो नृपः । एकदा तस्य सभायां कोऽपि योगी समेतः । स नित्यमेति राजानं न वक्ति । पण्मासान्ते नृपेण सेवाकारणं पृष्टः स आह-देव! निर्जनं कुरु । तथा कृतम् । राजन्! मम गुरुणा विद्या दत्ताऽस्ति। तस्याः पूर्वसेवा जाता, उत्तरसेवा तिष्ठति । सा तु त्वां द्वात्रिंशस्त्रक्षणं विना न भवति । राज्ञा मानितम् । देव्यप्टमीदिनेऽसिहस्तेन त्वया क्टाद्रा- 5 वागम्यम् । ओमित्युक्ते स गतः । देव्या पटान्तरितया तच्छुतम् । तया अमात्याग्रे उक्तम् । मत्रिणोक्तम्-यदा नृपो याति तदा मम कथ्यम् । नृपः सन्ध्यायां शिरोत्तिमिपेण तां विसृज्य, यदा चिलतस्तदा देव्या मन्त्री ज्ञापितः । स पश्चाचचारु । नृपोऽन्यग्रे गतो योगिनमैक्षिष्ट । मत्र्यपि च्छत्रं स्थितः । योगी नृपमित्रकुण्डपार्थे विमुच्य स्नानाय गतः । मन्त्री प्रकटीभूय नृपमाह-देव! अयं कपटी । त्वां हत्वा खर्णपुरुपं कर्त्ता । अतो गम्यते । नृपः प्राह-वाग् मे मा यातु । मन्त्री आह-यदाऽसौ कथयाति फेरकान् देहि तदा त्वया कथ्यम्-अहं न वेबि, 10 भवानग्रे भवतु । इत्युक्त्वा मन्त्री द्रक्षान्तरितोऽभूत् । योगी समेतः । तेन घ्यानमारव्धम् । अग्निकुण्डमुद्दीपितम् । नृपं प्राह-फेरकान् देहि। त्वमपि मम दर्शय नाहं वेशि। स उत्थाय तथा कर्त्तुं लग्नः। उभावपि त्वरितं धावतः। योगी वैश्वानराभिम्रुखं नृपमप्रेरयत् । तावन्मित्रणा राज्ञा च सोऽन्तः क्षेपितः । स खर्णनरोऽभूत् । उभावपि तं लात्वा गृहमागतौ । तत्त्रभावाद्वित्तं जातम् । स पश्चात् पुरस्थानमवलोकयन् पर्वतमधिरूढः । तत्रे यावान् दुर्गो दिने निष्पद्यते तावानिशायां पतिति । पूजया तत्रत्यो व्यन्तरस्तुष्टः । तेनोक्तम्-अहं पुरस्य भारं सोढुं न क्षमः । 15 अतः स्थानान्तरे क्रुरु । तत्र जलाद्यं पूर्तिपण्यामि । पश्चाहुर्गाः पर्वतोपरि अन्यत्र प्रारव्धः । चित्रकूटेति नाम कृतम् । वासे जायमाने उपरि लोका न मान्ति । पश्चात्रृपेणोक्तम्-कोटीध्वजा मध्ये वसन्तु, लक्षेश्वरा वहिः । एवं कोटीध्वजानां गृहसहस्रम् । एवं पुरे निष्पन्ने काशीश्वरेण शम्भलीशेन दुर्गी वेष्टितः । स स्वर्णपुरुषं याचते । विग्रहे वर्ष १२ जाते राज्ञा घासं शिरांस दन्या खनराः प्रहिताः, मध्यतनं खरूपमादातुम् । यावत्ते घासयुता मित्रगृहाधस्तात् सन्ति ताबद्भवाक्षस्थितया मित्रपुत्रया पिता उक्तः-तात ! पर्वताधस्तादेते वाणिज्यकारका 20 एतान दिनान किं स्थापिताः ?। शुल्कमादाय किंान प्रेष्यन्ते ?। तेन सित्वोक्तम्-एतत्परचक्रं मत्वा, मया त्वं दुर्गस्यैव मध्ये दत्ता। तव पुत्रोऽपि जातः। परमेतन्न याति। तां वार्त्तां श्रुत्वा तैर्नृपाग्रे उक्तम्। स निराशीभृय गन्तुं प्रवृत्तः। खदलं प्रेपयत् । स दुर्गमवलोकयन् यदा गन्तुं लग्नः, तावता गवाक्षस्थितया वाकरीवेश्यया सक्तम्य (३०६) गण्डूपदा किमधिरोहित मेरुग्रङ्गं किं वारवेरज(?)गिरौ निरुणिद्धि मार्गम् ।

श्रविषु वस्तुषु वुधाः अममार्भन्ते दुर्गग्रहग्रहिलतां त्यज शम्भलीश!॥

नृपः प्राह-तथा कुरु यथा दुर्ग गृह्णामि । तया प्रोक्तम्-कटकं सन्नद्धं कुरु । अयमत्रत्यो मध्याहे प्रतोलीत्रय-मुद्धात्य दानं दत्ते । यदाहं स्नात्वा केशविवरणं करोमि तदा ढौकनीयम् । सङ्केते मिलिते दुर्गो मेलितः । चित्राङ्ग-दस्तु स्वर्णपुरुपं कण्ठे बद्धा वाप्यन्तः पपात । नृपेण सा खनितुमारव्धा । तत आदेशो जातः-विरम वा कटकं हनिष्यामि । स नृपश्चित्राङ्गदपुत्रं राज्येऽधिरोप्य स्वपुरीं गतः । ततोऽभिषस्यते-'चित्रक्रटमिदं भद्रे॰' इति ।

॥ इति चित्रक्टोत्पत्तिप्रवन्धः ॥

30

25

५४. श्रीहरिभद्रसूरिप्रबन्धः (B.)

§ २२९) चित्रकूटे हरिभद्रो द्विजश्रतुर्दशिवद्यापारीणो महावादी । तस्य इयं प्रतिज्ञा यस्याहं भणितं न परि-च्छिनिद्य तस्य शिष्यो भवामि । तत्र श्रीवृहद्गच्छे श्रीजिनभद्रसूरयः कृतचतुर्मासकाः सन्ति । तेपां प्रवर्तनी याकिनी साध्वयु[पा]श्रयेऽस्ति।एकदा प्रतिक्रमणानन्तरं काऽपि साध्वी आवश्यकं गुणयति । तया गाथा उक्ता-

20

25

(३०७) चिक्कदुगं २, हरिपणगं ५, पणगं चिक्कीण ७, केसवी ६, चिक्की ८। केसव ७, चिक्की ९, केसव ८, दुचिक्क ११, केसी अ १२, चिक्की अ १२॥

इयं गाथा हरिभद्रेण गुण्यमाना श्रुता । अजानँस्तत्र प्रविधः । प्रवर्त्तन्या उक्तम्—कः प्रविश्वत्यत्र १ । तेनो-क्तम्—अतिचिगचिगापितम् । प्रवर्त्तन्या उक्तम्—न्तनं लिप्तं चिगचिगायते । प्रसादं कृत्वा अस्या अर्थं कथयत । उपिद् श्रवणेच्छा तदा गुरूणां पार्थाद्वगन्तन्या । स गतः । प्रातर्गुरूणां पौपधागारे गतः । उक्तम्—इमां गाथां न्याख्यानयत । गुरुभिरुक्तम्—िकं प्रतिज्ञायाः १ । तेनोक्तम्—सा तथैव । तिर्हं एपा सिद्धान्तगाथा पूर्वापरसम्बन्धं परीप्रयते; स च दीक्षां विना तपश्चरणं च विना न भवति । तिर्हं मे दीक्षां दीयताम् । तदा ब्रह्मलोकः सम्भूय उक्तवान्—वयं दातुं न दवः । हरिभद्रेणोक्तम्—कथं न दत्थ । ।

- (३०८) पक्षपातं परित्यज्य मध्यस्थीभूयमेव च। विचार्य युक्तियुक्तं यद् ग्राह्यं त्याज्यमयुक्तिमत्॥
- (३०९) पक्षपातो न मे वीरे न द्वेषः कपिलादिषु।
 युक्तिमद्वचनं यस्य तस्य कार्यः परिग्रहः॥
- (३१०) दुर्योधनस्वकुलनादाकरो वभूव विष्णुईरस्त्रिपुरदाहकरः किलासीत्। क्रोंचो गुहोऽपि दृढदाक्तिहरं चकार वीरस्तु केवलजगद्धितसर्वकारी॥
- (३११) खार्थारम्भप्रणतिशिरसां पक्षपातात् सुराणां द्यात्मानं करजकुलिशैदीनवेन्द्रं निहन्तुम्।
 सि...तिस्त्रभुवनगुरुः सोऽपि नारायणोऽस्मिन् रागद्वेषप्र.....कस्य न स्यात्पशुत्वम्॥
 - (३१२) विष्णुः समुचतगदायुतरौद्रपाणिः द्यम्भुर्लुलन्नरिद्योरोऽस्थिकपालमाली । अत्यन्तद्यान्तचरितातिद्ययस्तु वीरः कं पूजयाम उपद्यान्तमद्यान्तरूपम् ॥
 - (३१३) मातृमोदकवद् वाला ये गृह्णन्यविचारितम्। ते पश्चात्परितप्यन्ते सुवण्णग्राहको यथा॥
 - (३१४) नेत्रैनिरीक्ष्य विपकण्टककीटसप्पीन् सम्यग् यथा व्रजति तान् परिहृत्य सर्वान् । कुज्ञानकुश्चतिकुमार्गकुदृष्टिदोषान् ज्ञात्वा विचारयत पर.....वादः ॥ भो ! मया सम्यग् यत्तद्विमृष्टम् ।
 - (३१५) न वीतरागादपरोऽस्ति देवो न ब्रह्मचर्यादपरं [चरित्रम्]। नाभीतिदानात्परमस्ति दानं चारित्रिणो नापरमस्ति पात्रम्॥

इति द्विजान् सम्बोध्य दीक्षां जगृहे । कृतयोगोद्रहनः सिद्धान्तसारमधीतश्र गुरुणा पदे स्थापितः । श्रीहरिभद्रस्रय इति नाम कृतम् । तैश्रतुर्दशशतानि कृतानि सिद्धान्तरहस्यभूतानि [प्रकरणानि] । चिन्तितम्—क एतान् लेखियण्यति ? । विणक् दिर्द्धी एको दृष्टः । तस्य व्याहृतम्—मत्कृतान् ग्रन्थान् लेखय । गुर्वाज्ञा
प्रमाणमित्युक्ते, गुरुभिरुपदिष्टम्—अद्य मण्डिपिकायां ये मध्चिछप्टमयाः स्तम्भाः समायान्ति तानादाय गृहे
शिक्षाध्य पश्चादागन्तव्यम् । तथाकृते स हिरण्यकम्बाभिधनवान् जातः । तेन रूप्यपत्रेषु स्वर्णाक्षरैस्तानि लेखितानि । गुरुभिश्चित्रकृदोपरि प्रासादे औपधानि सम्मील्य स्तम्भः कृतः । तत्र प्रक्षिप्य मुक्तानि । स स्तम्भो न
पानीयेन गलति, न च्छिद्यते, नाग्निना दृष्टते ।

§ २३०) एक[दा] सरीणां भागिनेयौ वर्तं जगृहतुः । सरिभिः प्रमाणान्यध्यापितौ । ताभ्यां वौद्धानां प्रमा-णानि दुरववीधानि श्रुतानि । गुरवं उक्ताः-भगवन्! भवतामादेशेन वौद्धदेशे गत्वा तेषां प्रमाणान्यधीत्य जैनाभिप्रायेण कृत्वा यास्यावः । गुरुभिर्वारितावपि निर्वन्धं कृत्वा चेलतुः । वौद्धदेशे गतौ । तत्राव्यक्तवेपौ विद्यामठे पठितुं प्रवृत्तौ । खस्थाने समेतौ ग्रन्थपरावर्तने प्रवृत्तौ । वौद्धाधिष्टात्र्या तारादेच्या वायुयोगात् पत्रमु-ड्डाप्यं लेखशालायां क्षिप्तम् । 'नमो जिनाय' इति दृष्टा छात्रैरुपाध्यायस दर्शितम् । तेनोक्तम्-कोऽपि जैनश्छन्न- 5 मधीते । ततोऽत्र वाटिकाद्वारि जिनप्रतिमां मण्डयध्वम् । सर्वेऽप्युपरि चरणं दत्त्वां वजतः । जैनस्तु न यास्ति, तदा ज्ञास्यते । सर्वेऽपि चरणं दत्त्वा निःशङ्कं गताः । उभाभ्यां विमृष्टम्-त्रयं ज्ञाता अस्पाकमेतत्परीक्षार्थं कृतम् । ततो इद्धेन कर्णात् खटिकामादाय वस्भस्त्रं कृतम् । उपरि चरणं दत्त्वा गतौ । निजाश्रयात् शास्त्राण्यादाय निर्गतौ । यौद्धाचार्येर्नुपं प्रत्युक्तम्-यत् देव ! शासनसर्वस्वमादाय द्वौ श्वेताम्वरौ नष्टौ । नृपस्तु अनुपदं जातः । इतो हंसेनोक्तम्-चत्स ! अहं रहितस्त्वं कस्थापि शरणे प्रविशेषाः । हंसस्तु युद्धा मृतः । परमहंसः कसिन्नपि पुरे 10 प्रविच्य शरणे गतः । पृष्ठिलग्नं कटकमायातम् । वहिस्तनेन याचितः-भोः ! त्वमिष बौद्धभक्तः । तद्मं धर्मविद्धे-पिणमर्पय । तेनोक्तम्-शरणागतं नार्पये । यादशस्तादशो वाऽस्तु । परमहंसेनोक्तम्-मम वौद्धाचार्यर्वादोऽस्तु । यद्यहं पराजीयते तदा मार्यः । वौद्धैर्जितो मारितः । इतस्तस्य रुधिरालिप्ता रजोहृतिः कयाचिदेव्या शक्किनकारू-पया चित्रक्टे पौपधागारे परित्यक्ता । गुरुभिरुपलक्षिता । निपद्यादर्शनात् ज्ञातमरणाः शिप्याणां रौद्रध्यानं गताः । चौद्धानामुपरि प्रकुपिताः । इत उपाश्रयात्पाश्रात्ये तैलकटाहिर्मण्डिता । तत्र मन्त्रवलेन आकाशमार्गेण बौद्धा 15 एत्य कटाह्यां पतन्ति पतङ्गवत्। एवं सप्तशतानि। ततो गुरुभिज्ञीतवृत्तान्तैः श्रावक एकः शिक्षां दत्त्वा प्रहितः। स मध्ये प्रवेष्टं न लभते ! तेनोक्तम् -गुरूणां श्रीजिनभद्रस्रीणां पार्श्वादहमागतोऽसि । मध्ये मोचितः । तेनो-क्तम्-प्रभी ! अहमालोचनार्थी गुरूणां सकाशे गतः । मया प्रायिक्तं याचितम् । गुरुभिरहं भवतां पार्थे प्रहितः । त्रसादं विधाय मम प्रायिक्तं दीयताम् । प्रभो ! मया पश्चेन्द्रियजीवस्य विराधना कृता। साऽत्यर्थं द्यते । गुरुभि-रुक्तम्-सुवहु प्रायश्चित्तमेप्यति । तर्हि भवतां किं भविष्यति यदि मम इयत् । ततो ज्ञातम्-मम गुरुभिर्ध्वतमवग-20 तम् । तदा हि अवाङ्मुखीजाताः। श्रावकेणोक्तम्-गुरुभिः कथापितम्, कथं समरादित्यचरितं नावगतम्?। तेन एकसिन् भवे पिष्टमयः कुर्कुटो हतः, एकविंशतिवारान् पिष्टकुर्कुटसङ्गान्तेन व्यन्तरेण वैरं कृतम्। तत् स्पृत्वा श्रीहरिभद्राचार्या वधानिवृत्ताः । पुनः सङ्घं मील्य प्रायितं कृतवन्तः । तदनु 'समरादित्यचरितं' वैराग्यामृत-मयं चक्कः । कालेनानशनं कृत्वा दिवं गताः । इति प्रतीतम् ।

(३१६) महत्तराया याकिन्या धर्मपुत्रेण धीमता । आचार्यहरिभद्रेणाष्टकवृत्तिरियं कृता ॥

।। इति श्रीहरिभद्रस्रीणां प्रवन्धलेशः ॥

५५. सिद्धर्षिप्रवन्धः (B. Br.)

६२३१) अथ सिद्धपें: [प्रवन्थ] उच्यते-श्रीमालपुरे दत्त-श्चमंकरौ श्रातरौ महर्द्धिकौ श्रीमालज्ञातीयौ। इतथ शुमंकरस सुतः सीधाकः । दत्तस्य सनुर्माधः । स सीधाको वाल्यतोऽपि धृतव्यसनी पित्रा कृष्णाक्षरितः । एकदा रममाणेन हारितम् । पितुर्गृहाचौर्यं विधाय दत्तम् । अन्यदा रममाणेनोक्तम्-द्रम्म ५०० यावत् क्रीड-३० यध्वम् । द्रम्मान् ददामि, शिरो वा ददामि । तैरुपवेशितो धृतकारैः, तेन हारितम् । द्रम्मा याचिताः । रात्रौ श्रीवीरप्रासादे थरणकं दत्त्वा सुप्तेषु धृतकारेषु सिद्धः प्रासादभित्तेर्भ्रमणं ददौ । पौपधागारमध्ये पतितः । गुरु-भिर्वाकृतः-कस्त्वम् १ । तेन स्वनाम उक्तम् । ग्रहणयोग्यं किमस्ति १ । तेनोक्तम्-तथ्यम्, परं मम दीक्षां यच्छत । पुरु पर पर ॥ १

20

द्युतकाराः प्रातः शिरो प्रहीष्यन्ति । अतो दीक्षां स्तोककालमण्यस्तु । गुरुभिर्नक्षत्राण्यवलोक्य प्रभावकं मत्या दीक्षितः । प्रातः श्राद्धास्तं दृष्टा गुरून् न्युः न्युभोऽद्य कल्ये परिवारः किं स्तोकोऽस्ति, यदस्य घटानुकारिमाणि क्यस्य दीक्षा दत्ता ? । भवतु याद्यस्ताद्यो वा । इत उपवेशने स्वाध्यायपुर्तिकां दृष्टा 'उपदेशमाला'मादिमध्या वसानां विलोक्य पाठं ददौ । गुरुभिश्चिन्तितमहोप्रज्ञाऽस्य । इतो द्युतकाराः समायाताः । भो । वहिरेहि । किं उपात्वण्डेन छुट्यसे । श्रावकरुक्तम् निं देयम् ? । पश्चशती द्रम्माणाम् । वयं दास्यामः । कस्यापि कारणे दीनोऽसौ प्रच्यते । पुनरसाकं पार्श्वे समेण्यति । श्रावकरुक्तम् न्यास्यति ततो यातु । द्युतकारेरुक्तम् निर्हे असाभिर्मुक्तः । ते गताः । स सिद्धान्तमधीतवान् , प्रमाणप्रनथाश्च । सिद्धेनोक्तम् नभगवन् ! बौद्धा महावादिनः श्रूयन्ते । तत्र गत्वा तानिर्जित्य समेण्यामि । गुरुभिरुक्तम् नौनानामेप धर्मो न यत् कस्यापि सम्मुखं गम्यते । य उपविष्टानां सम-भयति सोऽभ्येतु । सनिर्वन्धात् वजन् स्ररिभिरुक्तः न्यदि तत्र गतः परावर्लसे तैस्तदा वयं ग्रुत्कलापनीयाः । 10इदं किमादिष्टम् ? । बौद्धानां देशे गतः । तेपां स्रक्षं दृष्टम् ।

(३१७) मृद्धी शय्या प्रातरुत्थाय पेया मध्ये भुक्तं पानकं चापराह्ने । द्राक्षाखण्डं शर्करां चार्धरात्रौ मोक्षश्चान्ते शाक्यसिंहेन दृष्टः ॥

एवंविधानाशीर्वादांश्च शुश्राव-

(३१८) ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि कामुन्मील्य चक्षुः क्षणं पदयानङ्गद्वारानुरञ्जनिममं त्रातापि नो रक्षसि । मिथ्या कारुणिकोऽसि निर्धुणतरस्त्वत्तः क्रुतोऽन्यः पुमान् सेर्ष्यं मारवधूभिरित्यभिहितो बुद्धो जिनः पातु वः ॥ (३१९) आत्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति सततं कर्मास्ति कर्त्ता विना गन्ता नास्ति शिवाय चास्ति गमनं बुद्धोऽस्ति बद्धो न च । इत्येवं गहनेऽपि यस्य न मुनेर्व्याहन्यते शासनं

खद्योतैरिव भास्करस्य किरणा बुद्धो जिनः पातु वः॥

तथा 'शुष्कां श्रष्कुलीं भक्षयतो भगवतो बौद्धस पश्चज्ञानानि समुत्पन्नानि' इत्यादि श्रुत्वा बौद्धाचार्यं जगी—यदं जैनः, परं त्वद्दर्शनमादिरिष्यामि । तैर्हृष्टैर्नृपाय निवेदितः—यदसौ जैनः स्वदीक्षां ग्रहीष्यति । नृपेण गौरवं कृतम् । दुक्कलानि परिधापितः, अलंकृतश्चाभरणेः । प्रात्तर्लगं बौद्धदीक्षायाः । रात्रौ तेन गुरूणां वचः स्पृतम् । 25 प्रातः पणवन्धं तेपां निवेद्य चिलतः । श्रीमाले श्रीजिनसिंहस्तरीणां पार्श्वे प्राप्तः । आचार्यः । गुरुक्ताः भया तेपां शासनं तन्त्वभूतमवगतम् । गुरुक्तिरुक्तम्—किश्चदस्थानिप ज्ञापय । तेनोक्तम् । गुरुक्तिः प्रत्युत्तरे दत्ते आह—भगवन् ! नैतद्वचोऽहं ज्ञापितः । अनेन वचसा तान् निर्जित्य समेष्यामि । गुरुक्तिः पूर्ववदं कृत्वा प्रेपितः । तत्र तेः परावर्तितः । पुनर्गुरुस्तमीपे आयातः । तैस्तु वोधितः । एवं सप्तवेला एहिरे-याहिरांचके । अप्यवेलायां बौद्धेरुक्तिमिहैव तिष्ठ तत्र वा । तेनोक्तम्—चतुरो वादिनो मया सह प्रेपयत । तानादाय श्रीमाले पौपधागारे 30 आयातः । उक्तं द्वारस्थेन—आचार्यः! गुत्कलाप्यसे । तैरुक्तम्—मध्ये आगच्छ । मध्ये आयातः । नितं विनाप्यपविषः । गुरुक्ते 'लिलतिविक्तरा'वृत्तेः पुत्तकलाप्यसे । तैरुक्तम्—मध्ये आगच्छ । मध्ये आयातः । तेन सोङ्घण्ठमिनिहत्तम्—एभिवौद्धाचार्यराक्रान्तानां तनुगमनिका सुलभा एव । स्रुर्यो गताः । स पुत्तिकां वाचियतुं प्रवृत्तः । 'सिवमयल'इत्यालापवृत्तिमनुचिन्त्य वौद्धैः सह वादं कृत्वा गुरुष्वनागच्छत्स तान्निरुत्तरीचके । गुरुष्वागतेषु, अभ्युत्थानं कृतम् । गुरुवो विज्ञसाः—एकोऽहमामं आत्मपञ्चमो भृत्वा समागमम् । उक्तं तेन—

(३२०) नमोऽस्तु हरिभद्राय तस्मै श्रीप्रभसूरये । मदर्थं निर्मिता येन वृत्तिर्छितविस्तरा ॥ तैः सह प्रवत्राज । पश्चादुपदेशमालावृत्तिः कृता । पश्चात्स्रिपद्मनुपाल्य समाधिना दिवं गतः ॥

॥ इति सिद्धर्पिप्रवन्धः ॥

५६. शान्तिस्तवप्रबन्धः (P.)

े १२३२) कोरण्टके वीरचैत्ये देवचन्द्रनामोपाध्यायः । तत्र श्रीसर्वदेवाचार्या वाराणस्याः सिद्धिक्षेत्रे गन्तुं मनसः 5 समायाताः । तत्र कियदिनाः स्थिताः । उपाध्यायः पदेऽस्थापि । देवस्ररिति नाम कृतम् । स्वयं यात्रायां गताः । तत्पद्दे प्रद्योतनसूरयः । ते च विहरन्तो नङ्कले गताः । तत्र श्रेष्ठी जिनदत्तः, प्रिया धारिणी, सुतो मानदेवः स्रीणाम्रपाश्रये गतः । धर्मे श्रुत्वा प्रव्रज्यां जग्राह । सर्वसिद्धान्ततत्त्वज्ञो जातः । स्रीश्वरैः पदे स्थापितः । जया-विजयाख्यौ देव्यौ नमतः । अथ तक्षशिलायां पञ्चशतीतीर्थपवित्रितायां महान रोगो जातः । न कोऽपि कस्यापि वेश्मिन याति । पुरीं शून्यप्रायां वीक्ष्य सङ्घेनाचिन्ति-सर्वेऽप्यिष्ठायका नष्टाः । इति चिन्तिते शासन-10 देन्या उपदिष्टम्-सर्वे न्यन्तरास्तुरुष्कन्यन्तरेरुपद्धताः । वर्षत्रयानन्तरं तुरुष्कमङ्गो भावी । इति ज्ञात्वा यद्वचितं तत्कार्यम् । पुना रोगशान्त्यै उपायोऽस्ति । नङ्कनगरे श्रीमानदेवस्ररीणां चरणोदकेन सिश्चत स्नमानुपाणिः यथा डामरं नश्यति । एवम्रुक्त्वा तिरोद्धे । तैः सर्वैः सम्भूय वीरदेवनामा श्रावको नड्ले प्रहितः । स तत्र गतः । नैपेथकीं कृत्वा मध्ये गतः। सरयो ध्यानपरा दृष्टाः। जया-विजयादेव्यौ नमस्कर्त्तमागते, उपवरककोणे उपविष्टे। यदा स मध्ये उपवरकं गतस्तदा [दे]च्यो दृष्टा चमत्कृतः । अहो राजर्पयोऽमी । एतेपां पादोदकात्कथं शान्तिर्भ-15 विष्यति । मयि दृष्टे ध्यानमार्व्धम् । स्रूरिणा ध्यानं मुक्तम् । ततः सावज्ञं वन्दिताः । देव्यौ तिचत्तं ज्ञात्वाऽदृष्ट-बन्धनैस्तं वबन्धतुः । स प्रभ्रणा मोचितः । आगमनकारणे स्नरिभिः पृष्टे, श्रावकवीरदेवेनोक्तम्-तक्षशिलासङ्घेनो-पद्रवरक्षार्थं प्रश्रुपादमुले प्रेपितः। मम वि[क]ल्पो जातः। जयादेच्या उक्तम्-यत्र भवादेशाविछद्रान्वेपिणः श्रांवकास्तत्र गुरवो नागमिष्यन्ति । स्रिरिभिरुक्तम्-वयमत्रस्थाः शान्ति करिष्यामः । श्रीशान्तिनाथ-पार्श्वनाथ-मंत्रगर्भे श्री'शान्तिस्तव'मर्पयित्वा प्रहितः । स तस्यां गतः । तस्यिन् पठ्यमाने शान्तिर्जाता । वर्षत्रया[नन्तरं] पुरी 20 तुरुष्कैर्भमा । अद्यापि भूमिगृहे तस्यां पित्तलानि विम्वानि सन्ति । ततः प्रभृति एप स्तवः सञ्जातः ।

॥ इति शान्तिस्तवप्रवन्धः ॥

५७. न्याये यशोवम्भनृपप्रवन्धः (.B. Br. P.)

§ २३३) कल्याणकटके पुरे यशोवर्म्मनृपतिस्तेन धवलगृहद्वारे न्यायघण्टा चद्वा। एकदा राज्याधिष्टात्री देवी नृपत्रतपरीक्षार्थं धेनुरूपं कृत्वा वत्सस्य तत्कालजातस्य मार्गे कृत्वा स्थिता। नृपस्तुर्विहिलामारूढस्तत्रायातः। वेगेन 25 विहला वत्सचरणयोरुपरि भृत्वा गता । वत्सस्तु मृतः। धेनुः कोक्र्यते, अश्रूणि मुञ्चिति। केनाप्युक्तम् नराज-द्वारे गत्वा न्यायं याचस्व। सा गता। तया शृङ्काग्रेण घण्टा चालिता। नृपस्तु भोजनायोपिवृष्टः। शब्दं श्रुत्वा वभापे—रे! कोऽयं घण्टां चालयति?। सेवकैविंलोक्योक्तम्—देव! कोऽपि न, भुज्यताम्। नृपः प्राह—निर्णयं लब्धा भोक्ष्ये। नृपः स्थालं त्यक्त्वा प्रतोल्यां स्वयमायातः। कमप्यद्वप्ता धेनुं प्राह—केन पराभृतासि?। तं मम दर्शय। साउग्रे भूता, नृपः पृष्ठौ लग्नः। तया वत्सो दिश्तः। नृपेणोक्तम्—केनेयं वाहिनी वाहिता?। स पुरो भवतु। 30

कोऽपि न वक्ति । नृप आह-तदा मोक्ष्ये यदा स प्रकटीमविष्यति । लङ्घने जाते प्रातः कुमारेणोक्तम्-देवाहम-पराधी । मम दण्डं कुरु । नृपेण वाहिनीमानाय्य सार्ताः पृष्टाः-कोऽस्य दण्डः १ तरुक्तम्-देव । राज्यधर एक एव कुमारक्तस्य को दण्डः । नृपः प्राह-कस्य राज्यम्, कस्य सुतः । मम न्याय एव महान् । यद्भवति तहूत । तरुक्तम्-यो यस्य कुरुते, तस्य तद्विधीयते । नृपेणोक्तम्-इह स्विपिहि । स सुप्तः । नृपेणोक्तम्-वाहिनीसुपरि वेगेन वाह-5 यत । कोऽपि न कुरुते । नृपस्तदाह-(B नृपः कामाश्राविण्यामिदमवादीत्-) मे पुत्रस्रहो न, विनश्यतु वा जीवतु । यावत्स्ययसुपविश्य वेगेन वाह्यति कुमारचरणयोरुपरि तावहेवी प्रकटीभूय पुष्पवृष्टिं चके । न गौर्न वत्सः । राजन् । मया तव चित्तपरीक्षणं कृतम् । नृपस्य सुतो व्हाभो न्यायो वा । पुत्रादिष न्यायस्तव वह्नभः । चिरं राज्यं कुरुं ।

॥ एवं न्याये यशोवर्म्भप्रवन्धः॥

५८. अम्बुचीचनृपप्रबन्धः (Br. P.)

§ २३४) एकदा द्वारिकायां कृष्णो राज्यं करोति । पाण्डविषतृच्यो विदुरः कृष्णेन प्रधानः कृतः । दिनं प्रति १६ गद्याणा ग्रासे कृतास्त्यापरं न किमि । एकदा विदुरेणोक्तम्—त्वं मेऽधिकं न ददासि, अतः कस्याप्यन्यस्य पार्थे यास्यामि । कृष्णः प्राह्—तव प्राप्तिरियती, नाधिकास्तीति । विदुरेणोक्तम्—प्राप्तिरस्ति परं त्वया वारिता । तर्हि राजान्तरं त्रज—इत्युक्तः । कृष्णेन स प्रहितः । कृष्णेन सर्वेपां भूपतीनां कथापितम्—यद्विदुरस्य १६ गद्याणाधिकं 15 न देयम् । स सर्वत्र आन्त्वा समायातः । कृष्णाग्ने वभापे—मम त्वं काल इव पृष्ठे लग्नः । तवाज्ञयाऽधिकं कोऽपि न यच्छति । कृष्णः प्राह्—तर्हि द्विजरूपं कुरु । अहमि तव बहुको भविष्यामि । हस्तिकलपपुरेऽम्बुचीचो नृपतिर्महान्त्यागी । परं कर्णयोर्न शृणोति । तृपितस्त्वम् इति वक्ति, वुश्विष्वतश्चि इति वदिते । तस्य पुरे आवाभ्यां गम्यते । गतौ तत्र । विदुरो भव्यविष्रवेपं चकार, कृष्णस्तु बहुकरूपम् । विदुरेण नृपस्याशीर्वत्ता । नृपेण प्रधानसम्युन् समालोकितम् । प्रधानरुक्तम्—कलशे करं क्षित्वा चीरिकाया आकर्षणं कुरु । विदुरेणाधः करं क्षित्वा कृष्टा, 20 विलोकिता । ग० १६ तत्र लिखिताः । वहकरूपेण कृष्णेनोपरितनी गृहीता । तत्र चीरिकायां कोटिलिखिता । प्रधानरवादि—अकिञ्चित्करोऽयम् । एप च भाग्यवान् । अस्ताकं दाने पोडश्च निकृष्टाः । कोटिः सर्वोत्तमा । ततः प्रत्यावृत्तौ । कृष्णेनोक्तम्—

(३२१) न विद्या धनलाभाय जनजाङ्यसमृद्धये। आत्मानमम्बुचीचं च मां चे दृष्ट्यां सुखीं भव॥

25 त्वं विदुरोऽहं कृष्णो नृपस्त्विकश्चित्करः। इति विसृश्य विदुरः खस्थो जातः।

॥ इति अम्बुचीचप्रवन्धः ॥

- 6000

(P.) सङ्गहगता अवशिष्टा विधि-परोपकारादिविषयकप्रकीर्णप्रवन्धाः।

५९. विधिविषये उदाहरणम् ।

§ २३५) पोतनपुरे नरवाहनो नृपः । सुमित्रो मन्त्री । अन्यदा अन्तःपुरे पुत्री जाता । नृपेणोत्सवे कारिते, पष्टीदिनेऽमात्यस्य विसायो जातः । पष्टीदिने विधिरेत्य ललाटेऽक्षराणि क्षिपति । तदेतत्सत्यं असत्यं वा-इति-सन्देहे, खयं खड़ माधाय छत्रं स्थितः। अर्द्धरात्रौ स्त्रीरायाता। सा कुङ्कममादायाक्षराणि क्षित्वा यान्ती मन्त्रिणा 5 प्रणामपूर्वं पृष्टा-देवि! प्रसादं कृत्वा कथय, कान्यक्षराणि क्षिप्तानि? । तयोक्तम्-मा पृच्छ । निर्वन्धेन पृष्टा आह-इयं कोरिकसुतस्य पत्नी भविष्यति । इत्युक्तवा तिरोद्धे । प्रातर्मत्री विपण्णस्तं वृत्तं नृपाय आचरूयौ । नृपेणोक्तम्-तस्य सुतो जातमात्रोऽस्ति, स बालोऽपि व्यापाद्यः । इत्युक्ते मित्रणोक्तम्-देव ! वालहत्यां कः करोति । तदैव व्यापादियिष्यामः । ऋमेण कन्या वर्द्धिता, सोऽपि वर्द्धितः । राजगृहे कर्माणि कुरुते । पोडशवापिके तसिन्नमात्येनोक्तम्-देव! स डिम्भः कथं व्यापादनीयः ?। इतः कस्मैचित्रृपपुत्राय कन्या दत्ता। पण्मासान्ते 10 लग्नं मत्वा नृपेण सं भूजीनपीयत्वा (१) विधिनिमत्रणाय उक्तः-रे वत्स! विधि निमन्यागच्छ । तेनोक्तम्-स्वामिन्! सा कास्ते । तन जाने-मित्रणोक्तम् । लङ्कायां स चलितः । अग्रे गच्छन् कसिं थित्पुरे श्रेष्टिहट्टे उपविष्टः । तेन पृष्टम्-क यास्यसि १ । तेन स्वभावोक्तौ गृहे नीत्वा श्रेष्ठिना भोजितः । उक्तम्-विध्यग्रे मम सन्देशो वाच्यः-मदीयं भवनं कथं ज्वलति ?। तेनोक्तम्-कथियये। तं श्रुत्वाऽग्रे गच्छन् पुरमेकमुद्धसं दृष्ट्वा मध्ये प्रविष्टः। शोभा-भिरामं पत्र्यन् राजाङ्गणे नृपसिंहासनाऽग्रे निविष्टः । सन्ध्यायां पुरशोभा जाता । नृपः समाययौ । तेन नम-15 स्कृतः । कोऽसि त्वम् १ । खरूपे उक्ते स०-मम सन्देशो विध्यग्रे वाच्यः-यन्मे पुरं प्रातिईशो दिशं कथं याति १ । तच्छत्वा प्रा[त]श्रलितः । समुद्रोपकण्ठे गतः । चिन्तातुरो मत्स्येनैकेन व्याहृतः-भो मनुष्य! कोऽसि त्वम् ? खभावोक्तौ तत्रापि तेनाप्युक्तम्-यदि मे सन्देशं कथयसि तदा तत्र नयामि । तेनोक्तम्-यद । तेनोक्तम्-मदीये जठरे दाघः कथम् १। स पृष्ठिमधिरोप्य उपकण्ठे मुक्तः । तेनोक्तम्-वलनं कथम् १। सप्तप्रहरान् प्रतीक्षयिष्ये । इति श्रुत्वा स गतः। इतः प्रतोलीराक्षसेषु धावितेषु तेनोक्तम्-विधेः खरूपं समर्प्य वलनेष्यामि । तैर्मध्ये मुक्तः । स 20 रावणनृपालयसप्तमभूमौ कुचेलां कोद्रवदलनपरां विधि राक्षसनिवेदितां ननाम । खरूपेऽपिंते सा हृष्टा जाता । वत्स! त्वं गच्छ । लग्नसमये एप्यामि । सन्देशान् पृष्टा समुद्रोपकण्ठे गतः । तत्र तं मत्स्यं दृष्टां, तेन पृष्टः-मत्स-न्देशं कथय । पूर्वभवे त्वं विद्यापारगो ब्राह्मणः । विद्यादाने कृपणो जातः । मृत्वा मत्स्यो जातः । पूर्वभव-विद्यया तव देहो दहाते । यदि विद्यां ददासि, तदा ते खास्थ्यं भविष्यति । सोऽपि जातिं स्मृत्य तस्येव विद्या-मदात् । पुनः प्रतटे नीतः स विद्यावान् । पुनः श्रून्यपुरे सन्ध्यासमये नृपाय मिलितः । तेन श्रून्यताकारणे 25 पृष्टे, उक्तम् अत्रैव पुरे तव पिता दुर्गरोधे सन्नह्य बहिनिः सृतः । धारातीर्थे मृतः । मस्तकं विना त्वया अपि संस्कारः कृतः । करोटिका कालदण्डचण्डालगृहेऽस्ति । तया डिम्मानि ख्यापानं कुर्वन्ति । पश्चात्तव तातो च्यन्तरो जातः । स यथा यथा तां करोटिकां ताप्यमानां पञ्यति तथा तथा ऋदः सन् पुरं शून्यं विधत्ते । रात्रौ तया शीतया जातया खास्थ्यं करोति । नृपेण तामानीयाग्निसंस्कारः कृतः । तसिन् पुरे खास्थ्ये जाते, खपुत्रीं दत्त्वा बहुपरिकरः प्रेपितः । पुनः श्रेष्टिपुरे गतः । श्रेष्टिनातिथ्ये कृते वार्ता पृष्टा । तेनोक्तम्-वित्तवानपि त्वं 30 क्रुपणस्तव गृहे देवगुरुसुहासिण्यादयो निःश्वस शापं यच्छन्ति-ज्वलत्वस गृहम् । तेन सत्यं मत्वा दानेश्वरो जातः । खपुत्रीं दत्त्वा प्रेपितः । इतो लग्नदिने स खपुरे गतः । जनैर्वरो मत्वा मध्ये नीतः । केनाप्यलक्षितेन

किश्चिन्नोक्तम् । हस्तमेलकवेलायां पुरे पूर्ववरः समायया । स केनाप्यसत्कृतो मध्ये समागतः । विवाहं मत्वा युद्धसज्जो जातः । इतो विधिना समेत्य नृप उक्तः—राजन् । मा विपीदः भो मन्त्रिन् । त्वमपि मा विपीदः । किं विसरिस त्वया पृष्टाऽहम् १ । मयोक्तं पूर्व मद्राक्यमन्यथा कथं भवति । एपाऽस्यैव भवतु । अन्यां परिणाप्य द्वितीयः प्रेपितः । इति विधिर्यद्विधने तद्भवति, मनुष्यकृतं न भवति ।

5

20

६०. परोपकारविषये उदाहरणम्।

(३२२) नीचाः शरीरसौख्यार्थमृद्धिच्यापाय मध्यमाः । कसौचिदद्धतार्थाय यतन्ते पुनरुत्तमाः ॥

§ २३६) कश्चित्परोपकारी न्यायी प्रमान् अन्यायनगरे गतः । तत्र राजाप्रभृति सर्वेऽप्यन्यायिनो वसन्ति । तेन स्वजीवनार्थं विकेतुं कोहलकानि समानीतानि । विकेतुं लगः । 'ईछ' सम्बन्धेन नवकोहलकानि गतानि । 10 चत्वारो विलोक्यन्ते । खेटके पतितः । स आत्मानं विकेतुं कामोऽपि न छटति । तेन पुरुपेण चिन्तितम्—कथं अथापि प्रतीकारं करोमि १ । इमशानभूम्यां गतः । तत्र मृतकानां दाघं दातुं न ददते । मृतकमहत्त्वानुमानेन द्रव्यं याचते । लोकेः पृष्टम्—कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । तस्य द्रव्यं ददाति । ततोऽनन्तरं दाघो भवति । तेन कियद्भिदिनैर्द्रम्माः सहस्रदशो मेलिताः । राज्ञः (०ज्ञा १) पुरोहितः पृष्टः । तन्द्रम्यां समागतः । द्रम्मानां सहस्रं याचते । पश्चशत्या निर्वाहः । राज्ञोऽग्रे लोकेन रावा कृता । राज्ञा शव्दितः । स मुक्तकेशः कौपीनवासाः 15 प्रत्यक्षपिशाच इव दृष्टः । पृष्टः—कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । कोऽपि राज्ञीशालको वर्तते कस्मिनगरे १ । तेनोक्तम्—'नव कोहलां ईछ तेर' एवं कुत्रापि वर्तते । तेन समस्ता द्रम्मा राज्ञः समर्पिताः । तस्य राज्ञा व्यापारो दृष्तः । नगरेऽन्यायो रक्षितः । समस्तलोकानामुपकारकरो वभृव ।

६१. उद्यमविषये उदाहरणम् ।

(३२३) उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः। पुरुषस्य चोपविष्टस्य देवता न च सिद्धिदाः॥

§ २३७) केनापि पुंसा देवी चाम्रण्डा आराधिता। परितोपं गता क०-याचख। तेन कथितम्-यिचन्तयामि तत्प्राप्तिः। तव भविष्यति-इति कृत्वा देवीभवनानिःसृतः। चिन्तितम्-मम शरीरे सर्वाङ्गीणानि आभरणानि भवन्तु। जातानि। गृहस्रोपिर व्रजन्मार्गे सार्थेन सह चौरैर्दृष्टः। सार्थो गृहीतः। स उपविश्य स्थितः। केऽपि नंष्ट्रा गताः, केऽपि योधिताः। स लकुटैः कुट्टियत्वा गृहीतः। आभरणानि गतानि। शरीरे दृमितो गाढं देवीं 25 भञ्जनाय लोढीं गृहीत्वा गतः। देव्या कथितम्-कथं मां भञ्जसे १। त्वया चौरात् कथं न रिक्षतः १। यदि युद्धं कुरुत त्वं तदा स्कन्धाभ्यामवतरामि, यदि पलायनं कुरुत तदा पादाभ्यामवतरामि। उपविश्य स्थितस्तदाऽहं किं करोमि १। देव्या स भङ्गं कुर्विनिपिद्धः। ततः स्वगृहे गतः। यदि उद्यमः कियते तदा सिद्धिर्भवति।

६२. दानविषये उदाहरणम् ।

(३२४) पश्चाइत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा न वा खलु । खहस्तेनैव यद्त्तं तदत्तमुपतिष्ठति ॥

(३२५) सद्यस्तृप्यति भोक्तारं यस्योद्देशेन दीयते। सत्यं वदामि कौन्तेय! यो ददाति स सुञ्जते॥

5

§ २३८) कयाचित्त्रोपितभर्त्कया पत्यागमनकारणं विलोकयन्त्या दिना घनतरा गताः । भर्तुः पार्धात्पश्चा-देको जनस्त्याः समाचारदर्शनार्थं समायातः । सा अन्यासक्ता दृष्टा । तया चिन्तितम् —अहमनेन ज्ञाता । स पुनरि भर्चारं प्रति चलनाय लग्नः । तस्य चलतो द्वौ मोदकौ समिपितौ सम्बलार्थम् । एको विपमिश्रितो द्वितीयो न । यथैप विपमिश्रितमोदकभक्षणेन विनश्य भर्तुरग्ने गृहस्वरूपं न कथयति । स चलितः । तस्येव ग्रामगोन्द्रके निर्विण्णो भर्चा तस्या उपविद्यो दृष्टः । क्षुधाऽऽक्रान्तः । तत्र द्वौ जनावुपविद्यौ । तेनैको मोदकस्त्रस्या भर्त्योग्यं 10 दृष्तः । एकस्तेन भक्षितः । विपमिश्रितमोदकभक्षणेन लहितः । मृच्छां प्राप्तः । तावता दण्डपाशिकेर्धृतः ससस्या । लोको मिलितः । तस्योपद्रोतुं लग्नः । मारणार्थं नीतो जनः । भार्यायाः ग्रुद्धिर्जाता । मोदकभक्षणेन द्रदेशादायातो मम भर्चा विनष्टः । स जनो मारणार्थं नीतोऽस्ति । तया चिन्तितम्—मम विरुद्धानतस्तात्कालिकं फलं जातम् । अहमेनं जनं मुश्चापयामि । तया तत्र गत्वा कथितः—याद्यं दानं दत्तम् , तस्य तात्कालिकं फलं दृष्टं तादशम् । जनो मुश्चापितः । लोकानामग्ने कथितम्—याद्यं दीयते ताद्यं प्रत्यक्षं दश्यते; याद्य दत्तं 15 ताद्य लव्यम् । तस्याः सत्यकथनेन विपं जित्वोत्तारितम् । स निरामयो जातः । तदनन्तरं सा तस्य विपये एकचित्ता गृहस्थधम्मं पालयति । याद्यदीयतेऽन्यस्य तादक् प्रत्यक्षं दश्यते—इति भावः ।

(३२६) अपलपति रहसि दत्तं प्रत्ययदत्तेन संशयं कुरुते। तस्य हि नश्यति सर्वं मूलतस्तान्निशम्यैताम्॥

६३. कर्णवाराविषये उदाहरणम्।

20

§ २३९) देवदत्तेन व्यवहारिणा प्रवहणगतेन एकस्यात्मीयवणिक्पुत्रस्य हस्ते चत्वार्यमूल्यकानि रह्नानि गृहें कलत्रयोग्यानि प्रहितानि । तेन वणिक्पुत्रेण चतुर्प्रामपूं(क्)टजनानां लश्चां दत्त्वा साक्षिणः कृताः । यदा देवदत्तः समायाति तदा युष्माभिरिति कथनीयम् न्वयं साक्षिणः कृत्वा, तव कलत्रयोग्यानि चत्वारि रह्नानि प्रक्तियद्भिद्देनैः प्रवहणे समायाते देवदत्तः कुशलेनागतः । कलत्रपार्श्वे पृष्टम् – मया तव योग्यानि चत्वारि रह्नानि प्रहितानि, आनय तानि, प्रविलोक्यन्ते; रह्नपरीक्षकाणां दर्श्वते । तया कथितम् – मया योग्यानि चत्वारि रह्नानि प्रमिपितानि । तैरिप कथितम् – मया चतुरो नगरमध्यस्थान् व्यवहारिणः साक्षिणः कृत्वा तव प्रियायोग्यानि सम्पितानि वयं साक्षीकृत्य निश्चयेनास्मिन्नर्थे न सन्देहः । तेन चिन्तितम् – अहमनेन वणिक्पुत्रेण साक्षिभिश्च [ग्रुपितः] कोऽपि नगरमध्ये न यो न्यायान्यायं विलोकयिति । कर्णवारां सत्यां कुरुते । केनचिज्ञनेन कथितम् – कर्णवारी मृतः । पुनस्तस्य लघुपुत्रो विद्यते एकः । देवदत्त-स्तस्य गेहे गतः । पुत्रस्य मात्रा स आवर्जितः । तया कथितम् – किमर्थं समायातः १ । कर्णवारां प्रच्छनाय । ३० तया कथितम् – अरे वत्स ! तव पिता नगरमध्यस्यां समग्रां कर्णवारां कुर्वन् लोकानां मध्याद्रहुतरं द्रव्यं समानयत् । त्वं किमपि न कुरुपे । अन्यन्वां लघुं भिणित्वा कोऽपि न मन्यते । मातरहमपि तस्य पुत्रो भवामि । समग्रं निर्णयं करिप्ये । यतः –

(३२७) सिंहशिशुरि निपति मदकुलझङ्कारभूषिते करिणि। न पुनर्नेखमुखविलिषि(लिखि)तभूतलकुहरस्थिते नकुले॥

तस्य समीपे देवदत्त उपविष्टः। कर्णवारा कथिता। व्यवहारिणश्रत्वारोऽप्याकारिताः। पृथक् पृथगुपवेशिताः। तेपां समीपे पृ०, तैः क०-वयं साक्षीकृत्य तस्य प्रियायोग्यं समर्पितानि। भव्यम्। तेन स्ववुद्ध्या पडस्र्धीलोअको विभन्य चतुर्णां समर्पितः। कथितं च-यावन्मात्राणि सन्ति तावन्मात्राणि क्रवन्तु । चत्वार्यपि रत्नानि तैः क्ट-साक्षिमिरन्याद्यानि २ कृतानि । तेन कर्णवारीपुत्रेण कथितम्-भोः वणिक्पुत्र । रत्नानि सकालेऽपि समर्पय, मा राजग्राज्यो(ह्यो) भव। एते क्टसाक्षिणश्र राजग्राह्या भविष्यन्ति। ततस्तेन श्रेष्टियोग्यानि रत्नानि समर्पितानि। पादयोश्र पतितः। कर्णवारीपुत्रस्य पदं जातम् । अतः सत्यां कर्णवारां कुर्वतां द्रव्यप्राप्तिर्यश्रश्च इह लोके प्रतिकेऽपि। श्रेष्ट्यपि रत्नानां सौख्यं विलसित्वा स्वर्गभाग्जातः।

॥ इति कर्णवाराविपयकप्रवन्धः॥

(G.) सङ्घहगता अवशिष्टाः प्रवन्धाः ।

§२४०) श्रीवाक्पतिराजकविना भारतं कर्त्तुं प्रारव्धम् । तावता निश्चि द्वैपायनः समागतः । तेनोक्तम्-िकिमर्थं पादमवधारिताः । तेनोक्तम्-तव पार्थे याचितुम् । किम् १ यत् त्वं भारतं मा कृथाः । पुरतकमर्पय । तेन तथा- कृतम् । गीर्वाणवाण्यपि निपिद्धा । ततो गौडवधनामा प्राकृतग्रन्थो विहितः ।

15 § २४१) श्रीसारंगदेवप्रधानो राज्ञा रामदेवेन पृष्टो निजखामिनः कीर्तिस्फूर्तिं अवादीत्। राज्ञोक्तम्–सर्वं भव्यम्, परं पानं करोति । पानकः शशाङ्ककलङ्कः । तेनोक्तम्–देव ! सत्यम्, परं मातृ-भगिनीं जानाति । रामदेवस्य पितृव्यसुता छखाईराणी अन्तःपुरेऽस्ति । इति श्रुत्वा लजितः ।

१२४२) अथ अभयदेवनामा द्विजः प्रभासे सरखत्यां स्नानं विधाय समागत्य च श्रीसोमेश्वरं नमस्कृतः । तद्वर्मशिलायाः पुरः शफरी जीवन्ती पतिता तस्यैव शरीरे लग्ना मृता च । तेन सानुकम्पेन प्रायिश्वत्तं पृष्टम् । 20 केनापीति गदितम्-सुवर्णरूपमयी दीयते शफरी । तेन न मानितम् । ततः सर्वत्र प्रायिश्वत्तहेतोर्श्रमन् श्रीस्तम्भ-तीर्थे गुरुर्जीववधमांसभक्षणप्रायिश्वत्तं सिद्धान्ते वाचयन्तभृत् । तेन श्रुतम् । यद्यस्य जीवस्य यावन्तीन्द्रियाणि भवन्ति, तद्वधे तावन्मितश्रतोपवासा विधीयन्ते । तन्मानितम् । ततो दीक्षात्ता । श्रीअभयदेवस्रयो जाताः ।

§ २४३) क्रम्भीपुरे यशोधनो व्यवहारी । तस्य पुत्रो विद्यानन्दो विस्तरेण परिणीतः । दीपालिकायामागता वधूः । तेनोक्तम् – कथा कथ्यतामिति । तया लज्जया नोक्तम् । सा मुक्ता । ततः पित्राऽपरां परिणायितः । पूर्व25 वदुक्ते सापि मुक्ता । पुनः पित्रा दूरं गत्वा कन्यां याचियत्वा परिणायितः । तया पृष्टया कथितम् – कीदृशीं कथां कथयामि १ अनुभूतां, श्रुतां वा, दृष्टां वा । तेनोक्तमनुभूताम् । एवमुक्ते तया मन्दं २ द्रव्यं पितृगृहे प्रविष्टं कृतम् । एकदा निश्चि गृहं ज्वालितम् । तदनु निर्धनतयात्मचतुर्थकुदुम्वं निःसृतम् । कस्मिन्नपि नगरपाद्रे सम्वलिमपेण पिता गतः, मातापि गता, सोऽपि तां विहाय गतः । सा तु द्रव्यवलेन राजकुमारवेपं विधायावलगां जग्राह । तस्य पिता महिपवित्तोऽजनि । माता मासोपवासिन्यजनि । स कोरिको जातः । त्रथमपि तया संगृहीतम् । वर्षान्ते
30 तमाकार्य कथितम् । अद्यापि कथां कथयामि नो वा। जातम् । एवं पुनः व्यवहारी जातः विहितो भार्यया।

§ २४४) केनापि राज्ञा वाह्यालिगतेन कथित्पुमान् करीरशिखरस्थानि करीराणि विचिन्वन्नुदितः-रे सुप्राप्यानि अम्नि विहाय कथं कप्टप्राप्यानि चिनोपि। तेनोक्तम्-सुप्राप्यानि पथादिप प्रहीष्यामि, पूर्वमहमसाध्यानि साधिरिष्यामि। राज्ञा तुप्टेन च्यापारो दत्तः। स महासुखं सुङ्के। एकदा प्रातः पृष्टः-कथसुन्मना इव दृश्यसे १। तेनोक्तम्-सुस्रमशय्यायां वृन्तेन द्मितोऽसि। ततो राज्ञा उन्मत्त इति सर्वमादाय च्यापारान्निर्वासितः। एवं यावत्-

जा जा पडइ अवत्थडी०॥

5

§ २४५) राजा-ऽमात्य-तलारक्ष-च्यवहारिणां पुत्राः मित्राणि च कर्म-बुद्धि-विक्रम-व्यवसायान् मन्यन्ते । विवादे जाते देशान्तरं प्रति चिलताः । एकेन व्यवसायप्रयोगात् कस्यापि हट्टे द्रव्यप्रपार्जितम् । द्वितीयेन [धाटीतो(१)] प्रामो रिक्षतः । तृतीयेन बुद्धियशात् तटस्थेन सरोवरमध्यकीर्तिस्तंभपाशो दत्तः । चतुर्थस्य कर्म-वशात् पदाभिषेको जातः ।

(३२८) यद्भविष्याधिको धीरैव्यवसायी प्रकीर्तितः। तसाद्प्यधिको लोके भाग्यवान् राजिलो यथा॥

10

§ २४६) कर्मोपक्रमप्रशंसकं नरद्वयं राज्ञा केनापि क्षे प्रक्षिप्तम् । दिनत्रयं जातम् । राज्ञा तयोर्मोदकदशकं प्रहितम् । उपक्रमवता गृहीतम् । मोदकपश्चकं कर्मप्रशंसकस्यापितम् । तन्मध्ये रत्नपश्चकमभूत् । राज्ञा तौ वाह्यनि-प्कासितौ । भाग्याधिकेन रत्नानि दर्शितानि । अतो भाग्यमेव श्रेयः ।

§ २४७) वसन्तपुरे जितशञ्चराजा समां सचित्रां कारयन्निति । अत्रान्तरे चित्रकरदारिका भक्तमादायागता । 15 इतश्च घद्धो वाह्यभूमो गतः । ततस्तया तत्र कीडया अवि वर्हिवर्ह चित्रितम् । ततो विलोकनायागतेन नृपेण पिच्छश्रान्त्या करः क्षिप्तः । नखावली भग्ना । सा हसिता । राज्ञोक्तम्-कथम् १ । तयोक्तम्-चत्वारोऽपि मूर्जाः । एकश्चतुष्पथे घोटकं त्वरयन् दृष्टः । द्वितीयो मम पिता, यो भक्ते समागते वहिर्गन्ता । तृतीयो राजा, यः समभूमि मित्पतुर्वृद्धस्य चित्रार्थं ददाति । तुर्यस्त्वम् । ततस्तेन सा परिणीता । ततः सा राज्ञोऽग्रे कथां कथयित-राजन् । शृणु । कोऽपि अस्तमनं जातम् । स कथं जानाति । राजन् । राज्यन्थत्वात् ।

द्वितीयदिने—राजन् ! व्यवहारिस्ता काचित् पित्रा मात्रा आत्रा मातुलेन च चतुर्प स्थानेषु दत्ता । लगदिने चत्वारोऽपि वरा विवादं विद्वयते । सा विवादं विज्ञाय मृता । एकेन सह गमनं कृतम् । द्वितीयेन तसा अस्थीनि तीर्थे प्रक्षिप्तानि । एकः पिण्डं ददाति । तुर्यो मृतसंजीविनीविद्याग्रहणार्थं देशान्तरे गतः । तेन कृत्रापि कृदमानं वालकं चुल्लके क्षिप्तवती कापि नारी दृष्टा । तेनोक्तम्—आः किमेतद्विहितम् १ । तया पुनर्जीवितः । तेन 25 तत्र विद्यामादाय सापि जीविता । पुनश्रतुर्णां वादो मारुयकेन भगः । येन जीविता स पिता । येनास्थीनि तीर्थे क्षिप्तानि स आता । यः सहोत्पन्नः सोऽपि आता । पिण्डदाता भर्ता ज्ञेयः ।

तृतीयदिने-केनापि राज्ञा चौरद्धयं [पेटीमध्ये निःक्षिप्य नद्यां] प्रवाहितम् । कसिन्नपि नगरे केनापि राज्ञा निष्कासितम् । पृष्टम्-कियन्ति दिनानि जातानि । ताभ्यां तुर्यं दिनं [कथितं] कथं ज्ञातम् १ । राजन् १ चातु-र्थिकज्यरप्रभावतः ।

पु॰ प्र॰ स॰ 15

चतुर्थं दिने-कस्यापि राज्ञोऽन्तःपुरद्वयम् । एकया महे गन्तुकामया निजाभरणपेटिका कस्याश्रिक्तिजसख्याः समर्पिता । तया हारश्रोरितः । तया समेतया पेटिकां दृष्टा कथितम्-मम हारः केनापि चोरितः । राजन् ! कथं ज्ञातः ? । काचमयपेटित्वात् ।

पश्चमिदने-कस्यापि राज्ञो रत्नचतुष्टयम्-नैमित्तिको, रथकारः, सहस्रयोधी, वैद्यश्च विद्यते । अन्यदा तस्य राज्ञः 5 सता विद्याधरेणैकेनापजहे । ततो राज्ञोक्तम्-य आनेष्यति स परिणेष्यति । इत्यमुक्ते नैमित्तकेन मार्गो दर्शितः । रथकारेण गगनगामी रथश्चके । सहस्रयोधिना स जितः । सा राजपुत्री विद्याधरमारिता वैद्येन सज्जीकृता । एषां को भर्ता ? । वादे जायमाने तया काष्टमक्षणं कृतम् । नैमित्तिकेनापि तया सह कृतम् । द्वाविष सुरंगान्त-भूत्वा सुखं स्थितौ ।

§ २४८) कुत्रापि केपामपि आचार्याणां जलोदरम्रत्पनम् । केनापि वैद्येन खरूपं विलोक्य पृष्टम्-यूयं किं 10 कुरुथ ? । तैरुक्तम्-प्रन्थ एकः प्रारब्धोऽस्ति । तत्र सरोवर्णनं क्रियमाणमास्ते । तदवगत्यौपधं कारितम्, इत्युक्तं च-यन्मरुदेशवर्णनं विधत्त । तथाकृते आचार्याणां जलोदररोगोऽगमत् ।

§ २४९) केचिदाचार्या अतीव विद्वांसः कर्मयोगात् कुष्टिनो जाताः। तत औपधोपचारैरपि रोगमनिवर्तमानं वीक्ष्य श्रीसेरीसके यात्रायां यात्वा देवाग्रे त्रिविधाहारश्रत्याख्यानं विधायोपविष्टाः। दिनसप्तकमजिन। पश्चा- चतुर्थाहारोऽपि त्यक्तः। तदात्वागतव्यन्तरैः स्थितव्यन्तरपार्थे प्रथमिति—कथं भवतामियन्तो दिवसा महाविदेहे 15 लगाः। तैरुक्तम्—महं तेजःपालकलत्रं भीमगान्धिकगृहे सुतात्वेनोत्पन्नमास्ते। तया परिणयनोचितया पाणि- ग्रहणं परित्यज्य श्रीसीमंधरस्वामिकरेण दीक्षा गृहीता। पित्रा पाणिग्रहणद्रव्यं तत्परित्रज्यायाः समये व्ययितम्। तदुत्सवं विलोकयतामसाकमियन्ति दिनानि लगानि। ततस्तैराचार्याणां कथितमिति—भवान् सप्तमभवे भाव- सारोऽभूत्। तेन रङ्गभाण्डतप्तजलेन वाडिमध्ये नकुलनालकसप्तकं विनाशितम्। तेन कर्मणा त्वं सप्तमभवेऽसिन् कृष्टी जातः। तवाद्यः स्तोकमास्ते। कम्मीपि परिक्षीणम्। यदि भणसि ततस्तवारोग्यता दीयते। परमागामिभ- 20 वेऽपि कर्म वेद्यिण्यसि। तद्वचो निग्नम्य प्रातः श्रावकानापृच्छ्य स्र्रयस्तथैव स्थिताः।

§ २५०) अन्यदा वामनस्थलीवास्तव्यः पण्डितवीसलो लोलीयाणके गतः । तत्र जायमाने जागरणे व्यासे-नैकेन वाहगस्याग्रे लोलीयाणकं व्याख्यातम् । यदद्य मजुष्याणामेकादशसहस्रा उपोपिताः सन्ति । स्नानं कुर्वन्ति च । वीसलेनोक्तम्-िकं स्नानेनामुना १ । पुरे मदीये लघुकासीरे वामनस्थलीनामिन गोलक्षमेकं वाल-ही-ओजेनिनदीद्वये स्नानं कृत्वा तृणमपि स्नादिति ।

25 § २५१) कस्यापि व्यवहारिणः स्वमे मुखे उन्दरिका प्रविष्टा । तेन रोगो जातः । पण्मासाः संजाताः । केनापि मितमता वैद्येन भोजनं दत्त्वा ऊपालो दत्तः । तदन्तः कृत्रिमा मूपिकाः पितताः । ततो नीरोगो जातः ।

§ २५२) वहूनां विदुपां सभाक्षोमो भवति, इत्यर्थे कथा-पण्डितौ ह्यौ कुत्रापि पठित्वा कसिश्चिदेशान्तरे महित रायतने गतौ । ततो वीजपूरकमेकं भेटाकृते गृहीत्वा भूपसमीपं गतौ । सभां महितीं विलोक्य क्षिभितौ । राज्ञः पुरो वीजपूरकं मुक्तम् । राज्ञोक्तम्-पूर्णं पूर्णं किमेतत् १ । पण्डितेनोक्तम्-राज्ञो भेटायां 'लींवडस'केन 30 भाव्यम् । ततो हिसतः । तावता द्वितीयेनोक्तम्-यत् भवति 'भसाक्षोभः' । § २५३) कच्छदेशे वहुचौरोपद्रवं विज्ञाय राज्ञा जिणहा नामा व्यापारी प्रेपितः। स चौरं मारयत्येव । एकदा चारणेन चौरी कृता । स धृतः आरक्षकेण । चारणं भणित्वा मित्रजिणहाकस्य देवपूजां विद्वतो विज्ञप्तम् । करसंज्ञया मित्रणोक्तम्-मारयत । तदा चारणेनापाठि । 'इक् जिणहा इक्क जिणवरह०' ।

§ २५४) एकदा पारणादिनोपरि श्रीयशोभद्रस्ररीणां क्षमाश्रमणानि समागतानि । दाक्षिण्यात्सर्वत्र मानितम् । ततस्तिद्दिने ग्रामग्रामात् श्रीसङ्घः सकलोऽपि मिलितः । यत्र न यान्ति तत्र ते श्राद्धा विपादं कुर्वते । अतस्तां 5 वहुरूपिणीं विद्यां स्मृत्वा रूपान् विधाय सर्वेषां मनोरथाः पूरिताः ।

§ २५५) रावणविजयं विधाय समेतेन श्रीरामेणायोध्याप्रवेशे समस्तलोकपार्थे 'धान्यस्य कुशलं गृहे' इत्थं पृष्टम् । लोकानां चेतसीति जातम्-यद्वर्पाणि चतुर्दशयावद्वने स्थितः । अन्नप्राप्तिर्न जाता । अतः प्रथममेवेदं पृष्टम् । इङ्गितै राज्ञा तदवगत्य महाजनो निमन्त्रितः। प्रहरद्वये आकारितः । तेषां सुवर्णस्थाले महामूल्यानि रत्नानि सुक्तानि । एकैकस्थाभिसुत्वमालोकयति । एकैनोक्तम्-देव ! नवीना रसवतीयम् । परं रत्नानि न शक्यंते भोक्तम् । १० यद्येवं जानीय तदा मम पृच्छायां कथं हसिताः । १० शुक्त-'उत्पत्तिर्दुर्लभा यस्य ।

ः (३२९) अन्नं प्राणा वलं चान्नम् अन्नं जीवितमुच्यते । परमौषधमन्नं हि सर्वमन्ने प्रतिष्ठितम् ॥

§ २५६) खरतराणामाचार्याणां निश्च कोऽपि रंको दुर्भिक्षे परिश्रमन् शालाद्वारि समागतः पूत्करोति । गुरुभिः श्रुतो वारितोऽपि न याति । ततो गुरुभिर्विहिनिः सुत्य वारितः—अरे! अन्यत्र याहि । वयं दर्शनिनः । ततो विशेषतश्ररणयोर्लिगित्वा स्थितः । ततो गुरुभिरतपोधनमुत्थाप्य श्रावकस्थैकस्याकारणं प्रहितम् । तस्य भोज-15 नायापितः । तेन निजगृहे नीत्वा निजवालकशीताशनं भोजितः । अत्याहारेण विद्वित्त्वस्या मृतः । शुभध्यानेन व्यन्तरोऽजित । ज्ञानेन ज्ञात्वा पुनरपि रंकवेषं विधाय तथैवागतः । गुरुभिरपि तथैवोत्थाय वारितः । स निजरूषं प्रकटीकृत्येति जगाद-भगवन् । भवतां प्रसादेन ममेदशी संपत्तिरजित । ततः किमिप याचध्वम् । तैरुक्तम्-वयं किं याचामहे । यस्तवानं दत्तं तानेव हि व्यवहारिणो विधेहि । अपरं यो गुरून् पूजियप्यिति तस्य गृहे न दारिद्यम्—इत्युक्तवा मम पूजां कारय सर्वत्र ।

§ २५७) कस्यापि राज्ञो राज्ञी वदति—नृप! मम श्रातुर्व्यापारं देहि। विपर्जोयम् (१)। राजाह-राज्ञि! व्यापारस्तस्य दीयते, यो व्यापारं कर्ज्ञ जानाति। सा न तिष्ठति। ततो दत्ता हस्तिपदरक्षा। ततश्रतुष्पथे लोकैः सह
कलहं कृत्वाऽऽगतः। ततो राज्ञा कस्यापि पूर्वव्यापारिणो नित्यमवलगां विदयतः पदश्रप्टस्य हस्तिपदे रक्षाव्यापारो दत्तः। चतुष्पथे तत्र डालं दत्त्वा यो य आयाति तस्य तस्याग्रे वदति—अत्र राज्ञो गजशाला भविताः
अत्र पुनः पद्वहस्तिन आलानस्तम्भो भावी। एवं भणतस्तस्य व्यवहारिभिरुक्तम्—इह मा कृथाः, अस्मृहृहाणि 25
पात्यिष्यन्ति। इति च्छन्न कृत्वा द्रव्यं गृहीतम्। प्रातर्लक्षसंख्यधनान्यादाय राज्ञोऽग्रे मुक्तानि। पृष्टं च नृपेण।
भणितो यथार्थः। हिंपतेन भूपेन महान् व्यापारो दत्तः।

30

परिशिष्टम्. १.

्रप्रबन्धचिन्तामणिग्रम्फितकतिपयप्रबन्धसंक्षेपः ।

§ २५८) अवन्तिदेशे प्रतिष्ठानपुरे विक्रमो राजपुत्रो भट्टमात्रयुतो रोहणे तदासन्तपुरे कुम्भकारगृहे खनित्रम् । प्रातः खनीपार्थे भट्टेन मातुर्धतिः । हा दैवमिति । सपादलक्षमूल्यं रत्नम् । वलन् भट्टेन कुशलम् । तत्करा-.5दाच्छिद्य खनीकण्ठे-

(३३०) धिग् रोहणगिरिं दीनदारिक्र्यव्रणरोहणम् । दत्ते हा दैवमित्युक्ते रत्नान्यर्थिजनाय यः॥ ततो अवन्तिदेशपार्श्वे पटहरपर्शेन राजा । सहूर्ते विनापि सो दध्यौ । कोऽपि कोपी सुरः प्रतिदिनं नृपं हन्ति । निशीथे भोजनादीनि पल्यङ्के निजदुक्लाच्छादितोच्छीर्पकम् । दीपच्छायामाश्रित्य कृपाणपाणिः । तुष्टो-ऽहमग्निवेतालो भक्त्या । नित्यं देयम् । प्रतिपन्नम् । आयुःप्रश्ने स्वस्नामिप्रश्नः । श्वतमेकं नोनाधिकम् । यतः— (३३१) सा नत्थि कला तं नत्थि ओसहं तं किं पि नत्थि विन्नाणं ।

जेण धरिज्ञइ काया खज्जंती कालसप्पेणं॥

रणेन जितो अग्निवेतालः सिद्धः । यतः-

(३३२) सत्त्वैकतानवृत्तीनां प्रतिज्ञातार्थकारिणाम्। प्रभविष्णुर्न देवोऽपि किं पुनः प्राकृतो जनः॥ § २५९) त्रियङ्कमञ्जरी कन्या पं० वेदगर्भः । आम्रसंवन्धे कोपितः । पतिविलोकनाय वने, तृपा, पशुपालः, 15 करचण्डी । योग्यं ज्ञात्वा गृहे आनीतः । पण्मासीं वपुःसमारणा । खस्ति० । प्रधानमुहूर्ते नृपसभायाम् । क्षोभात् । उशरद् । नृपविस्मयम् । पण्डितः प्राह-

(३३३) उमया सहितो रुद्रः शंकरः श्रूलपाणियुग् । रक्षतात् तव राजेन्द्र ! टणत्कारकरं यशः ॥ ततो नृपेण खपुत्रीं । पण्डितोक्तं मौनमेव छ० । तया परीक्षार्थं पुस्तकशोधने विन्दुमात्रारहितान्यक्षराणि । नखच्छेदिन्या महिपीपाल एव निर्णीतः । अतःप्रभृति जामातृ छद्धिः । चित्रभित्तौ महिपीनिवहे दिशते तदाह्वा-20 नोचितानि वचांसि । महिपीपाल एव नि० । कालीदेवीमारराध । पुत्रीवैधव्यभीतेन नृपेण दासी० । देव्येव तुष्टा । तज्ज्ञात्वा राजसुताऽऽगता तत्र । अस्ति कश्चिद् वाग्विशेपः ? । कुमारसंभवादिकाच्यत्रयम् । कालिदासप्रवन्धः ।

§ २६०) श्रे॰ दान्ताककारितावासगृहीतदायनेन पतामीत्युक्ते सुरे पत इत्युक्ते नृपे पतितं कनकपुरुपं प्राप्त-वान् । [सुवर्ण] पुरुपसिद्धिः ।

§ २६१) अन्यदा कोऽपि विदेशी साम्रुद्रिकज्ञः । अपलक्षणराजा पण्णवतिदेशस्वामी । कर्नुरात्रम् । कृपाणि-25 कामाक । अं दर्शयामि तव । ३२ लक्षणाधिकं नावगतम् । पारितोपिकम् । सन्वपरीक्षाप्रवन्धः ।

§ २६२) अथ परकायप्रवेशं विना सर्वमफलम् । श्रीपर्वते भैरवानन्दयोगिपार्श्वे पूर्व तत्रागतविष्रेण सह प्राप्य वलन्तौ खदेशे मृतपङ्गहास्तिनमालोक्य-

वर्ष्मप्राहरिके द्विजे निजगजस्याङ्गेऽविदाद्विचया, विप्रो भूपवपुर्विवेदा रूपतिः कीडाशुकोऽभूत्ततः। पछीगात्रनिवेदानात्मनि रुपे व्यास्ट्य देव्या सतिम्, विप्रः कीरमजीवयन्निजतनुं श्रीविक्रमो लब्धवान् ॥

-परवपुःप्रवेशविद्यासिद्धिः।

९ नृपाभावे च देशं विनाशयति । (टिप्पनी)। २ प्रथमं धूमं ततो ज्वालां ततः साक्षात् सः। (टिप्पनी)। मेघद्त, रघुवंश। (टिप्पनी)।

15

20

§ २६३) श्रीविकमनृषो राजपाटिकायां श्रीसङ्घसहितं श्रीसिद्धसेनाचार्यं सर्वज्ञपुत्र इति । परीक्षार्थं मानसं नमस्कारम् । आचार्येण-

(३३५) धर्मलाभ इति प्रोक्ते दूरादुच्छितपाणये। सूरये सिद्धसेनाय ददौ कोटिं नराधिपः॥ राज्ञा दीयमाने निरीहतया नादतराचार्यभूरनृणी विधीयतामनेन कनकेन ततस्तथैव कृतम्'।

§ २६४) अन्यदा कोऽपि निःखः करात्तायसकुशदरिद्रपुत्रकः । उपालव्धेन भूपेन दत्तदीनारलक्षमादाय गतः । 5 राजा तं पुत्रकं कोशे नि०। यामत्रयेणागतगजाश्वलक्ष्म्यो निशि० सत्त्वादनुमता जग्मुः। चतुर्थयामे सत्त्वनामा पुरुपः । छुर्यात्मघातं यावत् । तावत् तसिन् तुष्टे स्विलिते च पूर्वगता अप्याजग्मः । गमनसङ्केतव्याघातिना सत्त्वेन विप्रलुव्धानां न गतियोग्या वः । विक्रमादित्यसत्त्वप्रवन्धः ।

§ २६६) अथ श्रीभोजो नित्यं भावनाभावितः प्रातः रैटङ्ककान् द्दौ ।

(३३६) रोदिको मन्त्री-आपदर्थं धनं रक्षेत्। राजा-भाग्यभाजः क चापदः। मन्त्री-दैवं हि कप्यते कापि।

राजा-सञ्जितोऽपि विनद्यति॥

सभाभारपट्टे । पश्चशतीपण्डिताग्रे राजा-

इदमन्तरमुपकृतये प्रकृतिचला यावद्स्ति सम्पद्यम् । (३३७) विपदि नियतोदयायां पुनरूपकर्तुं क्रुतोऽवसरः॥

निजकरनिकरसमृद्ध्या धवलय सुवनानि पार्वणवाजाङ्क !। सुचिरं हन्त न सहते हतविधिरिह सुस्थितं कमपि॥

अयमवसरः [सरस्ते सलिलैरुपकर्त्तुमर्थिनामनिशस्। इदमपि सुलभमम्भो भवति पुरा जलाभ्युद्ये॥]

कतिपयदिवसस्थायी पूरो द्रोन्नतश्च भविता ते। तटिनितटद्रमपातनपातकमेकं चिरस्यायि ॥

(३४१) यदनस्तमिते सूर्ये न दत्तं धनमर्थिनाम् । तद्धनं नैव पश्यामि प्रातः कस्य भविष्यति ॥ -इति खकृतं श्लोकम् ।

§ २६६) अन्यदा राजा राजपा० । [काष्टवाहं प्रति–] (३४२) कियन्मार्ज [जलं विप्र! जानुदर्न नराधिप!। कथमीहगवस्था ते न सर्वेत्र भवाहशाः॥] (३४३) लक्षं लक्षं पुनः [लक्षं मत्ताश्च दश दन्तिनः। दत्तं भोजेन तुष्टेन जानुद्वप्रभाषिणे ॥]25 § २६७) अन्यदा निशीथे राजा-

> (३४४) यदेतचन्द्रान्तर्जलदलवलीलां प्रक्रस्ते तदाचप्टे लोकः शशक इति नो मां प्रति तथा। चौर:- अहं त्विन्दुं मन्ये त्वद्रिविरहाक्रान्ततरुणी-कराक्षीलकापातत्रणशतकलङ्काङ्किततनुम् ॥

30

एकट्रा रात्री नप्टचर्यायां तैछिकेन द्वीपदी पुनः २ प्रातः पृष्टः क०-अम्मीणउ संदेसडउ नारय कन्ह कहिज । जग दाछिदिहि दुत्थिउ वछिवंधणह सुद्द्ज ॥

२. जाउ लच्छि धणकणकलिय अन सयगल मयमत्त । तरल तुरंगम जाउ सवि तउ म न जायिस सत्त ॥

हिमसमयो वनवह्निजवपवनस्तिब्ब ते विभव्म् । हन्त सहन्ते यावत् तावद् हुम ! कुरु परोपकृतिम् ॥ -

5

(३४५) अमुष्मे चौराय प्रतिनिहितमृत्युप्रतिनिये प्रभुः प्रीतः प्रादादुपरितनपादद्वयकृते । सुवर्णानां कोटीदेश दशनकोटिक्षतगिरीन् करीन्द्रानप्यष्टो मदमुदितगुञ्जन्मधुलिहः॥

5 ६२६८) खधर्मवहिकां प्रेक्ष्य-

(३४६) तत्कृतं यन्न केनापि तद्दतं यन्न केन चित्। तत्साधितमसाध्यं यत् तेन चेतो न दूयते॥

इति दर्पान्धे पुरातनो मन्त्री कोऽपि श्रीविक्रमादित्यधर्मवहिकायां प्रथमं कान्यम्-

(३४७) अष्टौ हाटककोटयस्त्रिनवतिर्मुक्ताफलानां तुर्ला पश्चाद्यान्मदमत्तगन्धमधुपक्रोधोद्धराः सिन्धुराः॥ तारुण्योपचयप्रपश्चितदृज्ञां वाराङ्गनानां द्यातं दण्डे पाण्ड्यनृपेण ढौकितमिदं वैतालिकस्यार्पितम्॥

इत्याकर्ण्य निर्गर्वनृपः।

§ २६९) आगतसरस्वतीकुडुम्बम् । दासी-

(३४८) वापो विद्वान् [वापपुत्रोऽपि विद्वान् आई विदुषी आई ध्यापि विदुषी । काणी चेटी सापि विदुषी वराकी राजन् मन्ये विद्यपुक्षं कुटुम्बम् ॥] ज्येष्ठं प्रति समस्यापद्म-'असारात्सारमुद्धरेत' । दानं वित्ता० ।

तत्पुत्राय-

हिमालयो नाम नगाधिराजः, प्रवालशय्या शरणं शरीरम्–इति भूपवाक्यम् । (३४९) तव प्रतापज्वलनाज्जगाल, हिमा०। चकार मेना विरहातुराङ्गी, प्रवाल०॥ ज्येष्ठभार्यां प्रति–'कंवणु पियावउं खीरु'।

- (३५०) जईय रावणु जाइयउ दहमुह इक्कु सरीरु। जणि वियंभी चिंतवइ कवणु पियावउ खीरु॥
- § २७०) अन्यदा गूर्जरदेशविद्वत्ताज्ञानाय श्रीमीमं प्रति गाथा-
 - (३५१) हेलानिइलियमहेभकुंभप्रयडियपयावपसरस्स । सीहस्स मएण समं न विग्गहो नेय संधाणं॥
- (३५२) अंधयसुआण कालो भीमो पुह्वीइ निम्मिओ विहिणा। जेण सयं पि न गणियं का गणणा तुज्झ इक्कस्स ॥ श्रीगोविंदाचार्यकृता गाथेयम् । अन्धधृतराष्ट्र १०० सुता हता भीमेनेति ।

¹ ४० वाल १ सुवर्ण । एवंविधा अष्टी । 2 पलशतेरेका तुला (टिप्पनी) ।

```
§ २७१) दामरसन्धिविग्रही । अत्यन्तकुरूपः ।
                  यौष्माकाधिपसन्धिविग्रहपदे दूताः कियन्तो द्विज !,
         (३५३)
                      मादक्षा यहबोऽपि मालवपते। ते सन्ति तत्र त्रिधा।
                   प्रेष्यन्तेऽधममध्यमोत्तमगुणप्रेक्ष्या<u>न</u>ुरूपक्रमं
                      तेनान्तर्गतमुत्तरं प्रददता घाराघिपो रञ्जितः॥
   § २७२) अन्यदा शीतर्तौ निशि कंचिन्नरं प्रेक्ष्य प्रातः-कथं शीतं सोढम् ?-त्रिचेल्या । राजा-का सा ?
                  रात्रौ जानु[र्दिवा भानुः कृशानुः सन्ध्ययोर्द्रयोः।
                   राजन् ! शीतं मया नीतं जानु-भानु-कृशानुभिः॥]
  § २७३) भूपतितकणाशं रोरं प्रति-
         (३५५)
                  नियउयरपूरणहा असमत्था तेहिं किं पि [ जाएहिं।
                                                                                             10
                  सुसमत्था वि हु जे न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि ॥
                  परपत्थणापवर्त्रं मा जणि ! जणेसु एरिसं पुत्तं ।
                  मा उयरे वि धरिज्ञसु पत्थियभंगों कओ जेण ॥
   राज्ञोचे-कस्त्वम् ? तेनोचे- ] राजशेखरनामाहम् । तस्य हिस्तनीदानं कृतम् । पुनस्तेनोक्तम्-
         (३५७) शीतत्रा न पटी॰, निर्वाता न कुटी॰, वृत्तिर्नार भटी॰,
                                                                                            15
                 श्रीमद भोज तब प्रसादकरटी भंक्तां ममापत्तटी॥
   § २७४) अर्जुनसाध्यो दुःसाधो राघावेधो भोजेन साधितः । हट्टशोभायां तैलिकेन स्रचिकेन खविज्ञानेन
निर्गर्वः कृतः ।
(३५८) भोजराज! मया ज्ञातं राधावेधस्य कारणम् । धाराया विपरीतं हि सहते न भवानपि ॥
   § २७६) सर्वदेवांगजौ शोभन-धनपालौ । तदुपाश्रये श्रीवर्द्धमानस्रितः निमन्त्रितः प्राह-
(३५९) भजेन्माधुकरीं [ वृत्तिं मुनिम्लेंच्छकुलादपि । एकाव्रं नैव भुश्चीत वृहस्पतिसमादपि ॥ ]
(३६०) अपमानात्तपोवृद्धिः सन्मानाच तपःक्षयः। अर्चितः पूजितो विप्रो दुग्धा गोरिव गच्छति॥
(३६१) पुनराप्याय्यते धेनुस्तृणैरमृतसंभवैः । एवं जापतपोभिश्च पुनराप्याय्यते द्विजः ॥
   -याज्ञवल्क्यः । संतोपतुष्ट आरव्धस्नाने धनपाले विहर्तुमागतसाधुभ्यां दिधसंवन्धेन बुद्धे-'कतिपयपुर-
खामी॰'।
   बोधात्पूर्व शोभनम्नुनिम्-गर्दभदन्त भदन्त ! नमस्ते । मर्कटकास्य वयस्य ! सुखं ते ।
   § २७६) अन्यदा नृपो मृगया० । एण वेघे । धनपालः-
      (३६२) रसातलं यातु तवात्र पौरुषं कुनीतिरेषा चारणो ह्यदोषवान्।
               निहन्यते यद् बलिनापि दुर्वलो हहा महाकष्टमराजकं जगत्॥
   (३६३) किं कारणं तु धनपाल! मृगा यदेते व्योमोत्पतन्ति विलिखन्ति सुवं वराहाः ?।
            देव! त्वद्ख्रचिकताः अयितुं स्वजातिमेके मृगाङ्कमृगमादिवराहमन्ये॥
(३६४) बैरिणोऽपि हि मुच्यन्ते [प्राणान्ते तृणभक्षणात् । सद्दैवैते तृणाहारा हन्यते पदावः कथम्॥]
   संन्यस्तमृगयो नृपो नगरं प्रति०।

    निधानसंवन्धे प्रतिवोधः सर्वदेवस्य । शोभनस्य दीक्षा (टिप्पनी) ।
```

(३६५) नाहं खर्गफलोपभोग[तृषितो नाभ्यर्थितस्तवं मया, सन्तुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव। खर्गं यान्ति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो, यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रेस्तथा वान्धवैः॥]

⁻⁵ पुना राजप्रश्नः–यूर्पं कृत्वा० ।

(३६६) सत्यं यूपं तपो ह्यग्निः कर्माणि समिधो मम । अहिंसामाहुर्ति दयादेष यज्ञः सनातनः ॥
-इति शुकसंवादादर्हद्वर्गीभिष्ठको राजा।

§ २७७) अन्यदा सरखतीकण्ठाभरणप्रासादे खत्तके रत्या सह हस्ततालदानपूर्व सारं मूर्तिमन्तमालोक्य हासायोक्तः पण्डितः प्राह−

10 (३६७) स एष भुवनत्रयप्रथितसंयमः शंकरो, विभर्ति वपुषाऽधुना विरहकातरः कामिनीम् । अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करं, करेण परिताडयन् जयति जातहासः स्मरः॥

> (३६८) पाणिग्रहे पुलिकतं वपुरैदां भूतिभूषितं जयति । अङ्कारित इव मनोभूर्यस्मिन् भसावदोषोऽपि ॥

> > इत्यादिना प्रीतो नृपः।

15 §२७८) यानवणिग्मदनमयपद्धिकायां प्रशस्तिकाव्यानि । नृपोक्तः स आह । नीरधौ शिवायतने, मदन-पद्मिकां नियोज्येयं प्रशस्तिः ।

(३६९) अयि खळु विषमः पुराकृतानां भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः। सर्वेरिप पण्डितैरस्रोत्तरार्द्धे पूर्यमाणे विसंवदति नृपोक्तो धनपालः-

हरशिरसि शिरांसि यानि रेजुईरिहरितानि छुठन्ति गृध्रपादैः॥

20 चेद्विसंवादस्ततः कवित्वनियमः । राजा तदैव यानानि नीरधौ । तथैव कृते पण्मासैः काच्यार्द्धम् ।

§ २७९) तिलकमञ्जरीग्रन्थे वाच्यमानेऽधः कचोलम् । [मामत्र कथानायकं, विनीता स्थाने अवन्ती, शका-वतारपदे महाकालं कुर्वन् यद्याचसे तत्तुभ्यं ददामीति ।]

(३७०) दोमुहय निरक्खर लोहमइय नाराय तुन्झ किं भणिमो । गुंजाहिं समं कणयं तुलंतु न गओसि पायालं ॥

25 राज्ञा दग्धा कोपात् सा प्रतिः । सुतासान्तिध्यात् पुनरुद्धरिता ।

§ २८०) कापि पर्वणि स्नानव्यग्रे लोके अलब्धिमक्षो भार्याताडितो विष्रो राजनरैः सभानीतः । राजोक्तः-

(३७१) अंबा तुष्यित न मया न [खुपया सापि नाम्बया न मया। अहमपि न तया न तया वद राजन्! कस्य दोपोऽयम्॥]

सर्वपण्डितानववोधे खबुद्ध्या राजा ज्ञात्वा लक्षत्रयी प्रसादीकृता । कलहमूलं दारिम्यमेव ।

30 §२८१) अन्यदा सर्वदर्शनमुक्तिमार्गे पृष्टे पण्मासावधौ निश्चि श्रीशारदा नृपं प्रति—'श्रोतव्यः सौगतो०।' श्लोकिममं राज्ञे दर्शनिभ्यश्च समादिश्य तिरोहिता।

(३७२) अहिंसालक्षणो धर्मो मान्या देवी सरखती । ध्यानेन मुक्तिमाप्नोति सर्वद्रशनिनां मतम्॥

§२८२) परोत्रत्यां[†] राज्ञोक्तः श्रीमान्तुङ्गसूरिरात्मानमापाद[४४]शृङ्खलावद्धं कारयित्वा प्रति काव्यं शृङ्खला-भङ्गः । इत्थं प्रभावना । श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रवन्धः ।

(३७३) उत्थायोत्थाय वोद्धव्यं किमच सुकृतं कृतम् । आयुषः खण्डमादाय रविरस्तमयं गतः॥ (३७४) लोकः एच्छति मे वार्ता दारीरे कुदालं तव । कुतः कुदालमसाकं आयुर्याति दिने दिने ॥ (३७५) श्वः कार्यमच कुर्वीत पूर्वाह्रे चापराह्निकम् । मृत्युर्ने हि प्रतीक्षेत कृतं चास्य न वा कृतम्॥ 5 (३७६) मृतो मृत्युर्जरा जीर्णा विपन्ना किं विपत्तयः। व्याधयो व्याधिताः किन्नु दृण्यन्ति यदमी जनाः॥ ॥ श्रीहर्पसानित्यताश्लोक ४ प्रवन्धः ॥

§ २८३) श्रीभोजो भीमं प्रति वस्तु ४ । वेक्यया स्पृष्टः पटहः । गणिका १, तपस्वी २, दानेश्वर ३, द्यूत-कार ४-इति वेश्योक्तम् । श्रीभीमो भोजं प्रति प्रा० । वस्तुचतुष्टयप्रवन्धः ।

§ २८४) अन्यदा निश्चि वीर०-

10

माणसणा(डा) दस दस दसा सुणीइ लोअपसिद्ध । मह कंतह इक ज दसा अवर ति चोरिहिं लिद्ध ॥

प्रातः क्रपयानीय प्रत्येकं लक्षमूल्यं वीजप्रद्वयं प्रच्छनं दत्तम् । तेन तत् खरूपमज्ञात्वा पत्रशाकाहे । तेना-प्यज्ञाते कस्यापि मेटार्थम् । तेन श्रीभोजाय ।

> (३७८) वेलामहल्लकल्लोलपिल्लियं जइ वि गिरिनईपत्तं। अणुसरइ मग्गलग्गं पुणोवि रयणायरे रयणं ॥

15

परेपामदशाः । यतः-

(३७९) प्रीणिताद्येषविश्वासु वर्षाखिप पयोलवम् । नामुयाचातको नृनं नालभ्यं लभ्यते कचित् ॥

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा। प्रसाकृतं कर्म तदेव भुज्यते शारीर हे निस्तर यत्त्वया कृतम् ॥

20

† टिप्पन्याम्-पुरा मयूर-वाणाख्या भावुकशालको राजमान्या । वाणः स्वभगिनीमिलनाय यया । मयूरेण निशि तामनुनीयमानाम-श्र्णोत् ।

'गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशसुपगतो घूर्णित इव । प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि कुधमहो...

भूयो भूयः पठन् वाणः-

क्रचप्रत्यासत्या हृदयमपि ते चंडि! कठिनम् ॥'

सा लजिता, कुष्टी भवेति शशाप वन्युम् । शीततौं नृपात्रे मयूरेण वस्कोढीति सोपहासमूचे । तेन खादिराङ्गारकुण्डोपरि सिककं विधाय प्रतिकान्यं सिककपदं श्विरिकया छिन्दन् पंचिभः कान्येनिरालम्बः, सूर्यप्रसादात् पुनर्नवो देहः । राज्ञो विस्मयः । मयूरस्तदीर्प्यया पादो पाणी च छित्त्वा पछेऽक्षरे भवानीप्रसादेन नवी पाणी पादौ च जाती। तयोमीहिमा वादश्च। राजादेशात् काश्मीरं प्रति चेलतुः। सरस्वत्यादेशेन जिताजितनिर्णये जितस्य पुस्तकानि अग्नौ ज्वाल्यानि-इति प्रतिज्ञा । धारासमीपे-रे रे शाटकमलनिर्धाटक! नगरे का वार्ता?। अश्वावहं ॥ लोहकार०-मृतका यत्र ॥ कुलाल......लिकया-पर्वताग्रे ॥ नापितस्य-जलनाडी पत्थरि ॥ चित्रकरस्य-विहिता-निर्विपा॰ ॥ सरस्वतीपुरे देन्या समस्यार्पिता-'शतचन्द्रं नभस्तलं।' 'इष्टं चाणूरमह्नेन'। वाणेन शीव्रं-दामोदरकराघातविद्वलीकृतचेतसा दृष्टं ॥ मयूरस्य सूर्यसान्निध्यात् पुस्तकेष्वदग्धेषु द्वयोर्मानम् । शिवशासनं विनाधन्यत्र कास्तीदशी शक्तिस्ततो......चाहताः श्रीमान-तुङ्गाचार्याः ।

पु॰ प्र॰ स॰ 16

15

(३८१) लोकं विलोक्य धनधान्यवरेण्यपुण्यं प्राप्य प्रधानवनिताजनिताभिरामम् । किं मूढ ! कांक्षसि मुधा वसुधातलेऽस्मिन् रे जीव पीवरतरं सुकृतं कृतं न ॥ ॥ वीजपूरप्रवन्धः ॥

§२८५) एको न भव्य इति [रात्रौ] पाठितेन शुकेन सभायां [प्रातः] केनाप्युत्तरमददता पण्मासाविधं व्याचित्वा वररुचिर्देशान्तरं अमन् श्वमोचादानासमर्थपशुपालं लात्वा वस्त्रान्तरितस्कन्धारोपितश्वः। नृपसभां नृपप्रश्नः। स प्राह-देव! लोभ एको न भव्यः। यतः-

- (३८२) अहो लोभस्य [साम्राज्यमेकच्छत्रं महीतले। तरवोऽपि निधिं प्राप्य पादैः प्रच्छादयन्ति यत्॥]
- (३८३) तावन्नीतिर्विनीतत्वं मितः शीलं कुलीनता । यावन्नहि जयी लोभः क्षोभं नाभ्येति जन्तुषु ॥ ॥ एको न भव्य-प्रवन्धः ॥
- (३८४) कविषु कामिषु भोगिषु योगिषु द्रविणदेषु जितारिषु साधुषु । धनिषु धन्विषु धर्मधनेषु च क्षितितछे नहि भोजसमो ऋषः॥
- (३८५) किं नन्दी किं मुरारिः किमु रितरमणः किं विधः किं विधाता, किं वा विद्याधरोऽयं किमथ सुरपितः किं नलः किं कुवेरः। नायं नायं न चायं न खलु निह न वा नापि नासौ न चैप, कीडां कर्तुं प्रवृत्तः खयमिप च हले भूपितभांजदेवः॥
 - (३८६) क्षुद्राः सन्ति सहस्रदाः खभरणव्यापारमात्रोचताः, खार्थो यस्य परार्थ एव स पुमानेकः सतामग्रणीः।

† एतद्रे टिप्पन्यां इमे स्ठोका लिखिता लभ्यन्ते—

देव त्वं जय ! कासि ? छुट्धकवधूः पाणा किमेतत्पर्लं, क्षामं किं सहजं व्यवीमि नृपते यद्यस्ति ते काैतुकम् । गायन्ति त्वदरिप्रियाश्चतिटनीतीरेषु सिद्धाङ्गनाः, गीतान्धा न चरन्ति देव ! हरिणास्तेनामिपं दुर्वलम् ॥ सीतेति नाम । वादी नष्टः ।

चेतोहरा युवतयः स्वजनोऽनुक्छः सद्वान्धवाः प्रणयगर्भगिरश्च भृत्याः ।
गर्जनित दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गा राजन्! न किंचिदिह नेत्रानिमीलनेऽस्ति ॥ १ ॥
शीतत्रा न पटी न चाग्नित्रकटी नास्ति द्वितीया पटी, निर्वाता न कटी प्रिया न गुमटी भृमो च घृटा कटी ।
वृत्तिर्नारमटी न तुन्दलपुटी नायास्ति मे सङ्कटी, श्रीमद्भोज! तव प्रसादकरटी भंकां ममापत्तटी ॥ २ ॥
वक्तांभोजं सरस्वत्यधिवसति सदा शोण प्वाधरसे, वाहुः काकुःस्थवीर्यस्मृतिकरणपटुर्दक्षिणसे समुदः ।
वाहिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नेव मुज्जन्त्यभीक्ष्णं, स्वच्छेऽत्र मानसेऽस्मिन् कथमवनिपते तेऽम्हुपानाभिलापः ॥ ३ ॥
भावाल्याधिगमान्मयेव गमितः कोटिं परामुन्नतेरस्मरसंकथयेव पार्थिवसुतः संप्रत्यसो लजते ।
इत्थं खिन्न द्वात्मजेन यशसा दत्तावलम्भोऽम्बुधेर्यातस्तीरतपोवनानि तपसे वृद्धो गणानां गणः ॥ ४ ॥
शाँर्यं शत्रुकुलक्षयाविध यशो वह्याण्डभाण्डाविधस्त्यागस्तर्कुकवान्छिताविधिरयं क्षोणी समुद्भाविधः ।
श्रद्धा पर्वतपुत्रिकापतिपदहन्द्वप्रणामाविधः श्रीमद्भोजमहीपतेर्निरविधः शेपो गुणानां गणः ॥ ५ ॥

सुरताय नमस्तुभ्यं जगदानन्ददायिने । अत्र विजया-आनुपङ्गि फलं यस्य भोजदेव भवादशाः ॥ ६ ॥

दुःप्रोदरप्रणाय पिवति स्रोतःपतिं वाडवो, जीमूतस्तु निदाघसम्भृतजगत् सन्तापविच्छित्तये॥

॥ श्रीभोजप्रवन्धः ॥

§ २८६) सपादलक्षप्रहितक्षुरिकातः पालिताव्दयुगशीला वक्नलादेवी वेश्या श्रीभीमेनोढा । तस्याः पुत्रः हर-पालदेवस्तदङ्गलिस्भुवनपालदेवस्तस्य श्रीकुमारपालः । श्रीसिद्धभीतः कियन्त्यव्दानि देशान्तरे व्यतिक्रम्यागतः 5 पत्तने श्रीकर्णश्राद्धे । आलिगकुम्भकारगोपितः । ततः क्षेत्रे स्डमध्ये अन्वागतनरेः कुन्ताग्रेण । ततः प्रान्तरं व्यक्त उद्रदंका २०; ततो दिनत्रयक्षुधार्तः । कयापि करम्भकेन श्रीणितः । एवं परिश्रमन् उद्यनपार्थे शम्यलार्थं स्तम्भतीर्थे पौपधागारं गतः । उद्यनपृष्टाः श्रीहेमस्रयः—राजायं भावी । द्वयोः प्रत्येकं राज्यप्राप्तिपत्र-मपितम् । कुमारः—यद्यदस्तथ्यम् , ततस्त्वमेव राजाऽहं सेवकः । प्रश्रुभिर्जिनशासनप्रभावकेन भाव्यमिति हृष्टो मत्रिणा शम्यलादिना प्रीणितो मालवे । कुण्डिगेश्वरप्रासादे ।

(३८७) पुत्रे वाससहस्से सयंमि वरिसाण नवनवइ अहिए। होही कुमरनरिंदो तुह विक्रमराय सारिच्छो॥

गाथामालोक्य जातप्रत्ययः । श्रीसिद्धस्तं श्रुत्वा तमाचोरितरव्वाकवाहडेन नामा(१) पत्तने मुहडासाप्रताप-मह्रपत्नी वा० ऊमादे वंधुर्वणिगट्टे ।

(३८८) पुत्रादिप प्रियतमैकवराटिकाणां मित्रादिप प्रथमयाचितभाटकानाम्। 15 आजानुलम्यितमलीमसञाटकानां वज्रं दिवः पततु मूर्शि किराटकानाम्॥

प्रातर्भावुकेन राजसभां नीतः । संवृतांचल एकः । योजितकरोऽन्यः । कुमारपालः पश्चाशद्वर्पदेश्यो राज्यम् । हता राजवृद्धा विश्वासघातकत्वात् । नर्मादिपरभावुकाङ्गभङ्गो नेत्रकर्पणम् । यतः-

(३८९) आदौ मयैवायमदीपि नृनं तन् नो दहन्मामवहेलितोऽपि। इति भ्रमादङ्गुलिपर्वणाभिस्पृदोत नो दीपमिवावनीपम्॥

(३९०) प्रभासमृद्धिरेवैषा जीवितं राज्यसंपदः । यथाम्भः कमलकोभायै तैलं वा दीपदीधितेः॥

शास्त्रम् । ततः प्रोढिमा । आलिगक्तम्भकारस्य सप्तशतग्रामितचित्रक्र्टीयपट्टी । श्रीउदयनाङ्गजो महामात्यो वाहडदेवः । कर्पका अङ्गरक्षपदे ।

§ २८७) श्रीपत्तने लातानशनाम्वाविमानभङ्गे विशैरित्यस्यया श्रीहेमस्रिर्मालवे । 'आपण परं प्रसु०' इति चिंतापराः । श्रीउदयनोक्तागमाः कृतज्ञमौलिना श्रीकुमारेणोक्तम्-नित्यं आगन्तव्यम् । श्रीहेम०-ग्रंजीम० ॥ 25 राजा एको वासः । इति प्रेत्य श्रुमायेति । ततः सदा गमनागमने । कोऽपि मत्सरी । विश्वा० ॥ सिंहो० ॥ रात्रौ भोजने । अधामधा० ॥ मृते खज० ॥

(३९१) पयोदपटलच्छने नाश्नन्ति रविमण्डले। अस्तं गते तु सुञ्जाना अहो भानोः सुसेवकाः॥

यद्मश्रन्द्रगणिनासने प्र०।राजा-जीवं विना कथं प्र०१। गुरवः-भवतां गजाद्या रिपौ सज्जी०, उत नित्येवायं राजव्यव०। तद्गुणरिञ्जतेन पूर्वप्रतिपन्नराज्ये दीयमाने प्रग्रः । राजप्रति०॥ संनिहीगि०॥ इति प्रीणितो ३० राजा। श्रीहेमस्रिचरित्रं पृष्टः श्रीउदयनः प्राह-

§ २८८) धन्धुके [मोढकुले] चाचिग-चाहिणिपुत्रश्राङ्गदेवोऽष्टाव्दः श्रीदेवचन्द्रस्रिमिसतत्रागते रममाणो दृष्टः।

१ संवत् ११९९ वर्षे कार्तिक शुद्धि र खी हस्ते पट्टाभिषेकः।

लक्षणानि वीक्ष्य-यद्ययं क्षत्रियकुले तदा सार्वभौमः, यदि वणिग्-विष्रकुले तदा महामात्यः, चेद्द्यनं प्रतिप
द्यते तदा युगप्रधान इवेति विचार्य तत्पुरसङ्घं मेलयित्वा गृहं गताः । चाचिगे ग्रामान्तरे मात्रा स्वागतादिना
श्रीसङ्घर्तोपितः । श्रीसङ्घो मत्पुत्रार्थमागत इति हर्पाश्रुणि मुञ्चन्ती स्वं रत्नगर्भ मन्या विपण्णा । यतस्तत्पिता

मिथ्यात्वी। ग्रामेऽपि नास्ति । स्वजनानुमता माता गुरुभ्यो निजं पुत्रं ददौ । आचार्यैः प्रश्ने ओमित्युचरन् गृहीतः ।

तत् ज्ञानान्मुक्ताहारः पुत्रदर्शनावधि चाचिगः । उदयनः स्वावासे वांधवभक्त्या प्री० । तदनु चाङ्गदेवं तदुत्सङ्गे

निवेश्य पञ्चाङ्गप्रणामपूर्वं दुक्तुलत्रयं लक्षत्रयं च ढौिकतवान् । चाचिगः प्राह-क्षत्रियमूल्ये १०८०, अश्वमूल्ये

१७५०, सामान्यस्थापि वणिजो मूल्ये नवनवित कलभा इति । त्वं लक्षत्रयं ददत् स्थूललक्षायसे । मत्सुतोऽन्वर्यस्वभिक्तरनर्धितमा तर्हि अस्य मूल्ये भक्तिरस्तु। द्रव्यं न लामि। मन्त्री-साधु साधुः युक्तं ब्रूहि। चाचिगःयूयमेव प्रमाणम् । ततो गुरुभ्यो द० ।

10(३९२) धनधान्यादिदातारः सन्ति कचन केचन । पुत्रभिक्षाप्रदः कोऽपि पुनरत्र न दृश्यते ॥ दीक्षया कुलयुगोज्ज्वलनम् । यतो महाभारते-

(३९३) तावद् भ्रमन्ति संसारे पितरः पिण्डकांक्षिणः। यावत् कुछे विशुद्धात्मा यती पुत्रो न जायते॥ श्रीहेमस्ररिपादाः।

§ २८९) श्रीसोमेश० राजादेशात् । यत्र तत्र समये०॥ १॥ भववी०॥ २॥ राज्ञाऽऽरात्रिकाद्यन्न तमेकान्ते 15 देवगर्भागारे—मत्समस्त्वत्समः शंभ्रसमो निह । भाग्यवशादेतत्रयसंपत्तिः । शिवदं देवं ब्र्हि । आचार्याः— ईशमेव प्रादुःक्वर्वे । यथा तन्मुखेन शिवमार्गं वेत्सि । नृपाश्चर्यम् । आवयोरेकाग्रयोः सर्वं सुकरम् । मया ध्यानं त्वया धूपोतक्षेपः । जलाधारोपरिहेमाभः । दुरालोकश्वक्षुपातिरूपः । असंभाव्यस्वरूपः । तपस्वी प्रादु० । राज्ञः स्तुतिः । नृपेणादेशं देहीत्युक्तं, मोहनिशादिनमुखात्तन्मुखादिति तद्वाणी । राजन्नयं महर्षिः सर्वदैवतावतारः । ज्ञानमयः । एतिहृष्ट एवासन्दिग्धो मोक्षः । तिरोद्धे । श्रीहेमाचार्यो राजिनिति यावद् ब्रूते, राजा तावन्ननाम 20 पादांभोजम् । तदादेशान्यक्तं मांसमद्यम् । ततः पत्तने बोधः । आज्ञावर्तिपु० । तृतीयव्रताधिकारे मृतकद्रव्य-द्वासप्ततिलक्षमितं पद्वं पाटितवान् ।

§ २९०) सुराष्ट्रासुंसुमाररणे आखुनानीतदशायां काष्ट्रप्रासादोऽपनीय नन्यपापाणरचनायां कृताभिग्रहो रण-भग्न उदयनो देवद्रन्यं २ याचन् खजनैरुक्तं वाहडामडसुतौ करिष्यथः । पात्राभावे तद्वेपधारिणं वण्ठं ननाम । आराधना ।

(३९४) जिने वसति चेतसि त्रिभुवनैकचूडामणौ कृतेऽनदानसद्विधौ सकललोकवद्वाञ्जलिः । समस्तभवभावनाप्रतिकृतिं समभ्यस्यतः स चान्त्यसमयक्षणः क्रचिदुपैति पुण्येऽहनि ॥

स्वर्गः । वण्ठोऽपि तद्भावनाद्रैवतेऽनशनः । ततः स्वजनैः पत्तने उक्तौ वाहड-आम्बडौ कृताभिग्रहौ । वर्षत्रयेण संपूर्णः प्रासादः । मम्माणिविम्बम् ।

१ ९९ लक्षाः स्युः-टिप्पनी । २ देशेषु अष्टादशसु १४४४ प्रासादाः का० । मारि निवारयामास ।

(३९५) त एव जाता जगतीह जन्तवः खकीयवंदास्य त एव भूषणम्। य एव देवे च गुरौ च वान्धवे यथाखमौचिद्यविधानतत्पराः॥

> मोक्षार्थं खधनेन शुद्धमनसा पुंसा सदाचारिणा। वद्धं तेन नरामरेन्द्रमहितं तीर्थेश्वराणां पदम्, प्राप्तं जनमफलं कृतं जिनमतं गोत्रं समुद्योतितम्॥ ॥ श्रीशत्रञ्जयोद्धारः॥

> > -----

§ २९१) कपर्दिनानुमतेन केनापि सभायां कामन्दकीनीतौ-

(२९६) पर्जन्य इव भृतानामाधारः पृथिवीपतिः। विकलेऽपि हि पर्जन्ये जीव्यते न तु भूपतौ ॥ राज्ञोक्ते 'मेघस्य राज्ञ उपम्या।' इति संसद्धपें। श्रीकपदिनोक्तम्-उपमा १, औपम्यं २, उपमेयं ३। ततो 10 नृपेण वर्षेण व्याकरणं काव्यम्। विचारचतुर्भुखप्रवन्धः।

§ २९२) 'रोम्णां ग्रहणमाकरे' मूलपाठे पं० उदयचन्द्रः प्राह-'प्राणितूर्योङ्गाणा'मिल्येकत्वम्। ततो रोम्णो ग्र०॥

§ २९३) घृतपूरयोग्यायोग्ये । एकभिडवन्धप्रासादाः ३२ कारिताः । प्रायश्चित्तप्र० ।

§ २९४) उन्दरद्रव्येणोन्दरयसही कारिता। करम्भसम्यन्ये करम्यकविहारः । सपादलक्षीयमारितयूकव्यवहा-रिसारेण यूकावसही ।

§२९५) नृपेणोक्त आलिगनामा प्रधानपुरुषः प्राह-श्रीसिद्धेऽप्टनवित्युणाः, द्वौ दोषौ । त्विय द्वौ गुणौ, दोपा अप्टनवितिरित्युक्ते, असमाधौ छुरिकां चक्षः । श्रीसिद्धस्य गुणाः ९८ रणासुभटता-स्नीलम्पटताभ्यां विरोहिताः । तव कार्पण्यादयो दोपा रणग्रूरता-परनारीसहोदरताभ्यां तिरोहिताः । आलिगव्र० ।

(३९७) यूकालिक्षशतावलीवलवल्होलोहलत्कम्वलो दन्तानां मलमण्डलीपरिचयाहुर्गन्धरुद्धाननः। नासावंशानिरोधनाद्गिणिगिणत्पाठप्रतिष्ठास्थितिः सोऽयं हेमडसेवडः पिलपिलत्विहः समागच्छति॥

अशस्त्रो वधः । पौपधागारपार्थे । श्रीयोगशास्त्रं श्रुत्वा-

(३९८) आतङ्ककारणमकारणदारुणानां वक्त्रेषु गालिगरलं निरगालि येषाम् । तेषां जटाधरफटाधरमण्डलानां श्रीयोगशास्त्रवचनामृतमुज्जिहीते ॥

॥ वामराशिविप्रप्रवन्धः ॥

§ २९६) सुराष्ट्रातश्चारणौ─ (३९९) लच्छि वाणि सुहकाणि ए पइं भागी सुहु मरउं। हेमसूरि अत्थाणि जे ईसर ते पंडिआ ॥ नृपेण दत्तसहस्तप्रभुपादानां प्रा० आरात्रिकानं०─

5

20

25

20

(४००) हेम तुहाला कर मरू जिह अचन्भुआरिद्धि। जे चंपह हिठा मुहा तीह उपहरी सिद्धि॥

त्रिःपाठे लक्षत्रयम् । चारणप्रवन्धः ॥

§ २९७) यात्रामनोरथे नृपे युगलिका—डाहलदेशीयः श्रीकर्णस्त्वां प्रति । राजा खेदं गुर्वन्ते । श्रेयांसि० ॥१॥ 5 प्रशुः—प्रारम्यते० ॥ प्रारम्य विझनिहता । विझैः० ॥ २ ॥ द्वादश्यामे धर्मेण विझापगमः । किंकर्तव्यमूढो नृपः । ताम्बूलत्यामे । युगलिका—रात्रौ प्रयाणे वटलयकण्ठहारेण सृतः श्रीकर्णः । द्वासप्ततिसामंतयुतः श्रीसङ्घेन सह सप्तदशहस्तमिते प्रश्चजन्मभूमिस्वयंकारितविहारे प्रभावनां कृत्वा श्रीशत्रञ्जये । त्वया चरणग० ॥ १ ॥ यन्त्वया जगतीनाथ । न्यहन्यत मनोभवः० ॥२॥ दुक्खक्खउ० ॥३॥ विविधप्रार्थनावसरे—इक्कह पुछह० ॥४॥ पठितनवे चारणे नवलक्षान् ददौ राजा । नृपादेशात् आंबडेन त्रिपष्टिलक्षे रैवतकपद्या । तीर्थयात्राप्रवंधः ।

> (४०१) स्वस्ति श्रीमित पत्तने चपग्रहं श्रीहेमचन्द्रं मुद्रा स्वःशकः प्रणिपत्य विज्ञपयति स्वामिन् त्वया सत्कृतम् । चन्द्रस्याङ्कमृगे यमस्य महिपे यादस्सु यादःपते-र्विष्णोर्मतस्यवराहकच्छपक्कले जीवाभयं तन्वता ॥

(४०२) नम्रं शिरः कुरु तुरुष्क कलिङ्ग लिङ्गं त्यक्त्वा वनं व्रज गजवजमङ्ग यच्छ । मुश्चायुधं मगध मालव मालपोचैर्नन्वेष गूर्जरपतिः कुपितोऽभ्युपैति ॥

(४०३) मौिलं मालवनायको नमयति खामङ्गुलं जाङ्गल-खामी कुन्तति दक्षिणिक्षतिपतिर्गृह्णाति दन्तैस्तृणम् । सिन्धौ सिन्धुपतिर्निमज्जति नगोत्सङ्गे च वङ्गेश्वरो नश्यत्याशु निशम्य यस्य जियनः प्रस्थानभेरीस्वरम् ॥

॥ श्रीकुमारपालप्रवन्धः ॥

§ २९९) [मरुवास्तव्यः] श्रीमाल छदाको विणग् वर्षायां घृतक्रयार्थम् । [टिप्पण्याम्-रात्रौ वजन् कर्म-करैरेकसात्केदारादपरसिन्नीरैः पूर्यमाणे 'के यूयम् १' अम्रुकस्थामुकाः । ममापि कापि सन्ति १ । तैः कर्णावत्यां 25 तवापि सन्ति । शक्तनप्रन्थिः । सक्कडुम्बस्तत्र कर्णावत्यां [वायटीय]प्रासादे छीम्पिकाभोजनं तद्त्तस्थितिः । लक्ष्मीचृद्धौ नव्यावासस्वाते निधिः । ततः स उदयनमन्त्री । [टि०-तत्रातीतादिचतुर्विशतिजन ७२ समलंकृतः प्रासादः कारितः ।]

(४०४) कृतप्रयत्नानिप नैति कांश्चन खयं द्यायानानिप सेवते परान् । द्वयेऽपि नास्ति द्वितयेऽपि विद्यते श्रियः प्रचारो न विचारगोचरः ॥

30 तदङ्गजा वाहडदेव १, आम्बड २, चाहड ३, सोऌ ४ [अपरमातृकाः]।

\$२००) सान्त् राजपा० खकारितप्रासादे वार्राङ्गनास्कन्धन्यसहर्सं कमि चैत्यवासिनं द्दर्श । देवान् विन्दित्वा स नतः । स लिजतः श्रीमलधारहेमान्ते प्रवज्य संवेगात् श्रीशवुज्जये १२ वर्षं तपस्तेषे । (४०५) रे रे चित्त कथं भ्रातः प्रधावसि पिशाचवत्। अभिदं पश्य चातमानं रागत्यागातसुखी भव॥ (४०६) संसारमृगतृष्णासु मनो धावसि किं सुधा। सुधामयिमदं ब्रह्मसरः किं नावगाहसे॥

देववन्दनाय तत्र गतः श्रीसान्तूर्तं प्रेक्ष्य विसयः । सः-

5

(४०७) जो जेण सुद्धधम्मंमि ठाविओ संजएण गिहिणा वा । सो चेव तस्स जायइ धम्मगुरू धम्मदाणाओ ॥

॥ लजाप्रवन्धः ॥

§ ३०१) जित ८४ वादः कुम्रदचन्द्रः श्रीदेवस्त्रिव्यरत्तप्रभः प्रदोपे गुप्तवेपो रात्रौ कु० मठे । तेन कस्त्व-मित्युक्ते । अहं देवः । को देवः । अहम् । अहं कस्त्वं श्वा । श्वा कः । त्वम् । त्वं कः । अहं देवः । इति 10 चृक्तभ्रमदोषात् ।

> (४०८) हंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोक्तिसण्टिङ्कितैः संसारावटकोटरेऽतिविकटे सुग्धो जनः पास्यते । तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकछेशस्तदा सस्यं कौसुद्चन्द्रमङ्गियुगर्छं रात्रिंदिवं ध्यायत ॥

15

(४०९) कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसटाभारं स्पृश्चत्यंहिणा कः कुन्तेन सितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्क्ष्ति । कः सन्नद्यति पन्नगेश्वरिशरोरत्नावतंसिश्रये यः श्वेताम्बरशासनस्य कुरुते वन्यस्य निन्दामिमाम् ॥

श्रीसिद्धराजसभावादावसरे कुमुदः श्रीहेमचन्द्रं प्रति । पीतं तक्रम् । श्वेतं तक्रम् , पीता हरिद्रा । युवयोः को 20 वादी ? । श्रीदेवम्हरिभिरयं वालः । अनेन को वादः । त्वमेव वालो योऽद्यापि कटीद० वस्नं न धर्ते ।

(४१०) खद्योतद्यतिमातनोति सविता जीर्णोर्णनाभालय-च्छायामाश्रयते दाद्यी मद्यकतामायान्ति यत्राद्रयः । इत्थं वर्णयतो नभस्तव यद्यो जातं स्मृतेर्गोचरं तद्यस्मिन् भ्रमरायते नरपते! वाचस्ततो मुद्रिता॥

25

(४११) नारीणां विद्याति निर्वृतिपदं श्वेताम्वरपोस्नसत्-कीर्तिस्फातिमनोहरं नयपथप्रस्तारभङ्गीगृहम् । यस्मिन् केविलनो विनिर्जितपरोत्सेकाः सदा दन्तिनो राज्यं तिज्ञिनशासनं च भवतश्चौस्तुक्य ! जीयाचिरम् ॥ § ३०२) ३६०००० ग्रामकन्यकुङादेशकल्याणकटकपुरे श्रीभूयराजा राजपा०। स्त्रीं प्रेक्ष्य कामार्तः। यतः– (४१२) न पञ्चति दिवा घूकः काको नक्तं न पञ्चति। कामार्तः कोऽपि पापीयान् दिवा नक्तं न पञ्चति॥

खनरेणानायि प्रोक्तस्वनीचत्वात्-पूर्वे धतकरा सा ग्रुक्ता लिखतेन राज्ञा । स्वकरौ छेदितौ गवाक्षगौ निज-5 यामिकैरेव । महाकालाराधनादागतौ करौ । मालवदेशं तसै दत्त्वा तापसः संजातः ।

§ ३०३) कन्य० एकदेशगूर्जर० वडीयारदे० पश्चासरग्रामे चापोत्कटवंश्यं झोलिकास्यं वालं वनाऽग्रे आरोप्य माता रन्धनादिः श्रीशीलगुणसूरिभिस्तन्मातुर्द्वितं दत्त्वार्पितो वीरमितगिणिन्या पाल्यमानः। वनराजनामा ८ वर्षः। देवपूजा विना० मूपकान् मार०। गुरुणा निपिद्धोऽपि दण्डयोग्या अमी। तस्य जातके राजयोगं मत्वाऽयं महाराजा भावीति मातुः सम०। [चौर मातुलेन सह] धाट्यादिना चरति। काकरग्रामे धनिगेहं मुज्जन् दिधमाण्डे 10 करे पतिते भ्रक्तोऽहिमिति सर्वं हित्वा गतः। अन्यदा तद्भिगिन्या श्रीदेव्या निश्चि गुप्तवृत्त्या वन्धुवात्सल्यात् स्त्रानादिनोपकृतो मम राज्ये त्वयैव तिलकं विधेयम्। अन्यदा चौरैः कापि वने रुद्धेन जाम्वाकेन ५ शरमध्यात् २ भग्ने। श्रीवन[रा]जेनोक्तं मे महामात्यो भावीति।

§ ३०४) अथ कन्यकु० तद्राजसुता महणका कंचुकसंबन्धे गूर्जर० पश्चकुलं पण्मासैरुद्राहित २४ लक्षपारुथ-कद्रमान्, ४००० तेजीतुरङ्गान्, [सौराष्ट्रघाटे] लात्वा यान् श्रीवनराजेन हत्वा वर्षं वने स्थित्वा, पुरिनवेशाय 15 भूमिं विलोकयता अणहिलगोपः प्राप्तस्तेन यत्र शशकेन श्वा त्रासितस्तत्र तन्त्राम्नाणहिल्लपुरम्। [५० वर्षीयः] प्रतिपन्नभगिन्या तिलकम्। जाम्बाको महामात्यः। आचार्यवचसा श्रीपार्श्वप्रतिमालंकृतं निजाराधकमूर्तियुतं पश्चासरं कारितम्। सं० ८०२।

§ ३०५) श्रीमृलराजा [स्वकारितप्रासाद] धर्मस्थानारक्षं विलोकयन् सरस्वतीतीरे एकान्तरोप० पंचप्रास्या० कांथडिकं तपस्विनं आरोपिततृतीयज्वरकम्पमानकंथाकं प्रेक्ष्योवाच । सर्वथा कथं न हीयते । मुनिः-अभुक्तं 20 कर्म न० । नृपेण धर्मस्थानरक्षणायाभ्य० सः ।

(४१३) अधिकारात् त्रिभिर्मासैर्मठापत्यात्रिभिर्दिनैः । शीघं नरकवाञ्छा चेदिनमेकं पुरोहितः ॥ इति निपिद्धो नृपः ।

§ ३०६) श्रीपरमारवंश्यश्रीहर्पभूपो राज० शरवणमध्ये जातमात्रं वालं प्राप्य देव्यै० स मुझ इति नाम । ततः [राजः] सीन्धलः सुतः । मुझे राज्यं रुद्रादित्यो महामात्यः । उत्कटत्वात्सीन्धलो निष्काशितः । गूर्जरदेशे 25 कासद्रासन्ने निजपल्लीं कृत्वोवास । दीपाली निश्चि मग० चौरवध्यभूमिपार्थे शूकरं प्रति वाणम् । शवेन सङ्केतः । सीन्धलेन निवार्य शरेण हतः किरिः । सीं० तव सङ्केतकाले शूकरवधः श्रेयानथाधुनेति । तत्साहसतुष्टः । प्रेतो भूम्यपाति वाणवरं श्रीमुझान्त्यसमयं प्रकाश्य गतः । मालवे गतः । श्रीमुझसम्पदैकदेशं प्राप्तः । पुनरुत्क० नेत्रे किर्पते । ग्राममेकं दत्तं ग्रासार्थम् । पञ्चरगेन भोजः सुतः । तञ्जातकम् ।

मूलार्कः श्रूयते शास्त्रे सर्वकल्याणकारकः । अधुना मूलराजेन योगिश्चत्रं प्रशस्यते ॥ स्वप्रतापानले येन लक्षहोमं वितन्वता । सूचितस्तत्कलत्राणां वाप्पावग्रहिनग्रहः ॥ कच्छपलक्षं हत्वा सहसाधिकलम्बराजमायातम् । संगरसागरमध्ये धीवरता द्रिता येन ॥

१ टि०-सतीत्वं दासदास्यऽहं सत्यम् । २ राज्यरक्षाये परमारराजपुत्रान्नियोज्य ।

३ टि०-१०९८ वर्षे मूलराज्याभिषेकः।

४ टिप्पन्यां-चयजलदेचनामानं निजं विनेयं तेन राज्ञोऽभ्यथँनया जात्यघुराणस्याष्टी पलानि सृगमद् ४ कर्प्र १ द्वात्रिंशद्वाराङ्गनाः । पुवं आ० कृत्वा स्थापितः स्वयं ब्रह्मचारी० । राज्ञा परीक्षा । ताम्बृलप्रहारेण कुष्टिनी सज्जां च० इत्यादि ।

५ टि०-गय गय रह गय तुरय गय, पायकडानि भिच । समाद्विउ करि मंतणुं महंता रहाइच ॥

(४१४) पश्चादात् पश्चवर्षाणि मासाः सप्त दिनत्रयम् । भोक्तव्यं भोजराजेन सगौडं दक्षिणापथम्॥

[ज्ञानिपार्श्वात्पुत्रभिक्षां याचितः । अभ्यस्तशास्त्रपद्त्रिश्वदण्डायुधः, अधीत्य ७२ कलाऽक्रूपारपारंगतः समस्त-लक्षणलितः स वष्ट्ये ।] इत्याकर्ण्य श्रीमुझेनान्त्यजेभ्यः स० । तैः सानुकम्पैरभीष्टदेवं स० ।

(४१५) मान्धाता स महीपतिः कृतयुगालंकारभूतो गतः. सेतुर्येन महोदधौ विरचितः कासौ दशास्यान्तकः।

5

अन्ये येऽपि युधिष्ठिरप्रभृतयो यावत् भवान् भूपते, नैकेनापि समं गता वस्रमती मन्ये त्वया यास्यति॥

इति राज्ञे सम० । श्रीमुद्धाः खेदादि० । यौवराज्ये भोजः ।

§ २०७) अथ तिलङ्गदेशपतैलपनुपरणे वद्दो मुझः । कारायां तद्गिगन्या सह भार्या सं० । मृणालवती खम्रखं दर्पणे विलोकयन्ती विपण्णा मुझेनाभाणि । 10

> (४१६) पभणइ मुंजु मुणालवइ जुवणु गियउं म झूरि। जइ सकर सयखंड थिय तोइ स मीठी चरि॥

इति तां मो० । निजयधानदापितसुरङ्गासङ्केते राजा तां प्रतीक्षमाणस्तयां स्वत्रातुः कथितम् । तैलपेन प्रति-क्टं भ्राम्यमाणी मुखः-

(४१७) सड चित्तहं [सट्टी मणहं वत्तीसडी हियाहं। अम्हे ते नर ढाढसी जे वीसस्या त्रीआहं॥ 15

(४१८) झोली बटी किं न मूयउ किं न हुउ छारह पुंजु । हींडह दोरी दोरीयउ जिम मंकड़ तिम मुंज़ ॥

एकसिन दिने एकां भिक्षोत्तरं क्रवीणां स्त्रीं प्राह मुझ:-

(४१९) भोली मूधि म गबु करि पिक्खिव पहुसयाई। चजदसहं यहत्तरहं मुंजह गयह गयाई॥

[इत्यं सुचिरं भिक्षां आमयित्वा भूपादेशात्] अन्यदा वधकाले [नरैरुक्तमिष्टदैवतं सरेत्युक्तं] सुझेन-(४२०) लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे वीरश्रीवीरवेश्मनि । गते मुक्के यशःपुक्के निरालम्बा सरखती ॥

श्रुलीप्रोतं नित्यं दिघलिप्तमौलिं तैलपः कार्यामासामर्पादिति ॥

§ ३०८) कियतां कार्पटिकानां त्वं राज्यं ददासीति भवान्योक्तो भवस्तां गां पङ्कमत्रां कृत्वा नृरूपस्तटस्यः पान्थान उ० । तैरासन्नश्रीसोमेश्वरदर्शनोत्कैरुपहसितः । केनापि कृपावता पथिकवृन्देनोद्धरणप्रारम्भे सिंहरूपेण श्चम्भ्रना त्रासिते कश्चिदेकोऽवज्ञातभयस्तस्याः पार्थे स्थितः । स एव योग्यो राज्यस्वेत्युक्ता गौरी भवेनेति । 25

१ टि०-इदं काव्यं पत्रके आलिख्य नृपतेः समर्पयामास । तद्दर्शनात् नृपतिः खेदमेदुरो भ्रृणहत्याकारिणं खं मन्यमानः । श्रीभोजो-न्मानितयुवराज्यादिना । मुझस्तु तिळङ्गदेशीयराज्ञा तैळपदेवनाम्ना सह योद्धं गतः । तेन भन्नो वद्ध्य विढंट्य निपातितश्च ।

२ तत्र गतोऽसो वृद्धां मां त्यस्यतीति विस्टशनया ।

है - अापद्रतं हसासि किं दविणान्धमुग्ध, लक्ष्मीः स्थिता न भवतीह किम् वित्रम् । किं त्वं न पश्यसि घटीर्जकयद्भचके, रिका भवन्ति भरिताः पुनरेव रिकाः ॥ १ ॥

§ ३०९) कश्चित्कार्प० श्रीसोमेश्वरयात्रायां यान् पथि लोहकारौकिस निशि भार्यया खपितं छुर्या हत्वा कार्पिटक्झीपें छुरी मुक्ता बुम्बापातः। तलारकैस्तस्य करौ छिन्नौ। तेन दैवोपालम्भे निशि श्रीसोमेशः पूर्व एकेनाजा
कर्णयोर्धता परेण मारिता। ततः साऽजेयं नारी, येन मारिता स पितः। त्वया कर्णौ धृतौ। तवागमे उछसितकोपे त्वत्करौ गतौ। ततो मे उपालम्भः कथिमिति॥ कृपात्रवन्धः॥

- - (४२१) रम्येषु वस्तुषु मनोहरतां गतेषु रे चित्त ! खेदमुपयासि कथं वृथा त्वम् । पुण्यं कुरुष्व यदि तेषु तवास्ति वाञ्छा पुण्यैर्विना नहि भवन्ति समीहितार्थाः ॥ तद्दानात्तं श्रीशातवाहनः । देवग्रस्तझपेण ह० ।
- 10 (४२२) मीनानने प्रहसिते भयभीतमाह श्रीशातवाहनमृपिभवतात्र नचाम्। यत्सक्तिभिर्मुनिरकार्यत पारणं प्राक् दैवाद्भवन्तमुपलक्ष्य झपो जहास॥

जातस्पृतिः । अहोदानम् । यतः-

- (४२३) दानपात्रमधमणीमहैकग्राहि कोटिग्रणितं दिवि दायि। साधुरेति सुकृतैर्यदि कर्तुं पारलौकिकक्कसीदमसीदत्॥
- 15 (४२४) पूर्वपुण्यविभवव्ययवद्धाः सम्पदो विपद एव विसृष्टाः । पात्रपाणिकमलापेणमासां तासु शान्तिकविधिर्विधिदृष्टः ॥

ततः प्रभृति पात्रदानादि ॥ श्रीशातवाहनपात्रदानप्रवन्धः ॥

§ ३११) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता रूपवती वालविधवार्कसन्मुखावलोके तेनैव सुक्ता, गर्भे, वने मुक्ता। पुत्रजन्म । साष्टाव्दः। लेखशालिकपराभूतो मातृपार्थे पितृनामानवगम्य मर्तुकामोऽर्केण करे कर्करोऽपितः। साप-20 राधे शिलान्यथा तवैव शिलेत्युक्तः। ततः स शिलादित्यः। तत्पुरनृपेण परीक्षाये तथा कृते मृते राह्मि स एव राजाः अर्कदत्ताश्वारूढो नभश्वर इवेच्छाविहारी महाप्रतापी जैनमुनिवासितः श्रीशञ्जुङ्जयोद्धारकः। कदाचित्सौगतैः श्रेताम्वरपराभवे श्रीशञ्च अधिष्ठितम्। तद्भागिनेयो महानामा क्षुष्ठः। वेपपरावर्तेन वौद्धपार्श्वे पठन् निशीये खे यान्त्या भारत्योक्तः के मिष्टाः। वह्याः। पुनः पण्मासान्ते निश्येव केन सह। घृतगुडाभ्यामित्युक्ते तुष्टायां भारत्यां जिताः सौगता निःकाशिता देशात् शिलादित्ये सभापतौ। तत आचार्यपदं श्रीमह्मवादिस्ररिः।। मह्मवादिप्रवन्धः।।

25 § ३१२) श्रीमालपुरे माघपण्डितः । पित्राऽपि [टि०-कुमुदपण्डितेन] स्वपुत्रापन्निराकरणाय वर्पशतिदन-मितनाणकहारकान् दत्त्वा भोगायानेकशो दत्त्वा च विपेदे । तिहृदक्षयागतश्रीभोजं सवलं रञ्जयामास । मरकत-बद्धा भूमिर्दिन्या । काचबद्धा सञ्चारकभूः । दैवज्ञोक्तश्रान्ते पादे श्वयथुः । पुण्यक्षये देशमोचः । यतः-

१ टिप्पण्यां—भोजान्ते भोजनम् । शीतर्तो प्रावरणम् । प्रच्छाद्ककदशनं भोजितः छाद्तिश्च रात्री स्तोकान्नं स्निग्धम्* । प्रतलमा-च्छादनम् । शुपिरत्रम्बकस्तम्भान्तःप्रविष्टाक्षितापेन न शीतार्तो राजा ।

^{*} टिप्पण्या उपिर टिप्पणी-५०० गर्वा दुग्धं २५० पानं यावत् ४ गावः । तापिते तस्मिन् कण्डारकेण शालिविंघीयते पाके शर्करा-दिना संस्कृते स्तोके परिवेषिते राजा तृक्षः ।

(४२५) देशं स्वमिष मुश्चिन्त मानम्लाने महाशयाः । दिवावसाने व्रजति द्वीपान्तरमहर्मणिः॥ धारायां गतः । पुरतक्षप्रहणकार्पणपूर्वं श्रीभोजात्कियद् द्रव्यमानेयमित्युक्ता भार्या गतोपलक्षिता नृपेण । विपादः । पुरतकाद्यपत्रे काव्यम्-

(४२६) क्रमुदयनमपित्र श्रीमदम्भोजखण्डं त्यजित मुद्रमुख्कः प्रीतिमांश्रकवाकः। ज्दयमहिमरिक्मियाति शीतांशुरस्तं हतविधित्रितानां ही विचित्रो विपाकः॥

असेव काव्यस सर्वोर्वामृल्यम् । परं लक्षं १, सा मार्गे याचकैः । नाक्षराणि ०-प्रस्मृतः किमथवा ।। गृहागता पत्या प्रशंसिता । अन्यदा भिक्षा ०-अर्था न सन्ति न च ग्रं ।।

(४२७) दारिद्र्यानलसन्तापः ज्ञान्तः सन्तोपवारिणा। दीनाज्ञाभङ्गजनमा तु केनायमुपज्ञाम्यति॥

वजत वजत प्राणाः ।। ततो मृतः । नृषेण तजातेभिछ्नाल इति ॥ पण्डितमाघप्रवन्धः ॥

§३१३) डाहलदेशे देमतराज्ञी महायोगिनी गणकत्रचसोत्तिमतगर्भा १६ यामान् यावत् श्रीकर्णजन्म । 10 अप्टमयामे सापि मृता । मुखे हारावाप्तिर्नयन० ॥ श्रीकर्णप्रवन्धः ॥

६३१४) श्रीसिद्धराजीपरीधेन श्रीहेमव्याकरणं १ वर्षेण सम्पूर्णम् ।

(४२८) भ्रातः पाणिनि ! संघृणु प्रलपितं कातस्रकन्था वृथा मां कर्पाः कटु शाकशयनवचः क्षुद्रेण चान्द्रेण किम् । कः कण्ठाभरणादिभिर्यटरयत्यात्मानमन्यैरपि

श्रयन्ते यदि तावदर्थमधुराः श्रीसिद्धहेमोक्तयः॥

१३१५) मालवान्महास्थाने श्रीसिद्धराजा जनपा० घ्वजं प्रेश्य कुपितः। विप्राः-देव अयं घ्वजारोपः पुरापि। यतो नगरपुराणे-

(४२९) पश्चाशदादी किल मूलभूमेर्दशोर्द्धभूमेरपि विस्तरोऽस्य । उचैस्त्वमप्टेंब तु योजनानि मानं वदन्तीति जिनेश्वराद्धेः ॥

20

15

ततो जनप्रा० घवाः।

§ ३१६) डाहलदेशीयनृपसमसागता । 'आयुक्तः प्राणदो लोके ।' प्रिता श्रीप्रस्रिभः ।

§ ३१७) जाम्त्रान्यिश्रीसञ्जनदण्डेशेनोद्याहितवर्षत्रयसुराष्ट्राद्रच्येण काष्ट्रप्रासादमपनीय श्रीनेमित्रासादो-द्वारः। चतुर्थवर्षे आनायिते सञ्जने नृपेण द्रच्ये मार्ग्यमाणे तत्रत्यागतच्यवहारिभिदीयमाने । द्रच्यं पुण्यं वावधा-रयतु स्नामीत्युक्ते सञ्जने राजा पुण्यमग्राहीत् । ततः पुनरप्यधिकारः । तीर्थद्वये योजन १२ ध्वजा दत्ता । 30

१ टिप्पण्याम्-अर्था न सन्ति न च मुद्यति मां दुराशा त्यागाश्च सङ्ग्रचित दुर्किलितः करो मे । यात्रा च लाधवकरी स्वयधे च पापं प्राणाः स्वयं वजत किं परिदेवितेन ॥ धुष्शामः पविको मदीयभवनं पृच्छन् कुतोऽप्यागतस्त्रिकं गेहिनि किंचिदस्ति यदयं भुद्धे क्षुधापीदितः । याचासीत्यभिधाय नास्ति च पुनः प्रोकं विनेवाक्षरैः स्थूलस्यूलविलोललोचनगलद्वाप्पाम्भसां विन्दुभिः ॥

श्रीमालेषु धनवत्मु सत्मु ह्युधाविनष्टे पुरुपरवे भिद्यमा॰ ।

२ टिप्पणी-इण्ड-सुण्ड-डम्भनानि सोमेश्वरे रष्ट्वा सिदेशस्य गिरिनारे हुपैः ।

न्दपव्यापारपापेभ्यः स्वीकृतं सुकृतं न यैः। तान् धृलिधावकेभ्योऽपि मन्ये मृदतमान्नरान् ॥

॥ इति श्रीरैवतकोद्धारप्रवन्धः ॥

§ ३१८) अन्यदा श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरयात्रां कृत्वा वलन् रैवतं गन्तुमिच्छ्विंप्रैर्मात्सर्याछिङ्गाकारमिति 5 निपिद्धः श्रीशत्रञ्जये आकृष्टकृपाणिकैविंप्रैनिंपिद्धो रात्रौ कार्पिटकवेपेणारुरोह । सरोमाश्चं देववन्दनम् । द्वादश-यामोद्घाहितं दत्तम् ।

§ ३१९) श्रीपत्तने आभडवणिग् कांस्थकारगृहे घर्घरादिना ५ विशोपकैराजीविकः । श्रीहेम० पार्श्वे २ प्रति-कामन् अधीतरत्वप॰ परिग्रहं प्रमाणीकुर्वन् प्रभुभिः सामु॰ द्रमा ३ [लक्षाः-टि॰] मोकला मोचिताः। अन्यदा कापि ग्रामेऽजावर्ज चरन्तं प्रेक्ष्य कण्ठे पापाणं मूल्येन लात्वा मणिकारपार्श्वादु तेजितं श्रीसिद्धराजमुक-10 टावसरे लक्षद्रच्येण दत्तम् । तेन द्रच्येणागतमाञ्जिष्ठाठामानि कीत्वा तद्विक्रयावसरे साँयात्रिकैर्जलचौरभयात्तद-न्तर्निहिता हैमकाम्ब्यः । ततः श्रीसिद्धराजमान्यो जैनप्रासादादि ॥ वसा० आभडस्य प्रवन्धः ॥

§ ३२०) अन्यदा श्रीसिद्धराजेन धर्मतत्त्वादिषृष्टेषु सर्वदर्शनिषु निजस्ततिपरनिन्दकेषु आकारितश्रीहेमस्ररिः १४ विद्यारहस्यं विमस्य पौराणिककथा-

पुरा कश्चिद् व्यवहारी पूर्वोढां पत्नीं हित्वा सङ्घहिणीकृतसर्वस्वः पूर्वया वशीकरणायाभ्यर्थितगौडदेशीयेनोक्तम्-15 रिक्मबद्धां गामिव तव पतिं करोमीत्युक्त्वाऽचिन्त्यौपधं दत्त्वाऽऽहारान्तर्देयम् । तथाकृते पतिगाः । तत्त्रतीकारम-जानन्ती विश्वविश्वाकोशान् स०। निजं निन्दन्ती एकदा मध्यन्दिने तापाकान्तापि शाड्वलभूमिषु तं चारयन्ती कस्यापि तरोस्तले विश्रान्ता विलपन्ती खे वाणीम० । तत्रागतो विमानारूढो भवो भवान्या तहुःखकारणं पृष्टो यथावस्थितं निवेद्य च तस्यैव तरोञ्छायायां पुंस्त्वहेतुमौपधं तित्रवन्धादादिञ्य ति० । सा तदन्र तच्छायां रेखा-ङ्कितां कृत्वा तन्मध्यवर्तिन औपधाङ्करान् लात्वा मुखे क्षि० । तेनाप्यज्ञातौपधेन स गौर्नरः । यथा तदज्ञातभेप-20 जाङ्करः समीहितकार्यसिद्धिं चकार, तथा कलियुगे मोहात् तिरोहितं पात्रपरिज्ञानम् । ततः सर्वदर्शनाराधनेन तदपि मोक्षदं भवतीति निर्णयः।

तथा, द्वैपायन-युधिष्टिरभीमसंवादे पात्रपरीक्षायाम्-

मुर्खस्तपस्वी राजेन्द्र! विद्वांश्च वृषलीपतिः। उभौ तौ द्वारि तिष्ठेते कस्य दानं प्रदीयते॥

सुखासेव्यं तपो भीम! विद्या कष्टदुरासदा। 25 युधिष्टिर:-(४३२) विद्वांसं पूजियण्यामि दारीरैः किं प्रयोजनम् ॥

श्वानचर्मस्थिता गङ्गा क्षीरं मद्यघटस्थितम्। भीम:-(४३३) अपात्रे पतिता विद्या किं करोति युधिष्टिर ॥

१ टिप्पण्याम्-पत्नी प्रसूता दुग्धं न प्राप्तोति वालकः सीदति तदुर्थमजां गृहीतुकामो गतः । नीलं जलं धृतेवज्ञातं रत्नम् । गृहीता सा सटोकरा तन्मध्यरतम् ।

२ टिप्पण्यां-विसा० आभटेन पूर्वे निर्धनेन ९ लक्षाः परिग्रहपरिसाणे मुत्कलाः कृताः । पुनर्धने जाते तपोधनानां १ घृतघटं प्रति-दिनं सञ्जकारोऽवारितः । सदा साधर्मिकवात्सल्यम् । प्रतिवर्षे सर्वदर्शनार्चा । एवमप्रशस्तिप्रासाद-प्रतिमा-पुस्तकादि गुप्तवृत्त्या साधर्मिकादि दानादिपुण्यानि कृतानि । ८४ वर्षायुःमान्ते धर्मन्ययविहकायां ९८ लक्षदर्शने खेदः । पुनः सुतैः २ लक्षे सप्तक्षेत्रयां दुःचा अप्टलक्षीं च मानयित्वा कोटिः पूर्णीकृता । पुनः सुतास्तादशा एवाऽभवन् ।

हुँपायनः- (४३४) न विद्यया केवलया तपसा वापि पात्रता । यत्र वृत्तमिमे चोभे तद्धि पात्रं प्रचक्षते ॥

एवं गुणोपेतपात्रभक्तया मुक्तिः। इति प्रभुनिवेदिते श्रीसिद्धराजः सर्वधर्मान् आ० ॥ सर्वदर्शनमान्यताप्रवन्धः॥

§ ३२१) मांगृः क्षत्रियः पाराच्यो भूम्याम् । भोजने घृतक्कतपः । दाढायां सोहल १, अपाटने पथ्ये यवागृः ५ माना । अर्द्धाहारे कं वैद्येनोक्ते पुनः ५ माना । निषिद्धः । नृपेण निरा० । समयोचितम् । स्नानावसरे गजः 5 श्वानेन । तद्वलेन पीडितो मृतः ॥ मांगृप्रवन्धः ॥

§ ३२२) ओतुना खद्रशुकसाकमृतश्रीजयकेशिराजानं श्रुत्वा निजतातपुण्याय श्रीमयणछदेवी श्रीसोमे॰। त्रिवेदिनं विश्रं जलन्यासावसरे श्राह—यदि भवत्रयपातकं लासि, तदा ददामि नान्यथेति। गजादि तसे। सोऽपि ददानस्तयोक्तः श्राह—त्वं पूर्वाजितपुण्येनेहशी जाता। दानादिना भवेन भवः श्रेयस्करः। भवत्या भवत्रयपातकं मे पापपटं लात्याधमः कश्रिडिशः सं तदापकं च भवाम्भोधौ पातयति। मया तु वित्तमेतदादाय पुनर्ददता 10 लव्धादएगुणं पुण्यमिति॥ पापघटश्रवन्धः॥

§ ३२३) श्रीसिद्धे निश्चि सुप्ते वण्ठौ पराक्रम-कर्मणि प्रा॰ ।

(४३५) यदिह कियते कर्म तत्परत्रोपभुज्यते । मूलसिक्तेषु वृक्षेषु फर्ल शाखासु जायते ॥

मृपेण तदाकर्ण्य कर्मवि०। अपरिदने खप्रशंसकस्य लेखः। असै वण्ठाय शताश्वसामन्तता देवेति। सान्त्-पार्थे निश्रेण्या अङ्गभङ्गे मञ्चकेन गृहे, अपरो लेखं लात्वा गतः। प्रातःसामन्तता इति श्रुत्वा राजा कर्मेव व०। 15 यतः—नेवाकृति०।।

(४३६) यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दति मातरम् । तथा पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनु धावति ॥

(४३७) नमस्यामो देवान्नत हतविधस्तेऽपि वज्ञागाः

विधिर्वन्ध्यः सोऽयं नतु विहितकर्मैकफलदः। फलं कर्मायत्तं तिकममरैः किं च विधिना नमः सत्कर्मभ्यो विधिरपि न येभ्यः प्रभवति॥

॥ कर्मग्राधान्यप्रवन्धः ॥

§ ३२४) जातस्मृतिः श्रीमयणछदेवी श्रीसोमेशयात्रायां ‡वाहुलोडपुरद्वासप्ततिलक्षपाटितपद्वा सपादकोटिम्ल्यां हेमपूजां तुलापुरुपादिना सर्वान् प्री० ।

(४३८) सङ्ग्रहेकपरः प्राप समुद्रोऽपि रसातलम् । दाता तु जलदः पश्य भुवनोपरि गर्जिति ॥

रात्रावगतेशेनागताञ्त्र कार्पिटका पुण्यं याच्यमित्युक्ता दर्पान्था निजनरानायिता सती याच्यमानाप्यददाना कियद् व्ययितमित्युक्ताह—अहं भिक्षाष्ट्रत्या अतयोजनानिदीकृत्यात्रागता कल्ये कृतोपवासा पारणकितने कस्माद् अपि खलं प्राप्य तत्त्वण्डेनेशं सम्पूज्य तदंशमितथये दत्त्वा पारितम् । त्वं पुण्यवती यस्या एवंविधं कुसमद् आपि सन् । ममाल्पपुण्ये कथं लोभः । यदि न कुप्यसि तदा ह्यवे । ममाधिकं पुण्यम् । यतः —

[†] टिप्पण्यां-एकोऽपि यात्रिकः पञ्चराती द्रम्माणां याच्यते । नरस्रीयुग्ममपि एतदेव । पश्चान्मातृ-पुत्रौ हस्ते लगित्वा गच्छतः । इत्यादि विहवं रष्ट्रा मयणछदेवी० ।

(४३९) सम्पत्तौ नियमः शक्तौ सहनं यौवने व्रतम्। दारिक्रो दानमित्यलपमपि लाभाय कथ्यते॥ दानं दरिद्रस्थ०॥ निगर्वा जाता॥ श्रीमयणछदेवीयात्राप्रवन्धः॥

§ ३२५) श्रीसिद्धराजः सागरकण्ठवर्ता । चारणौ-

(४४०) को जाणइ नरनाह चित्तु तुहालउं चक्कवइ। लहु लंकह छेवाह मग्गु निहालइ करणउत्तु॥ 5 (४४१) धाई धोया पाय जेसल! जलनिहि ताहिला। पई लह्या सविराय इक्क विभिषणु मिलिह मुहु॥

§३२६) छलान्वेषिणं मालवाधीशमागतं याचितेशयात्रापुण्यं तद्दानेन सान्तः पराश्चुखीचकार । आगत-भूपकोषे तत्पुण्यं मया तव दत्तमिति वोधितः।

(४४२) यस्योर्वीतिलकस्य निर्मलयशःसन्दोहसन्दोहितां सामग्रीमवलोक्य लोलनयनः कैलासशैले वसन्। कास्थीनि क वृपः क निर्जरनदी केन्द्रः क भोगिप्रसः पप्रच्छेति शिवां समाधिविगमे देवः शिवः साद्धतम्॥

(४४३) मद्रैनिंद्रादिरद्रैः क्ररुभिरुरुभयैः सोपलिङ्गैः कलिङ्गैरङ्गैरुत्सष्टरङ्गैरवगणितधनुर्दण्डतूणैश्च हुणैः ।
सुद्रौः शौण्डीर्घजिद्यौरनुसुतविभवारण्यवादैर्विरादैर्लाटैः खिचल्ललाटैरजनि गजघटाभोगरुद्धेऽस्य युद्धे ॥

(४४४) मुद्गानुद्गतमुद्गरानुरुगदाघातोद्धतान् व्यन्तरान् वेतालानतुलानलाभविकटान् झोटिङ्गचेटानपि । जित्वा सत्वरमाजितः पितृवने नक्तंचराधीश्वरं वद्धा वर्वरमुर्वरापतिरसौ चक्रे चिरात्किङ्करम् ॥

॥ श्रीजयसिंहप्रवन्धाः ॥

20

10

15

(G.) सज्ज्ञकसङ्ग्रहस्थान्ते पातसाहिनामाविः।

- (१) सं॰ १२६३ वर्षे पातसाहि साहवदीनेन गजणपुरात्समागत्य पृथ्वीराजं लाहउरमून्यउरयोरन्तराले निहत्य दिछी गृहीता । वर्ष ३ राज्यं कृतम् ।
- (२) ततः सं० १२६६ वर्षे मार्गमासे सुरत्राणसमसदीनो दाउदपुरात् ढिह्यां समागतः। वर्ष २६ राज्यं कृतम्।
- (३) ततः संवत् १२९२ वर्षे श्रावणशुदि २ द्वितीयायां कटकादागत्य क्र्टं कृत्वा पूर्वसुरत्राणं हत्वा पातसाहि 5 पेरोजः समजिन । मास ६ राज्यं कृतम् । पश्चादाखेटके गतो यसुनातटे कयलोपरीग्रामे मारितः ।
- (४) ततस्तत्पुत्री द्उलती। दिनपञ्चकं यावद्राज्यं कृतम्। पश्चात्सा मुख्यैर्लम्पटत्वेन मलिका नाम्नी व्यापादिता।
- (५) ततः परं वर्ष ३ मास ६ ग्रन्यं जातम् । तदा मिलक्त्वडीपुत्र मोजदीन मिलको ढिल्यां समभूत् । सं० १२९६ वर्षे राज्यं वर्षद्वयं यावत्कृतम् । स नानामिलकमेदेन मृतः ।
- (६) ततः पातसाहि पेरोजपुत्रः अलावदीनो नानामिलकेन राज्ये स्थापितः । वर्ष ३ राज्यं कृतम् । 10
- (७) ततः सं० १३०१ वर्षे आसादमासे पूर्वस्थां दिशि वहडाइचनगरान्मलिक समसदीनः समागतः । तेन ढिल्ल्यां वर्ष २१ राज्यं कृतम् ।
- (८) ततः सं० १३२२ वर्षे फाल्गुनमासे त्रयोद्ञ्यां शुक्रवारे नसरदीनसाहिना राज्यं कृतम् । वर्षं एकं यावत् ।
- (९) ततः सं० १३२३ वर्षे चैत्रवदि २ द्वितीयायां ग्यासदीनो राजा जातः । वर्ष २० राज्यं कृतम् ।
- (१०) सं० १३४३ वर्षे चेत्रमासे कोकामिलकभेदेन मोजदीन पातसाहिर्जातः। वर्ष ३ मास ३ राज्यं जातम्। 15
- (११) सं० १३४६ वर्षे फाल्गुनग्रुदि ६ पष्ट्यां खलचीवंशीय मलिकजलालदीनेन राज्यं कृतम्। वर्ष ६ मास ९। स यमुनातीरे पंभराग्रामसमीपे मलिक अलावदीनेन मारितः।
- (१२) ततः जलालदीनपुत्रो रुक्मदीनो राज्यधरो वभूव । मास ३ राज्यं कृतम् ।
- (१३) सं० १३५२ वर्षे सुरत्राणः अलावदीनो जातः । वर्ष [२१] राज्यं कृतम् ।
- (१४) सं॰ १३७३ वर्षे माघछादि ११ दिने पातसाहि अलावदीनपुत्रः सहावदीनः पातसाहिजीतः । मास २॥० 20 राज्यं चकार ।
- (१५) ततः सं० १३७३ वैशाखग्रदि ३ दिने सुरत्राण अलावदीनपुत्रः कदुवदीनः पातसाहिर्जातः । वर्ष ५ राज्यं कृतम् ।
- (१६) ततः सं० १३७८ वर्षे ज्येष्टग्रुदि २ दिने कदुवदीन [पुत्रः] पोसरुपानु पातसाहि नसरदीनो राज्यधरः ।
 मास ४ राज्यं कृतम् ।
- (१७) सं० १३७८ वर्षे भाद्रपद शुदि २ द्वितीयायां देपालपुरस्थानात् तुगलकगातो ढिल्ल्यां नसरदीनं हत्वा ग्यासदीन पातसाहिजीतः । वर्ष ४ राज्यं कृतम् । लपणावती नगरात्समागतः सुरत्राणः पुत्रेण महमूदेन तुगलावादमध्ये कृटयत्रप्रयोगेण मारितः ।
- (१८) ततः सं० १३८० वर्षे आपादशुदि २ द्वितीयायां महमूंदपातसाहिर्जातः । वर्ष २७ राज्यं कृतम् । वालराजा जात ।
- (१९) ततः संवत् १४०७ वर्षे श्रीपातसाहि पेरोजनामाजनि ।

(P.) सञ्ज्ञकसङ्ग्रहस्य अन्तिमोहेखः।

सिरिवत्थुपालनंदणमंतीसरजयतसिंहभणणत्थं। नागिंदगच्छमंडणउद्यप्पहसूरिसीसेणं॥ जिणभद्देण य विक्रमकालाउ नवइ अहियवारसए। नाणा कहाणपहाणा एस पर्वधावली रईआ॥

१४२९ श्रीजिराप० श्रीसावदेवस्र० स्वं चरित्रं न वेडितं पश्चात् ढिल्यां ग० खग्रुपार्ज्य पश्चात् संवत् १४३० भाद्र० मासे श्रीगिरनारे समभाव० त्वा परलो० जगाम ।

संवत् १५२८ वर्षे मार्गसिर १४ सोमे श्रीकोरण्टगच्छे श्रीसावदेवस्रीणां शिष्येण मुनिगुणवर्द्धनेन लिपीकृतः। मु० उदयराजयोग्यम् । श्रीः।

पुरातलप्रबन्धसङ्ग्रहस्य अकाराचनुक्रमेण पद्यानुक्रमणिका

पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहे

पद्यानुक्रमणिका ।

	पद्याङ्क	प्रधाङ ।		पद्याङ्क	प्रधाङ्क
अंधयसुआण कालो	३५२	११८	असिन्नसारसंसारे	२०५	६९
अंवं तंबच्छीए	२८३	९२	**	२५३	ળદ્
अंव[ड]हुंतु वाणीउ	११९	३९	अहं सारामि तादात्म्यात्	२५१	७६
अंवा तुष्यति न मया	३७१	१२०	अहलो पत्तावरिओ	२०	१२
अकापींदनृणामुर्वीम्	8	8	अहिंसालक्षणो धर्मः	३ ७२	१२०
अगहु म गहि दाहिमओं	२७६	८६	यहो लोभस्य साम्राज्यम्	३८२	१२२
अजाते चित्रलिखिते	२८१	९२	आः कण्ठशोपपरिपोप०	७७	२८
अत्थि कहंत किंपि न दीसइ	६२	' २२	आकरः सर्वशास्त्राणाम्	२ ९०	९४
अत्रास्ति सस्ति शस्तः	१५७	५९	आचार्या वहवोऽपि सन्ति	११६	३७
अथैकदा तं निशि दण्डनायकम्	१४१	५२	आतङ्ककारणमकारण ०	३९८	१२५
अद्धां अद्धां नयणलां	३७	24	थात्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति	३१९	१०६
अधिकारात् त्रिभिर्मासेः	४१३	१२८	आदो मयेवायमदीपि नूनम्	३८९	१२३
अधीता न कला काचित्	२०६	६९	आपदर्थ धनं रक्षेत्	३३६	११७
अन्नं प्राणा वलं चान्नम्	३२९	११५	आपद्गतान् हससि किम्	३२	१४
अन्नदानैः पयःपानैः	१८५	६२	आयाताः कति नैव यान्ति	२४०	७२
अन्वयेन विनयेन विद्यया	२४६	७३	आयान्ति यान्ति च परे	१९८	६६
अपमानात् तपोवृद्धिः	३६०	११९	आयुर्योवनवित्तेषु	२०७	६९
अपलपति रहसि	३२६	१११	आशाराज इहाजनिष्ट	१५३	५७
अमुप्मे चौराय	३४५	११८	आसने रणरंभे	२२	१२
अम्ह एतल्ड संतोस	११२	३५	आस्तां सुधा किमधुना	७३	२७
अयमवसरः [सरस्ते]	३३९	११७	आस्यं कस्य न वीक्षितम्	१७२	६०
अयसाभिओगमणदूमिअस्स	२८७	९३	इकु बाणु पहुवीसु जु	२७५	८६
अयि खल्ज विषमः	३६९	१२०	इको वि नमुकारो	३००	९९
अर्था न सन्ति	85	१८	इच्छउ इअरमणोरहाण	२८	\$8
अशाकभोजी घृतमत्ति	२९७	९६	इतोऽविधः परितो मृत्युः	२१५	৩০
अष्टौ महाङ्गाश्च चतुःशतानि	२२५	७१	इदं ज्योतिर्जालम्	२५४	७६
अष्टी हाट्ककोटयः	३४७		इदमन्तरसुपकृतये	३३७	११७
असक्रन्मूर्खमप्यन्यम्	१५१	५७	इयं कटिमत्तगजेन्द्रगामिनी	7 34	, १५

, in the second of the second	पद्याङ्क	प्रशङ्क	-	पद्याङ्क	पृष्ठाङ
इह [े] नृपतिसभायाम्	८९	२९	किं कृतेन यत्र त्वं	१२े०	0*
उच्चारने विद्विषताम्	२ १२	90	किं नन्दी किं मुरारिः	३८५	80.
उज्जितसेलसिहरे	३०१	९९	किं वर्ण्यते कुचद्वन्द्वम्	५८२ ६०	१२२ २२
उत्क्षिप्य टिहिम: पादा	v	\$	किमस्तु वस्तुपालस्य	₹8 ₹ .	रर ७३
उत्तंसकौतुककृते	३४	88	किमिह कलिनरेन्द्रम्	१६८	५९
उत्थायोत्थाय बोद्धव्यम्	३७३	१२१	कियन्मात्रं जलं विप्र!	₹ <i>8</i> ₹	११७
उत्पंछत्योरप्छत्य गतिं कुर्वन्		€8	कीर्तिः कन्दलितेन्दु०	२२ ९	٠,٠ <u>-</u>
उदयति यदि भानुः	५२	१८	कुमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोज०		१८, १३१
उद्यमेन हि सिद्धान्ति	३२३	११०	कृतप्रयत्नानिप नैति	8 0 8	१२६
उन्मीलन्माणिरिंशनजाल ०	२७१	ረዓ	केवलिहुओ न मुंजइ	९२	२९
उपकारसमर्थस्य	२७७	22	केवलिहुओ वि भुंजइ	93,	રવે
"	२८०	९०	को जाणइ नरनाह!	880	१३४
उमया सहितो रुद्रः	३ ३ ३	११६	कोशं विकाशय कुरोशय०	१५३	५७
एकं वासः सुरेशैः	१९६	६४	कचिदुणां क्वचिच्छीतम्	२९६	९६
एकस्त्वं भुवनोपकारक इति	२१३,२५०	৩০, ৩৪	क तरुरेष महावनमध्यगः	₹३	88
एतस्याः कुक्षिकोणे	44	२९	क्षिह्वा वारिनिधिस्तले	१२३	४२
एतावतैव वीसल !	२००	६८	श्चत्क्षामः पथिको मदीय०	88	१८
एपु श्रीजयसिंहदेवनृपतिः	१६०	46	क्षुद्राः सन्ति सहस्रशः	३८६	१२२
एहे टीलालेहिं धार-न	. ११४	३५	खद्योतचुतिमातनोति	४१०	१२७
ओं आगिलंड जु होई	१२.९	५०	गण्ड्वदा किमधिरोहति	. રિ૦૬	१०३
73	१३३	षु१	गतप्राया रात्रिः .	४३	१५
कं कं देशमहं न गतः	१८३	६२	गम्भीरगेयभरगज्जिखो	१७५	६१
कः कण्ठीरवकण्ठकेसर०	७५, ४०९	२७, १२७	गयगय रहगय तुरयगय	२५	१४
कतिप्यदिवसस्थायी •	३्४०	११७	गया ति गंगह तीरि	१११	३५
कलिकवलनजाग्रसाणि ॰	२३३	७२	गुरवः परःशतास्ते	१६९	५९
कल्पद्धमस्तरुरसौ	२१०	६९	गाम्भीर्ये जलिधः वलिः	२३७	७२
कविषु कामिषु भोगिषु	३८४	१२२	गुणचन्द्रजयांजनतः	८२	२८
कसिणुजालो य रेहइ	१७	१२	गुणाली जन्महेतूनाम्	१९५	६४
का त्वं सुन्दरि! जल्प	२६८	८३	गुरुभिंपक् युगादीशः	२१७	00
कान्ते कान्ते शीष्रमागच्छ	१७०	५९	गोगाकस्य सुतेन	९७	३ १
कालिका नहा नहा	६१	२२	गौरी रागवती त्वयि	१८८	६३
का हुउं करिसि गमार	१०८	३५	घटिकाऽप्येकया घट्या	११८	३८
किं कारणं नु धनपाल	३६३	११९	चिक्कदुगं २ हरिपणगं५	३०७-	१०४
कि कार्मः किसुपालमेमहि	२२१	७१	चक्रः पप्रच्छ पान्थम्	२७३	८५

	पद्याङ्क	प्रशङ्क		पद्माक्ष	प्रधाद
चिन्तामणिं न गणयामि	१९७	६४	तेजःपालोऽनुशास्ति	१५४	৸ৢৢ
चौलुक्यः परमार्हतः	२०८	६९	तेहि वि न किं पि	4	ų
च्यारि जोड नीसाण हय	68	३०	त्रिंशद्विमिश्रा त्रिशती चराणाम	[२२४	७१
च्यारि पाय विचि	6	१०	त्रिण्हि लक्ष तुपार	२७८	22
जइतचंदु चकवइ	२७९	66	त्वं जानीहि मयाित	२३६	७२
जईय रावणु जाइयउ	३५०	११८	दंसेमि तं पि सितणं	१२१	88
जयन्ति पादिलप्तस्य	२८२	९२	दन्तानां मलमण्डली	८६	२९
जह जह पएसिणि	२८ ४	९२	दरिद्रान् रहजतो धातुः	२७२	64
जह सरसे तह सुकेवि	१२	११	दहनेन विनाशितं पुरा	१९०	६३
जाकुड्यमात्यसज्जन ०	१०१	३४	दानपात्रमधमणम्	४२३	१३०
जिने वसति चेतसि	३९४	१२४	दामोदरकराघातविह्नली ०	८५	१६
जिम केतू हरि आजु	१२८	५०	दारिद्यानलसंतापः	४२७	१३१
जीतउं छहि जणेहिं	२०३	६९	दिगम्बरिशरोमणे !	७८	२८
जीर्णे भोजनमात्रेयः	२८९	68	दिग्वासाश्चन्द्रमोलिः	२३ २	७२
जीवादिशेति पुनरुक्तम्	१४६	षुष	दीपः स्फूर्जिति सज्जकजल०	२३ ९	७२
जेसल मोडि म बाह	१०७	३५	दीहरफणिंदनाले	266	९४
जो जेण सुद्धधममंमि	४०७	१२७	दुःपमाजलधी येन	६९	२६
झोली तुहवी किं न मूउ	२९	\$8	दुर्योधनः खकुलनाशकरो	३१०	१०४
झोली त्रुटी किंन मूयउ	४१८	१२९	[दूसा]जम (१) वीर	१२७	ų o
झोली इगरवालणि वलिणि	३०२	९ ९	देव ! दीपोत्सवे रम्ये	48	१९
ण्हाणं कुंकुमकद्दमेहि	१७१	५९	देव ! द्विजपसादेन	२६७	८२
त एव जाता जगतीह	३९५	१२५	देव ! स्वर्नाथ ! कष्टं	२५६	৩৩
तत्कृतं यन केनापि	३४६	११८	देवाचार्यवलात् युक्तः	८३	२८
तत्र चित्रचरितः	६८	२६	देशं स्वमपि मुखन्ति	४२५	१३१
तन्वन्ति डंबरभैरः	२६१	٥٥	दोमुहय निरक्खर	३७०	१२०
तव प्रतापज्वलनाज्यगाल	३४९	११८	धन धान्यादिदातारः	३९२	१२४
ताण पुरओ य मरीहं	११	११	धर्मलाभ इति प्रोक्त	३३५	११७
ता किं करोमि माए	१९	१२	धांगा दोस्र न वइजला	१२६	85
ताविचअ गलगर्जि	७१	२६	धाई धोया पाय जेसरु	888	१३४
तावद् अमन्ति संसारे	३९३	१२४	धिग् रोहणगिरिम्	३, ३३०	१, ११६
तावनीतिर्विनीतत्वं	३८३	१२२	ध्यानन्याजमुपेत्य	३१८	१०६
तिक्खा द्वरिअ न माणिआ	५३	१८	न कृतं सुकृतं किश्चित्	२०२	६८
तुह मूंडिए घणेहिं	६३	२३	नगरे वसिस हे वाले	२६६	८२
तेजःपाल! कृपालुधुर्यः	१८२	६२	नग्नेर्निरुद्ध। तरुणीजनस्य	< ?	२८

पद्यानुऋमणिका

		पद्यानुक्रमा	णिका ।		१४१
	पदाङ्क	प्रशङ्क		प द्याङ्क	प्रप्राङ्क
नमो यत्प्रतिभाषमीत्	६६	२५	नेत्रैर्निरीक्ष्य विषकण्टक०	३१४	१०४
न नद्यो मद्यवाहिन्यः	५९	१९	पइं गरूआ गिरनार	१ ०४	३४
न पश्यति दिवा घूकः	४१२	१२८	पक्षपातं परित्यज्य	३०८	१०४
न भिक्षा दुर्भिक्षे	१८	१७	पक्षपातो न मे वीरे	३०९	१०४
नमस्यामो देवान्	४३७	१३३	पङ्के पङ्कजमुज्झितम्	80	१५
न गानसे माद्यति	६४	२४	पञ्चारात् पञ्चवर्षाणि	३८	१५
नमेरनीर्थकृतसीर्थे	२९३	९६	"	8 \$ 8	१२९
नमोऽस्तु हरिभद्राय	३२०	१०७	पञ्चाशदादौ किल	४२९	१३१
नमं शिरः कुरु तुरुष्क	४०२	१२६	पडिवोहिअ महिवलओँ	90	२६
नयणिहिं रोसु निवारि	१४९	५६	पणसइरी वासाई	२६९	८३
नयनविषयं यातश्चापः	<8	२८	पभणइ मुंजु मुणालवइ	४१ ६	१२९
न लाभयामी ललनाम्	९१	२९	पयोदपटलच्छन्ने	३९१	१२३
नवजहभरिया मग्गडा	५५	१९	परपत्थणापवन्नं	३५६	११९
नववाससएहिं नवुचरेहिं	२९९	९७	परिओसम्रुंदराई	१८	१२
न विद्या केवल्या	४३४	१३३	पर्जन्य इव भूतानाम्	३९६	१२५
न विद्या धनलाभाय	३२१	१०८	पल्योपमसहस्रेकम्	१६४	५९
न वीतरागादपरोस्ति	३१५	१०४	पश्चाइतं परैर्दत्तम्	१ ९२ ३ २४	६३ १११
नासानि सानितटतो	१०२	३४	"	३ ६८	१२०
नाद्ते भसितम्	१८१	६१	पाणिग्रहे पुलकितम्	१७९, २४९	६१,७४
नाभिपट्कजगद्भजन्म०	२४४	७३	पाणिप्रभापिहितकल्पतरु	२८६	९३
नारीणां विद्धाति	४११	१२७	पालित्तय कहसु फुडं	42	१९
नासाकं हृदि द्पेसपं०	७९	२८	पिव खाद च चारुलीचने	१८९	६३
नाहं स्वर्गफलोपगोग०	३६५	१२०	पुण्डरीकनिवहैविंराजितम्	₹८८	१२३
निञडअरपूरणंमि	8	ч	पुत्रादिप प्रियतमैक० पुनराप्याय्यते धेनुः	३६१	११९
निजकरनिकरसमृद्ध्या	३३८	११७		३८७	१२३
नियउयरपूरणद्वा	३५५	११९	पुत्रे वाससहस्से पुरा नागार्जुनो योगी	२९२	९५
नियडयरपूरणासा	१६३	५९	पूर्व वीरजिनेश्वरे भगवति	१२४	४२
निरीक्य मित्रन् ! द्विज॰	२११	90	पूर्वपुण्यविभवन्यय॰	४२४	१३०
निनीमताम्बुधी मज्जत्	११७	३८	प्रमाधिनाथैर्सनिभिः	६७	२६
निवपुच्छिएण भणिओ	२८५	९३	प्रभासमृद्धिरेवैपा	३९०	१२३
निच्चृढपोरिसाणं	२१	१२	त्रभोः श्रीमानतुंगस्य	३९	१५
नीचाः शरीरसोख्याथम्	३२२	११०	वाग्वाटवंशाभरणम्	१४०	५२
नीवारमसवाग्रमुष्टिकवरेः	११५	३ ६	त्रीणिताशेपविश्वा <u>स</u>	३७९	१२१
नृपत्यापारपापेभ्यः	२६०, ४३०	७८, १३२	आजाताता । च्या		

	पचाङ्क	प्रष्ठाङ्क	•	पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क
फणिपतिमघवाद्या यत्र	१५९	५८	मित्रद्रोही कृतमश्च	२६४ `	۷٤,
वंभ अह नव बुद्ध	७२	२७	मिलिते तद्दल्युगे	१५०	५७
विले गरूआ गिरनार	१०९	३५	मीनानने प्रहसिते	४२२	१३०
वाणे गिर्वाणगोष्ठीम्	386	७४	मुंज भणइ मिलाणवइ०	२६	{ 8
वापो विद्वान् वापपुत्रो०	३्८८	११८	77	२७	\$8
वीजलिआ वीजी वार	१०५	३५	मुक्त्वापि पुण्डरीकाक्षम्	२४५	७३
वृहस्पतिस्तिष्ठतु मन्दबुद्धिः	९०	२९	मुखमुद्रया सहाऽन्ये	२२८	७१
बौद्धेबौद्धो बैप्णवैर्विप्णु०	२०१	६८	मुञ्ज-भोजमुखाम्भोज०	२३५	७२
भजेन्माधुकरीं वृत्तिम्	३५९	११९	मुद्रानुद्रतमुद्ररान्	888	१३४
भाऊ भराहिं काईं	१९३	६३	मुनीनां को हेतुर्जरठ०	१५६	46
भीमदेवस्य नृपस्य	१३६	५१	मूर्खस्तपस्वी राजेन्द्र !	४३१	१३२
भुजीमहि वयं भैक्षम्	९५	३०	मृतो मृत्युर्जरा जीर्णा	३७६	१२१
भूपभ्रूपछवप्रान्त०	२१४	७००	मृद्धी शय्या प्रातरुत्थाय०	३१७	१०६
भूभृतां निजगृहेषु	१३९	५१	मेरुणा मनुजदुर्रुभेन	१३८	५१
भोजराज! मया ज्ञातम्	३५८	११९	मौिलं मालवनायकः	४०३	१२६
भोली मूधि म गव्वु करि	४१९	१२९	यः सप्ताननसप्तिसोदर०्र	२४२	७३
ञ्रातः पाणिनि संदृणु	४२८	१३१	युत्त्वयोपार्जितं वित्तं	१३०	40
मइं नाईउं सिद्धेश	१००	३४	यथा धेनुसहस्रेषु	४३६	१३३
मंडी मुरकी रइ करउ	१४२	५२	यदनस्तमिते सूर्ये	३४१	११७
मंसासी मज्जरओ	३०४	१००	यदि विदितचरित्रैः	२३४	७२
मग्गुच्चिय अलहंतो	१६	१२	यदिह कियते कर्म	४३५	१३३
मजासी मंसरओ	३०३	१००	यदेतचन्द्रान्तर्जलद् ०	३४४	११७
मन तंबोल म मागि	१०६	३५	यद्दाये चूतकारस्य	२०९	६९
मद्रैनिद्रादरिद्रैः कुरुभि०	१४३	१३४	यद्भविष्याधिको धीरैः	३२८ ,	११३
मन्नीश ! गुरवस्तुभ्यम्	१५५	46	यद्यपि हर्षोत्कर्षम्	88	१६
महत्तराया याकिन्या	३१६	१०५	यन्मयोपार्जितं वित्तम्	२२०	७०
मह वयरियस्स ठाणं	१७४	६०	यशःपुञ्जो मुञ्जो	२४	१४
मा गोलिणि मन गव्बु	२३	\$8	यशोवीर! लिखत्याख्याम्	१३१	५०
माणसणा(डा) दस दस	३७७	१२१	यस्योवींतिलकस्य निर्मल०	४४२	१३४
मातृमोदकवद् वाला 🕙	३१३	808	यादोऽङ्गशोणितकृषायित्र०	८७	२९
मानं मुञ्च खामिनी	88	१५	यावदुच्छ्वसति प्राणी	२९८	९६
मान्धाता स महिपतिः	४१५	१२९	या श्रीः खयं जिनपतेः	१७८	६१
मा मण्डक कुरूद्वेगम्	३० ़	\$8	यूकालिक्षशतावली	३९७	१२५
मार्गे कईमदुस्तरे	२०४	६९	यो मे गर्भस्थितस्यापि	२७०	58 ′

			*		
	पद्याङ्क	प्रशङ्क		पद्याङ्कः -	घुष्ठाङ्क
योप्माकाधिपसन्धिविग्रहं ०	३५३	११९	विप्णुः समुद्यतगदायुत०	≉ं१२	, ू. १०४
रम्येषु वत्तुषु मनोहरतां	४२१	१३०	विस्फारस्फारघन्वा	५६	१९
रसातलं यातु तवात्र	३६२	११९	वेलामहस्रक्षोल•	₹ <i>७</i> ८	१२१
राजस्त्वं राजपुत्रस्य	२६५	८१	वेषः कोपि तुरुप्क०	८५	. 46
राजा स्वयं हरति माम्	१०	88	वेसा छंडि वडाइति	३ १	१४
राणा सन्त्रे वाणिया	११०	ર. ર ષ	वैघव्यसदृशं दुःखम्	9	22
रात्रो जानुर्दिवा भानुः	३५४	११९	वैरिणोऽपि हिं मुच्यन्ते	३६४	११९
रामनन्दशशिमोलिवत्सरे	९८	३१	वैरोचने रचितवत्यमरेश०	२५७	७७
रे रे य्रामकुविन्द	रि५९	७७	त्रजत त्रजत पाणा	५०	१८
रे रे चित्त कयं आतः	४०५	१२७	शतानि चाष्टादश	२२३	७१
रे रे वातुल्लोकाः	१६७	५९	शत्रुञ्जये जिने दृष्टे	१६५	५९
टक्षं रुक्षं पुनः रुक्षम्	३४३	११७	शशिदिवाकरयोर्त्रहपीडनम्	ष्	१८
रुक्ष्मि प्रेयसि केयमास्य०	१८७	६२	शीतत्रा न पटी०	३५७	११९
रुक्षीं नन्दयता रतिम्	२३०	७१	शूराः सन्ति सहस्रशः	१२२	४२
रुक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे	३६, ४२०	१५, १२९	'श्रीगर्वोप्मभिरुप्मलेपु	१७३	६०
टच्छि वाणि मुह्काणि	३९९	१२५	श्री चौलुक्य! स दक्षिणः	१२५	४३
रुव्याः श्रियः सुखं स्पृष्टं	२१८	৩০	श्रीमत्कर्णपरंपरागतभवत् ०	२ १६	७०
लिखतु लिखतु धाता	१७७	έ १	श्रीमत्राग्वाटवंशे	\$ 88	५३ ·
लिखनास्ते भृमिम्	४२	१५	श्रीमानभयदेवोऽपि	२ ९४	९६
होकं विहोक्य धनधान्य०	३८१	१२२	्श्रीवस्तुपाल तव भाल०	१८६	६२
लोकः प्रच्छति मे वार्ती	३७४	१२१	श्रीवस्तुपाल! प्रतिपक्षकाल!	२४७	98
वंदाद्वीद्वपरिस्फ्र्त्यी	२५५	७६	श्रीवस्तुपालः श्रियमेप	२३८	७२
वाढी तडं वढवाण	११३	३५	श्रीवस्तुपालस्य पत्नी	१८५	ષ્ઠ
वर्प्पपाहरिके द्विजे	३३४	११६	श्रीविक्रमादित्यनृपस्य	३०५	१ 🛮 १
वस्तुपालसचिवेन	१९१	६३	श्रीविकमादित्यनृपात्	१३५	५१
वस्रपतिष्ठाचार्याय	६५	२५	श्रीशत्रुञ्जय-रैवताभिघ०	१५८	५८
वार्द्धमाधवयोस्सोघे	९९	३३	श्रीसिद्धपुरे रम्ये	९६	३०
वाहनापिधपायेय०	१६६	५९	श्रोतव्यः सौगतो धर्मः	५७	१९
विद्याधित्याधिसंहर्त्री	१३७	५१	श्वःकार्यमद्य कुर्वीत	३७५	१२१
विधाय योगनीरोधम्	२९५	९६	श्वानचर्मिखता गङ्गा	४३३	१३२
विषे प्राहरिके नृपः	६	७	श्वेताम्वराः कलितकम्बरु०	ে	२८ २.:
विसुता-विकम-विद्या	१४८	ष्ष	पडहडीयां पंगार	१०३	38 130
विमलद्ण्डपतिर्विमल ०	१४३	५३	सउ चित्तहं सट्टी मणहं	8 <i>१७</i>	१२९
विश्वासप्रतिपन्नानाम्	२६२	८१	स एप भुवनत्रयप्रथित०	३६७	१२०

पुरातनप्रबन्धसङ्ग्र है

	पदाङ्क	प्रष्ठाङ्क ।		पद्याङ्क	प्रशङ्क
सुवर्णशवामण्डने	२५२	७६	समुद्र त्वं श्वाघेमहि	२४१	७३
सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्ग०	१९९	६७	सम्पत्तौ नियमः शक्तौ	४३९	१३४
सेजपालकसहस्रचतुष्कं	२२२	' ७१	सयलजणाणंदयरो ं	\$8	१२
सेतुं गत्वा समुद्रस्य	२६३	८ १	सरिसे माणुसजम्मे	१३	११
सोऽयं कुमारदेवी कुक्षि०	१४७	فإنع	सा नित्य कला	३३१	११६
सौरभ्यमालगुणमाल०	१८०	६१	सिंहशिशुरपि निपतति	३२७	११२
स्रायुद्धद्धकरङ्ककुट्टनरता	१६२	46	सीसं कहव न फुट्टं	२९१	98
सिस्ति क्षत्रियदेवाय	२७४	८५	सुकृतं न कृतं किश्चित्	२१९	७०
खिसत श्री भूमिवासात्	२२७	७१	सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि	३८०	१२१
खस्ति श्रीब्रह्मलोकात्	२२६	७१	सुखासेव्यं तपो भीम	४३२	१३२
खिसत श्रीमति पत्तने	४०१	१२६	सुन्दरसरि असुरांह	१३२	५०
स्वामिन् समुद्रविजयात्मज०	१७६	६१	हंसैर्रुव्धप्रशंसे:	२३१	७२
खार्थारं भप्रणतशिरसाम्	३११	१०४	हंहो श्वेतपटाः किमेप	७४, ४०८	२७, १२७
संतः समंतादपि तावकीनम्	१३४	49	हरिहर! परिहर गर्व	२५८	७७
संसारमृगतृ ^८ णासु	४०६	१२७	हा कस्स पुरोहं	७६	२७
सङ्ग्रहेकपरः प्राप	४३८	१३३	हारो वेणीदंडो	१५	१२
सङ्घो वाग्भटदेवेन	१६१	46	ह्रणवंशे समुत्पने	२	8
सत्यं यूपं तपो ह्यिः	३६६	१२०	हृदि त्रीडोदरे वहि०	\$ < 8	६२
सत्त्वेकतानवृत्तीनाम्	३३२	११६	हेम तुहाला कर मरू	800	१२६
सद्यस्तृप्यति भोक्तारम्	३२५	888	हेलानिद्दलियमहेभ०	३५१	. ११८

पुरातनप्रवन्धसङ्ग्रहान्तर्गतविशेषनाम्नां स्चिः।

५%€ अकाराचक्षरानुक्रमेण ﴾}

>		2000000			
ઓં	1	अमृतवत्सला	२४	भाडि	900
ओंकार [नगर]	93	अम्ब ड	३९, ४०, ६२	आत्रेय	९२
अ		अम्वा	५१, ५२, ९८	आदिदेव]	५१
_	į	अम्बावीदेवीप्रासाद	३०	आदिनाथ ∫	५२
अइवुक महिक	40	अभ्विका	९७	शानाक	५४, ३८
अग्निक वेताल	२	अग्बुचीच	906	आभड ३३, ४३	, ४७, ४८ १२४,
अग्निपखालंड [पछेवंडर]	४६	अयो ध्या	994		१३२
अङ्केवालिया [प्राम]	६८, ७०	अरिट्टनेमि }	९ ९	आभीर	३६, ८२
अङ्ग [जनपद]	358	अरिष्टनेमि ∫	90	आभू	५३
अचलेश्वर	६३	अरिष्टनेमिप्रासाद्	२७	भाम	86
अच्छोदक [सरोवर]	२४	अरिसिंह [राजवैदा]	७९	आमड 🕽	१२४
अजमेरीय [संघ]	₹9	अर्जुन	998	आस्यह ∫	३२, ४६, १२६
अजयपाल [राजा]	४७-४९	अर्बुद्गिरि १३, ५१,	५२, ६३, ६५,	आम्बा }	३४
अजय रा	902	६७,	, ७०, ८४, ८५	आम्याक ∫	३४, ४७
अजितसिंह सुरि	94	भर्नुद्चैत्य	৬০	भांवासण	१२
अहारही उ	ve	अलवि	२४	आन्न	४३
अणपन्नी	900	अलवेसरी	२४	आम्रेशर	९६
अणहिल [राय]	१०२	अलावदीन [सुरताण]	१३५	भारासण	३०, ३१
अणहिल गोप	926	अवन्तिदेश	99६	भाहैत	98
अणहिलपुर \	५३	अवन्ती [नगरी]	98	अकित	२४
अणहिलवाड	34	अवन्तीसुकुमाल	90	आलि	२४
अणहि छपत्तन 🔪	५ ३	भवलोकनशिखर	इ४	आलिग [कुम्भकार]	१२३
अणहिलपुर ,	१२, ३३	अशोकचन्द्र	२६	आछिग [प्रधान]	१२५
,, पुरी	२७	अशोकवनिका	३०	आछिग [पुरोहित]	र ६
अणुपमडी (अनुपमा)	Éź	अश्वपति	२१	आवश्यक [प्रन्थ]	903
अनादि राउछ [तपस्री]	3,5	अश्वराज	५४, ५७	आशराज]	५५
,, सठ	३८	अधिनीकुमार	९६	आशाराज	પ ્રેહ
अनुपम देवी ५४, ५७, १	६३, ६५, ६९	अ श्वेश्वर	३२	आशापञ्जी	₹२, ८०
अनुपम सर	६३	अष्टकवृत्ति [प्रन्थ]	904	आशी [नगर]	८६, ८७
अनुपमा	40, UY	अष्टादशशती [देश]	۷۵	आपाड [श्रावक]	., ९६
अन्धय (अन्धक)	996	अष्टापद [पर्वत]	४२, ९३	आसपाल	३३, ६९
अभय	४२	असणिदेवी	903	आसराज	५२-५४, १०२
,, कुमार	६, ३३, ९५	अहम्मद	68	आसराज-प्रवंध	५३
	५, ९६, ११२	1			-
अभिनवार्जुन	२०	आ		आसराजवसही 	<i>ξ '</i>
अभिनव राम	6	आकाशयान [विद्या]	९४	आसापछी	२७
अमर [पण्डित, कवि]	৩৫	आकृष्टिविद्या	४७, ७५	आहदग्राम	३१
,अमृतमयी	२४	भाकेवालीय [श्राम]	50	भारह	१०२
,अस्तमपा पु० प्र० स० :	19				
•					

•	इ	,
इन्द्रजाल विद्या	•	३६
	\$ 25	
Sarra	२	४९
ईश्वरसूरि		,,
	उ	
उज्जयन्त		82, 9,6
उ ज्जयिनी	٦, ٦, ٦٠	, २३, ३१,
)		३८, ९७
डाजिंत सेल } डजिलसिहर ∫		९९ ३४
_		99
उत्तरमथुरा 		
उत्तररामचरित्रगा	ч	30
उदयचन्द्र	3.4 .4m	924
उदयन ३२,	, २४, ४२,	४३, १२३, १२४, १२६
उदयप्रभ }		६४, ७६०
उदयप्रभ { उदयप्पह }		१३६
उदयराज		१३६
उदयसिंह]		88, 40
उदयसीह ∫		902
उपदेशमाला [ग्रः	न्थ]	906
उपदेशमाला-वृत्ति		900
उमा		१०, ११६
उमा पतिधर		80
उरंगल [पत्तन]		98, 88
	জ	
ऊदा ॄ (उदय	न)	२६
जदाक }े		२७, १२६
जदावस ही		२७
ऊपरमा लपर्वेत		88
ऊपरवट [अश्व]		६९
ऊ मादे		936
	ऋ	
ऋपभदेव	~*	909
ऋपभप्रासाद		20
ऋपभविम्व		30
- 19 1 111-11 11	ओ	7.
27-A-A	OI I	2004
ओजेनिनदी ओढरजाति		998
આહ રળાાત	-	88
	क	
कइंबास [मंत्री]		८६, ८७
कच्छदेश		994
कच्छेश्वर		93

कटक [नगर] ,	१३५
कडी [प्राम]	४ ६
कण्टेश्वरी [देवी]	
कण्डाभरण [व्याकरण]	४१, ४२ १३१
कदुचदीन [पातसाहि]	. १३५
कन्यकुट्ज	१२, ९८
कपर्दि [मंत्री]	३७, ४३
	,६४,६६,७०,१०१
कपर्दिवारिका	960
कपर्दियक्षप्रासाद	६४
कपिल	९४, १०४
कपिलकोट	93
कप्री	२४
कमलकेदारा [वापी]	२४
कमलादित्य	98
कमलादेवी	96
कयलोपरी [प्राम]	१३५
करणउत्र (कर्णपुत्र)	३५
करडाक	40
करम्बकविहार	१२५
कर्णउत्त (ग्र) २	१, ३४, ३५, १३४
कर्ण [चौछक्यवंशीय]	९६, १२३
कर्ण [डाहलदेशीय]	२३, १२६, १३१
कर्णदेव	३२
कर्णवारी	999
कर्णाट	२७
कर्णाटेश	98
कर्णावती	२७, २८, १२६
कर्मसिंह	88, 49
कपूरदेवी	66-80
कस्तुरी	२४
कस्मीर	९७
कलिङ्ग	१२६, १३४
कल्याणकटक	900, 926
कांज	28
कांथडिक [तापस]	926
काकरग्राम	१२, १२८
काकृ	८२
कातम्र [व्याकारण]	939
कादिक	. ६६
कानडा [राग]	৬९
कान्ति]	२३
कान्ती }	२५, ३८
कान्तीपुरी 🕽	२४, ९१, ९५

कान्यकुटज ८८, १०३, १२८ कान्हड देव [नहुला] ४५, ४६ कान्हाक ४४ कामन्दकीनीति 924 कामल २४ कामला 93 कामिकतीर्थ 68 कालद्रण्ड 905 कालिका [देवी] २२ काछिकाचार्य 99, 53 काछिङ्गीयक ΥĘ काछिदास 90, 08, 998 काली देवी 998 काशी ६, १०३ काइमीर २६ ८३ कासद्रह - [प्राम] 926 कासद्रा कासहद 93 काह्नढदेव 903 किराह् २३ कीत् 903 कुञ्जण 38 कुण्ड(ण्डि)रोश्वरप्रासाद ३८,१२३ कुन्ती 46 कुवेर 922 कुमर (कुमारपाल) 923 कुमरविहार 80 कुमरिक (कुमारपाल) ३८, ३९ कुमारदेव (कुमारपाल) कुमारदेवी ३७, ३८, ३९, ४९,४४-४७, ५२, ५३, ५५,५८, ६५, १२३ . ६० कुमारदेवीसर ४रं 'कुमारपाछ कुमारसंभव [काव्य] 90, 998 कुमुद [पण्डित] 930. २७-३०, १२० कुमुद्**चन्द्र** कुम्मीपुर 997 कुमरड (कुमारपाल) ४७ 938 कुरु ६९ कुरुचन्द १९, २१ कुलच∓द 900 कुहाडि ९३, ९४, १०८

कृत्ण

कृष्ण दे व	४५ [गाजणपति	४७	चण्डिकास्तुति	95
केतु	५०, १०२	गाडर	४९	चतुर्भुज	८७
केदार	ĘŊ	गिरनार)	३५, ३८, ५१, ५८	चन्दनवाला	२६
केदारयात्रा	36	गिरिनार∫	938	चन्दनवसही	५०
केल्हण	909	गुणचन्द्र	२६, २८	चन्दना	२४
कैलाशहास	22	गुणवर्द्धन	१३६	चन्द्रनाचरित	७५
कोका मलिक	१३५	गुणाकरसूरि	१६	चन्दवलिह्स) 65
कोडीनार	30	गूडमहाकालप्रासा	द १०	चन्दवलिद्द	٤٤, ٥٥
कोणा द्राम	- 1	गूर्जर	१२, २१, २७, २९,	चन्दवछिद्दिक	
	49	*	५०, ६९, ७९, ११८,	चन्द्रोमाणा [
क़ोरण्टक [प्राम]	900		१२६, १२८	चन्द्रज्योत्सा	२४, २५
कोरण्टग न् छ	१३६	गूर्जरत्रा	१९,२३, २५, २८, ५०	चन्द्रश्भ	४३, ६१, ८३
कोरिक	908, 998	गूजरात	34	चन्द्रभादिर्त	
कोलिक	960	गूर्जरी	७९	चन्द्रावती	५२
कोशला	5, 57	गोऊ	१०२	चांपलदे	४३
कोङ्कण	४६	गोगा	३०	चाङ्गदेव	१२३, १२४
कौन्तेय	999	गोगाक	ર ૧	चाचरीयाक	७६
.क्षिति [पुर]	९७	गोगामठ	५०	चाचिग	१२३, १२४
क्षीरोदवापी	२४	गोदावरी	११, १३, १४, २०	चाचिगदेव	६७, १०२
ख		गोध्रईयाक	४६	चाणूरमञ्ज	9 Ę
खंगार [रूप]	३२, ९८	गोध्रा	६९	चान्द्ण	१०२
खंडेराय [साखलाक]	৬४	गोधियक	६ 9	च(न्द्र	939
खरतर	994	गोपगिरि	२०, २६	चापोत्कट	१२, १२८
खर्पर	Ę	गोपालपुर	96	चामुण्ड	१२
स्वलची	૧૨૫	गोमण्डल	96	चामुण्डराज	ĘS
र्याप रका	ч	गोला (गोदाव	री) २०	चासुण्डा	99, 990
खेड [महास्थान]	८२, १३०	गोविन्द	94, 938	चारण	२३, ३४, ३५, ४७, १२५
संदर्भ हालाग् उ	,	गोविन्द [वाच	-	चारुकीर्ति	94
		गोविन्दाचार्य	996	चारूपग्राम	94
• -	, ३५, ६६, ९३	गौड [देश]	१९, ९६, १२९, १३२	चालुक्य	46
गंगाधर	२६	। गौडवध [काव्य		चाहड	३२, १२६
गगनगामिनी [विद्या]	94	गोरी	925	चाहमान	८६, १०१
गगनधूलि [नायक]	88	गौर्जर	39	चाहिणी	१२३
गजणपुर	१३५	ग्यासदीन [पार		चाहिल	५२
गणपति [व्यास]	۷۰	ग्रिथिल-सीमदेव		। चिनकत ली	८२
गद्य भारत	७८	श्रीयल-सामपुर		चित्रक्ट	२६, २८, ४४, १०३, १०४
गन्धर्वसर्वस्व	२४	i	घ	चित्राङ्गद	१०३
गुन्धर्वसेन	9	चूघलमण्डलिक	६९		906
गन्धवह [रमशान]	ч	घृतवसतिका	৬৬	401.4	४३
गयणा [इन्द्रजालिक]	3 6		च	चोलुक्य	३७, ४३, ६१, ६९,
वाया	३५	चकेश्वरी	৬০		હેક, ૧ ૨ ૭ —
गर्जनक	८६, ८९	1	93		ন্ত
गांगिल	२९	चगड	V ,	छाडाक [
गां गाक	३६	चण्डप	५ ३, ५		२्०
गाहेयकुमार गाहेयकुमार	२०	चण्डप्रसाद	- **		
गाधन ज्ञास					

छिंपिका	٥٥ }	जिनभद्रसूरि	१०३, १०५	तिहुअणसिंह }	३२
छेकभारत	२९	जिनभुवन .	49	तिहुअणसीह ∫	३२
		जिनमत	95	तुगळावाद {	
ज		जिनवछभसूरि	४३	तुगलकगावाद 🕽	934
जइचन्द् 🕽	66	जिनशासन	98, 00	तुरक	ሪው
जइतचन्द् }	66	जिनसिंहसूरि	90€	तुरष्क }	٩, ८६
जइतलदेवी	48	जिनेश्वरसूरि			'९, ५०, ९०, १२६
जगड	४३	जिराप-(छी)	936	तेजःपाल ५२-	-५७, ६२, ६६७१,
जगङ्ख 🕽	٥٥	जीन्दराज	902	_	७३, ७५, ११२
जगद्दक 🕽	60	जीर्णदुर्ग	Ęo	तेजपुर	90
जगदेव	२५, ८५	जार ा षु । जेठेया	20	तेजल(तेजःपाल)	६६, ६७
जयकेशी	२९, ३६, १३३	जेसल (जयसिंह)	२३, ३५, १३४	तेजलपुर	६०, ६५
जयचन्द	۷٤, ٩٥	जेसल (जयासह) जेसल	34, 47, 140	तेज्का	48
•	1	जे न्न	*** **	तैलपदेव	१४, २१, १२९
जयतलदेवी	68	जत्र जैत्रचन्द्र		त्रिपुर	306
जयतसिंह	936	जन्म जैन	۶۵, ۶۵	त्रिभुवनपाल	३७, ४४, १२३
जयमङ्गलसूरि	40		६८, ८३, १०५	त्रि भुवन सिंह	५४
जयसिंघ सिद्धराय	३१,४४	जैनप्रासाद	२४, ६५	त्रिभुवनस्त्रामिनी	88
जयसिंह रिसिद्धराज रि	२३, २५, ३४	जैनयाचक	५९	त्रिपष्टिशलाकापुरुपच	
	३७, ४५, ४७,	जैनव्यन्तर	49	त्रिपष्टिशलाकापुरुपच	रितभण्डार ७७
	५८, १३४	झ		ઇ	r
जया	900	झींझरीयाग्राम	६५		•
जलालदीन् [सुरत्राण]	५०, १३५	ट		थारापद्गीयप्रासाद	38
जल्हु [कई]	22	टीस्वाणाञ्चाम	9,9	5	•
जसपडह } [हस्ती]	३५ ५० ५०	ड		दुउलती	१३५
असमार र	५०, ५१		e1.	दक्षमणी	36
जाकुटि 	38	डमाणी [ग्राम]	६५	दक्षिणक्षिति [देश]	१२६
जाङ्गल	१२६	डाक [प्राम]	६५	दक्षिणमधुरा	99
जाम्य	969	डामर [सान्धिवित्रहिक		दक्षिणापथ	१९, १२९
जाम्बड [वर्ग]	₹ °		२३, १२६, १३१	दस	१७, १०५
जाम्याक	. 45	ढ		दुन्तकश्रेष्टि	२
जावड	99	ढंकपर्वत	९१, ९२	दरिद्रनर]	२
जावडि	९९, १०२	ढंका [पुरी]	९३	दरिद्रपुत्तल ∫	२
जावाछिपुर	३२, ४९, ५०	ਫਿਲੀ	७०, १३५, १३६	दशरथ	46
जावालि पुरी	६७	त		द्शार्णमण्डप	88
जासिल	39	तक्षदिला	900	दशास्य	926
जिनभइ	१३६	minerier 1	९४	दाउदपुर	१३५
जिनहा-°हाक	994	तरंगमाला {[कथा]	९४	दान्ताक	99६
जितशत्रु	993	तारणगढ)	86	दामोदर	96
जिनचन्द्रसूरि	३१, ४३	तारणदुर्ग 🕻	४७	दाहिमा	८६
जिनदत्त	७८,९०७	तारणदुर्गप्रासाद	४७	दिगम्बर	96, 26-28, 69
जिनदीक्षा	59	तारादेवी	८७, १०५		86
जिनदेवी	२ ६	तिलकमक्षरी [कथा]	930	दिगम्बरचेत्य	94
जिनधर्म :	90, 88	तिलंग [देश]	975	दुर्गसिंह	६७
जिनविस्य	९ 9	तिहुअणपाल	३८	दुर्योधन	308

				~		103
	दुर्रुभराज	१०२	घवलक][पुर]	५२, ६९	नागढ ४९, ५	५०, ६७,६८, ७७,८०
	दुसाज	४९	धवलकः 🛛 "	५४, ५५ ६१, ६७	नागपुर	36, 66, 88
	दुसाजुत्र	Чо	धवलक्क "	२६, २७, ३२, ३३,	नागपुरीय	₹9, ७०
	देपाक	ピタータン	धवलका 🌖 "	६३, ६६, ७५, ९५,	नागर	۷۰,
	देपालपुर	१३५		९६ २६	नागराज	३३, ४३
	देमतराज्ञी	939	धवलाईन प्रांतर प्रांतर	४०	नागलदेवी	৩९
	देसता	23	घांगा, घांगाक	28	नागहस्ति	९ २
	देवगिरि	५४, ७९	धामदेव	३१	नागार्जुन	९१, ९३–९५
	_	८३, १०७, १२३, १२६	धारा [नगरी]	१४, १७, १९, २०,	नागिंद	१३६
	देवदत्त	1		२१, २३, २६, ३५,	नाटसारि [राग]	৬९
	द्वदत्त देवधर	999, 992		४४, ५१, ५२, ९५,	नानाक [कवि]	৬০
•		33	धाराक	९८, ११९, १३१ ९८	नानामछिक	१३५
	-	३८,४३,५४,६१,१००	धारागिर <u>ि</u>	2 <i>4</i>	नामलदेवी	36
	देवप्रभ [स्रि]	५३	धारागिरिवाटिका	88	नायक	**
	देवल [महं०]	३ २	धारिणी [विद्या]	° '	नारायण	१०४
	देवशर्मा	90	धारणा [वचा] धारिणी [श्रेष्टिनी]	3° 900	निर्घृणशर्मा	29
	देवशासा [रागि	-	-	8.5	निर्वाणकलिका [प्र	
	देवसूरि	२५–३१, १०७, १२७	धारू	996	निहाणा [प्राम]	ફ 9
	देवाचार्य ∫	२७, २८, ३१, ४३, ४४	धतराष्ट्र		नीत [ठक्कर]	५२
	देवाचार्यपीपधाग	गर २७		न	नीलपट [संप्रदाय]	
	देवादित्य	८२, १३०	नगरपुराण	939] ३१, ३४, ४३ ५३,
	देवेन्द्रस्रि	४७	नहनारायण	७९		६५, ६९, ८४, ९१,
	दोधकपद्मशती	४९	नड्डल्र्रे⊤ छा	900		९२, ९७
	हात्रिंशतिका [प्र	न्यी १०	नड्डल नड्डल}[पुर]	909	नेमिचैत्य	96
	हारभट	४६, ७९	नङ्खुला(कान्हढदेव)	४५	नेमित्रासाद	939
	द्वारवर्ता रे	89	नन्द	८१, ८२	नेमिमन्दिर	६३
	द्वारिका ∫	906	नन्दिवर्धन	49	नेह(ढ)	५२
	द्वपायन	११२, १३२, १३३	नन्दिवर्द्धनपर्वत	83	नोढा सईद	৩३
		घ	नन्दी	922		प
		-	नन्दीश्वरप्रासाद	६३	C 1	-
	धनदेव	94	नमि	42	पंचम [राग] पंचाल [देश]	৩ ९ ९ ४
	धनदेवी	५४, ९५	नमिविद्याधरान्वय	99	पंचासर [प्राम]	१२, १ २८
	धनपति	59	नयसार [भट्ट]	२८	पंपा [सरोवर]	77, 775
	धनपार	११९, १२०	नरचन्द्र सूरि	६२, ६९	पखाडज	vs '
	धनासी [राग]	us	नरदेव	903	पणपन्नी	900
	धन्ध	२६	नरपति	29		[] २१, २३, २५ ,
	धन्युषः	१२३	नरवर्मदेव	२०		२, ३५, ३६, ३८–४० ,
	धन्ध् परमार		नरवम्मी	৬९		م, ४ <i>७–५०, ५४, ५५,</i>
	धन्याधार [देश	7 38	नरवाहन	99, 50, 905	l .	२, ६५, ६६, ६८, ७५,
	धरणग धरणिग	86, 48	नरसमुद्र [पत्तन]	२८, २९		०, ८९, ९५, ९६, १२३,
		२६	नल	9 २ २ 9३५		१२६, १३२
	धरणीश्वर ले	9६	नसरदीन	154 147	पद्म	96
	धरणेन्द्र	४३	नसरदीनसाही	96	पद्म लदे ची	 ፟፞፞፞፞፞፞፞፞፞፞፞
	धर्मस्रि - ८ नंती र	38	नांदउदी	•	, 3	
	धवछ [मंत्री]					

			~		3.27
भरत [राजा, चकी	. 87, 40	मचव	५८	महिण्छ पृष्टिलक	९५
भव (शिव)	9३२	मङ्गाहडपुर	 २६	महिरावण	58 20
भवानी (पार्वती)	१३२	मण्डनगणि	९२	महिपपुर	4.2
भाड	५४	मतोडातीर्थ <u>ं</u>	ĘĘ	महीधर	3 4 8 4
भाण्डागारिक	902	मधुरा	99, ९२	महुआ	8.5
भानुमती	69	मद्न	\ <u>\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\</u>	महेश्वर	
भारती	१९, ८१-८३	मद्नपाल	પ ર, પ ૪	संगू सांगू	२९
भारत, छेक	૭ ૮	मद्नव्रह्म	२३-२५		१३३
— गद्य	vc	मद्नायतन	5	माइंदेव ——	२३
वाल	૭૯	मद्र [देश]	933	माक	२५, ५४
— (महाभारत)) 999	मधुमती	९९ –१०१	माऊहर	₹५
भावड	55	मधुस्दन	37-701	सागध	७९
भिल्लमाल	१८, १३१	मनोरमा		माघ [कवि]	१७, ७४, १०५,
	२३, ५४, ६५, ११८,		99		१३०, १३१
•	१२१, १२३, १३२	मस्माणनगर गुरुवाला	909	सावकाव्य	9.0
भीमगान्धिक	998	मस्माणाकर	909	माणिकड [पछेडड]	
मी मडाक	39	मस्माणी [खनि]	99	माणिक्य	२७, २८, ३१,
भीमदेव	49, 42, 54	मयण (-\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\	36	माणिक्यसूरि	५०, ६४, ७६
भीमश्री[य]द्राम	३३, ३४, ६५	मयणल(ह)देवी	२८, ३५, ३६,	माधव	३२, ३३,
भु ण्डपर्यंत	\$6	-	१३३, १३४	माधवदेव	२४, २५
<u>भु</u> वनपाल	५६	मयणसाहार	४६, ७९	माधवपंडित	२४, २५
		मयूर [किव]	94, 9 ६	मानखे(पे)टपुर	९३, ९४
अ वनपालेश्वरप्रासा		मरहट्टदेश	99	मानतुङ्ग सूरि	१५, १६, १२१
भू णपाल	৬४	मरु [भूमि]	१२६	मानदेव सूरि	900
भूण्डपर्यंत	96	मरुदेवी	99	मानस [सरोवर]	२४
भूयराज	926	मरुमण्डल	८२	मारव	५९
भृ गुकच्छ	२६, ४०, ७५	मरुखली	३२, ८४	मारुदे	५२
म ृगृपुर	४०, ५६, ६२, ६५,	मलधार [गच्छ]	१२७	मारुक }	३२, ५०
	६९, ७४	मलयपर्वत	49	मारुयक ∫	४८, ११३
भैरव [राग]	৩९	मलिककृवडी	१३५		, २०, २३, २४, ३१,
भैरवानन्द [योगी		मलिका	9 રૂ પ		४, ६७, १०२, ११९,
भोगवती	98	मछदेव	५४, ६५, ९०	9२३	, १२६, १२८, १३१
भोगावह	३५	मलवादि [स्रि]	८३, ९६, १३०	मालवक	१०, २१, ९६
भोगीन्द्र	90	मिछिक	५०	मालवपति	७९
भोज[तृप] १४	१, १७-२३, ५१, ७१	म ह्यकार्जुन	३९, ४०, ४६, ४७	मालवमण्डल	२७
७२	, ९६, ११७, ११९,	सहणक	92	मालवराज्य	१३
92	१, १२२, १२९-१३१	महणका	१२८	मालवा	38
भोजस्वामिप्रासाद	90	सहमद	९०	मालवेश	38
भोपलदे	४३	गहमूं द	१३५	माल्हणादेवी	90
भोपछा	S 9	महाप छि	९७	माहिन्द	१०२
	म	महाभारत	१२४	माहेच	93
	५४	महाविदेह	६९, ११४	माहेश्वरप्रासाद	२४
मं डलीनगरी	ĘĘ, SS	महाराष्ट्रीय	७८	माहेश्वरी	३३
सकडाणा	45£	महावीर	८३	मिणा लवईं	JR
म गध	179				

सुक्ष [नृप]	93, 94-62,	याकिनी [साध्वी]	१०३	रुद्दाइच (रुद्रादित्य)	98
	१२८, १२९	याज्ञवल्क्य	998	रुद्र [शिव]	99६
मु णालवई	१२९	युगादिदेव ४३, ६	६, ८३, १००	रुद्रमहाकाल	२४
मुद्रक	१३४	युगादिदेवप्रासाद	२३, ५२	रुद्रादिख [मंत्री]	१३, ४४, १२८
मुद्गलवंदी	٥٥	युगादिदेवभाण्डागार	78	रूपवती	9३०
मुद्गलपातसाहि	८५	युगादिफलही	৬८	रैवत [गिरि, तीर्थ] ३	४, ४७, ५२, ५३,
सु निचन्द्र	२६, ३१	युधिष्ठिर	१२९, १३२	٤٥, ٤٧	, ६९, ८२, १३२
मुनिसुवत [देव]	३२	युगंधराचार्य	960	रैवतक [पर्वत] ३	४, ४३, ६१, ९३,
मुनिसुव्रतचैत्य	४५, ६२	यूकावसही	१२५		९८, १२६, १३२
मुनिसुवत प्रासाद	३२	योगशास्त्र	9૨૫	रेवतकपद्या	१२६
गुरंडनरपति -	९ २	योगिनीपुर	८६, ८७, ८९	रैवततलहहिका	96
मुरारि	922	₹		रोदिक (रुद्रादित्य)	990
मुहडासा [प्राम]	१२३	रंक [वणिक्]	१, ८२, ८३	रोहणगिरि, रोहणाचल	9, 99६
मुहुयानगर	99	रघुपति	હર	ल	
मून्धउर	१३५	रणसिंह	\$9	रं का	7.
मूलराज मूलराज	१३, ७७, १२८	रति	920		ર <i>પ</i> , ૧૦ ૧
<u>.</u> मृणालवती	98, 938	रतिरमण (कामदेव)	१२२	लक्ष्मण लक्ष्मी	
मेव [राग]	yo .	रतपुञ्ज	८४	लक्सा छक्ष्मीध र	१२९
मेडतकपुर	93	रत्नपुर	68		94
मेद [जाति]	909, 902	रत्नप्रभ	१२७	ङख[म]णसेन ङखणावतीपुरी	68, 66
मेदपाट	४४, १०२	रह्मशेखर	85	-	68, 66
मेरी	28	रसीअड ो _{ह को कि} 1	68	लघु चारभट	९६
मेरु	२०, ५१	रसाअड रसीयाक } [योगी]	८५	रुलितविस्तरा [यृति] रुलिता	१०६, १०७
मेलगपुर	३२	राजपुत्रवाटक	४८		६२, ६३
मेवाड	39	राउल	५०, ५१	ललि(ल)तादेवी चन्यायसम्ब	५४, ६३, ६५
मेहता [श्राम]	48	राजविडम्यननाटक	२१, २२	छवणप्रसाद	५४, ६५
मोगा	62	राजविहार	३०	लवणस मुद्र जन्म ोर िक	96
मोजदीन [सुरत्राण]	1	राजहोखर	998	लवदोसिक 	
मोदकुछ	१२३	राजस्थापनाचार्य [विरुद]	င ု ဖ	रूपणावती []	૧૨ <i>પ</i> ५૨
मोढेरपुर	د ۶	राजिल	993	लहर [ठक्कर]	
य		राजीमती	٥٥	लाखण ————————	१०१, १०२
		राम (रामचन्द्र) ८,९,३		लाछलदेवी जन्म विकास	\$\$ \$\circ\$
यक्षदेवकुल	۵		994		, ६८, ९३, १३४ ४०
यक्षनाग	३२	रामकथा	\$	ला डदेश	93
यमुना [नदी]	९२, १३५	रामदेव	993	लापाक	१३५
यवनव्यंतर	८३	रामराज्य	9	लाहउर की उन्हें की	\$ \$
यशःपटह [हस्ती]	२३	रामशेन [प्राम]	३२	स्रीलादेवी स्रीलावती	* * * *
यशश्चन्द्र	१२३	रामायण	6	लानता लीॡ	४३
यशोधन	992	रायविड्डार [विरुद]	33		992
यशोधर	६२	रायविहार	30	खुखाई 	48
यशोभद्र	७५, ११५		, ११५, ११८	ऌ्णपसा } ऌ्णप्रसाद }	५५, ६७
यशोराज	८६	राष्ट्रकृटीय	66	रूणमसाद] रूणसीह	৩ৎ
• •	३, २४, ३५, १०९	रासिङ्सूरि	६२	ऌ ^{नसार} ऌणिग	५२, ५४
यशोबीर ४९-	५३, ६७, ७०, ७१	रुक्मदीन	१३५	18641.4	• • •

	•	Second Man		574
स्र्णिगवसहीं .	५३, ६५ वाणारसी	१५, २०, ६५	विष्णु	६९, १०४
लोलियाणक	११४ वादी देवसू	रि ३०	चीकम	. १०२
लोहरिक]	५० वामणी	२४	वीकमओ	ą
लोहरिक लोहडिय	६५ वामदेव	৬৬	वीघरा	903
व	वामन	९७	वीर [जिन]	३२, ४२, ९४, १०४
	वामनस्थली	६२, ६८, ११४	वीरणाग	२६
वईजिलिया	88	134	वीरप्रतिमा	Ęs
वङ्गेश्वर	गर्९ वाग्रह्मानी		चीरदेव	३२, १०७
वचनवत्सला	76	३ २	वीरधवल	५४-५६, ६५-६७,
वज्रस्वामी	९९, १०१ वाराणसी	८६, ८८–९०, १०७		६९, ७८
वज्राकर	9 वाराहीसंहि		वीरम	48, ६५-६७
वटक्पपुर	60		वीरमति	926
वटपद्रपुर	४४ वालही	998	वीरराज (वीरध	वल) ५७
वडीयारदेश	१२८ वालीनाह	५२	वीराचार्य	४३
वडूयाग्राम	्र वासुक	59	वीऌ	२४
वढवाण	३५ वासुपूज्य च	य २७	वीसल]	६६–६८, ११४
	१३६ विक्रम (वि	क्रम) १३६	वीसलदेव 🗡	40, ६८, ७७-८०
वरथुपाल (वस्तुपाल)	चिक्रमकाल	63	वीसलिक	ĘĘ
वद्धमाण (वर्द्धमान)	९९ विक्रमराय	१२३	बृद्धसरस्वती	२०
वनराज	१२, १२८ विकस	४, ६, १०, ११६, ११७	चृपभ [जिन]	ĘS
वयजू	विकासीन	4, 6	चेणीकृपाण [विस	ह्] ७८
वयजूका	विक्रमादिस		वेदगर्भ	998
वररुचि	29	8-0	वैदिक	98
वराहमिहिर	70, 71	४२	वैष्णव	६८
वर्द्धमानपुर	40		च्याघ्रपहीं	५४
वर्द्धमानसूरि ६८,८३,	९५, ११९ विजयबहा	९५	व्यास	ux, uc, co
वलभी [पुर]	८२, ८३ विजयसेनस		व्यासविद्या	60
वलही	८३ विजया	900		হা
वल्लभराज	१०२ विदुर	906	शंकर	९४, ११६, १२०
वल्लभा	२४ विद्याधर [शंख	पद, पण, प४
वसंत [राग]	98	-	शक	29
वसन्तपुर	१९३ विद्यारधरग	993	शकावतारतीर्थ	१२०
वसाह ३३,४३	, ४४, ४७, विद्यानन्द	Ęu	शङ्घेश्वर [प्राम]	६९
	८ ६१.८० विद्यापुर	५८	शङ्खेश्वरपार्श्वनाय	Ęc
ton late	५७ ५९ विनास	१३४ १०	शहुलु (संडेराज	
वस्तुपाल <i>५२-५५</i> ६१-६४	المالية المالية		शहुलु (तर्वा	३२, ४२, ४३, ५९,
ייי	2 06. 60 1940 L"		शतुपान [पान]	६४-६६, ६८, ७५, ८३,
वस्त्रापथ [तीर्थं]	६० विमल्यन्य			, ९३, ९९–१०१, १२६,
	३१ विमलवसा		'"	१२७, १३०, १३२
वांका [प्राम]	१९२ विमलवसा	हे ५२	शत्रुञ्जयतलहटि	•
वाक्पतिराज	४२ ४३ विमलादि	६३, ९४, ९८	शत्रुज्ञयतलहाट	
	५८, ९७ विमानविभ			, ৩৬
वाग्भट [मंत्री] ३२, ४०		ा १३४	शत्रुञ्जययात्रा	
	०८ ० । विराट द	41.7		903
वारभट [वैद्य]	९६,९७ विराट द	पति [विरुद] २८,२९	शस्भलीश	
4,111	०८ ० । विराट द	31 .1		१०३ १०४, १२ ९

.	
'शाकसेन्य	35
	३१, ८६, ८७, १०१
भाकटायन [व्याकर	-
भावियसिं ह	906
शातवाहन	. ९४,,१३०
शान्तिकलश	२६
शान्तिनाथ	. 900
शान्तिस्तवं	900
शारदा [देवी] -	920
शासनदेवी	76
हिलादिख	' ८२
शिव	90, 98, 86, 86
हि।वपत्त न	
विवपुर	, 903
शिवभूति.	, २६
शिवमार्ग	928
शिवशासन) 8e
शिद्यपावकध [काव	य] १७
इतिलगुणसूरि	92, 926
ह्यमंकर	904
इ <u>र</u> क्षारकोडि (सार्ड	
होव	Ę6
ह्योभन [मुनि]	998
शोभनदेव [सूत्रधा	ľ
क्षी [कन्या]	94
आ [कप्पा] श्रीदेवी	
श्राद्या श्रीधर	77, 936
श्रावर श्रीपर्वत	. ४२
	६, ६५, ११६
श्रीपा्ट [कवि]	४२, ४३
श्रीपुंजराज	५१, ८४, ८५
श्रीपभसूरि	900
श्रीमाता	५९, ५२, ८४-८६
श्रीमाल [पुर]	१७, १८, ३२, ३४,
	४,३,४९,८३, १०५,
, ,	१०६, १२६, १३०
श्रीमालज्ञातीय	904
श्रीराग	
श्रीहर्ष [फवि]	१२८
श्रेणिक [राजा]	, ४२
श्वेतपट	, २७, २९
श्वेताम्बर	१५, २७, २८, १०१,
	१०५, १२७, १३०
श्वेताम्बरीय	२७, ९८

ं ् ष
पं(खं) गार ३४
पं(खं)भरामाम १३५
पड्दर्शनमाता [बिरुद] ६३
पोसरपानु (खुशरखान) १३५
स
सइंभरी (बाकंभरी) ८६
सहंवाडीघाट ६७
सहेद [नोडा] ५६, ७३
संखराज ४६
संखेश्वर १२
संग्रामराजा ९३
संमेत [गिरि, तीर्थ] ९३
संयोगसिद्धि [विप्रा] ४०, ४१, ४७
संस्कृत [भाषा] ६,१०
सगर [चक्रवर्ती] ५८
संजान [फुलाल] २८
संज्ञन [दण्डनायक] ३४, ४९, १३१
सज्जन [साकरीयाक] ३६
सण्डेरगच्छ ४९
सण्डेराज (खण्डेराज) [शंखल्ल] । ५६
सत्यपुर २६
संपादलक्षप्रनथ (महाभारत) ७८
समरसिंह ' ४९
समरसीह १०२
समराकं ६ ६८
समरादित्य १०५
समरादित्यचरित १०५
समसदीनं [पातसाहि] १३५
समुद्रविजय ६१,८१
सरस्वती [देवी] १०, २६, २७, ४३,
१९२, १२०, १२%
सरस्वती [नवी] १२८
सरस्वतीकण्ठाभरण प्रासाद १२०
सरस्वतीकुटुम्ब " ११८
सर्वदेवाचार्य १०७
सहस्रकला २४, ४९
सहस्रकिरण [ताडङ्क] ४०,४१,४७
सहस्रालिङ्ग [सरोवर] ६७
सहाबदीन [पातसाहि] ' १३५
साइंदेव २४
साज २४, ५४
सागर [द्विज] २६, ९७

साङ्गण-चामुण्डराज	₩ 111. '€\$
साङ्गण [डोडिआक]	३२
साजण (सज्जन) [मं	-
सातवाहन	(99, 89
सात्क [महं०]	60
सान्त् [मंत्री]	३१, ३५, १०७,
	१३३, १३४
साभ्रमती	96
सामंतसीह	१०२
सामाचारी [प्रन्थ]	38
साम्ब	३२
सारंगदेव	993
सारस्वतमंत्र	. ' ७८
सालाहण	, '' '૧૨
सावदेवसूरि	ं े १३६
साएयदीन [पातसाहि	
साहारण	3 4 2
सिंघरा	
सिंह' [']	`
सिंहणदेव	' હવું
	•
सिद्धराज [जयसिंह]	
	६, ३८, ३९, ४७,
ું. ' ૮૫, ૧	०५, १२३, १२५,
.	०५, १२३, १२५, १२७, १३१–१३४
८५, १ सिद्धच्कवर्ती	०५, १२३, १२५, १२७, १३१–१३४ २८, २९
.	०५, १२३, १२५, १२७, १३१–१३४
८५, १ सिद्धच्कवर्ती	०५, १२३, १२५, १२७, १३१–१३४ २८, २९
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धनाथ	ok, 923, 924, 920, 939—938 22, 24 23, 24 82, 83
८५, १ सिद्धचनवर्ती सिद्धमाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर	ok, 923, 924, 920, 939-938 22, 24 22, 24 20, 88, 84
८५, १ सिद्धचकवर्ती सिद्धमाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपुर	ok, 923, 924, 920, 939-938 22, 24 22, 24 20, 88, 84 904
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धनाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपि सिद्धपि	940, 944, 944, 940, 944, 944, 944, 844, 844, 844, 844, 844
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धमाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर	ok, 923, 924, 920, 939-938 22, 24 22, 24 20, 88, 84 904
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धचाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर	9 20, 9 23, 9 24, 9 24, 2 3, 2 4, 2 4, 2 4, 2 4, 2 4, 2 4,
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर	30, 923, 924, 920, 939-938 30, 88, 88, 82, 83, 88, 90, 88, 88, 90, 88, 88, 90, 90, 90, 90, 90, 90, 90, 90, 90, 90,
८५, १ सिद्धचकवर्ती सिद्धचाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपिं सिद्धपिं सिद्धसारस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी]	9 20, 9 23, 9 24, 9 26,
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धस्परस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्ध [योगिनी]	9 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
८५, १ सिद्धचकवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर	9 4 4 9 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपि सिद्धसारस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुल	9 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुल सिन्धुल सिन्धुल सिराणा [माम]	4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
८५, १ सिद्धचकवर्ती सिद्धचाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धस्यत सिद्धस्यत सिद्धस्यत सिद्धस्य द्वाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुछ सिन्धु सिन्धु सिन्धुल सिराणा [प्राम]	9 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपि सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुल सिन्धुल सिराणा [प्राम] सींघण सीता	4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
८५, १ सिद्धचकवर्ती सिद्धचाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धपुर सिद्धस्यत सिद्धस्यत सिद्धस्यत सिद्धस्य द्वाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुछ सिन्धु सिन्धु सिन्धुल सिराणा [प्राम]	9 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
८५, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपि सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुल सिन्धुल सिराणा [प्राम] सींघण सीता	9 2 3, 9 2 4, 9 2 4, 9 2 4, 9 2 4, 9 2 4, 9 2 4, 9 2 4, 9 2 4, 9 3 4, 9 4, 9 4, 9 4, 9 4, 9 4, 9 4,
टफ, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपि सिद्धसिन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुल सिन्धुल सिराणा [प्राम] सीवाए सीतादेवी सीतारामप्रयन्थ सीधाक	4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
टफ, १ सिद्धचक्रवर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपि सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धुल सिन्धुल सिराणा [प्राम] सीवा सीतादेवी सीतारामप्रवन्ध	4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4

सीन्धल १२८	सेडी [नदी] ९१	स्तम्भनग्राम ९५
सीमंधर [सामी, जिन] २६, ६९, ९५,	सेंह्यक [इसी]	स्थूलभद्रचरित ३५
198	22)	स्वर्गारोहणप्रासाद ६८
सीमंधरप्रासाद २६	सेरीसक [तीर्थ] ४७	स्वर्णिगिरि ५९
सीलण ४७, ४८	सेपर १२	स्वर्णगिरिदुर्ग ५०
सुंदर सर ५०	सेहर १२	
सुंसुमार १२४	सोनल ३४, ३५	ह
सुगति २४	सोपारक ४२	हंस ४३, १०५
सुधर्मस्वामी ९५	सोम ५३, ५५, ९८	हंसगति २४
सुधानिधि वापी २४	सोमचन्द्र २६	हंसविश्रामवापी २४
सुन्दरिसरित् ५०	सोमनाथ [महादेव] ९८	हजयात्रा ६६
सुभट ११	सोमनाथयात्रा ३४	हम्मीरी २४
सुभद्रा २०	सोमभद्द ९७, ९८,	हरदेव [चाचरीयाक] ७८
सुमतिप्रभ [गणी] ३१	सोमभद्र ४	हरपालदेव १२३
सुमाया २४	सोमेश १३३	हरिचन्द्र २६
सुमित्र १०९	सोमेश्वर [महादेव] ३५, ३६, ३८, ४७,	हरिभद्र सूरि १०३-१०५, १०७
सुमेसर (सोमेश्वर) ८६	६१, ६९, ७२, ७८,	हरिसिद्धि [देवी] ५
सुरत्राण ५१, ६६, ८६	८६, ९८, ११२,	हरिहर ७७
सुरपति १२२	१२९, १३०, १३२	हर्ष [राजा] १५
सुराष्ट्रा ३४, ५८, ६३, ९३, ९७,	सोमेश्वरदेव [किव] ७४,८०	हस्तिकलपपुर १०८
९८, १२४, १२५, १३१	सोमेश्वरयात्रा ८२, १३२	हांसी ३०
सुरुरित २४	सोरठी [राग] ७९	हारीज ८३
सुवर्णनर ३	सोळ, १२६	हिंदुक ६६
सुवर्णगिरि १०२	सोहगा ५४	हिसादि \ ५१ हिसालय ११८
सुवर्णापुरुप २	सोहालक [प्राप्त] ५४	
सुवर्णसिद्धि ९४	सोही १०३	S.
सुवता ९३	सौगत [मत] १९, ८३, १२०, १३०	हूणवंश हेमचन्द्र [सूरि] ३७, ४२, ४३,
सुवताचार्य	सौभाग्यदेव ८८	१२६, १२८
मु शीला २४	सारमन्त्र ८२	हेमडसेवड १२५
सुहादेवी ३२	सौराष्ट्र १२८	हेमप्रभ सूरि ५३
सुहागदेवी ४८, ४९, ८८, ८९, ९०	सौराष्ट्रिक ४३	हेमन्याकरण १३१
सुहा १३४	स्तम्भतीर्थ ४४, ५४, ५५, ६४,	हेम[चन्द्र]सूरि ३७,३८,४४,४६
स्मेसर (सोमेश्वर) ८६	६५, ७३, ७४, ९८,	४९, ५८, १२३,
सर्यशतक १६	997, 973	928, 932
सेंड उ [इ स्ती]	स्तम्भन (स्तम्भतीर्थ ?) ६९	
2000	स्तम्भनकाचार्य १८	हेमाचार्य ३३, ४४, ४५, ४५

प्रवन्धचिन्तामणिग्रन्थान्तर्गतिवद्रोषनाम्नां सूचिः।

॥ अकाराद्यक्षरानुक्रमेण ॥

ঞ	1	अवन्ति [देश]	9 (उत्तराध्ययन [स्त्र] बृहहृत्ति	ξę
अकालजलद [विदद]	₹०	सवन्ति सुकुमाल [मुनि]	৬ (हि॰)	उद्यचन्द्र [पण्डित]	\$0
भगह्य	£9, ve	अश्विनीकुमार	922	उदयन [मंत्री] ५६, ७७, ७९	
भग्नि [राजा]	£3, 64	अष्टापद [पर्वत]	915		£, ८७, ९७
भग्निवेताल	२, ३, ३२	अष्टापद-प्रासाद	909	उद्यन-चैत्य [']	66
अच्छोद [सरोवर]	1, 1, 11 23	आ		उद्यन-विहार	હ ્દ્
		भाकृष्टि विद्या	998	उद् यप्रभदेव	६९
भजयदेव भजयपाछ } [चालुक्य]	९६, ९७	आकेवालीया [ग्राम]	904	उदयमति [राशी]	५४, ५५
अजितनाथ [जिन]	९६	आगडदेव	94	उदा [उदयन]	५६
भणहिल्ल [भारयाङ]	93	आगडेश्वर	94	उपासकदशा [सूत्र]	99
भणहिल्लपुर [पत्तन]	१३, १५, १७,	आनाक (अणीराज) [सपार	रलक्षीय] ७ ६,७९	उमा	ጸ
	, xu, €0, ux,	आनाक [ब्याघ्रश्लीय]	58,90		११२, १२३
	, 62, 69, 65,	आभड [वसाह]	5,8-00	उर्वशी	90
	९१, ९२, १२६	आसीरराणक [नवघण]	६४	'डवसगाहर' [स्तोत्र]	998
अनादिभूपति [तपसी]	9,9	आम [चृपित]	१२३	₹	
अनुपम देवी।		आम्बर } [मंत्री]	५६, ८०, ८१	श्रयभ [जिन] ६	(टि॰) ६२
अनुपमा }	९८, १०३-५	2	८६-८८, ९७	ऋपभनाथ-प्रासाद	६२
अनुपमासर	900	आर्हत [दर्शन, मत]	४२	ऋषभपञ्चाशिका [स्तुति]	४०
अन्धय [अन्धक]	२८	आछिग [कुलाल]	vv, 60	ए	
अन्ध्र [देश]	39	आलिग (°मिग?) [पुरोर्ग		एकपद [क्षेत्रपाल]	१२३
अभयदेव [स्रि	१०७, १२०		८२	क	•
अभिनन्द [कवि]	१०२	आछिग [प्रधान]	48, 89	कच्छ [देश] १६, १	ر عو و <i>لا</i>
सम्बा	१०९	आऌया [गूर्जराश्ववार]	38	कच्छ (विश्वराज]	99
अभ्विका }	१२३	भावस्यकवन्द्रनानिर्युक्ति		कण्टेलीया [पाषाणविशेष]	900
अयो ध्या	93	आशराज [मंत्री]	38	क्वेश्वरी-प्रासाद	93, 94
अरिष्टनेमि-प्रासाद	5 5	आशराज-विहार	५ ५ ९	कण्डाभरण [व्याकरण]	Ę٩
अरु न्धती	२८	आशा [भिल]	યુષ્	कन्थादुर्ग	9 €
अर्जुन	ર૧, પ્ પ	आशापही	338		, ३१, १२३
अर्जुनदेव [मारुवभूपि]	90	आशास्त्रर [दिगम्बर]	৬৭	क्रन्ह (कृष्ण)	6
अणीराज [शाकम्भरीश]	७६	आसांविली [ग्राम]	91		८, ९०, ९६
अर्ह्याष्टम [देश]	۷٦	इ	६२		१००, १२४
अर्द्धद [नाग]	990	इन्द्र [रूपति]	* '	कपिलकोट [दुर्ग]	98
अर्बुद गिरि	८०, ९७, १०१	ड	९५	करणवत्तु (कर्णपुत्र=करणोत)	[सिद्धराज]
अर्थुद तलहहिका	29	उचा [नगरी] उज्जयन्त [पर्वत, तीर्थ]	६५, ९३, १००,		46
अहंन् [देव]	६३	उज्जयन्त [पनतः, तान]	909	करम्बक-विहार	89
अर्हन्तश्री [प्रन्थविशेष]	३९		ĘŊ	कर्ण [पुराणकालीन] १३, ५५,	
अलका [नगरी]	93	उज्ञयन्त-प्रासाद	८, १३	कर्णदेव [डाहलदेशीय] ४९-	५२८९, ९२
अवन्ति [नगरी]	२, ३, २५, ४१,	उज्जयिनी [नगरी]	७१, ७२	कर्णदेव [चालुक्यवंशीय] प	18-45, 44
	40, 90 €, 939	उन्झा [प्राम]	-,		

धर्म [वादी]	४१	नेमि [नाथ, जिन]	६५, १२०	ે પ્રશુ	९५
धर्मदेव	٩	नेमिनाथ-प्रासाद	99	पृथ्वीराज [सपादलक्षीय	
धर्मवहिका	२७	नेमिनाथविम्प	909	}	996
धर्मशिला	८५	प		प्रतापदेवी	૪૫
धाता (विधाता)	94	पञ्चमाम	४०१	प्रतिष्टानपुर	90
धामणंडिल [प्राम]	१२२	पद्मासर [प्राम]	92, 93	प्रधुन्नाचार्थ	ĘS
धारा [नगरी] १३, २०	, ३२, ३५, ३६,	पञ्चासरचैत्य	93	प्रवन्धचिन्तामणि [प्रन्थ	
	५९, ७६, १२१,	पत्तन [अणहिलपुर पाटण]	१३, १४, १५,	प्रवन्धशत [प्रन्थविशेव]	3 7 9 6
धारा [पणली]	३२	१७, २०, ५३-	५५, ५८-६२,	प्रभासक्षेत्र	८९, १०५
धारादुर्ग	५८, ५९	६५, ६६, ६९,	७७, ८२-८४,	भवर नगर	9
धारानाथ	७५	८७, ८९-९१,	98,96	प्राकृत [भाषा]	४४, ८९
धारापति	७६	पत्तन–पारस्रीपुत्र	906	_	
धाराश्रेष्ठी	१२२, १२३	पत्तन-सोमनाथ	909	प्राकृतसूत्र प्राग्वाट [वंश]	४६
भुन्धवाक } [नगर]	८३	प्याकर	६० (हि०)		९८
अन्यका ।	8 ३	पग्नावती [देवी]	998	प्रियहुमक्षरी प्रियमत	. 4
न		पम्पा [सरोवर]	६३		६२
नगरमहास्थान	६२	परपुरप्रवेशविद्या	६, १०६	फ	
नगरपुराण	६२	परमार्दि [चपति] ९	७, ११४-११६	फूलड [पशुपाल]	96
नन्द [तृप]	१०६, ११८	परमार [वंश] १८,	, २१, ५९, ७६	घ	
नन्दिवर्धन	992	परमार राजपुत्र	99	वष्पभहिस्रि:	922
नन्दी	३९	परमाईत [विरुद]	७७, ८६	यम्बेरानगर	९४
नन्दीश्वरावतार [प्रासाद]	900	परादार [ऋषि] ६०	(डि॰), ८२	वर्धर [वेताल]	७३, ७६
नल [चपति]	38	पलीवाम	900	विछ [राजा]	८, १९, ११५
नरवर्मा	७६	पारलीपुत्र [यत्तन]	१०६, ११८	बलाल [चपति]	९५
नरवाहन [खङ्गार]	48	पाणिनि [व्याकरण]	६१, १२१	या उलामाम	\$\$
म मेदा	८७	पाण्डव	४२	चाण [किव]	88
नयचक [प्रन्थ]	900	पाण्ड्यमृप	२७	वारप [सेनापति]	१६, १७
नवघण (°न)	६४, ६५	पाताक	900	वालचन्द्र [पण्डित]	903
नवाङ्गवृत्ति [प्रन्थ]	१०७, १२०	पादलिसपुर	900, 998	बाल-मूलराज	90
नहुप [राजा]	८६	पापखड [हाह]	69	बाहड (बाग्भट) [मंत्री	
नाइकिदेवी	९७	पापघट	પ જ	वाहडपुर	্য
नागार्जन [योगी]	१९, ११९, १२०	पारूथक [द्रम्मविशेप]	93	वाहुळोड [नगर]	५४, ५७
नाचिराज [कवि]	yo .	पार्थकथा	994	चाहु लोडकर	46
नाडोल [प्राम]	६० (टि॰)	पार्वनी	₹८.	चीज [राजपुत्र]	94
नाणात्राम	89	पार्श्वनाथ [जिन, तीर्थ]	८७, १२०		900
नाभाग [च्वित]	८६	पार्श्वनाथप्रतिमा	93	चुद्ध [देव]	
नाभि [चपति]	६२, ६३	पार्श्वनाथविस्व	१२०	चृहस्यति [गण्ड]	८४, ८५, ९१
नाभिभू [प्रथमजिन]	9	पाछिताणक [स्थान]	900	बृहस्पतिमत	908
नारय (नारद)	6	पाछिता (पादछिप्ता॰) च	ार्य ११९	वीस [दर्शन, मत]	६३, ६९, १०७
नारायण	80	पाचक [पर्वत]	900	वसपुरी ''	\$ \$
नाम्तिक [दर्शन]	६३	पाहिणि	८१, ८३	वद्य-प्रासाद	६२
नीतिशाख	98	पीवलुळा [तडाग]	93	नह्या	८५
नीलकण्ड [महादेव]	6.8	पुण्यसार	999	वाद्य [दर्शन]	६३
नीलकण्डेश्वर	५२ ।	पुरकर	<i>७६</i> ।	बाह्मी [देवी, सरखती]	१०२

भ		म	1	मारव	९५
भक्तामर स्तोत्र	84	मख(मक्का)वीर्थ	१०३	मालदेव	900
भट्टमात्र	9, 2, 2	मण्डलीकसन्नागार [विह	द] ९४	मालव } दिश. म	ग्डल] १९–२२ ,२ ५,
भट्टारिका-भीरूआणी	५३	मण्डलीनगर	90	41044	
भट्टारिका-योगीश्वरी	98	मतिसागर	999		४५, ५१, ५८, ५९, ६२, ७१, ७४, ७६,
भद्रवाहु [स्रि]	996, 998	मथुरा [पुरी]	9.5	-	६२, ७३, ७३, ७३, ७८, ८१, ९५, १२१
भरत [नृपति]	६२, ६३, ८६, ८७	मद्नपाळ	५५, ५६	मारुवपति	२१, ९७ ३१, ९ ७
भरतखण्ड	६२	मदनराज्ञी .	6,6	मालवपात	२०, ५८
भर्तृहरि	979	मद्नरेखा	996	मालविक	49
भव [शिव]	६३, १२३	मदनशङ्करप्रासाद	२०	मालवीय	86
भवानी	१२३	मध्यदेश	३६, ७२	माडिम	१०३
भागीरथी	920	मनु	६२	माहेच	99
भारत (महाभारत)	9, 900	सम्माण [खनी]	८७, ५०३	मिथिला	93
भारती	४२, ५०, १०७	मयणछदेवी '	१४, ५७, ६७, ७४	मुझ [राज, चप] २०	-२५, २८, ३१, ५०
भारूयाड [साखड]	93	मयूर [कवि]	४४	मुझाल [मंत्री]	५४, ५९
भागीव	994	मरुदेव	६३	,, [महोपासक]	55
भिद्धमाल	३६	मरुदे वि	६२	मुआलदेव	94
भीम, भीमसेन	२८, ९७	मरुदेश]	६२	मुझालदेव-प्रासाद	90
भीम, भीमदेव [चौ	_{ल≆स} १] २०.२५,	मरुमण्डल ∫	५६, १०७	,, स्वामी ,,	ष्
सास, नानपुन 🖽	३३, ३४, ४५, ४६,	मरुगृद	९ ६, १००	मुणाळवई (मृणालव	ती) २३
10,	प्रव-५४, ७७	मळधारी [विरुद]	40	मुनिदेवाचार्य	६९
भीमदेव [चौछक्य व	7 90,96	महावादी [स्रि]	vop	मुनिसुवत [जिन]	26
भीमडीयाक (टिप्पण	ीगत) रे१	मल्लिकार्जुन	८०, ८१, ९५ १२	मुरारि	३९
भीमेश्वरदेव	५३	महणका	८, ४१, ६१	मूलराज [चालुक्य १]	95-95,55,59,54
भीरूआणी [भट्टारिक	ा - प्रासाद ५३	महाकाल		मूलराज [बाल, "	२] ९६
भूगपाल	907	महाकाल-प्रासाद	३० (टि॰), ६१ ८५	मूळराज, कुमार	43
भूणपाल भूणपालेश्वर-प्रासाद	१०२	महादेव	996	मृलराजवसहिका	9 ৩
	998	महानन्द	४२	मूलेशर-प्रासाद	90
भूपल [कुमारी]	98, 94	महाभारती कथा	89	मृणालवती	२३
भूय [ग] डदेव		महाराष्ट्र [देश]	บริ	मेघनाद	१२२
भूय [ग] डेश्वर-प्रार	99,94	महाकक्षी [देवी]	Ęo	मेरुतुद्वाचार्य	१, ६९
भूयराज	66, 903	सहावीर [जिन]	900	मेवाड [देश]	९५
भ ृगुपुर	१२३	महावीरचैत्य	88	मोढ वंश	८३ ८३
भैरव	ષ્પ	मही नदी	64	मोढवमहिका	
भैरवदेवी	Ę	महेश्वर	७६	मोडेरपुरावतार [प्रा	बाद] १०
भैरवानन्द [योगी]	39	महोदय माघ [किव, पण्डित]	३४-३६, १०२	∓ ले च्छ	७३, ११७, ११८
भौगपुर	908	माघ िकाव, वान्यता	७२	∓ लेच्छदेश	५२ १०८
भोगीन्द	२२, २५, २६, २८,	माङ्गु [झाठा]	७२	,, मण्डल	९७
भोज, भोजदेव	, ३१–३६, ३९, ४१,	साङ्ग्रह्मण्डल	६७	।। राजा	
₹• 	o, ₹1~₹₹, ₹?, 4~86, 88~49, ⁴ ₹,	माणिक्य [पण्डित]	۷۹	1	य
४३, ४'	908, 904, 929	माणिकर पछेवडर	88	यमुना [नदी]	993
Tining A	३४	। क्रान्तर्रहाचाप	६३	यशःषरह [हन्ती]	५९
भोजस्वामि-प्रासाद	४५	मानस [सरोवर]	१२	यशश्चनद्र [गणी]	८२, ८८
भोयएव (भोजदेव)	[/] ९५	मान्धाता [नृपति]			
भंभेरी [नगरी]			•		

यशोधवल	५९ ।
यशोभद्र [स्रि]	६८
यशोराज	96
यशोवर्मा	५८-६१, ७४, ७६
यशोवीर	१०१, १०२
युगादिदेव [जिन]	४५, ६६, ८६,
	904, 900
युधिष्टिर	२२, ८२
यूकाविहार	89
योगराज	98, 94
योगशास्त्र ८	६, ९०, ९२, १०८
योगीश्वरि [भट्टारिका]-	
₹	
रघु [कुल, राजा]	७३, ८६
रङ्ग [वणिक्]	906, 908
रणसिंह	998
रति	80
रतिरमण	39
रत्नपरीक्षा ग्रन्थ	
रत्नप्रभ [पण्डित]	q v
रतमाल [पुर]	908
रतशेखर	905, 990
रताकर [पण्डित] रतादिख	ęν
·	9 ⁽ 4)
राज [राजपुत्र, क्षत्रिय]	
राजघरह [विहद]	88
राजिपतामह [,,]	۷۰, ۷۹
राजमदनशङ्कर [,,]	30
राजविडम्बन [नाटक]	39
राजशेखर [कवि, अका	
राजिराज (१)	95
राम [दाशरथी]	१९, २४, ५५, ७३
रामचन्द्र [कवि, प्रवन्ध	।शतकतो] ६३, ६४
•	८९, ९७
रामेश्वर-प्रासाद	४१
रावण [लङ्कापति]	२४, २८
राष्ट्रकृट [वंश]	%6
रुद	४, ३८, ९०
रुद्रमहाकाल-प्रासाद	६१
रुंदादित्य } [मंत्री]	२१, २२, २३
रेवा [नदी]	९, ७५
2	1
रैवतक [पर्वत]	६५, ८७, १०८,

	१२२, १२३
रोहक [महामाला]	ર્ષ
रोहण, रोहणाचल	۹, २
स्	., .
लंक [गढ] (सङ्का)	23 60
	२३, ५८ १९
लक्खड (लाखाक) }	94, 98
लक्षराज "	
लक्ष्मणसेन	992
लक्ष्मी	३५, १०४
लक्ष्मी पति	१२७
लप (ख) णावती [पुरी]	992
लघु भैरवानन्द [योगी]	६० (टि०)
लघु वाग्भट [वैद्य]	१२२
लङ्का [नगरी] १३, ३३	२, ३९, ६६, ७२
लच्छ (लक्ष्मी)	४५
छ छितसर	900
छवणपसाद [राजा]	98, 96, 900,
	१०३, १०४
छाखाक [फुलउत्र]	96, 98
लाछि [छिम्पिका]	५६
लाट [देश]	३१, ९५
लाटेश्वर	9 ६
छीला [उक्कर, राजवैद्य]	५५
लीलादेवी	9 પ્
छ्णिग [मंत्री]	900, 909
ल्र्णिगवसहि [प्रासाद]	909
व	
,	0 -
वटपद्ग [ग्राम]	९० ५९
वडसर ,, वढवाण ,,	73 4 4
वढीयार [देश]	93
वनराज	१२, १३, १४
वयजलदेव [तपस्तिभूपति	
वयजलदेव [प्रतीहार]	९७
वररुचि [पण्डित]	३, ४७
वराहमिहिर [पण्डित]	996, 998
वर्द्धमानपुर	६४, ८६, १२५
वर्द्धमानप्रतिमा	909
वर्द्धमानसूरि वर्द्धमानसूरि	३६, १०९
वङ्गीपुर	900-8, 933
वलभीभंग	908
वहभराज	20
	, ,

```
वस्तुपाल [महामाख] ९८, १००, १०२,
                        903,904
वारमट [मंत्री]
                       ७९, ८६, ८७
                           37-38
       (लघु, बृहत्) [वैद्य]
                              939
       [वैद्यक प्रन्थ]
                              929
वाणारसी [नगरी]
                      20, 40, 48,
                          69, 998
गदिवेतालीय [विरद]
                                ξĘ
वामराशि [विश्र]
                               99
चायटीय [गच्छ]
                              909
वायटीय जिनायतन
                                45
चाराही ग्राम
                               9
वाराहीय जुच
                                4
वाराही संहिता [श्रंथ]
                              996
वालाक [देश]
                               49
वाल्मीकि [ऋपि]
                               ४२
वासुकि [नागराज]
                         998, 920
वासुदेव
                               ६३
विक(क)मकाल
                          94, 908
विकम
               [तृष] २, ४, ६, ७, ९
विक्रमार्क
              9,4,20,62,906,929
विक्रमादिख
विक्रमार्क संवत्सर
                               93
विव्रहराज
                               90
विचार चतुर्भुख [विरुद्]
                               68
विजयसेन सूरि
                          ९९, १०४
विजया [पण्डिता]
                               ४३
विदिशा [नगरी]
                               93
विद्याधर [मंत्री]
                        ११३, ११४
विद्यापति [महाकवि]
                               40
विनायक [गणपति]
                               36
                               89
विनीता [नगरी]
                           46, 43
विभीपण
विमलगिरि
                         28, 900
विमलवसहिका
                              909
विमलवाहन
                               ६३
विरञ्जि
                              998
विरहक [ युक्ष विशेप ]
                               60
विशाला [नगरी]
                               ३६
विशोपक [देश?]
                               43
विश्वल
विश्वामित्र
                    ६० (हि०), ८२
विश्वेश्वर
                               68
```

प्रवन्यचिन्तामागिविदेषमामसृचिः ।

	न्य	^{भाचन्तामिकिके}	
	६३, ८५ सीलगु ८६, १३८ कीलगु	^{न्याचेन्नामनिदिद्यपनामसृदिः ।}	
		1 62 YP	
	् । शाल्य	देती दिन हैं	•
	, । गुरु । स	£1	37 *
	ं । सम्बन	7 377	THE WALL
			7
	1/ f-3 STETTED	e in the second	of the Co. C.
	४२ विक २	i ci ului.	took or the
	الما الما الما الما الما الما الما الما	S FIFT	
	४२ ग्रेय (दशन ४२ ग्रेय (हि. १५ ग्रीमन [सुर् १२९ ग्रीमनचनुष्ठि	ने, परित्र] सनिकार	
	४२ जीमनचतुर्वि	मानिका [मन्य] १६, १५, ४६ मानवाहत सनिका [मन्य] ४६	
	४२ गोमनदेव [प्रतिहास	
	// //	प्रवीहार] ४ मानगरन दिनार] १०४ मानगरन	र पार
	198 (भियादेवी)	57 HE 7 TE NO	
	०० श्रीदेवी	्रास्त्रम् १ <u>१</u>	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
	४१ श्रीवर्षन	An Amagas	ga a sa
	'० ' श्रीपाल [स्वी]	द नामान्याम्	
	३ श्रीपुत्र [राम]	17.1.22 ru	**
	३ श्रीमाता		11.18
	र असावी	110 माना (ए	(******)
	धीमाल [पुर, नग धीमालांक		• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •
		The fire for the contract of t	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •
	\$71m / m	14 TT	15, 25, 35,
	- 'अ पुण, ६७, ८४, ८६, भीतपट) ८७, ९३ वर्ष	दिक १५ विद्याद	
श≉भु	र का उपने प्रकार के अपने का	1777 · · ·	
शाकटायन	Co. Sec Millione	5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
	िक्किन रेंग, इंट	e. Patricipal	1
	Tra- 7	" TITETTE	
शान्तिस्रीर	राजा] १६९, १६० पोटमलक्ष-प्रामाद १६९, १६० प(म)हार [स्त]	in the second	
मारदा [देवी	ा ६६	्रे सिंह प्रकार । सिंह स्वर्गाः	**:-:
शासनदेवता -	77	mag;	Tar with
शिखाविड -	144 14111157	Fire and the second	
ग्रापाण्ड वि न्ना	मडमर	frank (frank)	()
शिमा [नदी]	⁵⁵ सगर	100 Mary (2012)	4)
दिवि [राजा]	१०६ महान (क्लान)		1
^{। इंग्लाइ} त्य	१०३ सम्बर्गायम	en finalis (Color	
दिव	१०३, १०८, १०६ सम्बद्धारमार [प्रानः]		t
शिवनिर्मास्य	७, १७, ४२, ६३, ९६ सपादनस दिना १८,	12, St. 15, English (Care)	11. 13
शिवपत्तन	UY 30, 1	4 110	*
शिवपराण		The state of the s	÷
शिवभक्त	१०६ मगुन्धित [सरा]		, ,;
france.	संस्थित (दिन्।		***
शिवमवन	१८, ८५ सस्पति [२०] ४४ सस्पति [२०] ४४ सस्पत्ती २५, ४२, ८),	A Property of	
शिवलि <i>स</i>	ी सम्बद्धा हुन्छ । है। है। इस		: ,
. शिवा	77 57 57	and the state of t	; •
े शिग्रगतयथ [पादा] जीवर (न)	१०४ सम्मार्ग हर्मा हिन्द		
शीना [पश्चिता]	वेशः सरमाती सुद्राप	The second secon	, ,
J	४३ सर्वेह्य		
			•
		A 7 4 - 40	•

सुराष्ट्रा [देश]	६५, ८६, ९२
सुवर्णपुरुपसिद्धि [विद	ा] ५, ९३, १०८
सुवत-प्रासाद	८७, ८८
स्नलदेवी	ξų
सूहवदेवी ं	११३-११४
सेंडउ [हस्ती]	८१
सेडी [नदी]	970
सैन्धव [देश]	. 94
सैन्धवा [देवी]	66
सोमनाथ [महादेव]	94, 90, 40, 68
सोमेश्वर [महादेव]	99, 40, 40, 40,
٧٩, ٥	२, ८५, १०१, १२३
सोमेश्वर [कवि]	१०२, १०३, १०५
सोसेश्वर [प्रधान]	990
सोमेश्वरपत्तन	98, 90, 68, 99
सोमेश्वर प्रासाद	82

सोमेश्वरयात्रा ५८, ६	५, १०८, १२३
सोलाक [यहकार]	60
स्रोलाक [मण्डलीकसत्रागार] ५६, ९४
सोहड [मालवरूपति]	९७
सीगत [मत]	४२, १०७
सोगतमङ	900
सौराष्ट्र [देश, मण्डल]	१६, ७६, ९५
सीराष्ट्र घाट	93
स्तम्भतीर्थ ६० (टि०),	७७, ९१, १०३
स्तम्भनक [प्राम]	900, 920
स्थृलिभद्रचरित्र	६० (टि०)
स्मृतिवाक्यु	90
स्वर्गारोहण-प्रासाद	904
स्वाय म्भु	६२
ह	
६नुमान्	३८

	हम्मीर	68
	हर .	३८-४०, ९९
	हरि	38, 80
	हरिपाल देव	໌ເບ
	हरिभद्ग सूरि	96
	हर्ष [चपति]	u _o
	हारीत [ऋषि]	99
	हिमालय [पर्वत]	२७
-	हेमखह	\$€
	हेमड सेवड	९२
	हेमचन्द्र सूरि] ५७,	५९, ६०, ६१, ६४,
		€ v-vo, vv, co-
1		८४, ८५, ८७, ८९,
		, ९३, ९७, १०१,
1		१२७, १२८
1	हेमनिष्वति [विधा]	9,3
1	हहय [वंश]	
•	વહેલ [લકા]	95

